शारदा तिलक

(उच्च आध्यात्मिक साधनाओं का प्रतिनिधि तंत्र)

★

सम्पादक :

डा० चमनलाल गौतम

रचयिता : योग महाविज्ञान, तन्त्र महाविज्ञान, मन्त्र महाविज्ञान, देव रहस्य, पूजा रहस्य, मन्त्रयोग, वैदिक मन्त्र विद्या, प्राणायाम के असाधारण प्रयोग, ओंकार सिद्धि, गायत्री रहस्य, गायत्री सिद्धि, मन्त्र शक्ति से रोग निवारण, विपत्ति निवारण, कामना सिद्धि आदि।

★

JACL-KRC
001315

काशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतब; वेदनगर, बरेली–२४३००३ (उ० प्र०)

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर

पुस्तकालय

पुस्तक संख्या N81

वर्गीकरण संख्या 82:39

1315

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, जयपुर

पुस्तकालय

वर्गीकरण सं० .... 82.37

पुस्तक सं० .... N81 दिनाङ्क ....

यह पुस्तक नीचे अङ्कित तिथि या उससे पूर्व लौटा दी जानी चहिये । यदि पुस्तक निर्धारित तिथि से अधिक समय तक पाठक अपने पास रखेंगे तो 5 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क देय होगा ।

12·2L

١٢ ، ٢ ـلـ

शारदा तिलक

सरल हिन्दी अनुवाद सहित जनोपयोगी संस्करण

❋

सम्पादक :

डॉ चमनलाल गौतम

रचियता : मन्त्र महाविज्ञान, तन्त्र महाविज्ञान, मन्त्रयोग, वैदिक मन्त्र विद्या, ओंकर सिद्धि, प्राणायाम के असाधारण प्रयोग, मन्त्र शक्ति से रोग निवारण, कामना सिद्धि, विपत्ती निवारण विष्णु रहस्य, शिव रहस्य आदि ।

❋

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब (वेदनगर) बरेली–२४३००३ (उ०प्र०)

फोन नं० ४२४२

प्रकाशक :

डॉ० चमन लाल गौतम

संस्कृति संस्थान

ख्वाजा कुतुब (वेद नगर)

बरेली २४३००३ (उ० प्र०)

फोन : ४२४२

★

सम्पादक :

डॉ० चमनलाल गौतम

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

★

तृतीय संस्करण

सन् १९८१

JACL-KRC

001315

★

मुद्रक :

शैलेन्द्र वी० माहेश्वरी

नवज्योति प्रेस,

सेठ भीकचन्द मार्ग, मथुरा

★

मूल्य :

बारह रुपये मात्र ।

विषय प्रवेश

भारतवर्ष का प्राचीन धार्मिक साहित्य निगम और आगम दो श्रेणियों में विभाजित है। इनमें से "निगम" वेदमूलक साहित्य को कहते हैं, जिसमें उपनिषद्, स्मृतियाँ, दर्शन आदि की गणना की जाती है। इसके दो मुख्य लक्षण "विद्यास्थात" और "धर्मस्थान" कहे गये हैं–

पुराण न्याय मीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिश्रत।
वेदाः स्थानानि 'विद्यानां धर्मस्य" च चतुर्दश ॥

(याज्ञवल्क्य)

यह वैदिक साहित्य भावना की दृष्टि से परा और अपरा—ऐसे दो नामों से भी प्रसिद्ध हैं। "अपरा" भाग में धर्म का वर्णन लौकिक व्यवहार की दृष्टि से किया गया हैं और "परा" का उद्देश्य ब्रह्म का ज्ञान और उसकी प्राप्ति का मार्ग माना गया है। यद्यपि वेदमूलक अपरा विद्या में लौकिक अभ्युदय का ध्यान रखा गया है, पर उसका स्वरूप धर्मशास्त्रानुकूल और शिष्ट-समाज द्वारा मान्य होना आवश्यक है। इस श्रेणी के वैदिक साहित्य का मूल भारतीय मनीषियों के मतानुसार अनादि और नित्य माना गया है।

आगम-शास्त्र को स्रोत शिवजी को बतलाया जाता है। इस मार्ग की अधिकाँश रचनायें शिव-पार्वती के संवाद रूप में मिलती हैं। जिस प्रकार प्रत्येक पुराण, चाहे वह विषय के विवेचन तथा भाषा-शैली की दृष्टि से कितना ही बढ़िया अथवा घटिया हो, व्यासजी द्वारा रचित बतलाया गया है, उसी प्रकार आगम ग्रन्थों का कर्तृत्व शिवजी के नाम पर मान लिया गया है। इसका आशय यह समझा जा सकता है, कि चाहे विभिन्न आगम ग्रन्थ अलग-अलग काल में अनेक विद्वानों द्वारा लिखे गये हैं, पर उनका मूल आधार वही सिद्धान्त है, जिसे भगवान शिव ने सर्वप्रथम लोक हितार्थ प्रकट किया था।

यद्यपि इस "शारदातिलक" को भी शिवजी के ज्ञान का ही प्रसाद माना गया है, तो भी इसके लेखक श्री लक्ष्मण देशकेन्द्र ने रचना का उत्तरादायित्व अपना रखा है, जैसा कि ग्रन्थ के आरम्भ में ही कह दिया गया है—

सारं वक्ष्यामि तन्त्राणां शारदातिलकं शुभम् ।
धर्मार्थिकाममोक्षाणां प्राप्ते प्रथम कारणम् ।।

अर्थात्—"मैं समस्त तंत्र ग्रन्थों के साररूप इस "शारदा तिलक" को कथन करता हूँ। यह चारों पुरुषार्थों—धर्म अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति का प्रथम (प्रमुख) साधन है।"

आगे चलकर उन्होंने यह भी कह दिया है कि "भगवान् शिव ही निर्गुण और सगुण स्वरूप हैं। प्रकृति से भिन्न तत्त्व निर्गुण होता है और कलायुक्त को सगुण कहा जाता है। सत्, चित्, आनन्द से युक्त कला सहित परमेश्वर से शक्ति हुई, उससे नाद प्रकट हुआ और फिर बिन्दु का उद्भव हुआ। परा-शक्ति से परिपूर्ण यह साक्षात् तत्त्व इस प्रकार बिन्दु, नाद और बीज—इन तीन भेदों में बँट गया। बिन्दु शिव के स्वरूप वाला है, वीज, नाद और शक्ति उसी की होती है। इसी को आगम शास्त्र के ज्ञाताओं ने 'समवाय' कहा है। सज्ञान, इच्छा और क्रिया के स्वरूप वाले अग्नि, चन्द्र और सूर्य के स्वरूप से युक्त विद्यमान "पर-बिन्दु" से एक अव्यक्त स्वरूप वाला रव (ध्वनि) उत्पन्न हुआ। उसी को सब आगम-विशारदों ने "शब्द ब्रह्म" कहा है।"

इसमें सन्देह नहीं कि तांत्रिक क्रियाएँ और उनमें साधारण जनता का विश्वास बहुत प्राचीन प्रवृत्ति है। यदि यह कहा जाय कि वह उत्कृष्ट श्रेणी के श्रुतिमूलक ज्ञान तथा धार्मिक सिद्धान्तों से भी पूर्वकाल की चीज है, तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं। उच्चकोटि के आध्यात्मिक और ज्ञान तदनुकूल व्यवहार का विकास तो क्रमशः ही होता है। पर टोना-टोटका और जादू-मन्त्र आदि का प्रचार घोर अशिक्षित और ज्ञान शून्य जनता में भी हो सकता है। यह हम आज भी अपनी ग्रामीण और निम्न जातियों की जनता में देख रहे हैं, जो सब प्रकार के रोगों और कष्टों का कारण किसी दुष्ट अथवा असन्तुष्ट प्रेतात्मा को मानकर ओझा अथवा स्यानों द्वारा उसे हटाये जा सकने में पक्का विश्वास रखते हैं। ये सब क्रिया कलाप तन्त्र-शास्त्र के ही बिगड़े हुए या बदले हुए रूप हैं इसमें सन्देह नहीं। यह बात प्रमुख तन्त्र ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से

कही गई है । "महानिर्वाण तंत्र" में शिवजी के मुख से कहलाया है—

कलौ तन्त्रौदिता मन्त्राः सिद्धास्तूर्ण फलप्रदाः ।
शस्ताः कर्मसु सर्वेषु जप यज्ञ क्रियादिषु ।।
निर्वीर्याः श्रौत जातीया विषहीनोरगाइव ।।

अर्थात्— 'कलियुग में तन्त्र-शास्त्र द्वारा प्रतिपादित मन्त्र ही सिद्ध होकर शीघ्र फल दे सकते हैं । इसलिये सव प्रकार के धार्मिक कृत्यों में जप, यज्ञ आदि में वे ही श्रेष्ठ और विहित हैं । इस युग में वैदिक कर्म-काण्ड तो विषहीन सर्प की भाँति अशक्त हो जाते है ।"

तंत्र-ग्रन्थों में इस प्रकार के सैकड़ों वचनों के होते हुए भी विद्वान् लोग इस सिद्धांत को सहज में स्वीकार नहीं कर सकते । जिस प्रकार "महानिर्वाण" के रचयिता ने तंत्रोक्त क्रियाओं को फलवती वताया है, उसी प्रकार भक्तिमार्ग के प्रधान आचार्य गोस्वामी तुलसीदास जी की अमरवाणी भी हमको "रामायण" में सुनाई पड़ती है—'कलियुग केवल नाम अधारा ।" इस अद्वितीय घोषणा पर विश्वास करके आज लाखों-करोड़ों नर-नारी 'नाम संकीर्तन' में तल्लीन हैं और उसी को आत्मा की सद्‌गति का सर्वोत्कृष्ट मार्ग मान रहे हैं ।

फिर भी तन्त्र-शास्त्र उपेक्षा का विषय नहीं है । किसी समय इस शास्त्र की अभूतपूर्व उन्नति हुई थी और लाखों नर-नारी इससे लौकिक और पारलौकिक सत्परिणाम प्राप्त करते थे । उस समय इतना अधिक तन्त्र-साहित्य रचा गया है जिससे आज भी एक पूरा पुस्तकालय भर सकता है । उन हजारों छोटे-वड़े ग्रन्थों में 'शारदा तिलक' एक महत्व पूर्ण रचना है । तन्त्रोक्त धर्म और आचार-विचार, व्यावहार का प्रति-पादन करने वाला यह एक प्रसिद्ध और मान्य ग्रन्थ है । इसमें तन्त्र-शास्त्र के मतानुसार सृष्टि और विश्व-रचना का उचित विवेचन करते हुए इसके व्यावहारिक पक्ष का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है । मनुष्य किस प्रकार दीक्षा ग्रहण करके तांत्रिक-साधना का अधिकारी वन सकता है, इसके प्रत्येक विधि-विधान का ऐसा स्पष्ट रूप से समझा कर वर्णन किया गया है कि नया व्यक्ति भी उससे बहुत लाभ उठा सकता है । तन्त्र मार्ग के रचयिताओं से अपने विधि विधानों और क्रियाओं को बहुत शक्ति

शाली बताया है और संभव है कि पूरा विधि-विधान करने पर तात्का-लिक लाभ की दृष्टि से उनका कथन सही हो ।

फिर भी समय के प्रभाव से तन्त्र मार्ग में कुछ ऐसी बातें शामिल हो गई हैं जिनको अन्य लोग शंका की दृष्टि से देखते हैं और आक्षेप करते हैं। पंचमकार और मारण-मोहन-उच्चाटन, वशीकरण आदि क्रियायें ऐसी ही हैं, जिन पर आधुनिक युग के विचारक और विद्वान् पुरुष कभी सहमत नहीं हो सकते और न उनकी नैतिकता और धार्मिकता को स्वीकार कर सकते हैं। आध्यात्मिकता अथवा दैवी शक्तियों का नाम लेकर किसी को नष्ट अथवा भ्रष्ट करने का प्रयत्न करना अथवा ऐसा इरादा ही करना धृणित और हेय कर्म ही माना जायगा। इसी प्रकार किसी देवी या देवता की आराधना इस विचार से करना कि वे हमारे विरोधियों का सर्वनाश कर डालें उन देवी-देवताओं के प्रति भी कोई अच्छा काम नहीं है। किसी देव शत्ति का प्रतिपादन इस रूप में करना कि वह पूजा अथवा बलिदान के लोभ से चाहे जिस व्यक्ति का अकल्याण कर सकती है, उसके प्रति आदरणीय भावना को मिटाने वाला ही सिद्ध होगा। नातभझ, दुष्ट औह बाल बुद्धि वालों की बात तो छोड़ दीजिये, पर कोई विद्या-वुद्धि से सम्पन्न सज्जन पुरुष इस प्रकार के कृत्यों को 'धर्भ' का अङ्ग नहीं मान सकता।

इसलिए हमने 'शारदा तिलक' के उपयोगी और आध्यात्मिक भाव को बढ़ाने वाले विधि विधान और धर्म क्रियाओं को स्थिर रखते हुए जिन अध्यायों अथवा वर्णनों में हमको उपयुक्त ढंग की आक्षेप योग्य बातें दिखाई पड़ीं उनको अधिकांश छोड़ दिया है। साथ ही जहाँ कहीं विषय का बहुत अधिक विस्तार देखा वहाँ भी संक्षेप कर दिया है। वर्तमान समय में लोगों की जीवन निर्वाह सम्बन्धी विभिन्न प्रवृत्तियाँ इतनी विस्तार युक्त और जटिल हो गई हैं कि उन्हे बहुत लम्बे चौड़े विवेचन हमने उपयोगिता और जानकारी की रक्षा करते हुए कहीं-कहीं ग्रन्थ को इस प्रकार संक्षेप किया है कि पाठक उसको पढ़कर आशय को अधिक अच्छी तरह ग्रहण कर सकेंगे।

२५-३-७३ —प्रकाशक

विषय-सूची

१—प्रथम पटल (प्राणियों की उत्पत्ति और देहान्तर्गत विशेषतायें) ९

२—द्वितीय पटल (वैखरी सृष्टि एवं साधना सम्बन्धी सूचनायें) २७

३—तृतीय पटल (दीक्षाङ्ग निर्णय) ५१

४—चतुर्थ पटल (दीक्षा विधान एवं नियमोपनियम) ७४

५—पञ्चम पटल (हवन विधि) ९६

६—षष्ठ पटल (न्यास की विधि और ध्यान के भेद) १२२

७—सप्तम पटल (भूत लिपि और मन्त्र विज्ञान) १४३

८—अष्टम पटल (लक्ष्मी मन्त्र प्रकरण) १६५

९—नवम पटल (भुवनेश्वरी प्रकरण) १९४

१०—दशम पटल (दुर्गा प्रकरण) २१४

११—एकादश पटल (गणपति प्रकरण) २३६

१२—द्वादश पटल (चन्द्र प्रकरण) २६४

१३—त्रयोदश पटल (विष्णु प्रकरण) २८९

१४—चतुर्दश पटल (नारसिंह प्रकरण) ३१६

१५—पञ्चदश पटल (पुरुषोत्तम प्रकरण) ३४१

१६—षोडश पटल (महेश प्रकरण) ३६६

१७—सप्तदश पटल (पुरुषार्थ मन्त्र) ३६२

१८—अष्टादश पटल (अघोरास्त्र वर्णन) ४१७

१९—एकोनविंश पटल (यन्त्र प्रकरण) ४४६

२०—विंश पटल (योग प्रकरण) ४७५

२१—एकविंश पटल (गायत्री महिमा) ४६२

श्री शारदा तिलक

प्रथम पटल

शब्दब्रह्म यदूचिरे सुकृतिनश्चैतन्यतर्गतम् ।
तद्वोऽव्यादनिशं शशाङ्कसदनं बाचामधीशं महः ।१
अन्तःस्मितोल्लसितमिन्दुकलावतंस-मिन्दीवरोदरसहोदरनेत्रशोभि।
हेतुस्त्रिलोकविभवस्य नवेन्दुमौले-रन्तःपुरं दिशतुमंगलमादराद्धः ।२
संसारसिन्धोस्तरणैकहेतून्दधे गरून्मूर्द्धिन शिवस्वभावान् ।
रजांसि येषां पदपङ्कजानां तीर्थाभिषेकश्रियमावहन्ति ।३
सारं वक्ष्यामि तन्त्राणां शारदातिलकं शुभम् ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां प्राप्तेः प्रथमकारणम् ।४
शब्दार्थसृष्टिर्मुनिभिश्छन्दोभिर्दैवतैः सह ।
विधिश्च यन्त्रमन्त्राणां तन्त्रेऽस्मिन्नभिधीयते ।५

जिसको सुकृती गण अन्तर्गत चैतन्य को शब्द ब्रह्म कहते थे वह शशांक सदन-वाणियों का अधीस तेज आपकी निरन्तर रक्षा करे ।१। अन्तर में स्मित से उल्लासित-इन्दु (चन्द्र) की कला के भूषण वाले-इन्हीं वरके उदर के सहोदर नेत्रों की शोभा से समन्वित-तीनों लोकों के वैभव के कारण ऐसे भवेन्दु मौलि (शिव) का अन्तःपुर आदर से आपका मङ्गल करे ।२। संसार रूपी सागर से सन्तरण करने के एक हेतुभूत-शिव के स्वभाव वाले गुरुओं को मस्तक में धारण किया था। जिनके चरणों कमलोंकी रजतीर्थों द्वारा हुए अभिषेक की श्री का आवाहन किया करते हैं ।३। उन तन्त्रों के सारस्वरूप इस परम शुभ

शारदा तिलक को बतलाऊँगा जो धर्म-अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति का प्रथम कारण है ।४। छन्दों और देवताओं के साथ मुनियों से शब्दार्थ की सृष्टि और मन्त्रों तथा यन्त्रों की विधि इस तन्त्र में निहित की जाती है ।५।

निर्गुणः सगुणश्चेति शिवो ज्ञेयः सनातनः ।
निर्गुणः प्रकृतेरेन्यः सगुणः सकलः स्मृतः ।६
सच्चिदानन्दविभात्सकलात्परमेश्वरात् ।
आसीच्छक्तिस्ततोनादो नादाद्बिन्दुसमुद्भवः ।७
परशक्तिमयः साक्षात्त्रियाऽसौ भिद्यते पुनः ।
बिन्दुर्नादो बीजमिति तस्य भेदाः समीरिताः ।८
बिन्दुः शिवात्मको बीजं शक्तिर्नादस्मयोर्मिथः ।
समवायः समाख्यातः सर्वागमविशारदैः ।९
रौद्री विन्दोस्ततो नादाज् ज्येष्ठा बीजादजायत ।
वा-I, ताभ्यः सौमुत्पन्ना रुद्रब्रह्मरमाधिपाः ।१०

भगवान् सनातन शिव निर्गुण और सगुण जानना चाहिए । प्रकृति ा अन्य निर्गुण होते हैं और सकल सगुण कहे गये हैं । ६ । सत्-चित् ज्ञान) और आनन्द के विभव से-सकल परमेश्वर से शक्ति हुई थी फिर उससे नाद, हुआ और नाद से बिन्दु का समुद्भव हुआ था । ७ । पर शक्ति से परिपूर्ण यह साक्षात् फिर तीन प्रकार से भेद को प्राप्त होता है । बिन्दु-नाद और बीज में उसके भेद कहे गये हैं ।८। बिन्दु शिव के स्वरूप वाला है । बीज-नाद और शक्ति परस्पर में उन दोनों का है । समस्त आगमों के महामनीषियों के द्वारा यह समवाय कहा गया है । ९ । बिन्दु रौद्री फिर नाद बीज से ज्येष्ठा समुत्पन्न हुई थी यह वामा थी । फिर उनसे रुद्र ब्रह्मा और रमापति समुत्पन्न हुए थे । ।१०।

सज्ञानेच्छाक्रियात्मानो वह्नीन्द्वर्कस्वरूपिणः ।
भिद्यमानात्पराद्बिन्दोरव्यक्तात्मा रवोऽभवत् ।११

भो

शब्दब्रह्मेति तं प्राहुः सर्वागमविशारदाः ।
शब्दब्रह्मेति शब्दार्थं शब्दमित्यपरे विदुः (जगु.) ।१२
न हि तेषां तयोः सिद्धि र्ज्जडत्वादुभयोरपि ।
चैतन्यं सर्वभूतानां शब्दब्रह्मे ति मे मतिः ।१३
तत्प्राप्य कुण्डलीरूपं प्राणिना देहमध्यगम् ।
वर्णात्मनाऽऽविर्भवति गद्यपद्यादिभेदतः ।१४
अथ बिन्द्वात्मनः शम्भोः कालबन्धोः कलात्मनः ।
अजायत जगत्साक्षी सर्वव्यापी सदाशिवः ।१५

संज्ञान-इच्छा और क्रिया के स्वरूप वाले अग्नि, चन्द्र और सूर्य के स्वरूप से युक्त भिद्यमान पर बिन्दु से एक अव्यक्त स्वरूप वाला 'ख' हुआ था। ११। उनको ही सब आगमों के विशारदों ने शब्द ब्रह्म कहा था। शब्द ब्रह्म-यह शब्दार्थ है। दूसरों ने इसको शब्द यही समझा था। १२। उनकी सिद्धि उन दोनों के ही जड़ होने से नहीं हुई थी। मेरी मति तो यही है कि समस्त प्राणियों का चैतन्य ही शब्द ब्रह्म है। १३। वह प्राणियों के देह के मध्य में स्थित कुन्डली के रूप को प्राप्त करके वर्णों के स्वरूप से गद्यों और पद्यो के भेद से आविर्भूत हुआ करती है। १४। इसके अनन्तर काल के बन्धु कला के स्वरूप से युक्त बिन्दु स्वरूप शम्भु से जगत् के साक्षी-सबमें व्याप्त रहने वाले सदाशिव समुत्पन्न हुये थे।१५।

सदाशिवाद् भवेदीशस्ततो रुद्रसमुद्भवः ।
ततो विष्णुस्ततो ब्रह्मा तेषामेवं समुद्भवः ।१६
मूलभूतात्ततोऽव्यक्ताद्विकृतात्परवस्तुनः ।
आसीत्किल महत्तत्वं गुणान्तः करणात्मकम् ।१७
अभूत्तस्मादहङ्कारस्त्रिगुणः (विधि) वृत्तिभेदतः ।
वैकारिकादहङ्काराद्देवा वैकारिका दश ।१८
दिग्वातार्कप्रचेतोविश्ववह्नीन्द्रौपेन्द्रमित्रकाः ।
तैजसादिन्द्रियाण्यासंस्तन्मात्राक्रमयोगतः ।१९

भूतादिकादहङ्कारात्पञ्ज भूतानि जज्ञिरे ।
शब्दात्पूर्वं वितत्स्पर्शाद्वायूरूपाद्धुताशनः ।२०

उन सदाशिव से ईश होते हैं और फिर उनसे रुद्र का समुद्भव हुआ करता है। उनसे भगवान् विष्णु होते हैं और फिर ब्रह्मा होते हैं। इनका इसी रीति से समुदूभव हुआ करता है। १६। फिर मूलभूत अव्यक्त जो पर भूत है विकृत से गुणान्तःकारण स्वरूप वाला महत्तत्व हुआ था। उस महतत्व से विधि भेद से तीन गुणो वाला अर्थात् सत्व-रजः—तमोगुणों वाला अहंकार हुआ था। वैकारिक अहङ्कार से दश वैकारिक देव हुये थे। १७। १८। दिक् वायु-सूर्य-प्रचेता-अश्विनी-कुमार—बह्नि इन्द्र—उपेन्द्र—मित्रक हुये। तेज से तन्मात्राओं के क्रम के योग से इन्द्रियाँ हुई हैं। १६। भूतादिक अहङ्कार से पांच भूतों ने जन्म धारण किया था। पहिले शब्द से आकाश—स्पर्श से वायु—रूप से हुताशन हुआ था। २०।

रसादभ्भः क्षमा गन्धादिति तेषां समुद्भवः ।
स्वच्छवियन्मरुन्क्रष्णोरक्तोऽग्निर्विशदं पयः ।२१
पीता भूमिः पञ्च भूतान्येकैकाधारतोविदुः ।
शब्दस्पर्शरूपरगन्धा भूतगुणाः स्मृताः ।२२
वृत्तं दिवस्तत्षड् बिन्दुलाञ्छितं मातरिश्वनः ।
त्रिकोर्णं स्वस्तिकोपेतं वह्नेरदर्धेन्दुसंयुतम् ।२३
अम्भोजमम्भसो भूमेश्तुरस्रं सवज्रकम् ।
तत्तद्भूतसमाभानि विदुर्बुधाः ।२४
वर्णैः स्वैं रञ्चितान्याहुः स्वस्वनामावृतान्यपि ।
धरादिपञ्चभूतानां निवृत्याद्याः कलाः स्मृताः ।२५

रस से जल, गन्ध से भूमि, इस रीति मे उनकी उत्पत्ति होती है। आकाश स्वच्छ है—मरुत् का कृष्ण वर्णहोता है—अग्नि रक्तवर्ण वाला है, पय विशद होता है। भूमि पीतवर्ण वाली होती है। ये पांच भूत हैं जो एक एक के आधार से समझे जाते हैं। शब्द—स्पर्श—रूप—

रस और गन्ध भूतों के गुण होते हैं—ऐसा कहा गया है। २१। २२। दिव वृत्त है, उससे षड्बिन्दुओं से लाञ्छित वायु है–यह स्वस्तिक से युक्त त्रिकोण है— वह्नि अर्ध चन्द्र से संयुक्त होता है। २३। भूमि के अम्भ से चतुरस्र वज्र सहित अम्भोज होता है। बुध गण उस भूत के समान आभा वाले मन्डलों को जानते हैं। २४। इनको अपने वर्णों से अञ्चित और अपने-अपने नामों से आकृत भी है। धरा आदि पाँच भूतों को निवृत्ति आदि कलाएँ कही गयी हैं। २५।

निवृत्तिः सुप्रतिष्टा स्याद्विद्या शान्तिरनन्तरम्।
शान्त्यतीतेति विज्ञेया नाददेहसमुद्भवाः।२६
पञ्चभूतात्मकं सर्वं चराचरमिदं जगत्।
अचरा बहुधा भिन्ना गिरिवृक्षादिभेदतः।२७
चरास्तु त्रिविधाः प्रोक्ता स्वेदाण्डजजरायुजाः।
स्वेदजाः क्रिमिकीटाद्या अण्डजाः पन्नगादयः।२८
जरायुजा मनुष्याद्यास्तेषु नृणां निगद्यते।
उद्भवः पुंस्त्रियोयोगात् (?) शुक्रशोणितसंयुतान्।२९
बिन्दुरेको भवेद्गर्भमुभयात्म क्रमादसौ।

रजोऽधिके भवेन्नारी भवेद्रेतोऽधिके पुमान्।३०

निवृत्ति-सुप्रतिष्ठा-विद्या-शान्ति-शान्त्यतीता ये नायदेह से समुद्भव वाली कलाएँ जाननी चाहिये।२६। यह स्थावर-जङ्गम चराचर जगत् सम्पूर्ण पाचों भूतों के ही स्वरूप वाला है। अचर पर्वत और वृक्ष आदि के भेदोंसे बहुत प्रकारके भिन्न-भिन्न होते हैं।२७।चर अर्थात् जङ्गमतीन प्रकार के होते हैं–कुछ स्वेदज हैं कुछ अन्डज होते हैं-और कुछ जरायुज हुआ करते हैं। स्वेद अर्थात् पसीने से समुत्पन्न होने वाले कृमि और कीट आदि होते हैं। अन्डों से उत्पन्न होने वाले पन्नग आदि हैं।२८। जरायुज मनुष्य आदि हैं उनमें नर-नारी कहे जाया करते हैं। इनकी उत्पत्ति पुरुषों और स्त्रियोंके योगसे हुआ करती है, अर्थात् पुरुषके वीर्य और स्त्री के रज के संयोग होने से होती है।२९। वह एक बिन्दु क्रम

से उभय स्वरूप वाला गर्भ होता है । रज के अधिक हो जाने पर नारी की उत्पत्ति होती है और वीर्य के अधिक होने पर पुमान् होता है ।३०।

उभयोः समतायां तु नपुंसकमिति स्थितिः ।
पूर्वकर्मानुरूपेण मोहपाशेन यन्त्रितः ।३१
कश्चिदात्मा तदा तस्मिन् जीवभावं प्रपद्यते ।
अथ मात्राहृतैरन्नपानाद्यैः पोषितः क्रमात् ।३२
दिनात् पक्षात् ततो मासात् वर्द्धते तत्वदेहवान् ।
दोषैर्दूष्यैः सुखं प्राप्तो व्यक्ति याति निजेन्द्रियैः ।३३
वातपित्तकफा दोषाः दष्याः त्यु: सप्त धातवः ।
त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि तान्विदुः ।३४
ज्ञानेन्द्रियाणि श्रोत्रत्वग् दृग्जिह्वानासिका विदुः ।
ज्ञानेन्द्रियार्थाश्शब्दाद्याः स्मृताः कर्मेन्द्रियाण्यपि ।३५
वाक्पाणिपाददाय्वन्धुसंज्ञान्याहुर्मनीषिणः ।
वचनानादानगतयो विसर्गानन्दसंयुताः ।३६

यदि रज और वीर्य दोनोंकी समता होती है अर्थात् दोनो ही परिमाण में समान होते हैं तो नपुंसक की उत्पत्ति हुआ करती है । जो पूर्व जन्म के किये हुए कर्मों के अनुसार मोह के पाश से यान्त्रित होकर ही जन्म का ग्रहण किया जाता है । ३१ । कोई भी आत्मा उस समय में उसमें जीव के भाव को प्राप्त किया करता है । इसके अनन्तर मात्रा के द्वारा समाहृत अन्न-पानादि से क्रम से वह पोषित हुआ करता है । ३२ । वह तत्व देहधारी दिन पक्ष-मास के क्रम से बड़ा हो जाया करता है । दोषों से दूष्य अपनी इन्द्रियों के द्वारा सुख को प्राप्त होकर व्यक्तित्व को प्राप्त हुआ करता है, अर्थात् प्रकट होता है । वात-पित्त-कफ में दोष दूष्य हैं । सात धातुएँ होती हैं अर्थात् शरीरमें रहने वाली सात धातुएँ कहलाती हैं । त्वचा-रुधिर-मांस-मेद-अस्थि-मज्जा और शुक्र ये सात धातुएँ हैं ।३३-३४। ज्ञानेन्द्रियाँ-श्रोत्र-त्वचा-नेत्र-जिह्वा-

नासिका ये पाँच हैं। ज्ञानेन्द्रियों के शब्द आदि अर्थ अर्थात् विषय होते हैं। ऐसा बताया गया है। पाँच ही कर्मेन्द्रियाँ होती हैं, कर्मेन्द्रियों के नाम ये हैं—वाक्-पाणि (हाथ)-पाद-पायु और अन्धु अर्थात् लिङ्ग। मनीषियोंने इनको विषय अर्थात् कर्मभी बतलाये जातेहैं—वचन, आदान, गमन, विसर्ग और आनन्द ये पाँचों क्रम से कर्म हैं।३५-३६।

कर्मेन्द्रियार्थाः संप्रोक्ता अन्तःकरण मात्मनः।
मनोबुद्धिरहङ्कारश्चित्तं च परिकीर्तितम्।३७
दशेन्द्रियाणि भूतानि मनसा सह षोडश।
विकाराः स्युः प्रकृतयः पञ्चभूतान्यहङ्कृतिः।३८
अव्यक्तं महदित्यष्टौ तन्मात्राश्च महानपि।
साहङ्कारा विकृतयः सप्त तत्त्वविदोविदुः।३९
अग्नीषोमात्मकोदेहो बिन्दुर्यदुभयात्मकः।
दक्षिणांशः स्मृतः सूर्यो वामभागो निशाकरः।४०
नाडीदेश विदुस्तासु मुख्यास्तिस्रः प्रकीर्त्तिताः।
इडा वामे तयोर्मध्ये सुषुम्णा पिङ्गला परे।४१
मध्या भास्वपि नाडीस्यादग्नीषोमस्वरूपिणी।
गान्धारी हस्तिजिह्वाख्यासुपूषाऽलम्बुषा मता।४२
यशस्विनी शंखिनी च कुहूः स्युः सप्त नाडयः (डिकाः)।
नाड्योऽनन्ताः समुत्पन्नः सुषुम्णा पञ्चपर्वसु।४३
मूलाधारोद्गतप्राणस्ताभिर्व्याप्नोति तत्तनुम्।
वायवोऽत्र दश प्रोक्ता वह्नयश्च दश स्मृताः।४४
प्रापाद्या मरुतः मञ्चः नागः कूर्म्मो धनञ्जयः।
कृकलः स्याद्देवदत्त इति नामभिरीरिताः।४५

ये कर्मेन्द्रियाँ बतला दी गयी हैं। अब आत्मा के अन्तकरण अर्थात् अन्दर में रहने वाली इन्द्रियाँ मन-बुद्धि-अहङ्कार-और चित ये कही गयी हैं।३७। दश ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ तथा पाँचभूत और सोलहवाँ मन ये विकार हैं जो प्रकृतियों के हैं। पाँचभूत-अहङ्कार-अव्यक्त

और महतत्व ये आठ हैं। तन्मात्राएँ-महान् अहङ्कार के सहित सात विकृतियाँ है ऐसा तत्वों के ज्ञाता कहते हैं।३८-३९। यह देह अग्नि और सोम के स्वरूप वाला होता है क्योंकि बिन्दु उभयात्मक ही होता है। दाहिना अंश सूर्य कहा गया है और बाँया भाग सोम होता है। दश नाड़ियाँ होती है उनमें भी तीन नाड़ियाँ मुख्य कही गयी हैं—शरीर के मध्य में नवाभाग में इडा नाड़ी है। दूसरी सुषुम्ना और पिङ्गला है। उनमें भी मध्य में रहने वाली नाड़ी अग्नि और सोम के स्वरूप वाली होती है। गान्धारी—हस्तिजिह्वा—सुपूषा—अलम्वुषा—यशस्वनी—शंखिनी और कुहू ये सात नाड़ियाँ होती हैं। इन से अनन्त नाड़ियाँ समुत्पन्न हुई हैं। सुषुम्णा पाँच पर्वों में से सब में सब ओर बलवान् प्राण वायु है जो मूलाधार से उद्गत होता है और उसके शरीर में व्याप्त रहता है। इसमें दश वायु कही गयी हैं और वह्नियाँ भी दश हैं।४०-४४। प्राण—अपान—उदान—ज्ञान और समान ये पाँच हैं और नाग-कूर्म-धनञ्जय—कृकल और देवदत्त ये पाँच इनके नाम कहे गये हैं।४५।

अग्नयो दोषदूष्येषु संलीना दश देहिनः।
बुभुक्षा च पिपासा च प्राणस्य, मनसः स्मृतौ।४६
शोकमोहौ, शरीरस्य जरामृत्यु षडमर्यः।
स्वाय्वस्थिमज्जानः शुक्रात् त्वङ् मांसास्रोणि शोणितात्।४७
षांटकौशिकमिद प्रोक्तं सर्वदेहेषु देहिनाम्।
इत्थभूतस्तदा गर्भे पूर्भजन्मशुभाशुभम्।४८
स्मरंस्तिष्ठति दुःखात्मा चछन्नदेहो जरायुजा।
कालक्रमेण स शिशुर्मातरं क्लेशयन्नपि।४९
स पिण्डितशरीरोऽथ जायतेऽयमवाङ् मुखः।
क्षणन्मिष्मतें निश्चेष्टी मीत्या रोदितु (दन) मिच्छति।५०

देहधारियों के दोष दूष्यों में दश अग्नियाँ संलीन रहती हैं। उनके नाम ये हैं—कल्माष-कुसुम-दहन-शोषण-महाबल-पीडर-पतङ्ग-स्वर्ण—

अगाध हैं। भूख और पिपासा प्राण के-शोक और मोहमन के-जरा और मृत्यु शरीर की–ये छः उर्मियाँ कही गयी हैं । स्नायु-मज्जा और अस्थि शुक्रसे त्वक्–मांस शोणित से–वह देहधारियोंके देहों में षांट्कौशिककहा गया है। इस प्रकारसे स्थित यह गर्भमें आता है और उस समयमेंअपने पूर्व जन्म में किये हुए शुभ-अशुभ कर्मों का स्मरण करता हैं । यह बहुत ही दुःखित रहतेहुये स्थित रहता है, इसकासब शरीर जरायुसे ढकाहुआ होता है। काल स क्रमसे वह शिशु अपनी माता को क्लेशित करताहुआ भी गर्भ में रहता है। उसका शरीर पिण्डित रहता है और वह नीचेकी ओर मुख वाला जन्म लिया करता है। क्षण में ही यह विस्मृति वाला-निश्रेष्ठ होता हुआ अपने रुदन करनेकी इच्छा किया करता है।:६-५०।

ततश्चैतन्यरूपा सा सर्वगा विश्वरूपिणी ।
शिवसन्निधिमासाद्य नित्यानन्दगुणोदया ।।५१
दिक्कालाद्यनवच्छिन्ना सर्वदेहानु (वेदार्थ) गा शुभा ।
परापरविभागेन परशक्तिरियं स्मृता ।।५२
योगिनां हृदयाऽम्भोजे नृत्यन्ती नित्यमञ्जुला ।
आधारे सर्वभूतानां स्फुरन्ती विद्युदाकृति ।।५३
शंखवर्तक्रमाद्देवी सर्वमावृत्य तिष्ठति ।
कुण्डलीभूतसर्पाणामङ्गश्रियमुपेयुषी ।।५४
सर्वदेवमयी देवी सर्वमन्त्र (वर्ण) मयी शिवा ।
सर्वतत्वमयी साक्षात् सूक्ष्मत्सूक्ष्मतरा विभुः ।।५५

इसके अनन्तर वह चैतन्यरूप वाली-सबमें स्थित-विश्व रूपिणी-शिव के सान्निध्य को प्राप्त करके नित्यानन्द गुणों के उदययुता-दिशा और काल आदि से अनवच्छिन्ना-सबके देहों में अनुगमन करने वाली शुभा पर और अपर के विभागसे यह पराशक्ति कही गयी है।५१-५२। योगियों के हृदय कमल में नित्य ही सहसा नृत्य करती हुई-समस्त प्राणियों के आधार में विद्युत की आकृति वाली यह स्फुरण करती हुई ।५३। शंख के आवर्त के क्रम से यह देवी सबको आवृत्त करके स्थित रहा करती है। यह कुण्डलीभूत सर्पों की अङ्गश्री को प्राप्त होने

वाली है ।५३-५४। यह देवी सब देवों से परिपूर्ण है और सव मन्त्रों से पूर्ण शिवा है । सज तत्वों से परिपूर्ण साक्षाव् सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतरा और विभु है ।५५।

त्रिधामजननी देबी शव्दब्रह्मस्वरूपिणी ।
द्विचत्वारिंशद्वर्णा मा पञ्चाशद्वर्णरूपिणी ।५६
गुणिता सर्वगात्रेषु (ण) कुण्डली परदेवता ।
विश्वात्मना प्रबुद्धा सा सूते मन्त्रमयं जगत् ।५७
एकधा गुणिता शक्तिः सर्वविश्वप्रवर्त्तिनी ।
वेदादिबोजं श्रीबीजं शक्तिबीजं मनोभवम् ।।५८
प्रासादं तुम्बुरु पिण्डं (वीज) चिन्तापत्नं गणश्वरम् ।
मार्त्तण्डभैरवं दौर्गं नारसिंहं वराहजम् ।।५९
वासुदेवं हयग्रीवं बींजं श्रीपुरुषोत्तमम् ।
अन्यान्यपि च बीजानि तदात्पादयति ध्रुवम् ।।६०

यह त्रिधाम जननी है और यही देवी शब्द ब्रह्म के स्वरूप वाली है। बयालीस वर्णो के रूप वाली तथा पचास वर्णो के स्वरूप में रहने वाली है। सब गात्रों में गुणिता यह कुण्डली पर देवता है। विश्वात्मा के द्वारा प्रबुद्ध की गयी वह मन्त्रमय जगत् को प्रसूत किया करती है ।५६। ५७। एक प्रकार से गुणिता शक्ति सम्पूर्ण विश्व के प्रवर्त्तन करने वाली है । वेदादि बीज को-श्री बीज को-शक्ति बीज को-मनोभव को-प्रसाद-तुम्बुरुपिण्ड को-चिन्तारत्न को-गणेश्वर को-मार्त्तण्ड भैरव, दौर्ग, नारा-सिंह-वराहज वासुदेव-हयग्रीव बीज को-श्रीपुरुषोत्तम की और अन्यान्य बीजों को भी उस समय वे उत्पादित निश्चित रूप से किया करती है ।५८-६०।

यदा भवति सा संवित द्विगुणीकृतविग्रहा ।
हंसवर्णौ परात्मानौ शव्दार्थौ वासरक्षये ।।६१
सृजत्येपा परा देवं तदा प्रकृतिपूरुषौ ।
यद्यदन्यज्जगत्यस्य: युग्म तत्तदजायत ।।६२

त्रिगुणीकृतसर्वाङ्गी चिद्रूपा शिवगेहिनी ।
प्रसूते त्रैपुरं मन्त्रं शक्तिर्विनायकम् ।६३
पाशाद्यं त्र्यक्षरं मन्त्रं त्रैपुरं चन्डनायकम् ।
सौरं मृत्युञ्जयं शक्ति शम्भवं विनतासुतम् ।६४
वागीशीत्र्यक्षर मन्त्रं नीलकन्ठं विषापहम् ।
यन्त्रं त्रिगुणितं देव्या लोकत्रयगुणत्रयम् ६५

जिस समय में वह संवित् द्विगुणी कृत विग्रह वाली होती है तो वासर के क्षय में हसवर्ण परात्मा शव्दार्थोका यह सृजन करती है। यह परा देवी उस समय में प्रकृति और पुरुष का सृजन किया करती है। जो-जो भी इस जगत् मे है वह युग्म उत्पन्न होता है ।६१-६२। यह चिद्रूपा अर्थात् चैतन्यके स्वरूप वाली शिवकी गृहिणी त्रिगुणी कृत सब अङ्गों वाली होकर त्रैपुर मन्त्रों और शक्ति विनायक मन्त्र को प्रसूत किया करती है ।६३। पाशाद्य तीन अक्षरों वाला मन्त्र है और त्रैपुर चन्डनायक मन्त्र है । सौर–मृत्युञ्जय शक्ति–शाम्भव–विनतासुत वागीशी–ये तीन अक्षरों वाला मन्त्र है। नीलकन्ठ विष के अपहरण करने वाला होता है। देवी का त्रिगुणित मन्त्र होता है। लोक तीन हैं और गुण तीन है ।६४-६५।

धामत्रयं सा वेदानां त्रयं वर्णत्रयं शुभा ।
त्रिपुष्करं स्वरान्देवी ब्रह्मादीनां त्रयं त्रयम् ।६६
वह्नेः कालत्रयं शक्तित्रयं वृत्तित्रयं मतम् ।
नाडीत्रयं त्रिवर्गं सा यद्यदन्यत् त्रिधा मतम् ।६७
चतुःप्रकारगुणिता शाम्भवो शर्मदायिनी ।
तदानी पद्मिनीबन्धोः करोति चतुरक्षरम् ।६८
चतुर्वर्णं महादेव्या देवीतत्वचतुष्टयम् ।
चतूरः सागरातन्तः करणानां चतुष्टयम् ।६९
सूक्ष्मादींश्चतुरो भावान् विष्णोर्मूर्त्तिचतुष्टयम् ।
चतुष्टयं गणेशानामात्मादीना चतुष्टयम् ।७०

वह शुभा तीन धाम है तीन वेद हैं और तीन वर्ण है। देवी तीन पुष्कर–स्वर और ब्रह्मादिक का भी त्रय है ।६६। तीन अग्नियाँ हैं– तीन काल हैं, शक्तिका भी त्रय है और तीन वृत्तियाँ हैं। तीन नाड़ियाँ हैं तीन वर्ग हैं, वह ऐसी है और जो जोभी अन्य है वह सब तीनप्रकार का ही है ।६७। चार प्रकार से गुणित शाम्भवी कल्याण देने वाली है। उस समय में पद्मिनी-बन्धु का चार अक्षर वाला करती है। यह वन्त्रान्तर में कथित प्रणव-माया और हंस वर्णोंके स्वरूप वाला है ।६८। महादेवी के चार वर्ण है और देवी के तत्व भी चार होते हैं। चार ही सागर हैं और अन्तःकरण भी मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त चार होते हैं। सूक्ष्म आदि चार भाव है और भगवान् विष्णु की मूर्तियाँ भी चार ही होती हैं। गणेश आदि का चतुष्टय होता है और आत्मादि भी चार हैं ।६९-७०।

तथापूजादिकं पीठं धर्मादीनां चतुष्टयम् ।
दमकादीन् गजान् देवा यद्यदन्यच्चतुष्टयम् ।७१
पञ्चधा गुणिता पत्नी शम्भोः सर्वार्थदायिनी ।
त्रिपुरा पञ्चकूटं सा तस्याः पञ्चाक्षरद्वयम् ।७२
पञ्चरत्नं महादेव्याः सर्वकामफलप्रदम् ।
पञ्चाक्षरं महेशस्य पञ्चदर्ण गरुत्मनः ।७३
सम्मोहनान्पञ्चकामान्वाणान्पञ्च सुरद्र मान् ।
पञ्चप्राणादिकान् वायून् पंच वर्णान् महेशितुः ।७४
मूर्त्तीः पंच, कलाः पंच पंच ब्रह्म ऋचः क्रमात् ।
सृजत्येषा परा शक्तिर्वेदवेदार्थरूपिणी ।७५

उसी प्रकार से पूजादिक पीठ और धर्मादिका भी चतुष्टय होता है। दमकादि-गज और देव जो जो भी अन्य हैं सबका चतुष्टय ही होता है। ।७१। सब अर्थों की देने वाली शम्भु की पत्नी पाँच प्रकार से गुणित होती हैं। वह त्रिपुरा पञ्चकूट है और उसके पञ्चाक्षर द्वय है। महा-देवी के पाँच रत्न हैं जो सब कामनाओं के फल के प्रदाता हैं। महेश

के पांच अक्षर हैं और गुरुत्मान के पांच वर्ण होते हैं ।७२-७३। पाँच काम वाले समोहन हैं–पाँच वाण है और सुद्रुम भी पाँच होते हैं । पाँच प्राण आदिक वायु है और महेशिला के पाँच वर्ण हैं। मूर्त्तियाँ पाच हैं–कलाएं पाँच हैं–पाँच व्रह्म हैं और क्रम से पाँच ऋचाऐं हैं। यह वेद और वेदार्थ के रूप वाली परा शक्ति सृजन किया करती है। ।७४–७५।

षोढा सा गुणिता देवी धत्ते मन्त्रं षडक्षरम् ।
षट्कुटं त्रिपुरामन्त्र गाणपत्यं षडक्षरम् ।७६
षडक्षरं महेशस्य श्रीकृष्णस्य षडक्षरम् ।
षडक्षरं हिमरुचेर्नारसिंह षडक्षरम् ।७७
ऋतून् बसन्तमुख्यांश्च (१) आमोदादोन् गणाधिपान् ।
कोशानूर्मीन् रसान् शक्तीः शाकिन्याद्याः षडध्यनः ।७८
यन्त्रं षड्गुणितं शक्तेः षडाधारानजीजनत् ।
षड्विधं यज्जगत्यस्मिन् सर्वं तत्परमेश्वरी ।७९
सप्तधा गृणिता नित्या शङ्करार्द्धशरीरिणी ।
सप्तार्ण त्रिपुरामन्त्रं सप्तवर्ण विनायकम् ।८०

छै प्रकार से गुणित शक्ति देवी षडक्षरों वाले मन्त्र को धारण करती है । त्रिपुरा का मन्त्र षटकूट है और गाणपत्य मन्त्रभी छै अक्षरों वाला होता है ।७६। महेश का मन्त्र छै अक्षरो वाला है और श्रीकृष्ण का मन्त्र भी षट् अक्षरोंसे युक्त होता है। हिमरुचि का मन्त्र छै अक्षरों वाला है तथा नरसिंह का मन्त्र भी षडक्षर है ।७७। बसन्त जिनमें प्रमुख है वे ऋतुएं छै हैं और आमोद आदि गणाधिप छै होते हैं। कोश–ऊमियाँ–शक्तियाँ— रसऔर शाकिनी आदिसब छै ही हैं। शक्ति का यन्त्र षड्गुणित है औरछै आधारों की उत्पन्न किया है। इस जगत् में जोभी है वह सब छै प्रकार काही हैं, ऐसीवह परमेश्वरी है ।७८-७९। अब शङ्कर के अर्ध शरीर वाली नित्या देवी सात प्रकार से गुणित

होती हैं। त्रिपुरा का मन्त्र सात वर्णोंसे संयुक्त है और सात वर्णों वाला विनायक मन्त्र है।८०।

सप्तकं व्याहृतीनां सा सप्तवर्णं सुदर्शनम्।
लोकान् गिरीन् स्वरान् धातून् मुनीन् द्वीपान् ग्रहानपि ।८१
समिधः सप्त संख्याताः सप्त जिह्वा हविर्भुजः।
अन्यत्सप्तविधं यद्यत् तदस्याः समजायत ।८२
अष्टधा गुणिता शक्तिः शैवमष्टाक्षरद्वयम्।
विष्णोः श्रीकरनामानं मन्त्रमष्टाक्षरं परम्। ३
अष्टाक्षरं हरेः शक्तेरष्टारयगलं परम्।
भानोरष्ठाक्षरं दौर्गमष्टार्णं परमात्मनः ।८४
अष्टार्णं नीलकन्ठस्य वासुदेवात्मकं मनुम्।
यन्त्रं कामार्गलं दिव्य देवीयन्त्रं घटार्गलम् ।८५

वह व्याहृतियों का सप्तक है और सात वर्णों वाला सुदर्शन मन्त्र होता है। सात ही लोक है - पर्वत सात हैं—स्वर सात हैं—धातुऐं सात हैं—मुनि सात हैं—द्वीप सात हैं और ग्रह भी सात हैं ।८१। सात समिधाऐं कही गई हैं और अग्नि की सात जिह्वाऐं होती हैं । अन्य जो-जो भी सात प्रकार वाले हैं वे इसी से उत्पन्न हुए हैं ।८२। शक्ति आठ प्रकार से गुणित हुई है और शिव का भी अष्टाक्षर द्वय होता है। भगवान् विष्णु का श्रीसुकर नाम वाला मन्त्र आठ अक्षरों वाला श्रेष्ठ होता है। हरि का अष्टाक्षरों वाला मन्त्र होता है और शक्ति का अष्टाक्षर युगल होता है, जो परमश्रेष्ठ है। भानुका आठ अक्षरसे संयुक्तमंत्र होता है—दुर्गा का परमात्मा नीलकन्ठ का तथा वासुदेव का भी आठ आठ अक्षरों वाला मन्त्र होता है। कामार्गल दिव्य मन्त्र है और देवी का यन्त्र घटार्गल होता है ।८३-८५।

गन्धाष्टकं शुभं देवी देवानां हृदयङ्गमम्।
ब्राह्म्याद्या भैरवान् सर्गान मूर्तीराशा वसूनपि ।८६

अष्टपीठं महादेव्या अष्टाष्टकसमन्वितम् ।
अष्टौ ताः प्रकृतोर्विघ्नान्वक्रतुण्डादिकान्क्रमात् ।८७
अणिमादिगुणान्नागान् वह्नेमूर्तीर्यमादिकान् ।
अष्टात्मकं जगत्यन्यत्सर्वं वितनुते सदा ।८८
गुणिता नवधा नित्या सूते मन्त्रां नवात्मकम् ।
नवक शक्तितत्वानां तत्वरूपा महेश्वरी ।८९
नवकं पीठशक्तीनां श्रृङ्गारादीन् रसान्नव ।
माणिक्यादीनि रत्नानि नव वर्गयुतानि सा ।९०

देवी और देवों का हृदयङ्गम शुभ अष्ट गन्ध है। ब्रह्मगणी आदि-भैरव–सर्प मूर्त्तियाँ–दिशाऐं और वसुगण अष्टाष्टक आदि से समन्वित महादेवी के आठ पीठ है। ये प्रकृतियाँ आठ है—विघ्न क्रम से व क्रतुन्ड आदिक–आणिमादि—गण–नाग—वह्निकी मूर्ति–यमादिक अन्य सब जगत्‌में सदा विस्तार करते हैं सब अष्टात्मक ही है।८६। ८७-८८। नित्या नौ प्रकार से गुणित नौ सख्य के स्वरूप वाले मन्त्र को प्रसूत करती है। तत्व रूपा महेश्वरी शक्ति तत्वों का नवक करती है।८९। पीठ शक्तियों का नवक है और श्रृङ्गारादि रस नौ होते हैं। वह माणिक्य आदि रत्न भी जो वर्गो से युक्त है नौ ही है।९०।

नवकं प्राणदूतीनां मन्डलं नवक शुभम् ।
यद्यन्नवात्मकं लोके सर्वमस्या उदञ्चति ।९१
दशधा विकृता शम्भोर्भामिनी भवदुःखहा ।
दशाक्षरं गणपतेस्त्वरितायाा दशाक्षरम् ।९२
दशाक्षरं सरस्वत्या यक्षिण्याः सा दशाक्षरम् ।
वासुदेवात्मकं मन्त्रमश्वारुढा दशाक्षरम् ।९३
त्रिपुरा दशकूटं स्यात् त्रिपुरायाा दशाक्षरम् ।
नाम्ना पद्मावतीमन्त्रां रमामन्त्रां दशाक्षरम ।९४
दशकं शक्तितत्वानां तत्वरूपा महेश्वरी ।
नाडीनां दशकं विष्णोरवतारान् दश क्रमात् ।९५

प्राणदूतियों का नवक है और परम शुभ मन्डल का नवक होता

है। जो-जो भी लोक में नवात्मक है वह सब इसकोही उदञ्चित करता है।९१। शम्भु की भामिनी दश प्रकार से विकृत है जो भक्त के दुख का हरण करने वाली हैं। गणपति का मन्त्र दश अक्षरों वाला है और त्वरिता का दश अक्षरों वाला होता हैं।९२। सरस्वती का मन्त्र दश अक्षरों से युत है तथा यक्षिणी का दशाक्षार है। वासुदेवके स्वरूप वाला मन्त्र और अश्वारूढ़ा का मन्त्र दशाक्षर होता हैं।९३। त्रिपुरा दशकूट है और त्रिपुरा का दश अक्षरों वाला है। नाम से पदमवतो का मन्त्र और रमा का मन्त्र दशाक्षार है।९४। महेश्वरी तत्वरूपा हैं और शक्ति के तत्वों का दशक होता है। क्रम से विष्णु के दश अवतार है और नाड़ियोंका दशक होता है।९५।

दशकं लोकपालानां यद्यदन्यन् सृजत्यसौ।
एकादश क्रमात्संविद्गुणिता सा जगन्मयी।९६
रुद्र कादशनीमाद्याशक्तेरेकादशाक्षारम्।
एकादशाक्षारं वाण्या रुद्रानेकादश क्रमात्।९७
समुद्धिरति सर्वात्मा गुणिता द्वादश क्रमात्।
नित्यामन्त्रं महेशान्याः वासुदेवात्मकं मनुम्।९८
राशीन् मासान् (भानून्) हरेर्मूर्त्तीर्यन्त्रं या द्वादशात्मकम्।
अन्यदेताद्दश सर्वं यत्तदस्यामजायत।९९

लोकपालों का दशक होता है और यह जो जो भी अन्य का सृजन करती है। वह जगन्मयी क्रम से गुणिता सम्वित् एकादश हैं।९६। रुद्र एकादश है और नीमादि शक्ति के एकादश अक्षार है। वाणी का मन्त्र एकादश अक्षारों वाला है और क्रम से रुद्र एकादश होते हैं।९७। गुणिता सर्वात्मा क्रम से द्वादश समुद्धरण करती है। महेशानी का नित्या मन्त्र-वासुदेव के स्वरूप वाला मन्त्र, राशियाँ—मास—हरि की मूर्तियाँ आदि द्वादशात्मक ही है। अन्य ऐसा सब जो है वह इससे उत्पन्न हुआ है।९८-९९।

चतुर्विंशति सत्त्वात्मा यदा भवति शोभना ।
गायत्रीं सवितुः शम्भोः गायत्रीं मदमात्मिकाम् ॥१००
गायत्रीं त्रिष्णुगायत्रीं गायत्रीं त्रिपदात्मनः ।
गायत्रीं दक्षिणामूर्तेः गायत्रीं शम्भुयोषितः ॥१०१
चतुर्विशतितत्त्वानि तस्यामासन् परात्मनि ।
द्वाविंशद्भेदगुणिता सर्वमन्त्रमयी विभुः ॥१०२
सूते मृत्युञ्जयं मन्त्र नारसिंह महामनुम् ।
लवणाद्यं मनुं वरुणस्य महात्मनः ॥१०३
हयग्रीवं मनु दौर्ग वाराहं वह्निननायकम् ।
गणेशितुर्महामन्त्रं मन्त्रमन्नाधिपस्या सा (च) ॥१०४
मन्त्रं श्रीदक्षिणामूर्तेर्मालामन्त्रं मनोभवः ।
त्रैष्टुभं वनवासिन्या अघोराख्यं महामनुम् ॥१०५

चौबीस तत्वों के स्वरूप वाली शोभना होती है । सविता की गायत्री-मदनत्मिका शम्भु की गायत्री-गायत्री-विष्णु की गायत्री त्रिपदात्मा की गायत्री-दक्षिणामूर्त्ति की गायत्री-शम्भयोषित की गायत्री-उस परात्मा में चौबीस तत्व होते हैं । द्वाविंशत् (बाईस) भेद गुणिता सर्वमन्त्रमयो विभु निम्नलिखित मन्त्रों को प्रसूत किया करती है—मृत्युञ्जय मन्त्र, नारसिंह महामन्त्र,लवणाद्य मन्त्र, महात्मा वरुणका मन्त्र,हयग्रीव-मन्त्र, दुर्गा का मन्त्र-बाराह मन्त्र. वन्हिनावक मन्त्र, गणेशका महामन्त्र, अन्नाधिप का मन्त्र-श्री दक्षिणामूर्त्तिका तन्त्र-मनोभव माता मन्त्र-वनवासिनी का त्रैष्टुभ मन्त्र अघोर नामक महा मन्त्र को वह प्रसूत करती है ।१००-१०५।

भद्रकालीमनुं लक्ष्म्या मालामन्त्रं यमात्मकम् ।
मन्त्रं सा देवकीसनोर्म्मन्त्र श्रींपुरुषोत्तमम् ॥१०६
श्रीगोपालमन्त्रं भूमेमन्त्रं तारामन्त्रं क्रमात् ।
महामन्त्रं महालक्ष्म्यामन्त्रं भतेश्वरस्य सा ॥१०७
क्षेत्रपालात्मकं मन्त्रं मन्त्रमापन्निवारणम् ।
सूते मातङ्गिनीं विद्यां सिद्धविद्धां शुभोदयाम् ॥१०८

अनेन क्रमयोगेन गुणिता शिववल्लभा ।
षट्त्रिशतं च तत्वानां (नि) शैवानां (न) रचयत्यहो ॥१०६
अन्यान्मत्रांश्च यन्त्राणि शुभदानि प्रसूयते ।
द्विचत्वारिंशता मूले गुणिता विश्वनायिका ॥११०

लक्ष्मीका भद्रकाली मन्त्र, यमात्मकमाया मन्त्र, देवकीसूनुका मन्त्र, श्री पुरुषोत्तम मन्त्र, श्री गोपाय का मन्त्र, भूमि का मन्त्र और क्रम से तारा का मन्त्र, महालक्ष्मी का महामन्त्र और भूतेश्वर के मन्त्र को वह प्रसूत करती है । क्षेत्रपाल के स्वरूप वाला मन्त्र और आपदाओं के निवारक मन्त्रको वह प्रसव किया करती है । वह मातङ्गिनी विद्याको तथा शुभोदय वाली सिद्ध विद्या को प्रसूत करती है ।१०६-१०८। इस क्रम से गुणों के योगसे शिववल्लभा गुणित होती है और यह शैव चौबीस तत्वों की रचना किया करती है ।१०६। मूल में बयालीस से गुणिता विश्वनायिका अन्य मन्त्रों को और शुभ पद मन्त्रों को प्रसूत किया करती है ।११०।

सा प्रसूते कुण्डलिनी शब्दब्रह्ममयी विभ ।
शक्ति ततो ध्वनिस्तस्मात् नादस्तस्मान्निरोधिका ॥१११
ततोऽर्द्धेन्दुस्ततो विन्दुस्तस्मादामीत्परा ततः ।
पश्यन्ती मध्यमा वाची वैखरी शब्दजन्मभूः ॥११२
इच्छाज्ञानक्रियात्माऽसौ तेजारुपा गुणात्मिका ।
क्रमेणानेन सृजति कुण्डली वर्णमालिकाम् ॥११३
अकारादिसकान्तां द्विचत्वारिंशदात्मिकाम् ।
पञ्चाशद्वारगुणिता पञ्चाशद्वर्णमालिकाम् ॥११४
सूते तद्वर्णतोऽभिन्ना कला रुद्रादिकान् क्रमात् ।
निरोधिका भवेद्वह्निरर्द्धेन्दुः स्यान्निशाकरः ॥११५
अर्कः स्यादुभयोर्योगे बिन्द्वात्मा तेजसां निधिः ।
जाता वर्णा यतो बिन्दोः शिवशक्तिभयादतः ।.११६

अग्निषीमात्मकास्ते स्युः शिवशक्तिमयाद्रवेः ।
येन संभवमापन्नाः सोमसूर्याग्निरूपिणः ।।११७

वह विभु शब्द ब्रह्ममयी कुण्डलिनीको प्रसूत करतीहै । उससे निरोधिका शक्ति होती है फिर उसने ध्वनि होती है और उससे नाद हुआ करता है ।१११। फिर उससे अर्धेन्दु होता है फिर बिन्दु फिर उससे परा होती है । पश्यन्ती मध्यमा, वाणी में वैखरी शब्दों के जन्म का स्थान है । यह इच्छा-ज्ञान और क्रिया के स्वरूप वाली गुणात्मिका तेजके रूप वाली है । इसी क्रम से कुन्डली वर्णों की माला का सृजन किया करती है ।११२-११३। वह अकार के आदि से लेकर सकार के अन्त तक बयालीस वर्णों के स्वरूप वाली होती है ।११४। उन वर्णो से अभिन्न कला क्रम से रुद्रादिक को प्रसूत करती है । दन्हि निरोधिका होती है और अर्धेन्दु निशाकर होता है ।११५। दोनों के योग में बिन्दु के स्वरूप वाला तेजों की निधि सूर्य होता है । क्योंकि इस शिव-शक्ति के भय से वर्ण समुत्पन्न हैं ।११६। वे शिव शक्ति के स्वरूप वाले रवि से अपनी षोमात्मक होते हैं । जिससे सोम-सूर्य और अग्नि के रूप वाले सम्भव हुए हैं ।११७।

।। द्वितीय पटल ।।

ततो व्यक्ति प्रवक्ष्यामि वर्णानां वदने नृणाम् ।
प्रेरिता मरुता नित्यं सुषुम्णारन्ध्रयिर्गताः ।।१
काण्ठादिकरणैर्वर्णाः क्रमामाविर्भवन्ति ते ।
एषु स्वराः स्मृताः सौम्याः स्पर्शाः सोराः शुभोदयाः ।।२
आग्नेया व्यापकाः सर्वोसोमसूर्याग्निदेवताः ।
स्वराः षोडश विख्याताः स्पर्शास्ते षञ्चविंशतिः ।।३

तत्वात्मनः स्मृताः स्पर्शाः मकारः पुरुषा यतः ।
व्यापका दश ते कामधनधर्मप्रदायिनः ॥४
ह्रस्वः स्वरेषु पूर्वोक्तः परो दीर्घः क्रमादिमे ।
शिवशक्तिमयास्ते स्युर्बिन्दुसर्गावसानकाः ॥५

इसके अनन्तर मनुष्यों के मुख में वर्णों की अभिव्यक्ति को बतलाया जायगा। नित्य ही वायु के द्वारा प्रेरित हुए सुषुम्णा के रन्ध्र से निर्गत हुए कण्ठ आदि करणों द्वारा क्रम से वर्ण आविर्भूत होते हैं। इनमें सौम्य-शुभोदय-स्पर्श-सौर स्वर कहे गये हैं।१-२। सब सोम सूर्य और अग्नि देवता आश्रेय और व्यापक हैं। स्वर सोलह विख्यात है और स्पर्श संज्ञक 'क' से आदि लेकर मकारपर्यन्त पच्चीस हैं। ये सभी स्पर्श सज्ञा वाले वर्ण तत्व के स्वरूप वाले कहे गये हैं मकार पुरुष अर्थात् परमात्मा विश्वरूप होता है। वे दश व्यापक हैं जो धन-धर्म और काम के प्रदान करने वाले होते हैं।३-४। स्वरो में ह्रस्व पूर्वोक्त है और दीर्घ पर है। क्रम से ये शिव शक्तिमय होते हैं। जिनके अवसान में बिन्दु और विसर्ग हैं।५।

बिन्दुः पुरानुः रविः प्रोक्तः सर्गः शक्तिर्निशाकरः ।
स्वराणां मध्यगं यच्च तच्चतुष्ट नपुंसकम् ॥६
पिङ्गलायां स्थिता ह्रस्वा इडायां सङ्गताः परे ।
सुषुम्णा मध्यगा ज्ञेयाश्चत्वारो ये नपुंसकाः ॥७
विना स्वरैस्तु नान्येषां जायते व्यक्तिरञ्जसा ।
शिवशक्तिमयान्प्राहुस्तस्माद्वार्णान्मनीषिणः ॥८
कारणात्पञ्चभूतानामुद्भूता मातृका यतः ।
ततो भूतात्मका वर्णाः पञ्चपञ्चविभागतः ॥९
याय्वग्निभूजलाकाशाः पञ्चाशल्लिपयः क्रमात् ।
पञ्च ह्रस्वः पञ्च दीर्घा बिन्द्वन्ता सन्धिसम्भवा ॥ १०
पञ्चाशत्कादयः षक्षलसहान्ताः समीरिताः ।
सोमसूर्याग्निभेदेन मातृकावर्णसम्भवाः ॥११

बिन्दु पुमान् है और रवि कहा गया है। विसर्ग शक्ति निशाकर है स्वरों में जो मध्य में स्थित है वह चतुष्क नपुंसक होता है।६। ह्रस्व पिङ्गला में स्थित होते हैं–दूसरे इड़ा में सङ्गत हैं–मध्य में रहने वाले सुषुम्णा में जानने चाहिये जो चार नपुंसक हैं।७। स्वरों के बिना अन्य वर्णों की अभिव्यक्ति शीघ्र नहीं हुआ करती है। इस कारण से मनीषी गण वर्णों को शिव शक्ति से परिपूर्ण कहा करते है।८। क्योंकि पञ्च-भूतोंके कारण से मातृ का समुद्भूत हुई है। इससे पाँच-पाँच के विभाग से वर्ण भूतात्मक होते हैं।६। वायु, अग्नि, भू, जल और आकाश क्रम से पचास लिपियाँ हैं। पाँच ह्रस्व है और पाँच दीर्घ है–जिनके अन्त में बिन्दु है वे सन्धि सम्भव होते हैं। 'कादि ष-क्ष-ल-स' और 'ह' अन्त वाले पचास कहे गये हैं। ये सोम-सूर्य और अग्नि के भेद से मातृका वर्ण से सम्भव होने वाले हैं।१०-११।

अष्टत्रिंशत्कलास्ततन्मण्डहेव व्यवस्थिताः।
अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टीरतिवृतिः ॥१२
शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरङ्गदा।
पूर्णा पूर्णामृता कामदायिन्यः स्वरजः कला ॥१३
तपिनी तापनी धूम्रा मरीचिर्ज्वालिनी रुचिः।
सुषुम्णा भोगदा विश्वा बोधिनी धारिणी क्षमा ॥१४
कभाद्या वसुदाः सौयष्ठडान्ता द्वादशेरिताः।
धूम्रार्चिरुष्मा ज्वलिनीं ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिकी ॥१५

उन-उनके मण्डली में अड़तीस कलाऐं व्यस्थित हैं। अमृता, मानदा, पूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्तिज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अङ्गदा, पूर्णा, पूर्णामृत, ये स्वरों मे सात कलायें काम दायिनी हैं।१२-१३। तपिनी, तापिना, धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्णा, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी, क्षमा, कभाद्या, वसुदा, सौर्यष्ठडान्त द्वादश कही गयी है। धूम्रार्चि, ऊष्मा, ज्वालिनी, विस्फु-लिङ्गनी।१४-१५।

सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहा अपि (इमाः) ।
यादीनां दशवर्णानां कला धर्मप्रदा इमाः (स्मृताः) ॥१६
अभयेष्टकरा ध्येयाः श्वेतपींतारुणाः क्रमात् ।
तारस्य पञ्चभेदेभ्यः पञ्चाद्वर्णगाः कलाः ॥१७
सृष्टिर्वृ (ऋ) द्धिः स्मृतिर्मेधा कान्तिर्लक्ष्मी धृतिः स्थिरा ।
स्थितिः सिद्धिरिति प्रोक्ताः कचवर्गकलां क्रमात् ॥१८
अकारादु ब्रह्मणोत्पन्नास्तप्तचासीकरप्रभाः ।
एताः कर धृतांक्षस्रक्पङ्कजद्वयकुण्डिकाः ॥१६
जरा च पालनी शान्तिरीश्वरी रतिकामुके ।
वरदा ह्लादिनी प्रीतिर्दीर्घाः स्पुष्टतवर्गगाः ॥२०

सुश्री, स्वरूपा, कपिला, हव्यकव्यवहा और 'यादि' दश वर्णों की ये कलायें धर्म प्रद हैं ।१६। क्रम से श्वेत-पीत और अरुण अभय तथा अभीष्ट की करने वाली ध्यान के करने के योग्य है । तार (प्रणव) के प्राप्त भेदों से पचास वर्णों में रहने वाली कलायें ।१७। सृष्टि, वृद्धि, स्मृति, मेधा, कान्ति, लक्ष्मी, धृति, स्थिरा, स्थिति, सिद्ध ये क्रम से क च बर्णों की कलाये हैं ।१८। ये अकार से ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न, तप्त सुवणं के समान प्रभा वाली हैं । ये करों में अक्ष माला, दो कमल और कुण्डिकाको धारण करने वाली हैं ।१६। जरा, पालिनी, शान्ति, ईश्वरी, रति, कामुका, वरदा, ह्लादिनी, प्रीति, दीर्घा ये वृत्त वर्गो में रहने वाली हैं ।२०।

उकरा विष्णनोत्पन्नास्तमालदलसन्निभाः ।
अभीति शंख (वर) चक्रेष्टवाहवः परिकीर्त्तिताः ।२१
तीक्ष्णा रौद्रा भया निद्रा तन्द्री क्षुत् क्रोधिनी क्रिया ।
उत्कारी मृत्युरेताः स्युःकथिताः पयवर्गगाः ।२२
रुद्रेण मार्णादुत्पन्नाः शरच्चन्द्रनिभप्रभाः ।
उद्वन्त्योऽभयं शूलं कपालं बाहुभिर्वरम् ॥२२

ईश्वरेणोदिता बिन्दोः पीता श्वेताऽरूणाऽसिता ।
अनन्ता च पवर्णस्था जपाकुसुमसन्निभाः ॥२४
अभयं हरिणं टङ्कं दधाना वाहुभिर्वरम् ।
निवृत्तिः यप्रतिष्ठा स्याद्विद्याशान्तिरनन्तम् ॥२५

उकार भगवान् विष्णु के द्वारा समुत्पन्न है और ये तमाल दल के सदृश हैं। इनके करकमलों में अभयदान शंख, चक्र, वरदान कीर्तित किये गये हैं ।२१। तीक्ष्णा, रौद्रा, भया, निद्रा, क्षुत्, क्रोधिनी, क्रिया, उत्कारी, मृत्यु, ये पय वर्गों में से स्थित कही गयी हैं ।२२। ये रुद्रदेव के द्वारा मार्ग से समुत्पन्न हैं और शरत्काल के चन्द्र के समान प्रभा से युक्त है। ये अपनी बाहुओं के द्वारा अभयदान शूल, कपाल और वरदान को उद्वहन करने वाली हैं ।२३। ईश्वर के द्वारा उदित बिन्दु से पीत, श्वेत, करुण और असित और अनन्त है जो पवर्ण में स्थित होती है तथा जपा के पुष्प न सदृश है ।२४। ये अपनी बाहुओं से अभय, हरिण टंक और वरदान को धारण करने वाली हैं। ये निवृत्ति, सप्रतिष्ठा, विद्या और शान्ति हैं ।२५।

इन्दिका दीपका चैव रेचिका मोचिका परा ।
सूक्ष्मा सूक्ष्मामृता ज्ञानामृता चाप्यायिनी तथा ॥२६
व्यापिनी व्योमरूपा स्युरनन्ताः स्वरसंयुताः
सदाशिवेन सहिता नादादेताः सितत्विषः ॥२७
अक्षस्रक् पुस्तकगुणकपालाढयकराम्बुजाः ।
न्यासे तु योजयेदादौ षोडशस्वरजाःकलाः । २८
इति रञ्चाशदाख्याताः कलाः सर्वसमृद्धिदाः ।
श्रीकण्ठानन्तसूक्ष्माश्च त्रिमूर्त्तिरमरेश्वरः ॥२९
अर्धीशोभारभूतिश्चातिथीशः स्थाणुकः हरः ।
झिष्टीशो भौतिकः सद्योजातश्चानुग्रहेश्वरः ॥३०
अक्रूरश्च महासेनः षोडशस्वरमूर्त्तयः ।
पश्चात् क्रोधोश-चण्डीश-पञ्चान्तक-शिवोत्तमाः ॥३१

अप्यैकरुद्रकूर्मै कनेत्राह्वचतुराननाः।
अजेयः सर्वसोमेशौतथालांघलितारुका ॥३२
अर्द्धनारीश्वरश्चोमाकान्तश्चाषाढिदण्डिनौ ।
स्युरद्रिर्मीनमेषाख्यौलोहितश्च शिखी तथा ॥३३
छगलण्डद्विरण्डेशौ महाकालसवालिगौ ।
भुजङ्गेशापनाकींशखड्गीशाख्या वकस्तथा ॥३४
श्वेतभृग्वीशनकृलिशिवाःसर्व्वर्त्तकस्ततः ।
एते रुद्राः स्मृता रक्ता धृतशूलकपालकाः ॥३५

इन्द्रिका, दीपका, रेचिका, सूक्ष्मा, सूक्ष्मा, सूक्ष्मामृता, ज्ञानामृता, आप्यापिनी, व्यापिनी, व्यामरूपा, स्वरों से समन्वित अनन्त है। सदाशिव के सहित ये सित कान्ति वाली नाद से हुई है।२६-२७। इनके करकमल अक्षमाला-पुस्तक-गुण और कपाल से युक्त हैं। न्यास करने के समय 'म' आदि में सोलह स्वरों से समुत्पन्न कलाओं को योजित करना चाहिए।२८। ये इस प्रकार से समस्त समृद्धियों के देने वाली पचास कलाये कही गयी हैं। स्वरों की सोलह मूर्त्तियाँ होती हैं—श्रीकण्ठ, अनन्त, सूक्ष्म, त्रिमूर्ति, अमरेश्वर, अर्धीश, भारभूति, अर्घीश, भारभूति, अतिथीश, स्थाणुक, हर,झिण्टीश, भौतिक, सद्योजात, अनुग्रहेश्वर, अक्रूर, महासन, ये ही सोलह मूर्त्तियाँ हैं। पीछे क्रोधीश, चण्डोश, पंचान्तक, शिवोत्तम, एक रुद्र, कूर्म, एक नेत्र, चतुरानन, अजेय, शर्व, सोमेश, लाङ्,घालिता, रुक, अध नारीश्वर, उमाकान्त, आषाढ़ी, दण्डी, अद्रि, मीन, मेष, लोहित, शिखी, छगलण्ड, द्विरण्डेश, महाकाल, वाणी, भुजङ्गेश, पिनाकी, खड्गीश, वक, श्वेतभृगु, ईश, नरति, शिव, संवर्तक, ये रुद्र कहे गये हैं जिनका रक्त वर्ण है। और ये त्रिशूल और कपाल को धारण किये हुए हैं।२९-३५।

पूर्णोदरीस्याद्विरजा शाल्तली तदनन्तरम् ।
लोलाक्षी वर्त्तुलाक्षी च दीर्घघोणा समीरिताः ॥३६

सुदीर्घमुखिगोमुख्यौ दीर्घजिह्वा तथैव च ।
कुण्डोदर्यूर्ध्वकशी च तथा विकृतमुख्यपि ।३७
ज्वालामुखी तथा श्रेया पश्चादुल्कामुखी तथा ।
सुश्रीमुखी च विद्या तु ख्याताः स्यु स्वरशक्तयः ३८
महाकालीसरस्वत्यौ सर्वसिद्धिमन्विता ।
गौरी, त्रैलोक्यविद्या च मन्त्रशक्तिस्ततः परम् ।३६
आत्मशक्तिभूतमाता तथा लम्बो (म्भो) दरी मता ।
द्राविणी नागरी भूयः खेचरी चापि मञ्जरी ।४०

पूर्णोदरी, विरजा, शाल्मली, लोलाक्षी, वर्तुलाक्षी, दीर्घघोणा, सदीर्घमुखी-गोमुखी,दीर्घ-जिह्वा-कुन्डोदरी-ऊर्ध्वकेशी-विकृत मुखो-ज्वाला मुखी, उल्कामुखी, सुश्री मुखी, विद्या, ये स्वरों की शक्तियों प्रसिद्ध है ।३६-३८। महाकाली, सरस्वती, सर्व सिद्धि गौरी, त्रैलोक्य विद्या, मन्त्र,शक्ति, आत्म, शक्ति,भूतमाता, लम्बोदरी, द्राविणी, नागरी, खेचरी, मंजरी, ।३६-४०।

रूपिणी वारिणी पश्चात् काकोदर्यपि पूतना ।
स्याद्भद्रकाली योगिन्यो शंखिनी गर्जिनी तथा ।४१
कालरात्रिश्चकुब्जिन्या कपर्दिन्यपि वज्रया ।
जया च सुमुखेश्वर्यौ रेवती माधवी तथा ।४२
वारूणी वायवी प्रोक्ता पश्चाद्रक्षोविदारिणी ।
ततश्चसहजा लक्ष्मा व्यापिनी माययाऽन्विना ।४३
एता रुद्राङ्कपीठस्थाः सिन्दराकूणविग्रहाः ।
रक्तोत्पलकपालाभ्यामलङ्कृतकराम्बुजाः ।४४
केशवनारायणमाधवगोविन्दविष्णवः ।
मधुसूदनसंज्ञोऽप्यः स्यात् त्रिविक्रमवामनौ ।४५

रूपिणी, वारिणी, काकोदरी, पूतना, भद्रकाली, योगिनी, शंखिनी,गर्जनी, कालरात्रि, कुब्जिनी, कपर्दिनी, वज्र,जया, सुमुखेश्वरी, रेवती, माधवी, वारुणी, दायवी,रक्षो विदारिणीसहजा,लक्ष्मा, व्यापिनी,

माया, ये रुद्र देव के पीठ और अंक स्थित है। इनका शरीर सिन्दूर के समान अरुण है। इसके करकमलों में रक्तकमल और कपाल का परम शोभा रहती है।४१-४४। केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन।४५।

श्रीधरश्च हृषीकेशः पद्मनाभस्ततः परम्।
दामोदरोवासुदेवः सङ्कर्षण इतीरिताः।४३
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च स्वराणां मूर्तय स्त्विमाः।
पश्चाञ्चक्री गदी शार्ङ्गी खड्गी शंखी हली पुनः।४७
मुसली शूलिसंज्ञोऽन्यः पाशी स्यादंकुशी पुनः।
मुकुन्दो नन्दजो नन्दी नरो नरकजिद्धरिः।४८
कृष्णः सत्यः सात्वतः (सात्विकः स्यात् शौरिः शूरो जनार्दनः
भूधरो विश्वमूत्तिश्च वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः।४६
वली बलानुजो बालो वृषघ्नश्च वृषः पुनः।
हिंसो (हंसो) वराहो विमलो नृसिंहो मूर्तयो हलाम्।५०

श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, वासुदेव, संकर्ष', प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, ये स्वरों की मूर्तियाँ होती है। चक्री, गदी अर्थात् गदाधारी, शार्ङ्गी, खड्गी, शंखी, हली अर्थात् हल के धारण करने वाले, मुशली, शूली, पाशी, अंकुशी, मुकुन्द, नन्दल, नन्दी, नर, नरकजित्, हरि, कृष्ण, सावन्त, शौरि, शूर, जनार्दन, भूधर, विश्व, मूर्ति, बैकुन्ठ, पुरषोत्तम-वली, बलानुज,वाल, वृषघ्न, वृष, हंस, वराह, विमल और नृसिंह ये हलों अर्थात् व्यंजनों की मूर्तियाँ होती है।४६-५०।

केशवाद्या इमे श्यामाश्चक्रशंखलसत्कराः।
कीर्तिः कान्तिस्तुष्टिपुष्टी धृतिःक्षान्तिः क्रियाः दया।५१
मेधा सहर्पा श्रद्धा स्याल्लजा लक्ष्मीः सरस्वती।
प्रीती रतिरिमाः प्रोक्ताः क्रमेण स्वरशक्तयः।५२

जया दुर्गा प्रभा सत्या चण्डा वाणी विलासि (शालि) नी ।
विजया विरजा विश्वा विनदा सुनदा स्मृतिः ।५३
ऋद्धिः स्मृद्धिः शुद्धिः स्यात् भक्तिबुद्धिः स्मृतिः (१) क्षमा ।
रमोमा क्लेदिनी क्लिन्ना वसुधा वसुदाऽपरा ।५४
परा परायणीं सूक्ष्मा सन्ध्या प्रज्ञा प्रभा निशा ।
अमोघा विद्युता चेति कीर्त्याद्याः सर्वकामदाः ।५५

केशव से आदि लेकर ये श्याम शंख—चक्रसे शोभित करकमलों वाले हैं । कीर्ति कान्ति, तुष्टि, पुष्टि, धृति, श्रान्ति, क्रिया, दया, मेधा सहर्षा, श्रद्धा, लज्जा, लक्ष्मी, सरस्वती, प्रीति, रति, वे क्रम से स्वरों की शक्तियाँ बतलाई गई हैं ।५१-५२। जया दुर्गा, प्रभा, सत्या, चण्डा, वाणी, विलासिनी, विजया, विरजा,विश्वा,विनदा, सुनदा,स्मृति, ऋद्धि समृद्धि, शुद्धि, भक्ति, बृद्धि, स्मृति,क्षमा, रमा, उमा,क्लेदिनी, क्लिन्ना, वसुधा. वसुदा, अपरा, परा, परायणी, सूक्ष्मा, सन्ध्या, प्रज्ञा, प्रभा, निशा, अमोघा, विद्युता और कीर्त्ति आदि सब कामनाओंके प्रदान कर ने वाली हैं ।५३-५५।

एताः प्रियतमाङ्केषु निषण्णाः सस्मिताननाः ।
विद्युद्दामसमानाङ्ग्यः पङ्कजाऽभयवाहवाः ।५६
मातृकाकावर्णभेदेभ्यः सर्वे मन्त्राः प्रजज्ञिरे ।
मन्त्रविद्याविभागेन त्रिविधा मन्त्रजातयः ।५७
मन्त्राः पुंदेवता ज्ञेया विद्याः स्त्रीदेवताः स्मृताः ।
पुंस्त्रीनपुंसकात्मानो मन्त्राः सर्वे समीरिताः ।५८
पुंमन्त्रा हुफडन्ताः स्युर्द्विठान्ताश्च स्त्रियो मताः ।
नपुंहका मनोन्ताः स्युरित्युक्ता मनवस्त्रिधा ।५९
शस्तास्ते त्रिविधा मन्त्रा वश्यशान्त्यभिचारके ।
अग्नीषोमात्मका मन्त्रा विज्ञेयाः क्रूरसौम्ययो ।६०

ये सब अपने प्रियतम की गोद में विराजमान हैं और इनका मुख

मन्दस्मित से समन्वित हैं। इनके अङ्ग विद्युल्लता के समान हैं और ये पंकज तथा अभय दान को करकमलों के द्वारा वहन करने वाली है। ।५६। मातृका वर्णों के भेदों से ही सब मन्त्र समुत्पन्न हुए हैं। मन्त्र विधा के द्वारा मन्त्रों की जातियाँ तीन प्रकार की हैं ।५७। मन्त्रों के देवता पुमान् होते हैं और विद्याऐं स्त्रीदेवता वाली कहींगयी हैं। सभी मन्त्र पुमान् —नंपुसक और स्त्री संज्ञा वाले कहे गये हैं ।५८। जिन मन्त्रों के अन्त में हुँफट् होता है वे मन्त्र पुमान् कहे गये हैं और जिन के अन्त में दो ठकार अर्थात् ठ-ठ होने पर वे मन्त्र स्त्री संज्ञा वाले माने गये हैं। जो मन्त्र नपुंसक होते हैं उसके अन्त में नमः—यह होता है। इस रीति से मन्त्र तीन प्रकार वाले होते हैं ।५९। वे तोनों प्रकार के मन्त्र वश्य कर्म-शान्ति कर्म और अभिचार में प्रशस्त होते हैं। मन्त्र अग्नीषोम के स्वरूप वाले जानने चाहिए, क्रूर और सौम्य कर्मों में ।६०।

कर्मणार्वह्नितारान्त्यवियत्प्राया: समोरिता: ।
आग्नेया मनवः सौम्या भूयिष्टेन्द्वमृताक्षरा: ।६१
आग्नेया: संप्रवृध्यन्ते प्राणे चरति दक्षिणे ।
भागेऽन्यस्मिन् स्थिते प्राणे सौम्या बोधं प्रयान्ति च ।६२
नाडीद्वय गते प्राणे सर्वे बोधं प्रयान्ति च ।
प्रयच्छन्ति फलं सर्वे प्रवृद्धा मन्त्रिणां सदा ।६३
छिन्नादिदुष्टा ये (१) मन्त्रा: पालयन्ति न साधकम् ।
छिन्नो रुद्धः शक्तिहीनः पराङ्मुख उदीरितः ।६४
वधिरो नेत्रहीनश्च कीलित स्तम्भित स्तथा ।
दग्धस्त्रस्तश्च भीतश्च मलिनश्च तिरस्कृतः ।६५

जिनके अन्त में वह्नितार और बियत् प्राया होते हैं वे ही बतलाये गये हैं अर्थात् क्रूर और सौम्यकर्मोंमें उनका ही प्रयोग करना चाहिए। आग्नेय मन्त्र सौम्य होते हैं जिसमें विशेष करके अधिकता में इन्दु-अमृत अक्षर होते हैं ।६१। दक्षिण में प्राण के चरण करने पर आग्नेय मन्त्र

प्रबुद्ध हुआ करते हैं। दूसरे भाग में प्राण के स्थित रहनेपर सौम्य मन्त्र बोध को प्राप्त हुआ करते हैं।६२। दोनों नाडियों से प्राण के गत हो जाने पर सभी मन्त्र बोध को प्राप्त होते हैं। मन्त्र धारियों के जब मन्त्र प्रबुद्ध होते हैं तभी सब फल दिया करते हैं।६३। छिन्नादि दोषों से युक्त हुए मन्त्र साधक का पालन नहीं किया करते। उनके नाम छिन्न, शक्ति से हीन और पराङ्मुख कहे गये हैं।६४। वधिर, नेत्रहीन, कीलित, स्तम्भित दग्ध, त्रस्त, भीत मलिन, तिरस्कृत।६५।

भेदितश्श्र सुषूप्तश्च मन्दोन्यतश्च मूर्च्छितः।
हृतवीर्यचश्हीनश्चप्रध्वस्तो बालकः पुन·।६६
कमारस्तु युवा प्रोढो वृद्धो निस्त्रशकस्तथा।
निर्बीजः सिद्धहीनश्चय मन्दः कटस्यया पुनः।६७
निरंशः सत्तहीनश्चकेकरो बीजहीनकः।
धूमितालिङ्गितौ स्यातां मोहितश्चक्षुधार्तकः।६८
अतिद्वप्तोऽङ्गहोमश्च(नःस्याः) अतिक्रुद्ध :समीरितः।
अतिक्रू श्चसब्रीडः शान्तमानस एव च।६९
स्थानभ्रष्टत विकलः सोऽतिवृद्धः प्रकीत्तितः
निः स्नेहः पीडितश्चापि वक्ष्याम्येषां च लक्षणम्।७०

भेदित-सुषुप्त-मन्दोन्मत्त-मूर्च्छित-हृतवीर्य-और हीन तथा बालक ये प्रध्वस्त हैं।६६। कुमार, युवा-प्रौढ़-वृद्ध तथा निस्त्रिशक, निर्बीज सिद्धिहीन, मन्द, कूट, निरंश, सत्वहीन, केकर, बीज, हीनक, धूमित अलिङ्गित, मोहित, क्षुधार्तक, आदिद्वप्त, अति क्रुद्ध कहे गये हैं। क्रीड़ा सहित, शान्त मानस-जाति क्रूर है। स्थान भ्रष्ट विफल होता वह अति वृद्ध कहा गया है, जो नि.सन्देह और पीड़ित होता है—इनका लक्षण बताया जायेगा।६७-७०।

सन्ज्ञोर्यस्यादिमध्यान्तेष्वानिलं वीजमुच्यते।
संयुक्तं वा वियुक्तं वा स्वराक्रान्तं त्रिधा पुनः।७१

चतुर्द्धा पञ्चधा वा स्युः (ऽथ) स मन्त्रश्छिन्नसंज्ञकः ।
आदिमध्यावसानेषु भूबीजद्वन्द्व लाञ्छितः ।७२
रुद्धमन्त्रः स विज्ञेयो भुक्तिमुक्तिविवर्जितः ।
मायात्रितत्वश्रीबीजरावहीनस्तु योमनुः ।७३
शक्तिहीनः स कथितो, यस्य मध्ये न विद्यते ।
कामबीजं मुखे माया शिरस्यङ्कुशमेव वा ।७४
असौ पराङ् मुखः प्रोक्तो, हकारो बिन्दुसंयुतः ।
आद्यन्तमध्येष्विन्दुर्वा नाभवेद्बधिरः स्मृतः ।७५

जिस मन्त्र के अन्त में–मध्य में और आदि में अनिल बीज कहा जाता है, संयुक्त हो अथवा वियुक्त हो तीन प्रकार से स्वर क्रान्त होवे अथवा चार या पाँच प्रकार से होवे, वह छिन्न संज्ञा वला हुआ करता है। जो आदि मध्य और अवसान के भूबीज के इन्द्र से लाच्छित होता है वह मन्त्ररूद्ध समझना चाहिए। जो भुक्ति और मुक्तिसे रहित हुआ करता है। जो माया-त्रितत्व-श्रीवीज से अवहीन मन्त्र होता है वह शक्तिहीन कहा गया है। जिसके मध्य में काम बीज नहीं होता है- मुख में माया और शिर में अंकुश नहीं है वह मन्त्र पराङ्मुख कहा गया है। बिन्दु से संयुक्त हकार अथवा आदि-अन्त और मध्य में इन्दु नहीं होता है, वह वधिर कहा गया है ।७१-७५।

पञ्चवर्णोमनुर्यः स्याद्रेफार्केन्दुविवर्जितः ।
नेत्रहीनः स विज्ञेयोदुःखशोकभयप्रदः ।७६
आदिसध्यावसानेषु हंसः प्रासादवाग्भवौ ।
हकारो बिन्दुमाञ्जीवो रावश्चापि चतुष्कलम् ।७७
माया नमामि च पदं नास्ति यस्मिन्स कीलितः ।
एक मध्ये द्वयं मूर्द्धनि यस्मिन्नस्त्रपुरन्दरौ ।७८
न विद्यते, स मन्त्रः स्यात्स्तम्भितः सिद्धिरोधकः ।
वह्निवर्यिुसमामुक्तो यस्य मन्त्रस्य मूर्द्धनि ।७६

सप्तधा दृश्यते तं तु दग्धं मन्येत मन्त्रवित् ।
अस्त्रं द्वाभ्यां त्रिभिः षड्भिरष्टाभिर्दृश्यतेऽक्षरैः ।८०

जो मन्त्र पाँच वर्णो वाला होवे और रेफ-इन्दु और अर्क से रहित होवे उसे नेत्रहीन समझना चाहिए। वह दुःख, शोक और भय के देने वाला हुआ करता है ।७६। आदि-मध्य और अवसान में चतुष्कल राव भी हो तथा माया और नमामि –यह पद जिसमें नहीं है वह कीलित कहा गया है । मध्य में एक-दो मूर्धा में जिसमें अस्त्र और पुरन्दर नहीं होते हैं वह मन्त्र स्तम्भित और सिद्धि का रोधक होता है । जिस मन्त्र के मूर्धा में वह्नि वायु समायुक्त सात प्रकार से दिखलाई दिया करता हैं, मन्त्रों के ज्ञाता उस मन्त्र को दग्ध मानते हैं । जो दो से अस्त्र और तीन वकारों से ऐसे आठ से अक्षरों युक्त होता है ।७७-८०।

त्रस्तः सोऽभिहितो यश्य मुखे म प्रणवः स्थितः ।
शिवो वा शक्तिरथवा भीताख्यः स प्रकीर्तितः ।८१
आदिमध्यावसानेषु भवेन्तार्णचतुष्टयम् ।
यस्य, मन्त्रः स मलिनो मन्त्रवित्तं विवर्जयेत् ।८२
गस्य मध्ये दकारोऽथ (वा) क्रोधो वा मूर्द्धनि द्विधाः ।
अस्त्रं तिष्ठति मन्त्रः स तिरस्कृ, उदाहृतः ।८३
भ्योद्वयं हृदये शीर्षे वषठ् वौषट् च मध्यतः ।
यस्यासौ भेदितो मन्त्रस्त्याज्यः सिद्धिषु सूरभिः ।८४
त्रिवर्णे हंसहीनो यः सुषुप्तः स उदाहृतः ।
मन्त्रो वाऽप्यथवांविद्या सप्ताधिकसताक्षरः ।८५

जिसके मुख में प्रणव स्थित नहीं होता है वह मन्त्र त्रस्त समझना चाहिए । शिव अथवा शक्ति न हो वह मन्त्र भीत कहा गया है ।८१। जिसके आदि—मध्य और अवसान में मार्णव चतुष्टय हो अर्थात् चार मवर्ण होवे वह मन्त्र मलिन होता है । मन्त्रों का ज्ञाता उसको वर्जित कर देवे ।८२। जिसके मध्य में हुँकार हो अथवा मूर्धा में क्रोध होवे और दो प्रकार से अस्त्र स्थित होता है वह मन्त्र तिरस्कृत कहागया है ।

।८३। भ्योद्वय हृदय में-शीर्ष में वषट् और मध्य में वौषट् होवे वह मन्त्र भेदित होता है। सूरियों के द्वारा वह मन्त्र सिद्धियों में सर्वदा त्याग करने के योग्य होता है।८४। जो तीन वर्णों से युक्त और हंस से हीन होता है वह मन्त्र सुषुप्त कहा गया है। मन्त्र हो तथवा विद्या हो सत्रह अक्षरों वाला हो।८५।

फट्कारञ्चकादिर्यो मदोन्मत्तः उदीरि (उदाहृ) तः।
तद्वदस्त्रं स्थितं मध्ये यस्य, मन्त्रः स मूर्च्छितः।८६
विरामस्थानगं यस्य हतवीर्यः स कथ्यते।
आदौ मध्ये तथा मूर्द्ध्नि चतुरस्त्रयतो मनुः।८७
ज्ञातव्यो हीन इत्येषु यः स्यादष्टादशाक्षरः।
एकोनविंशत्वर्णो वा यो मनुस्तारसंयुतः।८८
हृल्लेखाङ्कुशबीजाद्य स्तं प्रध्वस्तं प्रचक्षते।
सप्तवर्णो मनुर्बालः. कुमारोऽष्टाक्षरस्तु यः (स्मृतः) ।८९
षोडशार्णो युवा, प्रोश्चहृ वारिंशल्लिर्पर्मनुः।
त्रिशवर्णश्चतुष्पष्टिवर्णी मन्त्रः शताक्षरः।९०

जिसके आदि में फट्कार पञ्चक होवे वह मन्त्र मन्दोमत्त कहा गया है। उसी भाँति जिसके मध्य में अस्त्र स्थित होवे वह मन्त्र मूर्च्छित कहा गया है।८६। जिसके विराम के स्थानमें गत हो वह मन्त्र हतवीर्यक कहा जाता है। आदि में—मध्य में और मूर्धा में जो चतुः-अस्त्रों से युक्त होवे वह मन्त्र हीन जानना चाहिए। जो अठारह अक्षरों वाला होता है-अथवा जो मन्त्र उन्नीस अक्षरों वाला होवे और तार से अर्थात् प्रणव से समन्वित होवे, जिसके आदि में रहने वाले हृल्लेखा-अंकुश और बीज होवे उस मन्त्र को प्रध्वस्त कहा जाता है। सात वर्णों वाला मन्त्र बाल होता है। आठ अक्षरों वाला मन्त्र कुमार कहा गया है। सोलह वर्णों वाला युवा होता है तथा अड़तालीस का मन्त्र प्रौढ़ दुरता है। तीस वर्णों वाला चौसठ गर्णों वाला शताक्षर मन्त्र-वद्ध होता है।८७-९०।

चतुः शताक्षरश्चापि वृद्ध इत्यभिधीयते ।
नवाक्षारो ध्रुवयुतो मनुर्निस्त्रिश ईरितः ।६१
यस्यावसाने हृदयशिरोमन्त्री च मध्यतः ।
शिखा वर्म च न स्यातां वोषट् फटकार एव च ।६२
शिवशक्त्यर्णहीनो वा स नर्वीज इति स्मृतः ।
एष स्थानेषु फट्कारः षोढा यस्मिन्प्रदृश्यते ।६३
स मन्त्रः सिद्धिहीनः स्यात्, मन्दः षड्क्त्यक्षारो मनु. ।
कूट एकाक्षारो मन्त्रः स एवोक्तो निरंशुकः ।६४
द्विवर्णः सत्वहीनः स्यात्, चतुर्वर्णस्तु केकरः ।
षडक्षारो बीजहीन, स्त्वद्धसप्ताक्षारो मनुः ।६५

और एक सौ चार अक्षरों वाला भी मन्त्र वृद्ध कहा गया है। नौ अक्षरों वाला ध्रुवसे समन्वित मन्त्र निस्त्रिश कहा गया है ।६१। जिसके अवसान में हृदय और शिरोमन्त्र होवे-मध्यमें शिखा होवे और वर्म होवे और वौषट् तथा भट्कार होवे और शिव भक्ति से हीन होवे वह मन्त्र निर्वीज कहा गया है। जिन स्थानों में छँ बार फट्कार दिखलाई दिया करता है वह मन्त्र सिद्धिहीन होता है और षडवत्यक्षर मन्त्र मन्द होता है। एकाक्षर मन्त्र कूट होता है और वह ही निरंशुक कहा गया है। ।६२-६४। दो वर्णों वाला मन्त्र सत्व से हीन हुआ करता है और चार वर्णों वाला मन्त्र केकर होता है। छँ अक्षरों का मन्त्र बीज हीन होता है। उसी भाँति अर्ध सात अक्षरों वाला है ।६५।

सार्द्धद्वादशवर्णो वा धूमितः स तु निन्दितः ।
सार्द्धवीसत्रयक्तद्वदेकविंशतिवर्णकः ।६६
विंशत्यर्णा स्त्रिशवर्णो यः स्यादालिङ्गितस्तु सः ।
द्वात्रिंशदक्षारो मन्त्रो मोहितः परकीर्त्तितः ।६७
चतुर्विंशतिवर्णो यः सप्तविंशतिवर्णकः ।
क्षुधार्त्तः स तु विज्ञेयश्चतुर्विंशतिवर्णकः ।६८

एकादशाक्षरो वाऽपि पञ्चविंशतिवर्णकः ।
त्रयोविंशतिवर्णों वा मन्त्रो दृप्त उदाहृतः ।९९
षड्विंशस्यक्षरो मन्त्रः षठ्त्रिंशद्वर्णक स्तथा ।
त्रिंशदेकोनवर्णो याऽप्यङ्गहीनोऽभिधीयते ।
अष्टाविंशत्यक्षरो वा एक त्रिंशदथापि वा ।१००

अथवा सार्ध द्वादश वर्णों वाला मन्त्र धूमित हुआ करता है वह निन्दित होता है । अर्ध बीज त्रयस्के सहित और उसी भाँति इक्कीस वर्णों वाला बीज वर्णो का तथा तीस वर्णो का जो मन्त्र होता हैं वह मन्त्र आलिङ्गित होता है । बाईस अक्षरों वाला मन्त्र मोहित कहा गया है । जो चौबीस वर्णो का ही और सत्ताईश वर्णों का मन्त्र ही उसे क्षुधार्त समझना चाहिए । चौबीस वर्णो वाला–ग्यारह अक्षरों वाला अथवा पच्चीस वर्णो का या तेईस वर्णों का मन्त्र होवे वह मन्त्र दृप्त कहा गया है ।९६-९९। छब्बीस अक्षरों वाला मन्त्र तथा छत्तीस वर्णो वाला मन्त्र अथवा उनतीस अक्षरों वाला मन्त्र अङ्गहीन कहा जाता है । अट्टाईस अक्षरों का अथवा इकतीस वर्णो का मन्त्र होवे ।१००।

अतिक्रुद्ध स कथितो निन्दितः सर्वकमसु ।
त्रिंशदक्षरको मन्त्र स्त्रयस्त्रिंशदथापि ।१०१
अतिक्रूरः स कथितो निन्दितः सर्वकर्मसु ।
चत्वारिंशनमारभ्य त्रिषष्टिर्यावदापयेत् । १०२
तावत्संख्यां निगदिता मन्त्रः सव्रीडसज्ञकाः ।
पञ्चषष्ठयक्षारा ये स्यूर्मन्त्रांस्ते शान्तमानसाः ।१०३
एकोनशतपर्यन्त पञ्चषष्ठयक्षारादितः ।
ये मन्त्रास्ते निगदिता. स्थानभ्रष्टाह्वया बुधैः ।१०४
त्रयोदशाक्षरा ये स्युर्मन्त्राः पञ्चदशाक्षाराः ।
विकलास्तेऽभिधीयन्ते शतं सार्द्ध शतं तु वा (तथा) ।१०५

ऐसा मन्त्र अति क्रुद्र कहा गया है जो सभी कर्मों में निन्दित माना गया है । तीस वर्णों वाला तथा तँतीस वर्णों का मंत्र अति क्रुद्र कहा

गया है और यह सभी कर्मों में निन्दित माना गया है। चालीस से आरम्भ करके तिरेष्ठ वर्णों तक होवे तो इन सख्या वाले मंत्र सक्रीड़ सज्ञा वाले कहे गये हैं। जो मंत्र पैंसठ अक्षरों से संयुत होवे वे मंत्र शान्त मानस होते हैं। पैंसठ अक्षरों से लेकर एक कम सौ अक्षरों वाले जो मंत्र कहे गये हैं वे बुधों के द्वारा स्थान भ्रष्ट कहे गये हैं। जो मंत्र तेरह अक्षरों से युत है और पन्द्रह अक्षरों वाले हैं वे सब विकल कहे जाते हैं। शत (सौ) अथवा सार्धशत हों ।१०१-१०८।

शतद्वयं द्विनवतिरेकहीनाथवापि सा ।
शतत्रयं वा यत्संख्या निः स्नेहास्ते समीरिताः ।१०६
चतुः शतान्यथारंभ्य यावद्वर्णसहस्रकम् ।
अतिवृद्धः संयोगेषु परित्याज्यः सदा बुधैः ।१०७
सहस्रावर्णाधिका मन्त्रा दण्डकाः पीडिताह्वयाः ।
द्विसहस्राक्षरा मन्त्राः खण्डशः शतधा कृताः ।१०८
ज्ञातव्या स्तोत्ररूपास्ते तन्त्र एते यथास्थिताः ।
तथाविधाश्च बोद्धव्या मन्त्रिभिः काम्य कर्मसु ।१०९
दोषानिमानविज्ञाय यो मन्त्रान् भजते जडः ।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ।११०

दो-सौ-बानवें अथवा एक से हीन-अथवा तीन जो भी संख्या है, ऐसे मन्त्र निःस्नेह कहे गये हैं।१०६। चार सौ से आरम्भ करके एक सहस्रवर्ण तक जो होते हैं वह संयोगों में अतिवृद्ध कहे गये हैं। बुधों को सदा ही उन्हें परित्याग कर देना चाहिए ।१०७। एक सहस्र वर्णों से भी अधिक वर्णों वाले मन्त्र दण्डक नाम से कहे गये है। यन्त्र पीड़ित नाम वाले होते हैं। दो सहस्र अक्षरों वाले मन्त्र खण्डशः सौ प्रकार से किये गये हैं। वे मन्त्र स्तोत्रों के ही रूप वाले समझने चाहिये। ये यथा स्थित हैं। उस भाँति वाले सब मन्त्र धारण करने वालों के द्वारा सभी कर्मों में समझ लेने चाहिए ।१०८-१०९। इन दोषों का ज्ञान प्राप्त

न करके जों जड़ पुरुष दूषित मन्त्रों का सेवन किया करता है उसको करोड़ों कल्पों में भी सिद्धि नहीं होती है ।११०।

इत्यादिदोषोदुष्टांस्तान्मन्त्रानात्मनि योजयेत् ।
शोधयेदूर्ध्वपवनोवद्धया योनिमुद्रया ।१११
मन्त्राणां दश संस्काराः कथ्यन्ते सिद्धिदायिन
जननं जीवनं पश्चात्ताडनं बोधनं तथा । ११२
तथाभिषेको विमलीकरणाप्यायने पुनः ।
तर्पण दीपनं गुप्तिर्दशैया मन्त्रसंस्क्रियाः ।११३
मन्त्राणां मातृकामध्यादुद्धारो जननं स्मृतम् ।
प्रणवान्तरितान्कृत्वा मन्त्रवर्णाञ्जपेत्सुधीः ।११४
एतज्जीवनमित्याहुर्मन्त्रविशारदाः ।
मन्त्रवर्णान् समालिख्य ताडयेच्चदनाम्भसा ।११५

इन उक्त दोषों से दूषित उन मन्त्रों को अपनी आत्मामें योजित करना चाहिए । वद्धयोनिमुद्रा के द्वारा ऊर्ध्व पवन द्वारा उनका शोधन करना चाहिए ।१११। मन्त्रों के दश संस्कार बतलाये गये हैं । जो सिद्धि के देने वाले होते है । उनके नाम बतलाते हैं–जनन, जीवन, ताड़न, वोधन, अभिषेक, विमली-करण, आप्यायन, तर्पण, दीपन और गुप्ति–ये दश मन्त्रों के संस्कार होते हैं ।११२-११३। मन्त्रों का मातृका के मध्य से उद्धार करना ही मन्त्रका जनन कहा गया है । प्रणवों को अन्तरित करके सुधी पुरुष मन्त्र के वर्णों का जाप करे, इसी को वे जीवन संस्कार कहते हैं, जो मन्त्र-तन्त्र के विद्वान् होते हैं । मन्त्र के वर्णों को भली भाँति लिखकर चन्दन के जल के द्वारा ताड़न करना चाहिए, यही मन्त्र का ताड़न संस्कार होता है ।११४-११५।

प्रत्येकं वायना मन्त्री ताडनं तदुदाहृतम् ।
विलिख्य यन्त्रन्तं मन्त्री प्रसूनैः करवीरकै ।११६
तन्मत्राक्षरसंख्यातैर्हन्याद्यत्तेन बोधनम् ।
स्वतन्त्रोक्तविधानेनमन्त्री मन्त्राणंसंख्यया।।११७

अश्वत्थपल्लवैर्मन्त्रमभिषिञ्चेद्विशुद्धये ।
सञ्चिन्त्य मनसा मन्त्र ज्योतिर्मन्त्रेण निदहेत् ।११८
मन्त्रे मलत्रयं मन्त्री विमयीकरणं त्विदम् ।
तारं व्योमाग्निमनुयुक् दण्डी ज्योतिर्मनुमतः ।११६
कुशोदकेन जप्तेन प्रत्यर्ण (प्रत्येकं) प्रोक्षणं मनोः ।
तेन मन्त्रेण विधिवदेतदाप्यायनं मतम् ।१२०

प्रत्येक को मन्त्रधारी ताड़न करे, ऐसा कहा गया है । मन्त्र को लिखकर मन्त्रधारी उसका करवीर के प्रसूतों से जो उस मन्त्र के अक्षरों की संखया वाले होंवे उससे हनन करे उससे बोधन होता है । अपने तन्त्र में कथित विधान के द्वारा मन्त्रधारी पुरुष मन्त्रके वर्णों की संखया से विशुद्धि के लिए अश्वत्थ के पत्तों के द्वारा अभिषिञ्जन करे, यही अभिषेक संस्कार हीता है । मन के द्वारा मन्त्र का चिन्तन करके ज्योति मन्त्र के द्वारा निर्दग्ध करे जो कि मन्त्रमें तीन मल होते हैं–यही विमली करण मन्त्र का संस्कार होता है । व्योम अग्नि मन्त्रसे युक्त प्रणव और दन्डी,यही ज्योति मन्त्र कहा गया है । व्योम का अर्थ, हकार है । अग्नि का अर्थ रेफ है । मनुका तात्पर्य री है । दन्डीका अर्थ अनुस्वार से युक्त होता है । अभिमन्त्रित किये हुए कुशोदक के द्वारा मन्त्र के प्रत्येक वर्ण का प्रोक्षण उस मन्त्र से विधि पूर्वक करे यही आप्यायन नामक संस्कार है ।११६-१२०।

मन्त्रेण वारिणा मन्त्रे तर्पणं स्मृतम् ।
तारमा यारमायोगे मनोर्दीपनमुच्यते ।१२१
जप्यमानस्य मन्त्रस्य गोपनत्व प्रकाशनम् ।
संस्कार दश संप्रोक्ताः सर्वमन्त्रेषु गोपिताः ।१२२
यान् कृत्वा संप्रदायेन मन्त्रीं वाच्छतमश्नुते ।
स्वताराराशिकोष्टानातनुकूलं भलत्मनुम् ।१२३
प्राप लोभात्पटु म्प्राज्यं रुद्रस्यात्र (द्रि) रुरुष्करम् ।
लोकलोपटु प्रायः खलौद्योभेजु भेदिताः ।१२४

वर्णाः क्रमात्स्वरान्यौतु रेवत्यंशगतौ तदा ।
जन्मसंपद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको बधः ।१२५

मन्त्र के मन्त्र द्वारा जल से तर्पण करना ही तर्पण सस्कार माना गया है । तार, माया और रमा के योग से (तार, प्रणव, माया, शक्ति, रमा, श्री) मन्त्र का दीपक कहा जाता है ।१२१। जप किये जाने वाले मन्त्र का प्रकाशन न करना ही गोपन संस्कार होता है जिसे गुप्ति नाम से कहा गया है। ये ही दश संस्कार होते हैं जो बतला दिये गये हैं । ये सभी मन्त्रों में गोपित है ।१२२। जिन संस्कारों को करके मन्त्रधारी अपने वाञ्छितको प्राप्त किया करते हैं । अपनी नक्षात्र राशिओर कोष्ठ के अनुकूल ही मन्त्र का सेवन करना चाहिए ।१२३। इस श्लोक का विशदर्थ यह है–प्रा २ य प १ लो ३, भा ४, प १, टुं १, प्रा २, ज्यं १, रु २, द्र २, २या १, त्र, रु, २, ष्क १, स्म २, । लो ३, प १, पट १, टु १, प्रा २, यः १, स ३, लो ३, द्यौ १—इस प्रकार से कथित आद्यक्षरों में अश्विनी आदि जाननी चाहिए । रेवती के अंशगत दो अन्य अन्त्य स्वरअं-अः । तब क्रमसे वर्ण है । ये जन्म-सम्पत, विपद, क्षेम, प्रत्यारि और साधक तथा वध है।१२५।

मित्रं परममित्रं च जन्मादीनि पुनः पुनः ।
कालं गौरं खुरं शोण शमी शोभेति राशिषु ।१२६
क्रमेण भेदिता वर्णाः कन्यायां शादयः स्थिताः ।
लग्नं धन भ्रातृबन्धुपुत्रशत्रुकलत्रका ।१२७
मरणं धर्मकर्मायव्यया द्वादश राशयः ।
चतुरस्रे लिखेद्वर्णाश्चतुष्कोष्ठसमन्विते ।१२८
अकारादिक्षकारान्तान्स्वनामाद्यक्षरादितः ।
सिद्धादीन्कल्पयेन्मत्री कुर्यात्सिद्धादिभिः पुनः ।१२९
सिद्धादीन् सिद्धिदः सिद्धो जपात्साध्यो हुतादिभिः ।
सुसिद्धः प्राप्तिमात्रेण साधकं भक्षयेदरिः ।१३०

मित्र और परम मित्र जन्म आदि बार बार होते हैं । राशियों में काल, गौर, खुर, शोण, शमी और शोभा ये क्रम से वर्ण भेदित

कन्या में आदि स्थित है। जन्म कुण्डलीमें बारह घर होते हैं उनमें प्रथम गृह लग्न का होता है जिसमें शिशु का जनन हुआ करता है दूसरा गृह धन का होता है। इसी से धन-सम्पदा आदि का विचार किया जाता है। तीसरा गृह आदि भाई, बन्धु, पुत्र, शत्रु और कलत्रका होते हैं। चार कोष्ठोंसे समन्वित चौकोरमें वर्णोंको लिखना चाहिए।१२६-१२७। ।१२८। अपने नाम के आदि में होने वाले अक्षर से अकार आदि से अकार के अन्त तक वर्णों को लिखे। मन्त्रधारी पुन सिद्ध आदि के द्वारा सिद्ध आदि की कल्पना करे।१२९। सिद्ध आदि का लेखन या विचार करे। मन्त्र सिद्धि का देने वाला सिद्ध हुआदि जप से साध्य हुआ करता है। प्राप्ति मात्र ही सुसिद्ध होता है। एक आदि होता है जो साधअ का भक्षण करता है।१३०।

सिद्धार्णा बान्धवाः प्रोक्ताः साध्यास्ते सेवकाः स्मृताः।
सुसिद्धाः पोषका ज्ञेयः शत्रुवोघातका मताः।
दीपस्थानं समाश्रित्य कृतं कर्म फलप्रदम्।
चतुरस्त्रां भुव भित्त्वा कोष्ठानां नवकं लिखेत्।१३२
पूर्वकोष्ठादि विलिखेत्सप्तवर्गाननुक्रमात्।
लक्ष्मीशे मध्यकोष्ठे स्वरान्युग्मक्रमाल्लिखेत्।१३३
दिक्षु पूर्वादितोयत्र क्षेत्राख्याद्यक्षरं स्थितम्।
मुखं तत्तस्य जानीयाद्धस्तावुभयतः स्थिते।१३४
कोष्ठे कुक्षी उभे पादौ द्वे शिष्टं पुच्छमीरितम्।
क्रमेणानेन विभजेन्मध्यस्थमपि भागतः।१३५

सिद्ध वर्ण वाले बान्धब कहे गये हैं और जो साध्य हैं वे सेवक बताये गये हैं। जो सुसिद्ध होते हैं वे पुत्र बतलयें गये हैं और जो धातक हैं वे शत्रु बताये गये हैं।१३१। दीप स्थान का समाश्रय लेकर किया हुआ कर्म फल प्रदान करने वाला हुआ करता है। चतुरस्रभू का भेदन करके नौ कोष्ठों को लिखना चाहिए।१३२। सात वर्णों को अनुक्रम से पूर्ण कोष्ठ आदि का लेखन करे। स्वरों को युग्मक्रमसे लक्ष्मीश

र ध्यकोष्ठ में लिखे ।१२३। पूर्व आदि दिशाओं में जहां पर क्षेत्रादि अक्षर स्थित होवे वह उसका मुख जानना चाहिए। दोनों ओर हस्त स्थित होवे और कोष्ठ में दो कुक्षियाँ होवें-दो या एक को शिष्य पुच्छ कहा गया है। इस क्रम से भाग से साध्य में स्थित का भी विभाग करे। १३४-१३५।

मुखस्थो लभते सिद्धि करस्थः स्वल्पजीवनः।
उदासीनः कुक्षिसंस्थः पादस्थो दुःखमाप्नुयात् ।१३६
पुच्छथ. पीडयते मन्त्री वन्धनोच्चाटनादिभिः।
कूर्मचक्रमिदं प्रोक्तं मन्त्राणां सिद्धिसाधनम् ।१३७
पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहापर्वतमस्तकम् ।
तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमाः पावन वनम् ।१३८
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं गिरेस्तटम् ।
देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निज गृहम् ।१३९
साधनेषु प्रशंस्यन्ते स्थानान्येतानि मन्त्रिणाम् ।
भैक्ष्यं हविष्यं शाकानि विहितानि फल पयः ।१४०
मूलं सक्तुर्यवोत्पन्नो भक्ष्याण्येतानि मन्त्रिणाम् ।
पुरषार्थसमावाप्त्यैसच्छिष्यो गुरुमाश्रयेत् ।१४१

मुख में जो स्थित हो वह अवश्य ही सिद्धि को प्राप्त किया करता है--करमें जो स्थित होवे स्वल्प जीवन वाला होता है। कुक्षि में जो स्थित होता है वह उदासीन हुआ करता है और जो पाद में स्थित होवे वह दुःख प्राप्त किया करता है।१३६। पुच्छ में स्थित मन्त्रधारी पीड़ित हुआ करता है जो बन्धन और उच्चाटन आदिके द्वारा ही होता है। यह मन्त्रों की सिद्धि का साधन स्वरूप कूर्मचक्र बतलाया जाता है।१३७। अब पुण्यस्थान साधनों के लिये बताये जाते हैं—कोई भी पुण्य क्षेत्र-निसी सागर गामिनी नदी का तट, कोई गुफा, पर्वत का शिखर, तीर्थ स्थल, नदियोंके सङ्गम होनेका स्थल, पावन, वन, एकान्त उद्यान, विल्व वृक्ष का मूल पर्वत का किनारा, किसी भी देव का

आयतन, समुद्र का तट और अपना गृह ये मन्त्रधारियों को साधन के लिए स्थान, प्रशस्त हुआ करते हैं। भिक्षा से प्राप्त अन्न-हविष्य, शाक-फलऔर दूध, मूल, यवों, का बनाया हुआ सक्तुये ही मन्त्रधारियों के भक्ष्य होते हैं। पुरुषार्थ की समाप्ति के लिए अच्छे विषय को गुरुका समाश्रय ग्रहण करना चाहिए ।१३८–१४१।

मातृतः पितृतः शुद्धः शुद्धभावो जितेन्द्रियः।
सर्वागमानां सारज्ञः सर्वशास्त्रार्थतत्त्ववित् ।१४२
परोपकारनिरतो जपपूजादितत्परः।
अमोघवचनः शान्तो वेदवेदार्थपारगः ।१४३
योगमार्गानुसन्धायो देवताहृदयङ्गमः।
इत्यादि गुणसम्पन्नो नुरुरागमसम्मतः। १४४
शिष्यः कुलीनः शुद्धात्मा पुरुषार्थपरायणः।
अधीतवेदः कुशला दूरमुक्तमनोभवः। १४५

अब परम श्रेष्ठ गुरु के विषय में बतलाते हैं—मातृकुल और पितृ-कुल से शुद्ध होवे, विशुद्ध भाव से समन्वित होवे, इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला होवे, सभी आगमों के सारका ज्ञाता होवे और समस्त शास्त्रों के अर्थो के तत्वों का जानने वाला होवे। दूसरों की भलाई करने में निरत रहने वाला होवे, जप और पूजा आदि में परायण रहने वाला होवे, अमोघ, वचनों को कहने वाला हो, परम शान्त होवे, वेदों के अर्थों का पारगामी विद्वान् होवे, योग मार्गके अनुसन्धान करने वाला होवे, देवता का हृदयङ्गम करने वाला होवे, इत्यादि सुसम्पन्न गुरु ही आगमोंके द्वारा सम्मत होता है। अब शिष्यके विषयमें बतलाता जाता है कि शिष्यकैसा होना चाहिए। शिष्य अच्छे कुलमें समुत्पन्नहुआ होवे, उसकी आत्मा सभी प्रकार के दोषोंसे रहित परम शुद्धि होनी चाहिए। शिष्य पुरुषार्थ करने में तत्पर रहने वाला होवे, उसने वेदों का अध्ययन किया हो और वह कार्य कुशल होना चाहिए। शिष्य ऐसा ही होना

चाहिए जिसने काम-वासना का त्याग कर दिया होवे ।१४२-१४३। ।१४५।

हितैषी प्राणिनां नित्यमास्तिकत्यक्तनास्तिकः ।
स्वधर्म्मनिरतो भक्त्या पितृमातृहितोद्यतः ।१४६
वाङ्मनः कायवसुभिर्गुरुशुषणे रतः ।
त्यक्ताभिमानो गुरुषु जातिविद्याधनादिभि ।१४७
गुर्वाज्ञापालनार्थं हि प्राणव्ययरतोद्यतः ।
विहत्य च स्वकार्याणि गुरुकार्यरतः सदा ।१४८
दासवन्निवसेद्यस्तु गरौ भक्त्या सदा शिशु, ।
कुर्वन्नाज्ञां दिवारात्रौ गुरुभक्ति परायणः ।१४९
आज्ञाकारी गुरोः शिष्योमनोवाक्कायकर्मभिः ।
यो भवेत्स तदा ग्राह्यो नेतरः शुभकाक्षया ।१५०

शिष्य समस्त प्राणियों के हित के चाहने वाला, नित्य ही हित चिन्तक, आस्तिक अर्थात् वेदों और ईश्वर में परम आस्था रखने वाला, जिसने नास्तिकों का सम्पर्क दूर कर दिया होवे अपने धममें निरत—भक्ति की भावना से अपने माता-पिता के हित सम्पादन करने में समुद्यत होवे। वाणी मन और शरीर के द्वारा तथा धन से अपने गुरुदेव की सेवा करने में रति रखने वाला होवे। जाति-विद्या और धन आदि के द्वारा अपने गुरुदेवों के विषय में अभिमान के परित्याग कर देने वाला होवे।१४६-१४७। शिष्य ऐसा ही होना चाहिए जो अपने गुरुदेव की आज्ञा का पालन करने के लिए अपने प्राणोंका व्यय कर देने में भी उद्यत रहे। अपने कार्योंका निहनन करकेभीसदा गुरुदेवके कार्यों के करने से रति रखने वाला हो।१४८। जो गुरु के समीप से एक दास की ही भाँति निवास करे और भक्ति भाव से सदा एक शिशु की ही तरह रहे। दिन रात गुरु की आज्ञा को करते हुए गुरुदेव की भक्ति ही में परायण रहे।१४८-१४९। मन-वाणी और शरीर के द्वारा शिष्य को गुरु की आज्ञा का पालन करने वाला ही होना चाहिए। ऐसा जो भी

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ पुस्तकालय 1315

हो उसी को अपने शिष्य के रूप में ग्रहण करना चाहिए और शुभ की आकाङ्क्षा से भी अन्य को कभी ग्रहण न करे ।१५०।

मन्त्रपूजारहस्यानि यो गोपयति सर्वदा ।
त्रिकालं यो नमस्कुर्यादागमाचारतत्त्ववित् ।१५१
स एव शिष्यः कर्तव्यो नेतर' स्वल्पजीवनः ।
एतादृशगुणोपेतः शिष्यो भवति नापरः ।१५२
एकाब्देन भवेद्योग्यो ब्राह्मणोऽब्दद्वयान्नृपः ।
वैश्यो वर्षस्त्रिभिः, शूद्रश्चतुर्भिर्वत्सरैर्गुरोः ।
स शुश्रूषुः परिग्राह्यो दीक्षायागव्रतादिषु ।१५३

जो मन्त्र-पूजा के रहस्यों का सदा गोपन किया करता है और आचारों के तत्वों का ज्ञाता तीनों कालों में नमस्कार करे । वही अपना शिष्य बनानाचाहिए और दूसरेस्वल्प जीवन वालेको शिष्य न करे । इस प्रकार के गुणों से सयुत ही शिष्य होता है और अन्य नहीं होता है । १५१-१५२। ब्राह्मण एक वर्ष में योग्य होता है । दो वर्षमें क्षत्रिय तीन वर्षों में वैश्य और शूद्र चार वर्षों में योग्य होता है । ऐसा ही गुरु को दीक्षा-याग और व्रतादि में सुश्रुषु शिष्य ग्रहण करने योग्य है ।१५३।

तृतीय पटल

ततो वक्ष्यामि दीक्षाङ्गं वास्तुयागपुरःसरम् ।
कृतेग येन मन्त्रज्ञो दीक्षायाः फलमश्नुते ।१
राक्षस वास्तुनामानं हत्वाधिष्ठाय तत्तनुम् ।
स्थितास्त्रिपञ्चाशद्देवास्तेभ्यः पूर्वं बलि हरेत् ।२
बलिमण्डलमेतेषां यथावदभिसीयते ।
पूर्वापरायतं सूत्रं विन्यसेदुक्तमानतः ।३

तन्मध्यं किञ्चिदालम्ब्य मत्स्यौ द्वौ परितो लिखेत् ।
तयोर्मध्ये स्थितं सूत्रं विन्वसेद्दक्षिणोत्तरम् ।४
द्वाभ्यां द्वाभ्यां तथाऽग्राभ्यां कोणेषु मकारल्लिखेत् ।
मत्स्यमध्ये स्थिताग्राणि तत्र सूत्राणि पातयेत् ।५
चतुरस्रं भवेत्तत्र चतुष्कोष्ठसमन्वितम् ।
तत्पुनर्विभजेन्मन्त्री चतुः, षष्टिपदं यथा ।६
ईशानाद्राक्षसं यावद्यावदग्नेः प्रभञ्जनः ।
एवं सूत्रद्वयं दद्यात्कर्णसूत्र समाहितः ।७

इसके उपरान्त वास्तु याग के पूर्वक दीक्षाङ्ग की वतलाया जायगा जिसके किये जान से मन्त्र का ज्ञाता पुरुष दीक्षा के फलको प्राप्त किया करता है ।१। अब वास्तु याग की उत्पत्ति बतलाई जाती है—पूर्व में एक महान् उग्र और समस्त प्राणियोंको भयंकर राक्षस जोदेवोके द्वारा निहत हुआ था यही भूमि में वास्तु पुरुष कहा गया है । वास्तु नाम वाले राक्षस का हनन करके उसके शरीर पर अधिष्ठित होकर तिरेपन देव स्थित हैं । पहले उनके लिए वलिका हरण करना चाहिए ।१। इनका वलिमण्डल ठीक-ठीक रीति से कहा जाता है— पूर्व और अपरमें आयत सूत्र को उक्त नाप से विन्यस्त करना चाहिए । उससे मध्य में कुछ आलम्बन करके दोनों ओर दो मत्स्यों में विन्यस्त करे ।३-४। दो-दो अग्रभागों से एक-एक मत्स्य पूर्ववत् होता है । इसी प्रकार से दूसरी ओर भी द्वितीय मत्स्य होता है । प्राची के सूत्रार्थ मित प्राची सूत्राणु में स्थित सूत्र से ईशान और अग्नि कोश में अर्ध चन्द्र करना चाहिए । फिर उसी सूत्र से उत्तर सूत्राय में स्थित से ईशान और वायव्य कोण में अर्ध चन्द्र लिखे । इस रीति से ईशान में मत्स्य उत्पन्न हो जाता है । पूर्व की ही भाँति पश्चिमार्ध स्थित सूत्र से वायव्य और नैर्ऋत्य कोण में अर्ध चन्द्र बनावे । इस तरह से दोनों ही स्थलों में दो मत्स्य हो जाते हैं ।५। वहाँ पर चार कोष्ठों से समन्वित चतुरस्र (चौकोर) होता है ।

उसको फिर मंत्रधारी चौंसठ पद वाला विभक्त करे ।६। ईशान से राक्षस कोण तक और अग्नि से वायव्य कोण पर्यन्त परम सावधान होकर इस प्रकार से सूत्रद्वय कोण सूत्र देवे । कोण सूत्र की कर्ण सूत्र संज्ञा होती है ।७।

ब्रह्माणं पूजयेदादौ मध्ये कोष्ठचतुष्टये ।
दिक्चतुष्केषु पूर्वादि यजेदार्यमनन्तरम् ।८
विवस्वन्ततो मित्रं महीधरमतः परम् ।
कोणार्द्धकोष्ठद्वन्द्वेषु वहनयादिपरितः पुनः ।९
सावित्रं सवितारं च शक्रमिन्द्रजयं पुनः ।
रुद्रं रुद्रजय विद्वानापञ्चाथापवत्मकम् ।१०
तत्कर्णसूत्रोभयतः कोष्ठद्वन्द्वेषु देशिकः ।
शर्वं गहं चार्य्यमण जम्भकं पिलिपिच्छकम् ।११
चरकीं च विदारीं च पत ामर्चयेत्क्रमात्।
अर्चयेद्दिक्षु पूर्वादिसार्द्धाद्यन्तदेष्विमान् ।१२
अष्टावष्टौविभागेन देवान्देशिकसत्तमः ।
क्रमादीशानपर्जन्यजयन्ताः शक्रभास्करौ ।१३
सत्यो वृषान्तरिक्षौ च दिशि प्राच्यामवस्थिताः ।
अग्निःपूषा च वितथो यमश्च गृहरक्षकः ।१४
गन्धर्वो भृङ्गराजश्च मृगोदक्षिणदिग्गताः ।
निर्ऋतिर्दौवारिश्च सुग्रीववरुणौ ततः ।१५
पुष्पदन्तासुरौ शेषरोगौ प्रत्यग्दिशि स्थिताः ।
वायुर्नागश्च मुख्यश्च सोमो भल्लाटएव च ।१६
अर्गलाख्यो दित्यदिता कुवेरस्य दिशि स्थिताः ।
उक्तानामपि देवानां पदान्य ापूर्यं पञ्चभिः ।१७

समाहित होकर आदि के मध्य में चार कोष्ठों में ब्रह्माजीका पूजन करे । पूर्वादि चारों दिशाओं में आर्य का यजन करना चाहिए । अर्थात् आर्य का पूर्व दिशा में-विवस्वान् का दक्षिण दिशा में—यित्र का

पश्चिम दिशा में और महीधर का उत्तर दिशा में पूजन करे। कोणार्ध दो कोष्ठों में वह्नि आदिका पूजन करना चाहिए।८-९। ऊर्ध्वं कोष्ठमें सावित्र का और अधः कोष्ठ में सविता का यजन करे। फिर विद्वान-पुरुष शक्र, इन्द्र जय, रुद्र–रुद्र जय पाँच अत्रवत्सक का पूजन करे।१०। उस कोण सूत्र के दोनों और कोष्ठ द्वन्द्वों में आचार्य क्रम से शर्व–गुह – अर्य्यमा—जम्भक पिलि पिच्छक—नरकी—विहारी और पूतना का जमर्चन करे। पूर्वादि सार्ध आद्यन्त पदों में दिशाओं में इनका पूजन करना चाहिए।११-१२। उत्तम आचार्य काम में आठ-आठ के विभाग से देवों का यजन करे। ईशान—मर्जन्य—अत्यन्त—शक्र—भास्कर — सत्य—वृष–अन्तरिक्ष जो प्राची दिशा में अवस्थित है। अग्नि — पूषा–वितथ–यम–गृह रक्षक—गन्धर्व—भृङ्गराज—मृग जो कि दक्षिण दिशा में अवस्थित है। निर्ऋति–दौवारिक–सुग्रीव–वरुण–पुष्पदन्त–असुर– शेष–रोग–जो प्रत्यग् दिशा में अवस्थित है। वायु–नाग–मुख्य–सोम–भल्लाट–दिति–अदिति जो कि कुवेर की दिशा में स्थित हैं। इन उक्त देवों के भी पदों को पाँचों से आपूरित करे।१३-१७।

रजोभिस्तेष्वथैतेभ्यः पायसान्नैर्दलि हरेत्।
अयं वास्तुबलिः प्रोक्तः सर्वसम्पत्समृद्धिदः।१८

नक्षत्रराशिवाराणामनुकूले शुभेऽहनि।
ततो भूमितले शुद्धे तुषाङ्गारविवर्ज्जिते।१९

पुण्याहं वाचयित्वा तु मण्डपं रचयेच्छुभम्।
पञ्चभिः सप्तभिर्हस्तैर्नवभिर्वामितान्तरम्।२०

षोडशस्तंभसंयुक्तं चत्वारस्तेषु मध्यगाः।
अष्टहस्तसमुच्छायाः संस्थाप्या द्वादशाऽभितः।२१

पञ्चहस्तप्रमाणास्ते निश्छिद्रा ऋजवः शुभाः।
तत्पञ्चमांऽशं संन्यस्ये-(न्निखने) न्मेदिन्यां तन्त्रवित्तमः।२२

नारिकेलदलैर्वंशैश्छादयेत्तत्समन्ततः ।
द्वारेषु तोरणानि स्यु: क्रमात क्षीरमहीरुहाम् ।२३

उनको रजों से पूरित करना चाहिए । इसके अनन्तर इसके लिए पायस अन्नों के द्वारा बलिका समाहरण करना चाहिए । यही वास्तु-बलिका बतायी गयी है जो सभी की समृद्धि के प्रदान करने वाली होती है ।१८। नक्षत्र, राशि और वारों के अनुकूल किसी शुभ दिन में परम शुद्ध भूमि तल में जो तुष और अङ्गार आदि से रहित होवे पुण्याह वाचन कराके परत शुभ एक मन्डप की रचना करनी चाहिए । वह मंडप पाँच-सात अथवा नौ हस्त के अन्तर वाला होना चाहए ।१९-२०। उस मंडप में सोलह स्तम्भ होने चाहिए उन सोलह स्तम्भों में से चार स्तम्भ मध्य गत होने चाहिए । इन स्तम्भों की ऊँचाई आठ हाथ की होवे । परस्परिक स्तम्भोंके सब ओर बारहस्तम्भ संस्थापित होवे । इनका प्रमाण पाँच हाथ का ही होना चाहिए । ये सब छिद्र रहित—सीधे और शुभ संस्थापित करे । तन्त्र वेत्ता पुरुष को चाहिए कि उन स्तम्भों का पाँचवा भाग भूमि में खोदकर रक्खे ।२१-२२। नारियल के पत्तों से और बाँसों से सभी ओर से उसका छादन कर देवे । द्वारों में क्रम से दूध वाले वृक्षों के तोरण होने चाहिए ।२२।

स्तम्भोच्छाया: स्मृतास्तेषां सप्तहस्तैः पृथक्-पृथक् ।
दशांगुलप्रमाणेन तत्परीणाह ईरितः ।२४
तिर्यक्फलकमानं स्यात्स्तम्भानामर्द्धमानतः ।
शूलानि कल्पयेन्मध्ये तोरणे हस्तमानतः ।२५
दिक्षु ध्वजान्निबध्नीताल्लोकपालसमप्रभान् ।
वितानदर्भमालाद्यैरलङ्कुर्वीत मन्डपम् ।२६

सात हाथों से पृथक्-पृथक् उन स्तम्भों की छाया कही गयी है । दश अंगुल प्रमाण से उनका परीणाह (परिमाण) कहा गया है ।२४। दोनों स्तम्भों के मध्य में देहली के रूप से जो ऊपर में तिरछा फलक है उनका मान स्तम्भों के अर्ध मान से ही होना चाहिए । एक हाथ

के मान से तोरण में मध्य में शूलों को कल्पना करे ।२५। दिशाओ में लोक पालों के समान प्रभा वाली ध्वजाओं को बाँध देवे । उस मन्डप को वितान-दर्भ और मालाये आदि के द्वारा भली-भाँति समलंकत करना चाहिए ।२६।

तत्त्रिभागमिते क्षेत्रेऽरत्निमात्रसमन्विताम् ।
चतुरस्रां ततो वेदि मण्डलाय प्रकल्पयेत् ।२७
प्रागेव दोक्षादिवसात्सप्तभिर्बिधिवहितैः ।
सर्वमङ्गलसम्पत्यै विदध्यादङ्कुरार्पणम् ।२८
मण्डपस्योत्तरे भागे शालां पूर्वापरायताम् ।
मूढां कुर्यात्ततस्तस्यां मण्डलं रचयेत्सुधीः ।२९
पञ्चहस्तप्रमाणानि पञ्चसूत्राणि पातयेत् ।
पूर्वापरायतान्येषामन्तरं द्वादशांगुलम् ।३०
दक्षिणोत्तासूत्राणि तद्वदेकादशार्पयेत् ।
पदानि तत्र जायन्ते चत्वारिंशत्प्रमार्ज्जयेत् ।३१
षड्क्त्यावीथीश्चतस्रोऽन्तश्चतुष्कोभयपार्श्वयोः ।
वीथ्यौ द्वे च चतुष्कोष्ठत्रयमत्रावशिष्यते ।३२

उसके विभाग से परिमित क्षेत्र में अरत्नि मात्र से समन्वित चतु-रस्र वेदी मण्डल के लिए कल्पित करे ।२७। दीक्षादि दिवस से पहिले ही सात दिन में विधि के सहित सब प्रकार के मङ्गलों की सम्पत्ति के लिए अंकुरों का आरोपण करना चाहिए ।२८। मण्डप के उत्तर भाग में पूर्बापर में आयता गूढ़ डाला जनानी चाहिए । फिर उनके उपरान्त उस शाला में सुधी व्यक्ति को चाहिए कि मण्डप की रचना करे ।२९। फिर पाँच हाथों के प्रमाण वाले पाँच सूत्रों का पालन करे जो पूर्वा पर आयत हों वे और जिनका अन्तर बारह अंगुल होवे ।३०। उसी भाँति दक्षिण सूत्रों को ग्यारह वार करे । वहाँ पर चालीस पद उत्पन्न होते हैं उसकी प्रमार्जित करना चाहिए ।३१। पांकुम चारों विधियों का मार्जन करे । पुर्व से चार कोष्ठो वाली एकविधि आठ कोष्ठों वाली

दक्षिण विधि-फिर चार कोष्ठों वाली पश्चिम विधि–और आठ कोष्ठों वाली उत्तर विधि का मार्जन करे। इस मण्डप में चतुष्कोष्ट त्रय अवशिष्ट रहता है।३२।

पदानि रञ्जयेत्तानि श्वेतपीतारुणासितैः।
रजोभिः श्यामलेनाथ वीथीरापूरयेत्सुधीः।३३
पात्राणि त्रिविधांयाहुर कुरार्पणकर्मसु।
पालिका पञ्च मुख्यश्च शरावाश्च चतुष्क्रमात्।३४
प्रोक्ताः स्नृः सर्वतन्त्रज्ञैर्हरिब्रह्मशिवात्मकाः।
एषामुत्सेध (च्छाय) उन्नेयः षोडश द्वादशाष्टभिः।३५
अंगुलैः क्रमशस्तानि शुभांयावेष्ट्य तंतुना।
प्रक्षाल्य देशिकस्तेषु पदेष्वाहितशालिषु।३६
सगधदर्भकर्चषु पश्चिमामि निवेशयेत्।
करीषबालुकामृद्भिस्तानि पात्राणि पूरयेत्।३७

उन पदों का श्वेत-पीत-अरुण और सितरज से तथा श्यामल रज से सुधी पुरूष को विधि पूर्वक अपूरित करना चाहिए।३३। अंकुरार्पण कर्मो में तीन प्रकार के पात्र कये गये हैं—पालिका—पाँच मुखी और शराव ये क्रम से बताये गये हैं। ये सभी तन्त्रों के ज्ञाताओं के द्वारा हरि ब्रह्मा और शिव के स्वरूप वाले कहे गये हैं। इनकी ऊँचाई क्रम से षोड्श—द्वादश और अष्ट अंगुलों की समझनी चाहिए। वे शुभ होती हैं। इनको तन्तु से आवेष्टित करके प्रक्षालन करके आचार्य आहित शाली वाले गन्ध दर्भ कूर्च से युक्त उन पदों के पश्चिम आदि निवेशित करना चाहिए। करीष बालुका—मृत्तिका से उन पात्रों को पूरित कर देवे।३४-३७।

सुधावीजेन बीजानि दुग्धैः प्रक्षाल्य तन्त्रवित्।
मूलमन्त्राभिजप्तानि पंचघोषपुरःसरम्।३८
आशोर्वाग्भिर्द्विजातीनां मंगलाचारपूर्वकम्।
निर्वपेत्तेषु पात्रेषु देशिको यतमानसः।३९

शालिश्यामाढकामुग्दतिलनिष्पावसर्षपा: ।
कुलत्थ कंगमाषाश्च बीजान्यंड्.कुरर्मणि ।४०
हरिद्रद्भि समभ्युक्ष्य वस्त्रैराच्छाद्य देशिक: ।
बलिंत्रिविधपात्राणां दिक्षु पूर्वाद्दितोहरेत् ।४१
प्रणवाद्यैर्नमोन्तैश्च रात्रौ रात्रीशनामभि: ।
भतानि पितरो यक्षा नागा ब्रह्मा शिवो हरि: ।४२

तन्त्रों का ज्ञाता सुधा बीज के द्वारा बीजों को दूध से प्रक्षालित करके मूल मंत्र से अभिमंत्रित करे और पांच घोषों के साथ-द्विजातियों के आशीर्वचनों से मङ्गलाचार पूर्वक आचार्य संयत मंत्र वाला होकर उन पात्रोंमें निर्वपन करे ।३८-३९। शाली, श्यामा, आढकी, मुग्द, तिल, निष्पाव, सर्षप कुलत्थ कङ्गु, मास, इनके बीजों को अंकुर, कर्म्म में ग्रहण करना चाहिए । आचार्य हल्दी से सभ्युक्षण करके वस्त्रसे आच्छादित कर देवे । पूर्वादि दिशाओं में त्रिविध पात्रों की वलि का समाहरण करे ।४०-४१। यह बलि रात्रीशके नामों द्वारा देवे जिनके आदिमें प्रणव होवे और अन्त में नम:'—यह पद होवे । भूत, पित्रगण, यक्ष, नाम, ब्रह्मा, शिव ओर हरि ये सातों रात्रियों के देवता कहे गये हैं । ४२।

सप्तानामपि रात्रीणां देवता: समुदीरिता: ।
भूतेभ्य: स्यर्लाजतिलहरिद्रादधिसक्तव: ।४३
सान्ना: पितृभ्य: सतिलास्तन्डुला: परिकीर्तिता: ।
करम्भलाजा यक्षेभ्यो नारिकेलोदकान्वितम् ।४४
सक्तुपिष्टं च नागेभ्यो ब्रह्मणे पंकजाक्षता: ।
सापूपमन्नं शर्वाय विष्णवे च गुडौदनम् ।४५
ततो लोकेश्वरेभ्शोऽपि वितरेद्विधिवत्बलिम् ।
दीक्षायामभिषेकेषु नवगेश्मप्रवेशने ।४६
उत्सवेषु च संपष्यै (त्तौ) विदत्यादकुरार्पणम् ।
प्राक् प्रोक्ते मण्डपे बिद्वान्वेदिकाया बहिस्त्रिधा ।४७

क्षेत्रं विभज्य मध्यांशे पूर्वादि परिकल्पयेत् ।
अष्टास्वाशासु कुण्डानि रम्याकाराण्यनुक्रमाद् ।४८

भूतों के लिए बलि में लाजा, तिल, हरिद्रा, दधि, सक्तु और अन्न ये होते हैं। पितृभ्यों के लिए तिलों के सहित तण्डुल बताये गये हैं। यक्षों के लिए आरम्भ और लाजा (खील) होते हैं। नागों के लिए नारियल के जल से समन्वित सक्तुपिष्ट होता है और ब्रह्मा के लिये पंकज तथा अक्षत है। शर्व के लिए पूजों के सहित अन्न तथा विष्णु भगवान्की गुड़ और ओदन होता है ।४३-४५। उसके अनन्तर लोकपालों के लिए भी विधि के साथ बलि का वितरण करना चाहिए। दीक्षा में, अभिषेकों में, नवीन गृह के प्रवेश करने में, उत्सवों में सम्पदा के लिए अंकुरार्पण करना ही चाहिए। पूर्व में वर्णित मन्डप में विद्वान् पुरुषको वेदिका से बाहिर तीन भागों में क्षेत्र का विभाग करके मध्यांशमें पूर्वादि दिशाओं की कल्पना कर लेनी चाहिए। और अनुक्रम से रम्य आकार वाले कुन्डों की आठों दिशाओं में रचना करनी चाहिए ।४४-४८।

चतुरस्रं योनिमर्द्धचन्द्रं त्र्यस्रं सुवर्तुलम् ।
षडस्रं पंकजाकारमष्टास्रं तानि नामतः ।४९
आचार्य कुन्डं मध्ये स्याद्गौरीपतिमहेन्द्रयोः ।
हस्तमानमितां भूमि पूर्ववत्परिकल्पयेत् ।५०
समन्तात्कुन्डमेतत्स्याच्चतुरस्रं शुभावहम् ।
चतुर्विंशत्यंगुलाढयं हस्तं तन्त्रविदोविदुः ।५१
कर्तुर्दक्षिणहस्तस्य मध्यमांगुलिपर्व्वणः ।
मध्यस्य दीर्घमानेन मानांगुलमुदीरितम् ।५२
यवानामष्टभिः क्लृप्तं मानांगुलमुदीरितम् ।
चतुरस्रीकृतं क्षेत्रं पञ्चधा विभजेत्सुधीः ।५३
न्यसेत्पुरस्तादेकांशं कोणार्द्धार्धत्प्रमाणतः ।
भ्रामयेत्कोणमानेन तथान्यदपि मन्त्रवित् ।५४

सूत्रयुग्मं ततो दद्यात्कुण्डं योनिनिभं भवेत् ।
चतुरस्रीकृत क्षेत्रं दशधा विभजेत्पुनः ।५५

उन कुण्डों के चतुरस्रयोनि, अर्धचन्द्र, त्र्यस्र, सुवर्त्तल- षडस्र-पकजाकर और अष्टस्र ये नाम होते हैं ।४६। गौरी और महेन्द्र का आचार्य कुन्ड मध्य में होता है। एक हाथ के मान से परिमित भूमिकी पूर्व की ही भाँति पीरकल्पना करनी चाहिए ।५०। यह कुन्ड चारों ओर से चतुरस्र शुभ का आवाहन करने वाला होता है। इसको मन्त्रके वेत्ता जन चौवीस अंगुलों से आढ्य (एक हाथ) कहा करते हैं ।५१। कर्त्ता के दाहिने हाथ के मध्यमांगुलिके पर्व वाले मध्यके दीर्घ भाव से अंगुलि का मान कहा गया है ।५२। आठपर्वोंका क्लृप्त अंगुलिका माम बताया गया है। सुधी पुरुष चतुरस्र कृत क्षेत्र का पाँच प्रकार से विभाजन करे ।५३। आगे कोण के अर्धार्ध प्रमाण से एकांश का न्यास करे। मन्त्र का ज्ञाता पुरुष को उसी भाँति कोण के मान से अन्य का भी भ्रमण करना चाहिए इसके उपरान्त सूत्रों के युग्म को देने से योनि के तुल्य कुन्ड होता है। सतुरस्रो कृत-क्षेत्र को दश प्रकार से विभक्त करना चाहिए ।५४-५५।

एकमेकं त्यजेदंशमधऊर्ध्वं च तन्त्रवित् ।
ज्यासूत्रं पातयेदग्रे तन्मानादभ्रमयेत्ततः ।५६
अर्द्धचन्द्रनिभं कुण्डरमणीयमिदं भवेत् ।
चतुर्द्धा भेदिते क्षेत्रे न्यसेदुभयपार्श्वयोः ।५७
एकैकमंशं तन्मानादग्रतो लाञ्छयेत्ततः ।
सूत्रयुग्मं बुधः (ततः) कुर्यात्त्यस्रकुण्डमुदाहृतम् ।५८
अष्टादशांशे क्षेत्रे च न्यसेदेकं वहिर्दुधः ।
भ्रमयेत्तेनमानेन बृत्तं कुण्डमनुत्तमम् ।५९
अषृधाविभजेत्क्षेत्रं मध्यसूत्रस्यपार्श्वयोः ।
भागन्यसेदेकमेकं भागेनानेन मध्यतः ।६०

तन्त्र का ज्ञाता पुरुष ऊपर और नीचे एक एक अंश का त्यागकर देवे। ज्यासूत्र का पालन करे फिर आगे उसके मान से भ्रमण करना चाहिए।५६। तो यह परम सुन्दर अर्धचन्द्र के तुल्य कुण्ड होता है। चार प्रकार से भेदित क्षेत्रमें दोनों पाश्वोंमें व्यास करे।५७। फिर उसके मानसे एक-एक अंशको आगे लांछित करना चाहिए। बुद्धिमान पुरुषदो सूत्रों को करे तो यह त्र्यस्र कुण्ड कहा गया है।५८। बुद्धिमाने पुरुष को अष्टादशांश क्षेत्र में वाहिर एक का न्यास कर देना चाहिए। उस मान से भ्रमित करे तो परम श्रेष्ठ वृत्त कुण्ड होता है।५६। मध्य में इस भाग से एक-एक भाग का न्यास करे।६०।

कर्यात्पार्श्वयुगे (द्वये) मत्स्यचतुष्क तन्त्रवित्तमः।
सूत्रषट्कं ततो दद्यात्षडस्रं कुण्डमुत्तमम्।६१
चतुरस्रीकृतं क्षेत्रं विभज्याष्टादशांशतः।
एकं भागं वहिर्न्यस्य भ्रामयेत्तेन वर्तुलम्ः।६२
बृत्तानि कर्णिकादोनां बहिस्त्रीणि प्रकल्पयेत्।
पद्मकुण्डमिति प्रोक्तं विलोचनमनोहरम्।६३
पर्वोक्तं विभजेत्क्षेत्रं चतुर्विशतिभागतः।
एकं भागं वहिर्न्यस्य चतुरस्रं प्रकल्पयेत्।६४
अंतःस्थचतुतरस्रस्य कोणाध्दर्धार्द्धप्र णतः।
वाह्यस्थतुरस्रस्य कोणाभ्यां परिलांछयेत्।६५
दिशं प्रति यथान्यायमष्टौ सूत्राणि पातयेत्।
अष्टास्रं कुण्डमेतध्दि तन्त्रविद्भिरुदाहृतम्।६६
यावान्कुण्डस्य विस्तारः (१) खननं तावदीरितम्।
कुण्डानां यादृश रूपं मेखलानां च तादृशम्।६७

तन्त्र के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ पुरुष द्वारा दोनों पाश्वों में चार मत्स्यों को बनाना चाहिए। फिर छं सूत्रों का करे तो उत्तम षडस्र कुण्ड हो जाता है।६१। चतुरस्रों कृत क्षेत्रको अठारह अंशसे विभाजन करके एक

भाग को बाहिर न्यस्त करके भ्रामण करे तो वर्त्तुल होता है ।६२। कर्णिका आदि के तीन वृत्तों को बाहिर कल्पना करनी चाहिए । यह नेत्रों को मनोहर दिखाई देने बाला पद्म कुन्ड कहा गया है ।६३। पूर्व में कहें हुए क्षेत्र को चौबीस भाग से विभक्त करना चाहिए । एक भाग का वाहिर न्यास करके चतुरस्र की कल्पना करे ।६४। अन्दर स्थित चतुरस्र का कोणार्धार्ध प्रमाण से बाहिर में स्थित चतुरस्र के को·ों से परिलाञ्छित करना चाहिए।६५। न्यायानुसार दिशाकी ओर आठ सूत्रों का पालन करे । इसको तन्त्र के ज्ञाता विद्वानों के द्वारा अष्टास्र कुन्ड कहा गया है ।६६। जितना कुन्डों का विस्तार होवे उतना ही खनन कहा गया है । और कुन्डों का जिस प्रकार का रूप होता है मेखलाओं का भी उसी तरह का हुआ है ।६७।

कुन्डानां खलास्तिस्रो मुष्टिमात्रे तु ताः क्रमात् ।
उत्सेधायामतीज्ञेया ह्यकार्द्धांगुलिसमिताः ।६८
अरत्निमात्रे कुण्डे स्युस्तास्त्रिद्व्येकांगुलात्मिकाः ।
एकहस्तमिते कुन्डे वेदाग्निनयनांगुलाः ।६९
मेखलानां भवेदन्तः परितो नेमिरंगुलात् ।
एकहस्तस्य कुन्डस्य वर्द्धयेत्तां क्रमात्सुधीः ।७०
दशहस्तान्तगन्येषामर्द्धांगुलशात्पृथक् ।
कुण्डे द्विहस्ते ता ज्ञेया रसवेदगुणांगुलाः । ७१
चतुर्हस्तेषु कुण्डेषु वसुतर्कयुगांगुलाः ।
कुण्डे रसकरे ताः स्युर्दशाष्टत्र्वंगुलान्विताः । ७२

कुन्डों की तीन मेखलाऐं होती है और वे क्रम से मुष्टि मात्र हुआ करती है । उत्सेध और आयाम से वे ह्योकार्द्ध अंगुलियोंके संमित हुआ करती हैं ।१८। जो कुन्ड अरत्नि मात्र ही होता है उनमें वे तीन दो और एक अंगुल मात्र के स्वरूप वाली हुआ करती हैं । एक हाथ परिमाण वाले कुन्ड में चार-तीन और दो अंगुल के परिमाण से युक्त होती है ।६९। मेखलाओंके अन्दर सभी ओर अंगुलके मानसे नेमि होती

है। सुधी पुरुष एक हाथ वाले कुन्ड को क्रम से वर्धित कर देवे ।७०। अन्यों का अर्धांगुल वश से पृथक् दश हाथों के अन्त तक करे। दो हाथ के कुन्डमें छँ और चार अंगुल वाली उनको जानना चाहिये ।७१। चार हाथ परिमाण वाले कुन्डो में आठ और चार अंगुलों के परिमाण वाली हुआ करती है। छँ हाथों वाले कुन्ड में वे दश-आठ और छँ अंगुलों वाली हुआ करती है ।७२।

वसुहस्तमिते कुण्डे भानुपङ्क्त्यष्टकांगुलाः ।७३
दशहस्तमिते कुण्डे मनुभानुदशांगुलाः ।
विस्तारोत्सेधतो ज्ञेया मेखला सर्वतो बुधैः । ७४
होतुरग्रे योनिरासामुपर्यश्वत्थपत्रवत् ।
मुष्टयरत्न्येकहस्तानां कुण्डानां योनिरोरिता ।७५
षट्चतुर्ह्यंगुलायामविस्तारोन्नतिशालिनी ।
एकांगुल त योन्यग्रे कुर्यादीषदधोमुखम् ।७६
एककांगुलतो योनि कुण्डेष्वन्येषु वर्द्धयेत् ।
यवद्वयक्रमेणैव योन्यग्रमापे वर्द्धयेत् ।७७

आठ हाथ में परिमित कुन्डमें भानु पंक्ति आठअंगुल वाली मेखला होती है। और दश हाथ परिपित कुन्डके होने पर मेखला मनु-भानु दश अंगुल वाली होनी चाहिये। बुधों के द्वारा मेखला सब प्रकार-से विस्तार और उत्सेध अर्थात् ऊँचाई से जाननी चाहिए ।७३-७४। होता के आगे इनकी योनि होती है जो पीपल के पत्र के ही समान हुआ करती है। मुष्टि-अरत्नी एक हाथ वाले कुन्डों की योनि कही गयी है ।७५। छै और चार अंगुलों के आयास विस्तार से उन्नति शालिनी होती है–योनि को अधो मुख अन्य एक अंगुल करे ।७६। अन्य कुन्डों में एक अंगुल से योनि को बढ़ा देना चाहिये। अन्योंमें दो यवों के मान से ही योनि के अग्रभाग को बढ़ावे ।७७।

स्थलादारभ्य नालं स्याद्योन्या मध्ये सरन्ध्रकम् ।
नार्पयेत्कुण्डकोणषु योनिं तां तन्त्रवित्रमः ।७८

कुण्डानां कल्पयेदन्तर्नाभिमम्बुजसन्निभाम् ।
तत्तत्कुण्डानुरूपं वा मानमस्य निगद्यते ।७९
मुष्ट्यरत्न्येकहस्तानां नाभिरुत्सेधतारतः ।
द्वित्रिवेदाङ्गुलोपेताः कुण्डेष्वन्येषु वर्द्धयेत् ।८०
यवद्वयक्रमेणैव नाभिं पृथगुदारधीः ।
योनिकुण्डे योनिमब्जकुण्डे नाभिं विवर्जयेत् ।८१
नाभिक्षेत्रं त्रिधा भित्वा मध्ये कुर्वीत कर्णिकाम् ।
वहिरंशयेनाष्टौ पत्राणि परिकल्पयेत् ।८२

योनि के मध्य में रन्ध्र के सहित स्थलसे आरम्भ करके नाल होना चाहिए। तन्त्र शास्त्र का ज्ञाता विद्वान् उस योनि को कुण्ड के कोणोंमें अर्पित न करे ।७८। कुण्डों के आदर अम्बुज के सदृश नाभि की कल्पना करनी चाहिए । इस नाभि का परित्याग उस कुण्ड के ही अनुरूप कहा जाया करता है ।७९। मुष्टि-रत्नी और एक हाथ वाले कुण्डों की नाभि उत्सेधतार से होती है जो दो-तीन और चार अंगुलोंसे उपेत हैं। अन्य कुण्डों में बड़ा देवे ।८०। उदार बुद्धि वाले को चाहिए कि दो यवों के क्रम से ही नाभि की पृथक् बनाये । जो योनि कुण्डहों और जो अब्ज कुण्ड होवे वहाँ पर योनि और नाभि को वर्जित कर देना चाहिए ।८१। नाभि के क्षेत्र को तीन भागों में भेदन करके मध्य में कर्णिका करे । वाहिर दो अंश से आठ पत्रों की कल्पना करे ।८२।

मुष्टिमात्रमितं कुण्डं शतार्द्धे संप्रचक्षते ।
शतहोमेऽरत्निमात्रं हस्तमात्रं सहस्रके ।८३
द्विहस्तमयुते लक्षे चतुर्हस्तमुदीरितम् ।
दशलक्षे तु षड्हस्तं कोटयमष्टकरं स्मृतम् ।८४
एकहस्तमितं कुण्डमेकलक्षे विधीयते ।
लक्षाणां दशकं यावत्तावद्धस्तेन वर्धयेत् ।८५
दशहस्तमितं कुण्डं कोटिहोमे (१) ऽपिशस्यते ।
सर्वसिध्दिकर कुण्डं चतुरस्रमुदाहृतम् ।८६

पुत्रप्रदं योनिकुण्डमर्द्धेन्द्वाभं शुभप्रदम् ।
शत्रुक्षयकरं त्र्यस्त्रं वर्तुलं शान्तिकर्मणि ।८७

एक मुष्टि मात्र परिमाण वाला कुन्ड अर्धशत का प्रसिद्ध है । जो शतहोम है । वहाँ पर कुन्ड अरत्निमात्र होना चाहिये और सहस्र आहुतियों के लिये एक हाथ परिमाणं का कुन्ड होता है ।८३। दश हजार आहुतियों के लिये दो हाथ का कुन्ड और एक लाख में चार हाथों के प्रमाण वाला कुन्ड होना चाहिये । दश लाख आहुतियाँ जहाँ पर होवें वहाँ पर छै हाथ का और एक करोंड़ आहुतियों के लिये आठ हाथ का कुन्ड होना चाहिये ।८४। हाथ परिमाण का कुन्ड एक लाख के लिये किया जाता है । जहाँ तक दश लाख है वहाँ पर उतने ही हाथ बढ़ा देना चाहिये ।८५। दश हाथ परिमाण वाला कुन्ड एक करोड़ के होम में भी अशस्त माना जाया करता है । सब प्रकार की सिद्धियों के करने वाला कुन्ड चतुरस्र (चौकोर)ही उदाहृत किया गया है ।८६। योनि-कुन्ड पुत्र का प्रदान करने वाला होता है और अर्धचन्द्र की आभा वाला कुन्ड शुभप्रद होता है । त्र्यस्र शत्रुओं के क्षय का करने वाला है और जो कुन्ड वर्तुल होता उसको शान्ति कर्म में प्रयुक्त करना चाहिये ।७८।

छेदमारणयोः कुण्डं षडस्त्रं पद्मसन्निभम् ।
वृष्टिदं रोगशमनं कुन्डमष्टास्त्रमीरितम् । ८८
विप्राणां चतुरस्त्र स्याद्राज्ञां वर्तुलमिष्यते ।
वैश्यानामर्द्धचन्द्राभं शूद्राणां त्र्यस्तमीरितम् ।८९
चतुरस्त्रं तु मर्वेषां केचिदिच्छन्ति (२) देशिकाः ।
कुण्ड (१) रूपं तु जानीयात्वा रम प्रकृतेर्वपुः ।९०
प्राच्यां शिरः समाख्यातं बाहू दक्षिणसौम्ययोः ।
उदरं कुन्डमित्युक्तं योनिः (२) पश्चिमतोभवेत् ।९१
नित्यं नैमित्तकं होमं (३) स्थण्डिले वा समाचरेत् ।
हस्तमात्रेण तत्कुर्याद्वालुकाभिः सुशोभनम् ।९२

अंगुलोत्सेधसयुंक्तं चतुरस्रं समं ततः ।
एवं प्रोक्तानि कथ्यन्ते स्रुक्स्रुवौ ततः ।९३

छेदन और मारण कर्मों में कुन्ड षडस्र पद्म के तुल्य होता है । अष्टास्र कुन्ड शान्ति के प्रदान करने वाला और रोगों का शयन करने वाला होता है ऐसा कहा गया है ।८८। विप्रों का कुन्ड चतुरस्र और क्षत्रियों का कुन्ड वर्तुल अर्थात् गोलाकार हुआ करता है । वैश्यों का कुन्ड आधे चन्द्रमा के आकार के तुल्य तथा शूद्रों का कुन्ड त्र्यस्र हुआ करता है ।८९। कुछ आचार्यों का मत है कि सबका कुन्ड चतुरस्र ही होता है । कुन्ड का रूप प्रकृति का ही परम रूप कहा जाता है ।९०। इसका शिर प्राची में अर्थात् पूर्व दिशा में कहा गया है तथा इसकी बाहू दक्षिण और सौम्य दिशाओं में होती है । उदर कुन्ड है तथा योनि पश्चिम की ओर होता है ।९१ नित्य और नैमित्तिक होम का समाचरण स्थन्डिल में करना चाहिये । उसने एक हाथ भर का वालुकाओं से ही परम शोभन बनाना चाहिए ।९२। यह अंगुल के उत्सेधसे युक्त और फिर समचतुरस्र बनावे । इस प्रकार से कुन्ड बतलाये गये हैं । इसके उपरान्त स्रुक् और स्रुव कहे जाते ।९३।

प्रकल्पयेत्स्रुचं यागे वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।
श्रीपर्णीशिशपाक्षीरशाखिष्वेकमयं गुरु ।९४
गृहीत्वा विभजेद्धस्तमात्रं षट्त्रिशता पुनः ।
विशत्यशैर्भवेद्दण्डो वेदी तैरष्टभिर्भवेत् ।९५
एकांशेन मितः काण्ठः सप्तभागमितं मुखम् ।
वेदित्र्यंशेन विस्तारः कण्ठस्य परिकीर्तितः ।९६
अग्रं कण्ठसमानं स्यान्मुखे मार्ग प्रकल्पयेत् ।
कनिष्ठांगुलिमानेन सर्पिषो निर्गमाय च ।९७
वेदिमध्ये विधातव्या भागेनैकेन कर्णिका ।
विदधीत बहिस्तस्या एकांशेनाभितोऽवटम् ।९८

याग में स्रुवको आगे बतलाये जाने वाले मार्गसे ही कल्पित करना चाहिये । गुरु को चाहिये कि शिशपा-श्रीपर्णी और दूध वाले वृक्षों का एक भाग ग्रहण करके उसको एक हाथ प्रमाण वाला भाग विभक्त करे । फिर छत्तीस विभाजन करे । बीस अंश से दन्ड होता है उन आठों से वेदी होतो है ।९४-९५। एक अंश से मित कन्ठ होता है और सात भागों से मित मुख होता है । कन्ठ का विस्तार वेदी के तीन अंश से कहा गया है ।९३। अग्रभाग कन्ठ के समान होता है और मुख में मार्ग की कल्पना करनी चाहिये । कनिष्ठिका अंगुलि के मान से घृत के निर्गम के लिये वेदी के मध्य में एक भाग से कर्णिका की रचना करनी चाहिये । उसके बाहिर एक अंश से दोनों और अवट बनावे ।९७-९८।

तस्य खातं त्रिभिर्भागेवृत्त र्द्धांशतो भवेत् ।
अंशेनैकेन परितो दलानि परिकल्पयेत् ।९९
मेखला मुखवेद्क्रोःस्यात्परितोऽर्द्धांशमानतः ।
दण्डमूलाग्रयोः कुम्भौ गुणवेदांगुलै क्रमात् ।१००
गन्डीयुगं यमांशः स्याद्दण्डस्य नाह ईरितः ।
षड्भिरशैः पृष्ठभागो वेद्याः कूर्माकृतिभवेत् ।१०१

उयका खात (गर्त) तीन भागों से और अध अंश से वृत होता है । एक अंश से सब ओर दलों की परिकल्पना करनी चाहिये । ।९९। चारों ओर अर्धांश मान से मुख वेदियों की मेखला होती है । क्रम से दन्ड के मूलाग्रो में गुण वेद्यंगुलो से दो कुम्भ बनावे । यमाँश गन्डी युग होता है यह दन्डका आनाह कहा गया है । छै अंशों से वेदी का पृष्ठ भाग कूर्मकी आकृति वाला हुआ करता है ।१००-१०१।

हंसस्य वा हस्तिनो वा पोत्रिणो वा मुखं लिखेत् ।
मुखष्य पृष्ठभागेऽस्थाः संप्रोक्त लक्षणं स्रुचः ।१०२
स्रुश्चतुर्विंशतिभिर्भागैरारचयैत्स्रुवम् ।
र्शविंशत्या दण्डमानमंशैरेतस्य कीर्तितम् ।१०३

चतुर्भिरशैरानाहः कर्षाज्यग्रहि तच्छिरः ।
अंशद्वयेन निखनेत्पङ्के मृगपदाकृति । १०४
दन्डमूलाग्रायोर्गन्डी भवेत्कड्कणभूषितः ।
स्रुवस्य विधिराख्यातः कथ्यते (?) मन्डलान्यथ । १०५
चतुरस्रे चतुष्कोष्ठे कर्णसूत्रसमन्विते
चतुर्ष्वपि च कोष्ठेषु कोणसूत्रचतुष्टयम् ।१०६
मध्ये मध्ये यथा मत्स्या भवेयुः पातयेत्तथा ।
पूर्वापरायते द्वे द्वे मन्त्री याम्योत्तरायते ।१०७
पातयेत्तेषु मत्स्येषु समं सूत्रचतुष्टयम् ।
पूर्ववत्कोणकोष्ठेषु कर्णसूत्राणि पातयेत् ।१०८

हंस का अथवा हाथी का पोत्रि का मुख लिये। मुख के पृष्ठ भाग में इस स्रुव का लक्षण कहा गया है।१०२। स्रुच के चौबीस भागों के द्वारा स्रुव की रचना करनी चाहिये इससे वाईस अंशों से दड का मान कीर्त्तित कियागया है।१०३। इनके चार अंशोसे आनाह होता है और दो अंश से शिर बनावे वह कर्षाज्यग्राही अर्थात् पंक में मृगपदाकृति होता है । षोड़शमास कर्ष कहा जाता है।१०४। दन्ड के मूल के अग्रभागों में कंकण से भूषित गन्डी अर्थात् घट होता हे । स्रुवकी विधि तो बतला दी गयी है। अब मन्डल कहे जाते हैं।१०५। कर्ण सूत्रसे समन्वित चतुरस्र चार कोष्ठ है। उन चारों कोष्ठों में कोण सूत्रका चतुष्टय मध्य=मध्य ये उसी भाँति पालन करे जिससे मत्स्य हो जावें । मन्त्रधारी पूर्व परायत दो-दो याम्य और उत्तरमें अयत उन मत्स्योंमें समान चार सूत्रों का पालन करे। पूर्व की ही भाँति कोणों के कोष्ठों में कर्ण सूत्रों का पालन करना चाहिये ।१०६-१०८।

तदुद्भूतेषु मत्स्येषु दद्यात्सूत्रचतुष्टयम् ।
ततः कोष्ठेषु मत्स्याः स्युस्तेषु सूत्राणि पातयेत् ।१०९
यावच्छ..द्वयं मन्त्री षट्पञ्चाशत्पदान्यपि ।
तावत्तेनैव विधिना तत्रसूत्राणि पातयेत् । ११०

षट्त्रिशता मर्दैर्मध्ये लिखेत्पद्मं सलक्षणम् ।
बहिः पङ्क्त्या भवेत्पीठं पंक्तियुग्मेन वीथिकाम् ।१११
द्वारशोभोपशोभास्त्रात् शिष्टाभ्यां परिकल्पयेत् ।
शास्त्रोक्तविधिना मन्त्री ततः पद्मं समालिखेत् ।११२
पद्मक्षेत्रस्य सन्त्यज्य द्वादशांशं बहिः सुधीः ।
तन्मध्यं विभजेद्वृत्तैस्त्रिभिः समविभागतः ।११३
आद्यं स्यात्कर्णिका स्थानं केशराण द्वितीयकम् ।
तृतीय पद्ममत्राणामुक्तांशेन दलाग्रकम् ।११४

उससे समुत्पन्न हुये मत्स्यों के चार सूत्र देवे । जिन कोष्ठोंमें मत्स्य होते हैं उनमें सूत्रों का पालन करे ।१०९। मन्त्रधारी को चाहिये कि जब तक दो सौ छप्पन होवे तब तक उसी विधि से वहाँ पर सूत्रों क पालन करता रहे । ११० । छत्तीस पदों से मध्य में लक्षण के सहित पद्म का लेखन करे । बाहिर पंक्ति से पीठ होती हैं और दो पंक्तियों से बीथिका होती है और शिष्टों के द्वारा द्वारशोभा और उपशोभास्त्रों को परिकल्पित करना चाहिये । फिर मन्त्र के धारण करने वाले व्यक्ति को चाहिये कि वह शास्त्रों में वर्णित विधि से पद्म को समालिखित करे ।१११-११२। सुधी को चाहिये कि वाहिर पद्म क्षेत्रके द्वादश अंश का भली भाँति परित्याग करके उसके मध्य का सम विभाग से तीन वृत्तों के द्वारा विभाजन करे ।११३। उक्त अंश से आदि में होने वाला कार्णिका का स्थान है—दूसरा केसरों का है और तीसरा पद्म पत्रों का दलाग्र का स्थान होता है । १४।

बाह्यवृत्तान्तरालस्य मानेन विधिना सुधीः ।
निधाय केसराग्रेषु परितोऽर्द्ध निशाचरान् । ११५
लिखित्वा सन्धिसस्थानि तत्र सूत्राणि पातयेत् ।
दलाग्राणां च यन्मानं तन्मानं वृत्तमालिखेत् । ११६
तदन्तराले तन्मध्यसूत्रस्योभयतः सुधीः ।
आलिखेद्वाह्यहस्तेन दलाग्राणि समन्ततः ।११७

दलमूलेषु युगशः केसराणि प्रकल्पयेत् ।
एतत्साधारणं प्रोक्तं पङ्कज तन्त्रवेदिभिः ।११८
पदानि त्रीणि पादार्थं पीठकोणेषु मार्जयेत् ।
अवशिष्टैः पदैर्विद्वान् गात्राणि परिकल्पयेत् ।११९
पदानि वीथिसंस्थानि मार्जयेत्पङ्क्त्यभेदनः ।
दिक्षु द्वाराणि रचयेद्द्विचतुष्कोष्टकैस्ततः ।१२०
पदैस्त्रिभिरथैकेन शोभाः स्युर्द्वारपार्श्वयोः ।
उपशोभाः स्युरेकेन त्रिभिः कोष्ठैरनन्तरम् ।१२१

वाह्य वृत्त के अन्तराल के मान से विधि से सुधी केसराद्यों में रखकर दोनों ओर अर्ध निशाचरों को नियेकर वहांपर सन्धि संस्थान सूत्रों का पातन करे । दलो के अग्र भागों का जो मान है उसी मान वाला वृत्त लिखे ।११५-११६। उसके अन्तरालमें सुधी पुरुष दोनों ओर उसके मध्यस्थ सूत्र के चारों ओर वाह्य हस्त से दलाग्रों को लिखे । ।११७। दलों के मूलो में दो केसरों को प्रकल्पित करे । तन्त्र शास्त्र विद्वानों द्वारा यह साधारण पंकज बताया गया है ।११८। पाद के लिये पीठ के कोणों में तीन पदों का मार्जन करना चाहिये । अवशिष्ट पदों के द्वारा विद्वान् को चाहिये कि वह गात्रों का परिकल्पन करे ।११९। पक्ति के अभेद से ही वीथि में संस्थिति पदों का मार्जन करे । दिशाओं में द्वारों की रचना करे फिर दो और चार कोष्ठों वाले पदों से रचना करनी चाहिये । इसके अनन्तर एक के द्वारा द्वार के पार्श्व भागों की शोभाऐं होती है । एक से उपशोभाऐ होती हैं और अनन्तर में तीन कोष्ठों से होती हैं ।१२०-१२१।

अवशिष्टैः पदैः षड्भिः कोणानां स्याच्चतुष्टयम् ।
रञ्जयेत्पञ्चभिर्वर्णैर्मन्डलं तन्मनोहरम् ।१२२
पीतं हरिद्राचूर्णं स्यात्सितं तन्डुलसम्भवम् ।
कुसुम्भचूर्णमरुणं कृष्णं दग्धं पुलाकजम् ।१२३

विल्वादिपत्रजं श्याममित्युक्तं पञ्चवर्णकम् ।
अंगुलोत्सेधविस्ताराः सीमारेखाः सिताः शुभाः ।१२४
कर्णिकां पीतवर्णेन केसपाण्यरुणेन च ।
शुभवर्णेन पत्राणि तत्सन्धिः श्यामलेन च ।१२५
रजसा रञ्जयेन्मत्री यद्वा पीतैव कर्णिका ।
केसराः पीतवर्णाक्ताः अरुणानि दलानिच ।१२६
सन्धयः कृष्णवर्णाः स्युः पीतेनाप्यसितेन वा ।
रञ्जयेत्पीठगर्भाणि पादाः स्यु रुणप्रभाः ।१२७

अवशिष्ट छै पदों से कोणो का चतुष्टय होता है । उस मन्डल को परम मनोहर पाँच वर्णों के द्वारा रंजित करना चाहिये ।१२२। पीला हल्दी का चूर्ण होता है और श्वेत तन्डुलों का चूर्ण है–कुसुम्भों का चूर्ण अरुण वर्ण माला होता है । और पुलाकज जलाया हुआ कृष्ण होता है ।१२२। विल्व आदि के पत्तों समुत्पन्न श्याम होता है—ये पांच वर्ण कहे गये हैं । एक अद्भुत उत्सेध (ऊँचाई) और विस्तार से समन्वित सित एवं शुभ सीमा की रेखाये होती हैं ।१२४। कर्णिका को पीत वर्ण से और अरुण वर्ण से केसरों को—शुभ्र वर्ण से पत्रों का और उनकी सन्धि को श्यामल वर्ण से रजक द्वारा मन्त्रधारी रंजन करे अथवा कर्णिका पीत ही होवे । केसर पीत वर्ण से अक्त होवे और दल अरुण होवे ।१२५-१२६। सन्धियाँ कृष्ण वर्ण वाली होवें या पीत अथवा सित से युक्त होवें । पीठ के गर्भो का रंजन करे और पाद अरुण प्रभा वाले होने चाहिये ।१२७।

गात्राणि तस्य शुक्लानि विथीषु च चतसृषु ।
आलिखेत्कल्पलतिका दलपुष्पफलान्विताः ।१२८
वर्णैर्नानाविधैश्चित्राः सर्वदृष्टिमनोहराः ।
द्वाराणि श्वेतवर्णानि शोभा रक्ताः समीरिताः ।१२९
उपशोभाः पीतवर्णाः कोणान्यसितभासि च ।
तिस्रोरे (ले) खा बहिः कुर्यात्सितरक्तासितैः (१) क्रमात् ।१३०

मन्डलं सर्वतो भद्रमेतत्साधारणं स्मृतम् ।
चतुरस्रां भुवं भित्वा दिग्भ्यो द्वादशधा सुधीः ।१३१
पातयेत्तत्र सूत्राणि कोष्ठानां दृश्यते शतम् ।
चतुश्चत्वारिंशदाढयं पश्चात्षट् त्रिशताम्बुजम् ।१३२
कोष्ठैः प्रकल्पयेत् पीठं षड् त्तंया नैवात्र वीथिका ।
द्वारशोभे यथा पूर्वमुमशोभा न दृश्यते । १३३
अवशिष्टैः पदैः कुर्यात्षड्भिः कोणानि तन्त्रवित् ।
विदध्यात्पूर्ववच्छमेवं वा मन्डलं शुभम् ।१३४

चारों वीथियों के उसके पात्र शुक्ल होवे । फिर दलों-पुष्पों और फलों से संयुत कल्प लतिका का आलेखन करे ।१२८। नाना प्रकार के वर्णों के चित्र होवें तथा सब की दृष्टि में मन को हरण करने वाली होवे । द्वार श्वेत वर्ण के होवे तथा शोभा रक्त बतलाई गई है ।१२९। उपशोभा पीत वर्ण वाली होवे और कोण असित होवे । उसके वाहिर क्रम से सित—रक्त—असित तीन रेखायें वनावें ।१३०। यह साधारण सर्वतोभद्र मन्डल वताया गया है । चौकोर भूमि का भेदन करके द्वादश प्रकार से सुधी दिशाओं में सूत्रों का पातन करे तो सौ कोष्ठ दिखलाई दिया करते हैं । जो चौबालीस से युक्त और पीछे छत्तीस अम्बुजों वाला होता है ।१६१-१६२। कोष्ठों के द्वारा पीठ को कल्पित करे । यहां पर पंक्ति से वीथिका नहीं होती है । द्वार शोभाऐं जैसी पूर्व में है होती है और उपशोभा दिखलाई नहीं देती ।१३३। तन्त्र का ज्ञाता नवशिष्ट पदों से जो षट् है कोणों की रचना करे । शेष सभी पहिली ही भाँति समझना चाहिये । इसप्रकार से शुभ मन्डल होता है ।१ ४।

चतुरस्रे चतुष्षष्टिप (पा) दान्यारचयेत्सुधीः ।
पदैश्चतुर्भिः पद्मं स्यान्म (१) ध्ये तत्परितः पुनः ।१३५
वोथीश्चतस्रः कुर्वीत मन्डलान्तावसानिकाः ।
दिग्गतेष चतुष्केषु पङ्कजानि समालिकेत् १३६

विदिग्गतचतुष्कानि भित्त्वा षोडशधा सुधीः ।
मार्जयेत्स्वस्तकाकारं (२) श्वेतपीतासितारुणैः । १३७
रजोभिः पूरयेत्तानि स्वस्तिकानि शिवादितः ।
प्राक् प्रोक्तेनैव मार्गेण शेषमन्यत्समापयेत् ।१३८
नवनाभमिदं प्रोक्तं मन्डलं सर्वसिद्धिदम्
पञ्चाब्जं मन्डलं प्रोक्तमेतत्स्वस्तिकवर्जितम् ।१३९
दीक्षायां देवपूजार्थं मन्डलानां चतुष्टयम् ।
सर्वतन्त्रानुसारेण प्रोक्तं सर्वसमृद्धिदम् ।१४०

सुधी पुरुष चतुशस्र में चौसठ पदों की रचना करे। चार पदोंसे पद्म होता है फिर उसके चारों ओर मध्य में चार वीणियों बनावे जो मन्डल के अन्तवास वाली होवे। दिशामें संस्थित चारों कोंनों में पंकजों को लिखे ।१३५-१३६। विदिशाओं में स्थित चारों को सुधी सोलह भागों में भेदन करके स्वस्तिक के आकार वालेका मार्जम करे। शिवादि ले श्वेत पीत–असित–अरुण रज से उन स्वस्तिकों को पूरित कर देवे। पूर्व में बताते हुये ही मार्ग के द्वारा अन्य शेष का अन्य शेष का समापन करना चाहिये ।१३७-१३८। यह मन्डल नवभाव कहा गयाहै जो समस्त सिद्धियों का प्रदान करने वाला होता है यह पाँच कमलों वाला मन्डल कहा गया है जो स्वस्तिक से रहित होता है ।१३९। दीक्षा में–देवों की पूजा के लिये मन्डलों का चतुष्टय होता है। सभी तन्त्रों के अनुसार यह सब समृद्धियों का प्रदाता बताया गया है ।१४०।

चतुर्थ पटल

अथ दीक्षां प्रवक्ष्यामि मन्त्राणां हितकाम्यया ।
विना यया न लभ्येत सर्वमन्त्रफलं यतः ।१
दिव्यं ज्ञानं यतो दद्यात्कुर्यात्पापस्य संक्षयः ।
तस्माद्दीक्षेति संप्रोक्त सर्वमान्त्रवेदिभिः ।२
चतुर्विधा सा सन्दिष्टा क्रियावत्यादि भेदतः
क्रियावती वर्णमयी कलात्मा वेधमय्यपि ।३
ताः क्रमेणैव कथ्यन्ते तन्त्रेऽस्मिन्संपदावहाः ।
देशिको विधिवत्स्नात्वा कृत्वा पौर्वाह्निकीः क्रियाः ।४
प्रायादलङ् क्रतो मौनी यागार्थं यागमन्डपम् ।
आचम्य विधिना तत्र समान्यार्ध विधाय च ।५
द्वारमस्त्राम्बुभिः प्रोक्ष्य द्वारपूजां समाचरेत् ।
ऊर्ध्वोदुम्बरके तत्र महालक्ष्मी सरस्वतीम् ।६
ततो दक्षिणशाखायां विघ्नं क्षेत्रेशमन्यतः ।
तयोः पार्श्वगते गङ्गायमुने पुष्पवारिभिः ।७
देहाल्यामर्चयेदस्त्रं प्रतिद्वारं ति क्रमात् ।
अनन्तरं देशिकेन्द्रोदिव्यदृष्टयवलोकनात् ।८

इसके अनन्तर मन्त्रों के हित सम्पादन की कामना से दीक्षा के विषय में बतलाऊँगा, क्योंकि बिना दीक्षा के सभी मन्त्रों का फल नहीं प्राप्त किया जाया करता है ।१। जिसके द्वारा परम दिव्य ज्ञान प्रात हो और समस्त पापों का संक्षय हो उसी का तन्त्र शास्त्र के ज्ञाता आचार्यवरों के द्वारा इसको दीक्षा कहा गया है ।२। वह दीक्षा क्रियावती आदि के भेदों से चार प्रकार की सन्दिष्ट की गई है । उन भेदों के नाम ये हैं – क्रियावती––वर्णमयी––कलात्मा और वेधमयी––ये ही चार हैं । अब उन चारों को ही क्रम से यहाँ कहा जाता है जो इस

तन्त्र में सम्प्रदायों के आवहन करने वाली है। आचार्य को चाहिए कि वह विधि के सहित स्नान करे और पूर्वाचन में होने वाली सम्पूर्ण क्रियाओं को पूर्ण करे ४। सब प्रकार से समलङ्कृत होकर मौन व्रत धारण करके याग के सम्पादन करने के लिए याग मन्डप में प्रयाण करे। वहाँ पर जाकर आचमन करे और सामान्य अर्घ्य देवे ।५। द्वार को अस्त्र के जल से प्रोक्षण करके फिर द्वार पूजा करने का समाचरण करे। वहाँ पर ऊर्ध्व उदुम्बर में महालक्ष्मी और सरस्वती का यजन करे। फिर दक्षिण की ओर वाली शाखा में विघ्नराज का और अन्य ओर क्षेत्रेश का अर्चन करे। उन दोनों के पार्श्व से संस्थित गङ्गा और यमुना का पुष्पों सहित जल से यजन करे। प्रति द्वार में क्रम से देहली में अस्त्र का अर्चन करना चाहिए। इसके अनन्तर आचार्य दिव्य दृष्टि से अवलोकन करे ।६-८।

दिव्यानुत्सारयेद्विघ्नानस्त्राद्भिश्चान्तरिक्षान् ।
पार्ष्णिघातैस्त्रिभिर्भौमानिति विघ्नान्निवारयेत् ।९
किंचित्स्पृशन्वामशाखां देहलीं लंघयेद्गुरुः ।
अङ्गं संकोचयन्नतः प्रविशेद्दक्षिणाङ्घ्रिणा ।१०
नैरृत्यां दिशि वास्त्वीशान् (शं) ब्रह्माणं च समर्चयेत् ।
पञ्चगव्यार्घतोयाभ्यां प्रोक्षयेद्यागमन्डपम् ।११
चतुष्पथान्तं तच्छुद्धिं विदध्याद्वीक्षणादिना ।
वीक्षणं मूलमन्त्रेण शरेण प्रोक्षणं मतम् ।१२
तेनैव ताडनं दर्भैर्वर्मणाभ्युक्षणं मतम् ।
चन्दनागरुकर्पूरैर्धूपयेदन्तरं सुधीः ।१३

अन्तरिक्ष में रहने वाले दिव्य विघ्नों का अस्त्र के जल के द्वारा उत्सारण करे। पार्ष्णि घात तीनों से भूमिगत विघ्नों का निवारण करना चाहिये ।९। वामशाखा का कुछ स्पर्श करके गुरु देहलीका लङ्घन करे। अपने अङ्ग का संकोच करते हुए ही दाहिने चरण के द्वारा उनमें प्रवेश करना चाहिए ।१०। नैर्ऋत्य दिशा में वास्तु के ईशों का और

ब्रह्मा का समर्चन करे । फिर पञ्चगव्य और अर्घके जल से याग मन्डप का प्रोक्षण करना चाहिये ।११। चतुष्पथ के अन्त पर्यन्त उसकी शुद्धि वीक्षण आदि के द्वारा करे । वीक्षण मूल मन्त्र के द्वारा और शर के द्वारा प्रोक्षण माना गया है ।१२। उसी के द्वारा दर्भों से ताड़न और वर्म के द्वारा अभ्युक्षण माना गया है । इसके अनन्तर सुधी को चाहिये कि चन्दन-अगरु और कर्पूर से धूप देवे ।१३।

विकिरान्विकिरेत्तत्र सप्तजप्ताञ्छराणुना ।
लाजाश्चन्दनसिद्धार्थ भस्मदूर्वाङ्कु राक्षताः ।१४
विकिरा इति सन्दिष्टाः सर्वविघ्नौघनाशनाः ।
अस्त्रजप्तेन दर्भाणां मुष्टिना मार्जयेच्चतान् ।१५
ईशस्य दिशि वर्द्धन्या आसनाय प्रकल्पयेत् ।
पुण्याह वाचयित्वा तु ब्राह्मणान्परितोष्य च ।१६
उक्तेषु मन्डलेष्वेकं वेदिकायां समालिखेत् ।
विशेन्मृद्वासने मन्त्री प्राङ् मुखो वाप्युदङ् मुखः ।१७
बद्धपद्मासनो मौनी समाहितजितेन्द्रियः ।
स्थापयेद्दक्षिणे भागे पूजाद्रव्याणि देशिकः । १८
सुवासिताम्बुसम्पूर्णं सव्यो कुम्भं सुशोभनम् ।
प्रक्षालनाय करयोः पश्चात्पात्रं निवेशयेत् । १९

वहाँ पर सात बार जाप किये शराणु से विकिरों का विवरण करना चाहिये । लाजा—चन्दन—सिद्धार्थ—भस्म—दूर्वा—अंकुर और अक्षत में विकर बताये गये हैं जो कि सभी विघ्नों के विनाश करने वाले होते हैं । अस्त्र से अभिमन्त्रित दर्भों की मुष्टि ने उनका मार्जन करना चाहिये ।१३-१४। ईश की दिशा में वर्धनी से आसन के लिये परिकल्पना करे । पुण्याह याचन कराकर विप्रोंको तुष्ट करे ।१६। उक्त मन्डलों में से एक मन्डेल को वेदिका में लिखे । मन्त्रधारी पूर्व की ओर अथवा उत्तर की ओर मुख वाला होकर मृदु आसन पर बैठ जावे ।१७। आचार्य पद्मासन बोध करके स्थित होवे—उसे मौन व्रत धारी

होना चाहिये तथा परम सावधान और इन्द्रियों को जीतने वाला रहना चाहिये । आचार्य अपने दाहिने भाग में समस्त पूजा के द्रव्यों को स्थापित करे ।१८। परम सुगन्धित जल से भरा हुआ एक घट जो बहुत ही शोभन हो मध्य में रक्खे। और करों में प्रक्षालन करने के लिये पीछे एक पात्र स्थापित करे ।१६।

घृतप्रज्वालितान्दीपान्स्थापयेत्परितः शुभान् ।
दर्पण चामरं क्षत्रं तालबृन्तं मनोहरम् ।२०
मङ्गलांकुरपात्राणि स्थापयेद्दक्षु देशिकः ।
कृतांजलिपुटोभूत्वा वामदक्षिणपार्श्वयोः ।२१
नत्वा गुरुन् गणेशानं भूतशुद्धि समाचरेत् ।
करशुद्धि समासाद्य पश्चातालत्रयं ततः । २२
उद्र्ध्वोर्द्ध्वमस्त्रमन्त्रेण दिग्बन्धमपि देशिकः ।
तेन संजिनितं तेजो रक्षां कुर्यात्समन्ततः ।२३
सुषुम्णा वर्त्मनाऽऽस्मानं परमात्मनि योजयेत् ।
योगयुक्तेन विधिना चिन्मन्त्रेण समाहितः ।२४

अपने चारों ओर घृत के द्वारा जलाये हुये परम शुभ दीपों को स्थापित करे । दर्पण–चमर–छत्र–मनोहर लाल वृन्त और मङ्गल अड्-कुरों के पात्रों को दैविक दिशाओं में स्थापित करें । दोनों हाथों को जोड़कर वाम और दक्षिण पाश्वोंमें गुरुजनों को तथा गणेशों को प्रणाम करके फिर भूत शुद्धि करे । अपने करों कों शुद्धि करके पीछे तीन दिशाओं का बन्धन करे । उससे संजनित तेज सभी ओर से रक्षा करे । ।२३। सुषुम्ना के मार्ग के द्वारा अपनी आत्मा को परमात्मा में योजित करना चाहिए । परम समाहित रहे और योग में युक्त विधि से तथा चिन्मात्र के द्वारा योजन करे ।२४।

कारणे सर्वभूतानान्तत्त्वान्यपि च चिन्तयेत् ।
बीजभावेन लोकानि व्युत्क्रमात्परमात्मानि ।२५

ततः संशोषयेद्देहं वायुबीजेन वायुना ।
बह्निवीजेंन तेनैव संदेहत्सकलां तनुम् ।२६
विश्लेषयेंत्तदा दोषानमृतेनामृताम्भसा ।
आप्लाव्याप्लावयेद्देहमापादतलमस्तकम् ।२७
आत्मलीनानि तत्वानि स्वस्थानं प्राप्तेत्तदा ।
आत्मानं हृदयाम्भोजमानयेंत्परमात्मात्मनः ।२८
मनुना हंसदेवस्य कुर्यान्न्यासादिकं ततः
षिश्छन्दोदेंवतानि न्यसेन् मन्त्रास्य मन्त्रवित् ।२९
आत्तनो मूर्ध्नि बदने हृदये च यथाक्रमात् ।
विधाय मूलमन्त्रेण प्राणायामं यथाविधि ।३०

समस्त भूतों के कारण में तत्वों का भी विशेष चिन्तन करना चाहिए । जो बीज भाव से ब्युत्क्रम से परमात्मा में लीन हैं ।२५। इसके अनन्तर वायु बीज के द्वारा वायु से देह को संशोषण करे । उसी वह्नि बीज के द्वारा अपने सम्पूर्ण देह का दहन करे ।२६। उस अवसर में अमृत जल स दोषों का विश्लेषण करे । देह को आप्लावित करके मस्तकसे चरणों तक आप्लावित करना चाहिये ।२७। तब आत्मा में लीन हुए तत्वों को पुनः अपने स्थान पर प्राप्त करा देवे । परमात्मा के हृदय कमल में आत्मा का आनयन करना चाहिये ।२८। फिर हंसदेव के मन्त्र के द्वारा व्योम आदि का समाचरण करे । मन्त्र के ज्ञाता मन्त्र को ऋषि-छन्द और देवता का न्यास करे ।२९। आत्मा का मस्तक में मुख में और उदय में यथाक्रम मूलमन्त्र से न्यास करे और फिर विधि के साथ प्राणायाम करना चाहिए ।

विदध्यान्मातृकान्यासं मन्त्रान्यासमनन्तरम् ।
अंगुष्ठादिष्वंगुलीषु न्यसेदङ्गैः सजातिभिः ।३१
अस्त्रां तत्तलयोर्न्यस्य कुर्यात्तालत्रयादिकम् ।
दिशस्तेनैव बध्नीयाच्छोटिकाभिः समाहितः ।३२

हृदयादिषु विन्यस्येच्चाङ्गमन्त्रांस्ततः सुधीः
हृदयाय नमः पूर्वं शिरशे वह्निवल्लभा॥३३
शिखायै वषटित्युक्तं कवचाय हुमीरितम् ।
नेत्रत्रयाय वौषट् स्यादस्त्राय फडिति क्रमात् ।३४
षडङ्गमन्त्रानित्युक्तान्षडङ्गेषु नियोजयेत् ।
पंचाङ्गानि मनोर्यस्य तत्र नेत्रमनुत्यजेत् ।३५
अङ्गहीनस्य मन्त्रस्य त्वेनैवाङ्गानि कल्पयेत् ।
तत्तत्कल्पोक्तविधिना न्यासानन्यान्समाचरेत् ।३६

फिर मातृका न्यास करके अनन्तर में मन्त्र का न्यास करना चाहिए । सजाति अङ्गों से अंगुष्ठादि अंगुलियों में न्यास करे ।३१। उनके तलों में अस्त्र का न्यास करके तीन तालियाँ आदि करे । समाहित होकर उसी के द्वारा दिशाओं का छोटिकाओं से बन्धन करना चाहिए ।३२। इसके उपरान्त सुधी पुरुष हृदय आदि से अङ्ग मन्त्रों का विन्यास करे । न्यास का क्रम यह है पहिले हृदयाय नमः—शिर से स्वाहा—शिखायै वषट् -कवचाय हुम् – नेत्रत्रयाय वौषट् और अस्त्राय फट—इसी क्रम से करे ।३.-३४। फिर छै अङ्गों में युक्त षडङ्ग-मन्त्रों को नियोजित करना चाहिए । जिस मन्त्र के पाँच अङ्ग हैं वहाँ पर नेत्र मन्त्र का यजन करे ।३५। अङ्गहीन मन्त्र के अपने ही के द्वारा अंगों की कल्पना करे । उस-उस कल्प में कही हुई विधि से अन्य न्य-सों का समाचरण करना चाहिए ।३६।

कल्पयेदात्मनोदेहे पीठं धर्मादिभिः क्रमात् ।
अंसोरुयुग्मयोर्विद्वान्प्रादक्षिण्येन देशिकः ।२७
धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं न्यस्य तु क्रमात् ।
मुखापार्श्वनाभिपार्श्वोऽधर्मादींश्च प्रकल्पयेत् ।३८
धर्मादयः स्मृताः पादाः पीठगात्राणि चापरे ।
अनन्तं हृदये पद्ममस्मिन्सूर्येन्दुपावकान् ।३९

एषु स्वस्वकला न्यस्येन्नामाद्यक्षरपूर्विकाः ।
सत्त्वादींस्त्रीन् गुणान् न्यस्येत्तथैवात्र गुरुत्तमः । ४०
आत्मानमन्तरात्मानं परमात्मानमत्र तु ।
ज्ञानात्मानं प्र (च) विन्यस्य न्यस्येत्पीठमनुन्ततः ।४१

अपने देह में धर्मादिके द्वारा क्रम से पीठ की कल्पना करे । विद्वान् आचार्य प्रदक्षिणा से कन्धे और उरूओं के युग्म में क्रम से धर्म-ज्ञान वैराग्य और ऐश्वर्य का न्यास करे । मुखपार्श्व —नाभिपार्श्व में अधर्म आदि की कल्पना करे ।३७-३८। धर्म आदिक पाद कहे गये हैं और दूसरे पीठ गात्र हैं । हृदय में अनन्त पद्म का और इसमें सूर्य—चन्द्र—अग्नि का—इनमें अपनी-अपनी नाम से पूर्व अक्षरों वाली कलाओं का न्यास करे ।३९-४०। आत्माका अन्तंरात्मा का और परमात्मा का यहाँ पर ज्ञानात्मा का न्यास करके फिर पीठ मन्त्र का न्यास करना चाहिए ।४१।

एवं देहमये पीठे चिन्तयेदिष्टदेवताम् ।
मुद्राः प्रदर्श्य विधिवदर्घ्यस्थापनमाचरेत् । ४२
शंखमस्त्राम्बुना प्रोक्ष्य वामतोवह्निमन्डले ।
साधारं स्थापयेद्विद्वान् बिन्दुस्त्रु (च्यु) तसुधामयैः ।४३
तोयैः सुगन्धिपुष्पात्तैः पूरयेत्तं यथाविधि ।
आधा पावकं शंख सूर्य तोयं सुधामयम् । ४४
स्मरेद्वह्न्यर्कचन्द्राणाँ कलास्तास्तेध्वनुक्रमात् ।
मूलमन्त्रं जपेत्स्पृष्ट्वा न्यसेत्तस्याङ्गमन्त्रवित् । ४५
हृन्त्रेणाभिसम्पूज्य हस्ताभ्यां छादयन्नपः ।
जपेद्विशां यथान्यायं देशिको देवताधिया । ४६
अस्त्रमन्त्रेण संरक्ष्य कवचेनावगुण्ठय च ।
धेनुमुद्रां समासाद्य रोधतेत्तत्स्वमुद्रया ।४७

दक्षिणे प्रोक्षणीपात्रमाधाद्भिः प्रपूरयेत् ।
किञ्चिदर्घाम्बु संग्रह्य प्रोक्षण्यंभसि योजयेत् । ४८
अर्घस्योत्तरतः कार्यं पाद्यं साचमनीयकम् ।
आत्मानं यागवस्तूनि मण्डलं प्रोक्षयेगुरूः । ४९

इस रीति से देहगम पीठ में अपने इष्टदेव का चिन्तन करना चाहिये । फिर विधि के साथ मुद्राओं को प्रदर्शित करके अर्थ स्थापना का समाचरण करे ।४०। अस्त्राम्बु से शंख का प्रोक्षण करके वह्नि-मन्डल के वाम भागमें विद्वान् व्यक्ति विन्दुयुत सुधासे परिपूर्णों के द्वारा साधार की स्थापना करे ।४३। उसको सुगन्धित पुष्पादिके द्वारा जल से यथाविधि पूरित करें । आधा-पावक—शंख-सूर्य और सुधामय जल का स्मरण करे ।४४। वह्नि-चन्द्र और सूर्य की उन कलाओं का और अनुक्रम से उनमें स्मरण करना चाहिए । स्पर्श करके मूल मन्त्र का जप करे, और मन्त्र का ज्ञाता उसके अंग का न्यास करे ।४५। देवता की बुद्धि से आचार्य हृमन्त्र के द्वारा भली भाँति पूजन करके हाथों से जल का छादन करते हुए न्यायानुसार विद्याका जप करे ।४६। अस्त्र मन्त्र के द्वारा संरक्षण करके तथा कवच से अवगुन्ठन करके धेनुमुद्रा का समासादन करके उसका अपनी मुद्रा से रोधन करे ।४७। दक्षिण में प्रोक्षणी पात्र का आधान करके उस को जल से पूरित कर देवे । कुछ अर्घ जल का संग्रह करके प्रोक्षणी के जल में योजित कर देवे ।४८। वर्ष के उत्तर में आचमनीय के सहित पाद्य करना चाहिये। गुरु को चाहिये कि अपने आपको-हवन की वन्तुओं की और मन्डल को प्रोक्षित करे ।४९।

प्रोक्षणीपात्रतोयेन मन्त्रतनुनान्यदपि क्रमात् ।
न्यासक्रमेण देहे स्वे धर्मादीन्पूजयेत्तत । ५०
पुष्पाद्यैः पीठमन्त्रं तस्मिंश्च परदेवताम् ।
पञ्चकृत्वाः पुनः कुर्यात्पुष्पाञ्जलिमनन्तधाः । ५१

उत्तमाङ्गे हृदाधारेऽपादेसर्वाङ्गके क्रमात् ।
विना निवेद्यं गन्धाद्यै रूपचारैः समर्चयेत् । ५२
गुरुपदिष्टविधिना शेषमन्यत्सतापयेत् ।
सर्वमेतत् प्रयुज्जीत प्रोक्षणीस्थेन वारिणा । ५३
विसृज्य तोयं प्रोक्षण्याः पूरयेत्तां यथा पुरा ।
ततस्तन्मण्डलं मत्री गन्धाद्यैः साधु पूजयेत् । ५४

प्रोक्षणी पात्र के जल से मन्त्र के द्वारा अन्य का भी क्रम से प्रोक्षण करना चाहिये । न्यास के ही क्रम से अपने देह में फिर धर्म आदि का भी अर्चन करना चाहिये ।५०। पुष्पादिक के द्वारा पीठमन्त्र के अन्त तक उसमें पर देवता का पूजन करे। फिर अनन्य बुद्धि वाला होकर पाँच बार पुष्पांजलि करे ।५१। उत्तमाङ्ग में हृदाक्षर में—पाद में और सर्वाङ्ग में क्रम से नैवेद्य के बिना ही गन्ध आदि उपचारों के द्वारा अर्चन करना चाहिये ।५२। गुरुदेव के द्वारा जिस विधि का उपदेश दिया गया है उसीसे अन्य शेष कृत्योंका समापन करे । यह सभी प्रोक्षणी पात्र में संस्थित जल के द्वारा प्रयोग करना चाहिए ।५३। प्रोक्षणी पात्र के जल का विसर्जन करके फिर पूर्व की ही भांति वस्तु को पूरित कर देवे । इसके उपरान्त मन्त्रधारी उस मन्डल का गन्ध आदि से भलीभाँति पूजन करे ।५४।

शालिभिः कर्णिकामध्यमापूयोपरि तण्डुलैः ।
अलंकृत्य पुनस्तेष दर्भानास्तीर्य तन्त्रवित् । ५५
कूर्चमक्षतसंयुक्तं न्यसेत्तेषामथोपरि ।
आधारशक्तिमारभ्य पीठमन्त्रमयं यजेत् । ५६
अधः कूर्मशिलारूढां शरच्चन्द्रनिभप्रभाम् ।
आधारशक्ति प्रजयेत्पङ्कजद्वयधारिणीम् । ५७
मूर्ध्नि तस्याः समारूढं कूर्मं नीलाभमर्चयेत् ।
ऊर्ध्वं ब्रह्मशिलासीनमनन्तं कुन्दसन्निभम् । ५८

यजेच्चक्रधरं मूर्ध्नि धारयन्तं वसुन्धराम् ।
तमालश्यामलां तत्र नीलेन्दीवरधारिणीम् । ५९
अभ्यर्च्चयेद्वसुमतीं स्फुरत्सागरमेखलाम् ।
तस्यां रत्नमयं द्वीपं तस्मिंश्च मणिमण्डपम् । ६०
यजेत्कल्पतरूंस्तस्मिन्साधकाभीष्टसिद्धिदान् ।
अधस्तात्पूजयेत्तेषां वेदिकां मण्डपोज्ज्वलाम् । ६१

शाली के द्वारा कर्णिका के मध्य को आपूरित करके और ऊपर तन्डुलों से अलंकृत करके फिर उनमें दर्भों को फैलाकर तन्त्र का ज्ञाता पुरुष इसके अनन्तर उनके ऊपर कूर्च-अक्षत से संयुत का न्यास करे। आधार शक्ति का आरम्भ करके मन्त्रमय पीठ का यजन करे।५६। नीचे की ओर कूर्म शिलापर समारूढ़-शरत्काल के चन्द्रमा के समान मुख वाली दो पंकजों के धारण करने वाली आधार शक्ति का यजन करना चाहिये ।५७। उसके मस्तक में समारूढ़ और नील आभा वाले कूर्म का समर्चन करना चाहिये। ऊपर की ओर कुन्दकी आभा वाले-ब्रह्मशिला पर समासीन अनन्त का यजन करे।५८। वसुन्धरा को मूर्धा में धारण करते हुए चक्रधर का यजन करे। तमाल के समान श्यामला-नील इन्दीवर को धारण करने वाली, जिसके चारों ओर स्फुरित सागरों की मेखला विद्यमान है, ऐसी वसुमती देवी का अभ्यर्चन करना चाहिए। उसमें रत्नों से परिपूर्ण द्वीप है और उस द्वीप में मणि-निर्मित मन्डप है। उस मन्डपमें कल्प तरुओंका अर्चन करे जो साधना करने वाले मनुष्योंके अभीष्टोंके देने वाले हैं। उनके नीचे मन्डपोज्ज्वला वेदि का अर्चन करना चाहिये ।५९-६१।

पश्चादभ्यर्चयेत्तस्यां पीठं धर्मादिभिः पुनः ।
रक्तश्यामहरिद्रेन्द्रनीलाभान्पादरूपिणः । ६२
वृषकेसरिभूतेभरूपान् धर्मादिकान्यजेत् ।
गात्रेषु पूजयेत्तांस्तु नञ्पूर्वानुक्तलक्षणान् । ६३

अग्नेयादिषु कोणेषु दिक्षु चाथाम्बुजं यजेत् ।
आनन्दकन्दं प्रथमं संविन्नालमनन्तरम् ।६४
सर्वतत्त्वात्मकं पद्ममभ्यर्च्य तदनन्तरम् ।
मन्त्री प्रकृतिपत्राणि विकारमयकेसरान् ।६५
पञ्चाशद्बीजवर्णाढ्यां कर्णिकां पूजयेत्ततः ।
कलाभिः पूजयेत्सार्द्धं तस्यां सूर्यन्दुपावकान् । ६६
प्रणवस्य त्रिभिर्वर्णैरथ सत्त्वादिकान् गुणान् ।
आत्मानमन्तरात्मानं परमात्मानमर्चयेत् ।६७
ज्ञानात्मानं च विधित्पीठमन्त्रावसानम् ।
पीठशक्तिः केसरेषु मध्ये च सवराभयाः । ६८

इसके पीछे धर्मादिक के सहित पीठ का उसमें यजन करे। अब धर्मादि का स्वरूप बतलाते हैं—रक्त श्याम—हरिद्रा—इन्द्रनील की आभा वाले पादरूपी हैं—वृष केसरीभूतेभ के स्वरूपसे संयुत है ऐसे धर्मादिक का यजन करना चाहिये। उनका नञ् पूर्व अनुक्त लक्षणों वालों का गात्रों में पूजन करे।६२-६३। आग्नेय आदि कोणों में दिशाओं में अम्बुज का यजन करे। प्रथम आनन्दकन्द और इसके अनन्तर सम्बित् नालवाले सब तत्वों के स्वरूप वाले पद्म का अभ्यर्चन करके उसके उपरान्त मन्त्रधारी प्रकृति पत्रों का और विकार से परिपूर्ण केसरों का यजन करे।६४-६५। इसके उपरान्त पचास वीजों में आढ्य कर्णिका का पूजन करे। उसमें कलाओं के साथ सूर्य चन्द्र और पावक का पूजन करे प्रणव की तीस वर्णों के साथ यजन करना चाहिये। इसके अनन्तर सत्व आदिक गुणोंका—आत्मा का—अन्तरात्माका और पापात्मा का अर्चन करना चाहिये।६६-६७। तथा ज्ञानात्माका और पीठ मन्त्र के अवसान् पर्यन्त विधिके साथ यजन करे। और केसरोंके मध्यमेंवर दान तथा अभयदान के सहित पीठ की शक्तियों का पूजन करना चाहिये -६८।

हेमादिरचितं कुम्भसस्त्राद्भिः क्षालितान्तरम् ।
चन्दनागुरुकर्पूरधूपितं शोभनाऽऽकृतिम् । ६९
आवेष्टिताऽङ्गं नीरन्ध्रं तन्तुना त्रिगुणात्मना ।
अर्चित गन्धपुष्पाद्यैः कूर्चाक्षतसमन्वितम् ।७०
नवरत्नोदरं मन्त्री स्थापयेत्तारमुच्चरम् ।
ऐक्यं सङ्कल्प्य कुम्भस्य पीठस्य च विधानवित् । ७१
क्षीरद्रुमकषायेण पलाशत्वग्भवेन वा ।
तीर्थोदकैर्वा कर्पूरगन्धपुष्पसुवासितैः । ७२
आत्माऽभेदेन विधिवन्मातृकां प्रतिलोमतः ।
जपन्मूलमन्त्रं तद्वत्पूरयेद्देवताधिया । ७३
शंखेक्वाथाम्बुसंपूर्णे गन्धाष्टकमभीष्टदम् ।
विलोड्य पूजयेत्तस्मिन्नाबाह्या सकलाः कलाः । ७४
दश वह्ने कलाः पूर्वं द्वादश द्वादशात्मनः ।
कलाः षोडश सोमस्य पश्चात्पञ्चाशतं कलाः ।७५
जपित्वा प्रतिलोमेन मूलमन्त्रं च मन्त्रवित् ।
समाहितेन मनसा ध्यायन्मन्त्रस्य देवताम् । ७६
प्राणप्रतिष्ठ कुर्वीत तत्र तत्र विचक्षणः ।
कलात्मकं शंखसंस्थं क्वाथं कुम्भे विनिःक्षिपेत् । ७७

हेम आदि विशुद्ध धातुओं के द्वारा निर्माण हुए कुम्भ को जिसका अन्तर भाग अस्त्र के जल के द्वारा क्षात्रिलित कर लिया गयाहै जो चन्दन, अगरु कर्पूर से धूपित होवें तथा शोभन आकृति से संयुक्त हो, जिसका अङ्ग आवेष्ठित होवे—जो नीरन्ध्र त्रिगुणात्मना तन्तुओं के द्वारा किया गया होवे। उसका गन्ध पुष्पादिके द्वारा अर्चन किया जावे और कूर्च तथा अक्षत से संयुक्त होवे। उस के मध्यमें नौ प्रकार के रत्न होवे। ऐसे घट की स्थापना करनी चाहिये। और मन्त्रधारी प्रणव का उच्चारण करते हुये विधान का ज्ञाता कुम्भ और पीठ की एक समान संकल्प करे ।६९-७१।

दूध वाले वृक्ष के कषाय से–पलाश वृक्ष से समुत्पन्न से अथवा तीर्थों के जल से जो कपूर–गन्ध और पुष्पों से सुगन्धित होवें। आत्मा के अभेद से प्रतिलोभ से विधि के साथ मातृका का और मूल मन्त्र का जप करते हुए देवता की बुद्धि से पूरित कर देना चाहिए ।७२-७३। क्वाथ के जल से सम्पूर्ण शंख में अभीष्ट के प्रदाता गन्धाष्टक का बिलोड़न करके सकल कलाओं कावाहन करे और पूजन करना चाहिये ।७४। पूर्व में वह्निकी दशों कलाऐं और बारह-बारह आत्मा की–सोम की सोलह कयाऐं पीछे पचास कलाओं का पूजन व रे ।७५। मत्र के ज्ञान रखने वाला मूल मंत्र का प्रतिलोग के व्दारा जप करे और परम सावधान मन वाले को मंत्र के देवता का ध्यान करते हुये वहाँ-वहाँ पर विचरण पुरुष को प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिये। और कलाओं के स्वरूप वाले शंख में स्थित क्वाथ का कुम्भ में विनिःक्षेपण कर देना चाहिये ।७६-७७।

गन्धाष्टकं तत्त्रिविधं शक्तिविष्णुशिवात्मकम्।
चन्दनागुरुकर्पूरचोरकुङ्कुमरोचना. । ७८
जटामांसी कपियुता शक्तेर्गन्धाष्टकं विदुः।
चन्दनागुरुह्लीवेरकुष्टकुङ्कुमसेव्यकाः । ७९
जटामांसीमुरमिति विष्णोर्गन्धाष्टकं विदुः।
चन्दनागुरुकर्पूरतमालजलकुङ्कुमम् । ८०
कुशीत कुष्ठ संयुक्तं शैवं गन्धाष्टकं विदुः।
पाशादित्र्यक्षरात्मान्ते स्यादमुष्य पदन्ततः । ८१
क्रमात्प्राणा इह प्राणस्तथा सीव इह स्थितः।
अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि भूयोऽमुष्य पदं वदेत् । ८२
वाङ्मनोनयनश्रोत्रघ्राणप्राणपदान्वय।
पश्चादिहागत्य सुखं चिरन्तिष्ठन्तु ठद्वयम् । ८३
अयं प्राणममन्त्रः प्रोक्तः सर्वजीवप्रदायकः
पश्चाद्वश्वत्थपनसचूतकोमलपल्लवैः । ८४

इन्द्रवल्लीसमाबद्धं सुरद्रुमधिया गुरुः ।
कुम्भवक्त्रं पिधायास्मिंश्चपकं सफलाक्षतम् ।८५
संस्थापयेत्फलधिया बिधिवत्कल्पशाखिनम् ।
ततः कुम्भं निर्मलेन क्षौमयुग्मेन वेष्टयेत् ।८६

वहाँ पर गन्धाष्टक तीन प्रकार का होता है जो शधि–विष्णु और शिवके स्वरूप वालाहोता है । चन्दन–अगर–कर्पूर–चोरकुंकुम-रोचना-कपि से युक्त जटामांसी-यह शक्ति का गन्धाष्टक जानना चाहिए । चन्दन–अगुरु–ह्रीवेर–कुंकुम–सेव्यक–जटामांसी मुरकुष्ट-यह विष्णु भगवान् का अष्टगन्ध होता है । चन्दन-अगुरु-कर्पूर-तमाल जल–कुंकुम –कुशील और कूट–यह शिव का गन्धाष्टक होता है । पाश आदि तीन अक्षरों के स्वरूप वाले के अन्त में फिर अनुष्यः–यह पद होना चाहिए । क्रमात् प्राणा इह प्राणास्तथा जीव इह स्थितः-अनुष्य सर्वाद्रियाणि–यह कह कर पुनः 'अमुष्य'–इस पद को कहे ।७८-७९-८०-८१-८२। वाङ्–मनों नयन–श्रोत्र–घ्राण–इन पदों को कह कर पीछे 'इहगत्य मुख चिरतिष्ठन्तु'–यह कह कर दो ठकार कहे ।८३। यह प्राण प्रतिष्ठा करने का मंत्र कहा गया है जो सब जीव का प्रदान करने वाला है इसके पश्चात् पीपल–पनस—आम्र के कोमल पल्लवों से जो बन्श्वल्ली से समावद्ध होवें गुरु देववृक्ष की बुद्धि से घट के मुख को ढक कर पके फल और अक्षतों के सहित विधि के साथ फल की बुद्धि से कल्प शाखा को संस्थापित करना चाहिए । इसके बाद निर्मल दो क्षौम वस्त्रों से कुम्भ का वेष्ठन कर देवे ।८४–८६।

मूलेन मूर्त्तिमिष्ट्वाऽस्मिञ्छाखायां कल्पशाखिनाम् ।
आवाह्य पूजयेत्तस्यां मन्त्री मन्त्रस्य देवताम् ।८७
मूलमन्त्रं समुच्चार्य्य सूषुम्णावर्त्मना सुधीः ।
आनीय तेजःस्वस्थानान्नसिकारन्ध्रनिर्गतम् ।८८

करस्थमातृकाम्भोजे चैतन्यं पुष्पसञ्चये ।
सयोज्य ब्रह्मरन्ध्रेण मूर्त्यामावाहयेत्सुधीः । ८९
संस्थापनं सन्निधानं सन्निसेधमनन्तरम् ।
सकलीकरणं पश्चाद्विदध्यादयगुण्ठनम् । ९०
अमृतीकरणं कृत्वा कुर्वीत परमोकृतिम् ।
क्रमादेतानि कुर्वीत स्वमुद्राभिः समाहितः । ९१

इनमें मूल मन्त्र से मूर्ति का यजन करके कल्प वृक्षों की छाया में मन्त्र धारी व्यक्ति उसमें मन्त्र के देवता का आवाहान करके अभ्यर्चन करना चाहिए ।८१। मूल मन्त्र का भली भाँति उच्चारण करके सुधी पुरुष सुषुम्ना के मार्ग से नासिका के रन्ध्र से निर्गत अपने स्थान से तेज का आनयन करके कर में संस्थित मातृका पद्म में पुरुष के संचय चैतन्य को ब्रह्मरन्ध्र से सयोजित करके सुधी मूर्ति में आवाहन करे ।८८-८९। संस्थापन— सन्निधान—फिर सन्निरोधन—सकलीकरण और इसके पश्चात् अवगुण्ठन करना चाहिये ।९०। अमृतीकरण करके परमी कृति करें । अपनी मुद्राओं के द्वारा समाहित होकर क्रम से इनको करना चाहिये ।९१।

अथोपचारान्कुर्वीत मन्त्रवित्स्वागतादिकान् ।
स्वागतं कुशलप्रश्नं निगदेदग्रतो गुरुः । ९२
पाद्य पादाम्बुजे दद्याद्देवस्य हृदयाणुना ।
एतच्चयामाकदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिरीरितम् ।९३
सुधामन्त्रेण वदने दद्यादाचमनीयकम् ।
जातीलवङ्गकङ्कोलैस्तदुक्त तन्त्रवेदिभिः । ९४
अर्घ्यं दिशेत्ततो मूर्ध्नि शिरोमन्त्रेण देशिकः ।
गन्धपुष्पाक्षतयवकुशाग्रतिलमर्षपैः ।९५
सदूर्वैः सर्वदेवानामेतदर्घ्य मुदोरितम् ।
सुधाणुना ततः कुर्यान्मधुपर्कं मुखाम्बुजे । ९६

आज्यन्दधिमधून्मिश्रमेतदुक्तं मनीषिभिः ।
तेनैव मनुना कुर्यादिभराचमनीयकम् ।९७
गन्धाद्भि कारयेत्स्नानं वाससी परिधापयेत् ।
दद्याद्यज्ञोपवीतं च हाराद्याभरणैः सह ।९८

इसके अनन्तर मन्त्र का ज्ञाता पुरुष स्वागत आदि उपचारों का समाचरण करे । गुरु आगे स्वागत और कुशल प्रश्नका कथन करो।९२। हृदयाणु के द्वारा देव के चरण कमल में पाद्य देवे । यह श्यामाक दूर्वा-कमल और विष्णु कान्ता से कहा है ।९३। सुधामन्त्र के द्वारा मुख में आचमनीय अर्पितकरे । वह आमचनीयजाती फल लौंग और ककोलसे युक्त तन्त्र के वेत्ताओं के द्वारा कही गयी है ।९४। इसके उपरान्त देशिक (आचार्य) शिरीमन्त्र के द्वारा मूर्धा में अर्घ्य देवे। गन्ध-पुष्प-अक्षत-यव कुशाग्र-तिल-सर्षप-दूर्वा से सभी देवों का अर्घ्यं कहा गया है । सुधामन्त्र के द्वारा मुख कमल में मधुपर्क समर्पित करना चाहिये ।९५। ।९६। उस मधुपर्क को मनीषियों ने यही बतलाया है कि वह आज्य-दधि और मधु संमिश्रित होता है । उसी मन्त्र के द्वारा जल से आचमन करे ।९७। गन्ध आदि से मिश्रित जल से स्नान करावे और फिर वस्त्रोंका परिधापन करना चाहिये । हार अदि आभरणोंके सहित यज्ञोपवीत का समर्पण करे ।९८।

न्यासक्रमेण मनुना पुटितैर्मातृकाक्षरैः ।
अभ्यर्च्य देवीं गन्धाद्यै रङ्गादीन्पूजयेत्ततः ।९९
गन्धश्चन्दनकर्पूरकालागुरुभिरीरितः ।
कमलेकरवीरे द्वे कुमुदे तुलसीद्वयम् । १००
जातीद्वयं केतके द्वे कह्लारं चम्पकोत्पले ।
कुन्दमन्दारपुन्नागपाटलानागचम्पकम् ।१०१
आरग्वधं कर्णिकारं पारन्ती नवमल्लिका ।
सौगन्धिकं सकोरण्टं पलाशाशोकमल्लिकाः । १०२

धत्तूरं सर्जकं बिल्वमणनां मुनिपत्रकम्।
अन्यान्यपि सुगन्धानि पत्रपुष्पाणि देशिकैः ।१०३
उपदिष्टानि पूजायामाददीत विचक्षणः ।
मलिनं भूमिसंस्पृष्टं कृमिकेशादिदूषितम् ।१०४
अङ्गस्पृष्टं समाघ्रातं त्यजेत्पर्युषितं गुरुः ।
देवस्य मस्तकं कुर्यात्कुसुमोपहितं सदा ।१०५

न्यास क्रम से मंत्र के द्वारा पुटित मातृका के अक्षरों से देवी का अभ्यर्चन करके गन्ध आदि उपचारों के द्वारा फिर अङ्ग आदिका पूजन करे ।९९। जोपूजन गन्ध चांदन, कपूर, कालागुरु,से बतलाता गया है। पूजन में कौन-कौन से पुष्पों का ग्रहण करना चाहिये—यह बतलाया जाता है—दो कमल दो करवीर दो कुमुद, दो तुलसीदल, जाती के दो पुष्प, दो केतकी पुष्प, कल्हार, और चाम्पा, उत्पन्न कुन्द. मन्दार, पुन्नाग, पाटला, नाग चाम्पा, आरग्वध, कर्णिकार, पारन्ती, नव मल्लिका, सौगन्धिक, कौरण्ट,पलाश, अशोक, मल्लिका, धतूर, सर्जक, बिल्व, पत्र, मुनिपत्रक ये तथा अन्य भी सुगन्धित पत्र पुष्प आचार्यो के द्वारा पूजामें उपदिष्ट किये गये हैं। विचाशण पुरुष इनका आदान करे। गुरुदेव ऐसे पुष्पों का त्याग कर देवे जो मलिन अर्थात् मुर्झाया हुआ हो जिस पुष्प को भूमि का स्पर्श हो गया हो अर्थात् जो वृक्ष से टूटकर भूमि पर गिर गया हो—तो कृमि और केशादि के द्वारा दूषित हो गया हो—जिस पुष्प का किसी भी अङ्ग द्वारा स्पर्श हो गया हो—जिसका अवघ्राण कर लिया हो गया और जो पर्युषित अर्थात् वासी हो, उस पुष्प का परित्याग कर देना चाहिये। सदा ही कुसुमों को देवता के मस्तक पर उपहित करे।१००-१०५।

पूजाकाले देवतया नोपरि भ्रमायेत्करम्।
अगुरूशीरगुग्गुलशर्करामधुचन्दनैः ।१०६
धूपयेदाज्यसंमिश्रैर्नीचैर्देवस्य देशिकः ।
वर्त्या कर्पूरगर्भिण्या सर्पिषा तिलजेन वा ।१०७

आरोप्य दर्शयेद्दीपानुच्चैः सौरभशालिनः ।
स्वादूपदंशं विमलं पायसं सहशर्करम् ।१०८
कदलीफलसंयुक्तं साज्यं मन्त्री निवेदयेत् ।
तत्रतत्र जलं दद्यादुपचारान्तरान्तरे ।१०९
अङ्गादिलोकपालान्तं यजेदावरणान्यपि ।
केसरेष्वग्निकोणादिहृदयादीनि पूजयेत् ।११०
नेत्रमग्रे दिजास्वस्त्रं ध्यातव्या अङ्गदेवताः ।
तुषारस्फटिकश्यामनीलकृष्णारुणार्चिषः ।१११
वरदाभयधारिण्यः प्रधानतनवः स्त्रियः ।
पश्चादभ्यर्चनीयाः स्युः कल्पोक्ताऽऽवृत्तयः क्रमात् ।११२

पूजा के समय में देवता के ऊपर हाथ को भ्रामित नहीं करना चाहिये । देशिकवर को चाहिये कि अगुरु, शीर, गुग्गुलु-शर्करा, मधु, चन्दन आज्य से सम्मिश्रित करके देवताके नीचे धूप देवे । कर्पूर गर्भित वत्ती से–घृत अथवा तिलों के तैल से आरोपित करके सौरंभ शाली दीपों को दर्शित करना चाहिये । मन्त्रधारी पुरुषको चाहिये कि स्वादूपदश, विमल, शर्करा से युक्त पायस, कदली के फलों से संयुत तथा आज्य में समन्वित निवेदन करे । उपचारों के बीच-बीच में वहाँ पर जल निवेदित करना चाहिए ।१०६-१०९। अङ्गों से आदि लेकर लोकपालों के-अन्त पर्यन्त आवरणों का यजन करे । केसरों में अग्निकोण से आदि हृदय प्रभृति का पूजन करना चाहिए ।११०। आगे नेत्र-दिशाओं में अस्त्र औरअङ्ग देवता का ध्यान करना चाहिए । तुषार, स्फटिक, श्याम,नील,कृष्ण औट अरुण अर्चियों से संयुत,वरदान और अभ्यदानको धारण करन वालो प्रधान तनु स्त्रियाँ क्रम सं कल्पोक्त आवृत्तितों से युक्त पश्चात् अभ्यर्चन करने के योग्य है १।११-११२।

अन्ते यजेल्लोकपालान्मूलपारिषदान्वितान् ।
हेतिजात्यधिगोपेतान्दिक्षु पूर्वादितः क्रमात् ।११३

इन्द्रमग्निं यमं रक्षोवरुणं पवनं विधुम् ।
ईशानं पन्नगाधीशमधऊर्ध्वं पितामहम् । ११४
पीतो रक्तोऽसितो धूम्रः शुक्लो धूम्रसितावुभौ ।
गौरोऽवरुणः क्रमादेते वर्णतः परिकीर्तिताः ।११५
वज्रं शक्तिं दण्डमसिं पाशमङ्कुशकं गदाम् ।
शूलं चक्रं पद्ममेषामायुधानि क्रमाद्विदुः । ११६
पीतशुक्लसिताकाशविद्दुयद्रक्तसितायिताः ।
कुरविन्दपाटलाभा वज्राद्याः परिकीर्तितः । ११७

अन्त में मूल परिषदों से समन्वित लोकपालों का यजन करना चाहिये । इनका हेतिजात्यधिपों से समन्वित पूर्वादि क्रम से दिशाओं में पूजन करे ।११३। इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, पवन, चन्द्र, ईशान, पन्नगाधीश का नीचे और ऊपर पितामहका अर्चन करना चाहिये । ये वर्ण के द्वारा क्रमसे पीत, रक्त, असित, धूम्र, शुक्ल, धूम्र और सित दोनों, गौर और अरुण होते है ।११४-११५। इनके आयुध क्रम से वज्र, शक्ति, दन्ड, असिपात, अंकुश, गदा, शूल, चक्र, और, पद्म होते हैं ।११६। ये वज्र आदि आयुध पीत, शुक्ल, सित, आकाश, विद्युत, रक्त, सितासित, कुरविन्द और पाटल की आभा वाले कीर्त्तित किये गये हैं ।११७।

एवं संपूज्य विधिवन्निवेद्यान्तं ततोगुरुः ।
दक्षिणे स्थण्डिलं कृत्वा तत्राधाय हुताशनम् । ११८
संस्कृत्य विध्रिवद्वियाःवैश्वदेवं समाचरेत् ।
तत्र सम्पूज्य गन्धाद्यैर्देवतासुक्तविग्रहम् ।११९
तारव्याहतिभिर्हुत्वा मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ।
सर्पिष्मता पायसेन पञ्चविंशतिसंख्यया । १२०
हुत्वा व्याहृतिभिर्भूयो गन्धाद्यैः पुनरर्चयेत् ।
तां याजांयत्वा पीठस्थमूर्तो वह्नि विसर्जयेत् । १२१

अवशिष्टेन हविषा विकिरेत्परितो बलिम् ।
देवतायाः पार्षवेभ्यो गन्धपुष्पाक्षतान्वितम् ।१२२
ततोनैवेद्यमुद्धृत्य शोधयित्वा स्थलं पुनः ।
पञ्चोपचारैः संज्पूय दर्शयेच्छत्रचामरे । १२३
कर्पूरशकलोन्मिश्रं ताम्बलं च निवेदयेत् ।
सहस्रावृत्या सञ्जप्य मूलमन्त्रमनन्यधीः । १२४

इस रीतिसे भली भाँति अर्चन करके गुरुविधिके साथ अन्तमें नैवेद्य निवेदन करके दक्षिण में स्थन्डिल को रचना करके वहाँ हुताशन का आधान करे ।११८। विद्वान् पुरुष विधि के साथ वैश्वदेव का संस्कार करके ही समाचरण करे । वहाँ पर उक्त विग्रह वाले देवताका गन्धादि उपचारों के द्वारा पूजन करे मन्त्र का ज्ञान रखने वाला तार (प्रणव) और व्याहृतियोंके द्वारा होम करें । फिर मूलमन्त्रसे धृत युक्त पायल के द्वारा पच्चीस सख्या में हवन करे और फिर व्याहृतियों के द्वार गन्धादि से अभ्यर्चन करे उसकी पीठ में स्थित मूर्ति में योजित करके अग्नि का विसर्जन कर देना चाहिये ।११९-१२१। जो हवि अवशिष्ट रह जावे उससे सब ओर बलि का विकिरण करे । देवता के पार्षदों के लिये गन्ध-पुष्पों और अक्षतों से अन्वित नैवेद्य को उद्धृत करके फिर स्थल का शोधन करना चाहिये । पाँच उपचारों के द्वारा पूजन करके छत्र और चमर को दर्शित करे ।१२२-१२३। कपूर के खन्ड से उन्मिश्रित ताम्बूल को निवेदित करे । अनन्य बुद्धि वाला होकर अर्थात् एकाग्रचित वाला रहकर एक सहस्र नोर मूल मन्त्र का जप करे ।१२४।

तज्जपं सर्वसम्पत्त्यै देवतायै समर्पयेत् ।
ततः शम्भोर्दिशि गुरुर्विकिरेत्पूर्वसंचिते । १२५
हेमवस्त्रादिसंयुक्तां कर्करीतोयपूरिताम् ।
संस्थाप्य तस्यां सिंहस्यां खड्गखेटकधारिणीम् । १२६
घोररूपां पश्चिमास्यां पूजयेदस्त्रदेवताम् ।
चलासनेन सम्पूज्य तामादया गुरुः पुनः । १२७

उसको करके गुरु इमके साथ वेदी में दर्भों के आस्तर में उस रात में शयन करे। यह अधिवास कहा गया है ।१३८-१३९।

पंचम पटल

ततोऽग्निजननं वक्ष्ये सर्वतन्त्रानुसारतः ।
आचार्यकुण्डे विधिवत्संस्कृते शास्त्रवर्त्मना । १
अष्टादश स्युः संस्काराः कुण्डानां तन्त्रचोदिताः ।
वीक्षणं मूलमन्त्रेण शरेण प्रोक्षणं मतम् । २
तेनैव ताडनं दर्भैर्वर्मणाऽभ्युक्षणं स्मृतम् ।
अस्त्रेण खननोद्धारो हृन्मन्त्रेण प्रपूरणम् । ३
समीकरणमस्त्रेण सेचनं वर्मणा मतम् ।
कुट्टनं हेतिमन्त्रेण वर्ममन्त्रेण मार्जनम् । ४
विलेपनं कलारूपकल्पनं तदनन्तरम् ।
त्रिसूत्रीकरणं पश्चाद्हृदयेनार्चनं मतम् । ५
अस्त्रेण वज्रीकरणं हृन्मन्त्रेण कुशैः शुभैः ।
चतुष्पथं तनुत्रेण तनुयादक्षपाटनम् ।६
यागे कुण्डानि संस्कुर्यात्संस्कारैरेभिरीरितैः ।
अथवा तानि संस्कुर्याच्चतुर्भिरीक्षणादिभिः । ७

इसके अनन्तर समस्त तन्त्रों के अनुसार शास्त्रों के निर्दिष्ट मार्ग के द्वारा विधि के सहित संस्कार किये हुये कुन्ड में अग्नि के जनन को बतलाया जाता है ।१। तन्त्रों में चोदित कुन्डों के अठारह संस्कार होते हैं। मूल मन्त्र के द्वारा वीक्षण नामक संस्कार होता है। और शर के द्वारा प्रोक्षण माना गया है ।२। उसी के द्वारा दर्भों से ताड़न नामक संस्कार होता है। दर्म्भ के द्वारा अभ्युक्षण कहा गया हैं। अस्त्र से

खनन और उद्धार होते हैं और हृन्मन्त्र के द्वारा प्रपूरण संस्कार किया जाता है।३। अस्त्र से समीकरण और वर्म के द्वारा सचन नाम वाला संस्कार सम्पन्न होता है। हेति मन्त्रसे कुट्टन तथा वर्मके मंत्र से मार्जन किया जाता है।४। विलेपन और कला रूप कल्पन उसके अनन्तर होता है। पीछे त्रिसूतीकरण और इसके पश्चात् हृदय मंत्र से अर्चन माना गया है।५। अस्त्र से बाजीकरण और हृन्मन्त्र के द्वारा शुभ कुशाओं से चतुष्पथ करे और तनुत्र के द्वारा अक्ष पाटल करना चाहिए।६। इन कथित संस्कारों से याग में कुन्डों का सत्कार करना चाहिए। अथवा उनका चार वीक्षण प्रभृति के ही द्वारा संस्कार करे।७।

तिस्रस्तिस्रो लिखेल्लेखा हृदा प्रागुदगग्रणाः।
प्रागग्राणां स्मृता देवा मुकुन्देशपुरन्दराः।८
रेखाणामुदगग्राणो ब्रह्मवैवस्वतेन्दुवः।
अथवा षट्कोणावृतं त्रिकोण तव सोलखेत्।९
सर्वाण्यभ्युक्ष्य तारेण योगपीठमथार्चयत्।
वागीश्वरीमृतुस्नानां नीलेन्दीवरसन्निभाम्।१०
वागीश्वरेण संयुक्तामुपचारैः प्रपूजयेत्।
सूर्यकांतादितम्भूतं यद्वा श्रोत्रियगेहजम्।११
आनीय चाग्नि पात्रेण क्रव्यादांशं पसित्यजेव्।
संस्कुर्यात्तां यथान्यायं देशिकोवीक्षणादिभिः।१२

प्राक् अथवा पूर्व दिशा में अथवा उत्तर में हृदय मन्त्र के द्वारा अग्रगामिनी तीन-तीन लेखायें लिखनी चाहिये। पूर्व में अग्रगामिनी लेखाओं के—मुकुन्द—ईश और पुरन्दर देवता कहे गये हैं।८। उत्तर की ओर अग्रभागों वाली रेखाओंके देवता ब्रह्मा-वैवस्वत और इन्दु होते है। अथवा षट् कोण से समावृत त्रिकोण वहाँ पर लिखना चाहिये।९। इन सबका प्रथव के द्वारा अभ्युक्षण करके इसके अनन्तर योगपीठका अर्चन करे। ऋतुकाल के उपरान्त स्नान' की हुई—नील इन्दीवर के सदृश्य वागीश्वरी का जो वागीश्वर से समन्वित होवे उपचारों के द्वारा पूजन

करना चाहिए। सूर्यकान्त आदि मणियों से समुत्पादित की हुई अथवा किसी श्रोत्रिय के गृह में समुत्पन्न अग्नि का पात्र के द्वारा समानयन करके, क्रव्यादोके अंश का परित्यागकर देना चाहिये। आचार्य वीक्षण आदि के द्वारा न्यायानुसार उसका संस्कार करे।१०-१२।

औदर्यबैन्दवाग्निभ्यां भौमस्यैक्यं स्मरन्वसोः।
योजयेद्वह्निबीजेन चैतन्यं पावके तदा।१३।
तारेण मन्त्रितं मन्त्री धेनुमुद्रामृतीकृतम्।
अस्त्रेण रक्षितं पश्चात्तनुत्रेणावगुण्ठितम्।१४
अर्चितंत्रिः परिभ्राम्य कुण्डस्योपरि देशिकः।
प्रदक्षिणं तदा तारमन्त्रोच्चारणपूर्वकम्।१५
आत्मनोऽभिमुख वह्निं जानुस्पृष्टमहीतलः।
शिवबीजधिया देव्या योनादेव विनिः क्षिपेत्।१६
पश्चाद्देवस्य देव्याश्च दद्यादचमनीयकम्।
ज्वालयेन्मनुनाऽनेन तमग्निमथ देशिकः।१७

ओंदर्य-वैन्दव अग्नियों से भौम वसु की एकता का स्मरण करते हुए तब पावक मे वह्नि वीज के द्वारा चैतन्य को योजित करे।१३। मन्त्रधारी प्रणव के द्वारा अभिमन्त्रित-धेनु मुद्रा से अमृती कृत—अस्त्र के द्वारा रक्षित और पीछे तनुत्र के द्वारा अवगुण्ठित को आचार्य कुन्ड के ऊपर अर्चि तन्त्री को परिभ्रामित करके तब प्रदक्षिण तारमन्त्र से समुच्चारण के साथ भूमि तल में घुटनों का स्पर्श करने वाला अपने सामने वह्नि को देवी के शिव बीज की बुद्धि से योनि में ही विनि-क्षित करना चाहिए।१४-१६। इसके पीछे देवी को और देव को आचमनीय अर्पित करे। देशिकको उसके अनन्तर उस अग्निको ज्वलित करना चाहिए।१७

चित्पङ्गल हनदहपचयुग्मान्युदीर्य च।
सर्वज्ञाज्ञापय स्वाहा मन्त्रोऽय प्रागुदीरितः।१८

अग्नि प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम् ।
सुवर्णवर्णममलं समिद्धं विश्वतोमुखम् ।१९
उपतिष्ठेत विधिवन्मनुनाऽनेन पावकम् ।
विन्यसेदात्मनो देहे मन्त्रैर्जिह्वा हविर्भुजः ।२०
लिङ्गपायुशिरोवक्त्रघ्राणनेत्रेषु सर्वतः ।
वह्नीरार्धीशसयुक्ताः सादियान्ताः सविन्दवः ।२१
वर्णमन्त्राः समुद्दिष्टा जिह्वानां सप्तदेशिकैः ।
जिह्वास्तास्त्रिविधाः प्रोक्ता गुणभेदेन कर्मसु ।२२

चित् पिङ्गल और हल-दह—पच इनको दो-दो बार कहे फिर सर्वज्ञा ज्ञाप्रय स्वाहा यह कहे तो पहले कहा हुआ यह मन्त्र होता है। १८। प्रज्वलिल अग्नि—जात वेदा—हुताशन—सुवर्ण वर्ण—अमल—समिद्ध विश्वतोमुख की वन्दना करता हूँ।१९। विधि के साथ इस मन्त्र से पावक का उप स्थान करे। अपने शरीर में मन्त्रों के द्वारा हविर्भुक् की जिह्वा का वियास करना चाहिए। लिङ्ग—पायु–शिर–मुख घ्राण और नेत्रों में सभी जगह विन्यास करे। वह्नि–रेफ, दूर पकार, अधोश–ऊर्द्ध इनसे संयुक्त सकार से चकार के अन्त तक—ये सभी वर्ण विन्दु के सहित वर्ण मन्त्र देशिकों के द्वारा सात जिह्वायें समुदिष्ट की गई हैं।२०-२१। गुणों के भेद से कर्मों में वे तीन प्रकार की जिह्वाऐं कही गई हैं।२२।

हिरण्या गगना रक्ता कृष्णाऽन्या सुप्रभा मता ।
—पाऽतिरक्ता च सात्त्विक्यो यागकर्मणि ।२३
—रागा सुवर्णाऽन्या तृतीया भद्रलोहिता ।
लोहितानन्तरं श्वेता धूमिनी च करालिका ।२४
राजस्योरसना वह्नेर्विहिताः काम्यकर्मसु ।
विश्वमूर्तिस्फुलिङ्गिन्यौ धूमवर्णा मनोजवा ।२५
लोहितान्या करालाख्या काली तामस्य ईरिताः ।
एताः सप्त नियुज्यन्ते क्रूरकर्मसु मन्त्रिभिः ।२६

स्वस्वनामसमाभाः स्युर्जिह्वाः कल्याणरेतसः ।
अमर्त्यपितृगन्धर्वयक्षनागपिशाचकाः ।२७
राक्षसाः सप्त जिह्वानामीरिता अधिदेवताः ।
वह्नेरङ्गमनून्न्यस्तेत्तनावुक्तेन वर्त्मना ।२८

हिरण्या, गगना, रक्ता, कृष्णा, सुप्रभा, बहुरूपा, अतिरिक्ता, ये सात्विकी है जो याग कर्म में होती है। पद्मरागा-सुवर्णा, भद्र-लोहिता, लोहिता, श्वेता, धूमिनी, करालिका, राजस्यो, रसना से बन्हिकी जिह्वायें हैं जो काम्य कर्मों में विहित कही गई हैं। विश्वमूर्ति स्फुलिंङ्गिनी, धूम्र वर्णा,मनोजवा, लोहिता, कराला। काली,ये तामसी जिह्वायें कही गई हैं। ये सात मन्त्र धारियों के द्वारा क्रूर कर्मो में नियोजित की जाया करती है ।२२-२६। कल्याणरेतस वाली ये जिह्वाये अपने-अपने नामों के समान आभा वाली होती है। अमर्त्य, पितृगण, गन्धर्व, यक्ष, नाग, पिशाच और राक्षस ये सात जिह्वाओं के अधि= देवता कहे गये हैं। शरीर में उक्त मार्ग के द्वारा वह्निके अङ्ग मन्त्रों का न्यास करना चाहिए ।२७-२८।

सहस्रार्चिः सप्तपर्ण उत्तिष्ठपुरुषः पुनः ।
धूमव्यापी सप्तजिह्वो धनुर्धर इति क्रमात् ।२९
षडङ्गमनवः प्रोक्ता जातिभिः सहसंयताः ।
मूर्तीरष्टौ तनौ न्यस्येद्देशिकोजातवेदसः ।३०
मूर्द्धासपार्श्वकटयन्धुकटिपाश्वांसके पुनः ।
प्रदक्षिणवशान्न्यस्येदुच्यन्ते ता यथाक्रमान् ।३१
जातवेदाः सप्तजिह्वो हव्यवाहनसंज्ञकः ।
अश्वोदरजसंज्ञोऽन्यः पुनर्वैश्वानराह्वयः ।३२
कौमारतेजाः स्याद्विश्वमुखो देवमुखः स्मृतः ।
तारागनयेंपदाद्याः स्युर्नत्यन्ता वह्निमूर्तयः ।३३

आसनं कल्पयित्वाग्नेर्मूर्ति तस्य विचिन्तयेत् ।
इष्टं शक्ति स्वस्तिकाभीतिमुच्चै दीर्घं दोर्भिर्धारयन्तं जपाभम्
हेमाकल्पं पद्मसंस्थं त्रिनेत्रं ध्यायेद्वह्नि बद्धमौलि जटाभिः।३४

सहसार्चि, सप्तपूर्ण, उत्तिष्ठ पुरुष, धूमव्यापी, सप्त जिह्वा, धनुर्धरः—ये क्रम से छै जातियों के सहित अङ्ग मन्त्र कहे गये हैं। आचार्य को चाहिये कि जात वेदा की आठ मूर्तियाँ का शरीर में न्यास कराये ।२९-३०। मूर्द्धा, पार्श्व सहित कटि, अन्धु कटि पार्श्व और अस में प्रदक्षिण वश से उनका क्रम के अनुसार न्यास करना चाहिये। उनको अब बतलाया जाता है।३१। जात वेदा, सप्त जिह्व, हव्यवाहन, अश्वोदरज, वैश्वानर, कौमार—तेजा, विश्वमुख, देव मुख, कहे गये हैं। प्रणव और फिर अग्न में यह पद और अन्त में नमः यह पद होता है। ये वह्निकी मूर्तियाँ हैं।३२-३३। अग्नि के आसन की कल्पना करके उसकी मूर्ति का ध्यान करना चाहिये। अब ध्यान बतलाया जाता है—अपनी दीर्घ बाहुओं में अभीष्ट, शक्ति, स्वस्तिक, अभय दान को धारण करने वाले—जपा के पुष्प की आभा से समन्वित-हेमा-कल्प, पद्म के आसन पर विराजमान, तीन नेत्रों से संयुत और अस्त्रों से मस्तक को बधने वाले वह्निका ध्यान करना चाहिये।३४।

परिषिञ्चेत्ततस्तोयैर्विशुद्धैर्मेखलोपरि (१) ।३५
दर्भैरगर्भैर्मध्यस्थंमेखलायां परिस्तरेत् ।
निक्षिपेद्दिशु परिधीन् प्राचीवर्जं गुरूत्तमः ।३६
प्रादक्षिण्यन सम्पूज्यास्तेषु ब्रह्मादिमूर्तयः ।
ध्यातां वह्नि यजेन्मध्ये गन्धाद्यैर्मनुनामुना ।३७
वैस्वानरजातवेदपदे पश्चादिहावह ।
लोहिताक्षपदस्यांते सर्वकर्माणि साधय ।३८
वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रः पावकवल्लभः ।
मध्ये षट्स्वपि कोणेषु जिह्वाज्वालारुचोयजत् ।३९

इसके उपरान्त विशुद्ध जल में मेखला के ऊपर परि षिचन करना चाहिए। अगर्भ दर्भों से मेखला में मध्य में संस्थितका परिस्तरण करे। उत्तम गुरु को चाहिए कि प्राची को छोड़कर परिधियों का दिशाओं में नि:क्षेपण करे।३५-३६। प्रादाक्षिण्य से अर्थात् दाहिनी ओर से उनमें ब्रह्मा आदि मूर्त्तियों का भली-भाँति पूजन करना चाहिए। इस मन्त्र के द्वारा ध्यान किए हुए अग्नि का मध्य में गन्ध आदि के द्वारा यजन करे।३०। वैश्वानर और जात वेदा —ये दो पद—फिर गर्व कर्म्मणि साधय—यह पद, और अन्त में वह्निजाया अर्थात स्वाहा वह पद होता है। यह मन्त्र पावक का परम प्रिय मन्त्र बताया गया है। मध्य में छँ कोणों में जिह्वा ज्वाला रुचि वाले का यजन करना चाहिये।३८-३९।

केसरेषूक्तमार्गेंश पूजयेदङ्गदेवता: ।
दलेषु पूजयेन्मूर्तीः शक्तिस्वस्तिकधारिणीः ।४०
दलाग्रे मातरः पूज्याः सासिताङ्गादिभैरवाः ।
लोकपालांस्ततो दिक्षु पूजयेदुक्तलक्षणान् ।४१
पश्चादादाय पाणिभ्यां स्रुक्स्रुवौ तावधोमुखौ ।
त्रि: संप्रतापयेद्वहनौ दर्भानादाय देशिकः ।४२
तदग्रमध्यमूलानि शोधयेत्तैर्यथाक्रमात् ।
गृहीत्वा वामहस्तेन प्रोक्षयेद्दक्षिणेन तौ ।४३
पुनः प्रताप्य तौ मन्त्री दर्भानग्नौ विनि:क्षिपेत् ।
आत्मनो दक्षिणे भागे स्थापयेत्तौ कुशास्तरे ।४४
आज्यस्थालीमथादाय प्रोक्षयेदस्त्रवारिणा ।
तस्यामाज्यं विनि:क्षिप्य संस्कृतं वीक्षणादिभिः ।४५

ऊपर में बताये हुए मार्ग से ही केसरों में अङ्ग देवताओं का पूजन करे। दलों में शक्ति और स्वस्तिक धारण करने वाली मूर्त्तियों का अर्चन करना चाहिए।४०। दलों के अग्रभाग में असिताङ्ग भैरवों के सहित मातृगण का पूजन करना चाहिए। इसके अनन्तर दिशाओं में उक्त लक्षणों से अन्वित लोकपालों का यजन करे।४१। इसके पीछे नीचे

की ओर मुखों वाले स्रुक् और स्रुव् का हाथों से आदान करे। उनको तीन बार अग्नि में संतप्त करे और देशिक दर्भो को लेकर उनके द्वारा क्रमानुसार उनके अग्रभाग का मध्यका और भूतों का शोभन करे। बाँये हाथ से ग्रहण करके उन दोनों का दाहिने से प्रोक्षण करना चाहिये ।४२-४३। मन्त्रधारी पुनः उन दोनों को प्रतप्त करके फिर दर्भों को अग्नि में निक्षिप्त कर देवे। अपने दक्षिण भाग में कुशास्तर पर उस दोनों को स्थापित कर देना चाहिए ।४४। इसके अनन्तर आज्य की स्थाली को लाकर अस्त्र मन्त्र के द्वारा उसका प्रोक्षण करे। प्रोक्षण आदि से संस्कार किये हुए आज्ज (घृत) को उसमें निक्षिप्त कर देवे। ।४५।

निरूह्य वायव्येऽङ्गारान् हृदा तेषु निवेशयेद् ।
इदं तापनमुद्दिष्टं देशिकैस्तन्त्रवेदिभिः ।४६
सन्दीप्य दर्भयुगलमाज्ये क्षिप्त्वाऽनलेक्षिपेत् ।
गुरुर्हृदयमन्त्रेण पवित्रीकरणं त्विदम् ।४७
दीप्तेन दर्भयुग्मेन नीराजयाज्यं स वर्मणा ।
अग्नौ विसर्जयेद्दर्भमभिद्योतनमीरितम् ।४८
घृते प्रज्वलितान्दर्भान् प्रदर्श्यास्त्राणुना गुरुः ।
जातवेदसि तान्न्यस्येदुद्योतनमिदं मतम् ।४९
गृहीत्वा घृतमङ्गारान् प्रत्यूह्याग्नौ जलं स्पृशेत् ।
अङ्गुष्ठोपकनिष्ठाभ्यान्दर्भौ प्रादेशसंमितौ ।५०
घृत्वोत्पुनीयादस्त्रेण घृतमुत्पवनं त्विदम् ।
तद्वद्हृदयमन्त्रेण कुशाभ्यामात्मसम्मुखम् ।५१

वायव्य कोण में कुन्ड की अग्नि से अङ्गारों को पृथक्-करके हन्ममन्त्र के द्वारा उनमें विनिवेशित कर देवे। मन्त्र के ज्ञाता आचार्यों के द्वारा इसको तापन बताया गया है ।४६। दो दर्भो सन्दीप्त करके आज्य में क्षिप्त करके फिर अनल में प्रक्षिप्त कर देना चाहिए। इसको गुरु और हृदय मन्त्र के द्वारा ही करना चाहिए। यह पवित्री

करण होता है ।४७। वह प्रदीप्त दो दर्भो से वर्म मन्त्र के द्वारा आज्य का नीराजन करके दर्भ को अग्नि में विसर्जित कर देवे । यह अभिद्योतन कहा गया है ।४८। गुरु घृत में अस्त्र मन्त्र के द्वारा प्रज्वलित दर्भो को प्रदर्शित करके उनको अग्नि में न्यस्त कर देने का उद्योतन कहा गया है ।४९। घृत को ग्रहण कर के अग्नि में अंगारों को संयोजित करके जल का स्पर्श करना चाहिए । अंगुष्ठ और उपकनिष्ठासे प्रादेश संमित् दर्भों को पकड़ कर घृत को अस्त्र मन्त्र के द्वारा पवित्र करे—यह उत्पवन कहा जाता है। उसी भाँति हृदय मन्त्र से अपने सम्मुख कुशाओं से घृत में सत्पवन करे । यह छै संस्कार बतायें गए हैं ।५०-५१।

घृतेसंप्लवनं कुर्यु: संस्कारा: षड्दीरिता: ।
प्रादेशमात्रं सग्रंथि दर्भयुग्मं घृतांतरे ।५२
नि:क्षिप्य भागौ द्वौ कृत्वा पक्षौ शुक्लेतरौ स्मरेत् ।
वामे नाडीमिडां भागे दक्षिणे पिंगलां पुन: ।५३
सुषुम्णां मध्यतो ध्यात्वा कुर्याद्धोमं यथाविधि ।
स्रुवेण दक्षिणाद्भागादादायाज्यं हृदा गुरु: ।५४
जुहुयादग्नये स्वाहेत्यग्नेर्दक्षिणलोच ।
वामहस्तद्वदादाय वामे वह्निविलोचने ।५५
जुहुयादाय सोमाय स्वाहेति हृदयाणुना ।
मध्यादाज्य ममादाय वह्नेर्चालविलोचने ।५६
जुहुयादग्नीषोमाभ्यां स्वाहेति हृदयाणुना ।
हृन्मन्त्रेण स्रुवेणाज्य भागादादाय दक्षिणात् ।५७
जुहुयादग्नये स्विष्टकृते स्वाहाहेति तन्मुखे ।
इति(?)सम्पातयेद्भागेऽथाज्यस्यान्वाहुति क्रमात् ।५८
इत्याग्निनेत्रवक्त्राणां कुर्यादुद्घाटनं गुरु: ।
सताराभिर्व्याहृतिभिराज्येन जुहुयात्पुन: ।५९

प्रादेश प्रमाण वाले और ग्रन्थि से युक्त दो दर्भों के घृतके अन्दर डाल कर दो भाग करके कृष्ण और शुक्ल दो पक्षों का स्मरण करना

चाहिए। वामभाग में इड़ा नाडी का और दक्षिण भाग में पिङ्गला का और सुषुम्ना को मध्य भागमें ध्यान करके विधिके अनुसार होम करना चाहिए। गुरु स्रुवा द्वारा दक्षिण भाग से घृत का आदान करके जो हृन्मत्र के द्वारा अग्नि के दक्षिण लोचन में 'अग्नये स्वाहा'–इससे करे। उसी भाँति वाम भाग से लेकर अग्नि के वाम लोचन में हवन करना चाहिये। हृदल मन्त्र द्वारा इसके अनन्तर 'सोमाय स्वाहा' इससे मध्य से धृत को लेकर वह्नि के भाग के नेत्र में होम करे।५२-५६। फिर 'अग्नी षोमाभ्यां स्वाहा'–उस हृदय मंत्र के द्वारा स्रुव के दक्षिण भाग से घृत का आदान करके हवन करे। 'अग्नये स्विष्ट कृते स्वाहा'–इससे सामने होम करना चाहिए। आज्य की आहुति को क्रम से भाग में सम्पात करना चाहिये।५८। इस प्रकार से गुरु अग्नि के नेत्रों और मुख का उद्घटन करे। फिर प्रणव के सहित व्याहृतियों के द्वारा हवन करना चाहिए जो कि घृत से दिया जावे।५९।

जुहुयादग्निमन्त्रेण त्रिवारं देशिकोत्तमः।
गर्भाधनादिकां वह्नेः क्रियां निर्वर्तयेत्क्रमात्।६०
अष्टाभिराज्याहुतिभिः प्रणवेन पृथक् पृथक्।
गर्भाधानं पुंसवन सीमन्तोन्नयनं पुनः।६१
अनन्तरं जात कर्म्म स्यान्नाकरणं तथा।
उपनिष्क्रमणं पश्चादन्नप्राशनमीरितम्।६२
चौलोपनयने भूयोमहानाम्न्यं महाव्रतम्।
अथौपनिषदं पश्चान्दोदानोद्वाहकौ मृतिः।६३
शुधेषु स्युविवाहान्ताः क्रियास्ताः क्रूरकर्मसु।
मरणान्ताः समुद्दिष्टा वह्नेरागमवेदिभिः।६४

देशिक श्रेष्ठ को चाहिए कि अग्नि के मंत्र के द्वारा तीन बार होम करे। क्रम से वह्निकी गर्भाधान आदि क्रिया को पूर्ण करे।६०। प्रणव के द्वारा आठ आहुतियों से पृथक्-पृथक् गर्भाधान, पुंसवन सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, उपनिष्क्रमण, अन्नप्राशन, चौल,

उपनयन—महानाम्न्य महाव्रत–औपनिषद—गोदान—उव्दाह–मृत्यू है। विवाह के अन्त तक शुभ क्रियाये होती है। वन्हि के आगमों के ज्ञाताओं के व्दारा क्रूरकर्मो में मरणान्त क्रियायें होती हैं। ऐसा कहा गया है।६२-६४।

ततश्च पितरौ तस्न संपूज्यात्मनि योजयेत् ।
समिधः पञ्च जुहुयान्मूलाग्रघृतसंप्लुलाः ।६५
मन्त्रैर्जिह्वमूर्तीनां क्रमाद्वहनेर्यथाविधि ।
प्रत्येकं जुहुयादेकामाहुति मन्त्रवित्तमः ।६६
अवदाय स्रवेणाज्यं चतुः स्रुचि पिधाय ताम् ।
स्रुवेण तिष्ठन्नेवान्नो देशिको यतमानसः ।६७
जुहुयाद्वहिनमन्त्रेण वौषडन्तेन सम्पदे ।
विघ्नेश्वरस्य मन्त्रेण जुहुयादाहुतीर्दश ।६८
सामान्य सर्वतन्त्राणामेतदग्निमुखं मतम् ।
ततः पीठं समभ्यर्च्य देवताया हुताशने ।६९

इसके अनन्तर उसके पितरों का पूजन करके आत्मा में योजित करना चाहिए मूल के अग्रभागों को घृत में सप्लुत करके पाँच समिधाओं का होम करना चाहिए।६५। मंत्रों के ज्ञाता को चाहिए कि वाह्निकी जिह्वाङ्ग मूर्त्तियों को क्रम से विधि पूर्वक प्रत्येक के लिए एक आहुति से होम करे।६३। स्रुव से घृत का अवधान करके उसकी चतुःस्रुक् में विधान करके स्रुव्से आचार्य यतमानस होकर खड़ा होना हुआ ही अग्नि में हवन करे।६७। जिसके अन्त में वौषट् होवे ऐसे अग्नि के मंत्र को द्वारा सम्पदा को लिए हवन करे। विघ्नेश्वर को मत्र के द्वारा आहुतियाँ देनी चाहियें।६८। सभी तन्त्रों का सामान्य यही मुख ताना गया है। हुताशन में देवता की पीठ का अर्चन करना चाहिए।६९।

अर्चयेद्वहिनरूपां ताँ देवतामिष्टदायिनीम् ।
तन्मुखे जुहुयान्मन्त्री पञ्चविंशतिसंख्यया ।७०

आज्येन मूलमन्त्रेण वह्नियैंकीकरणन्त्विदम् ।
वह्निदेवतयोरैक्यमात्मना सह भावयेत् ।७१
मूलमन्त्रेण जुहुयादाज्येनैकादशाहुतीः ।
नाडीसस्थानमुद्दिष्टमेतदागवेदिभिः ।७२
जुहुयादंगमुख्यानामावृत्तीनामनुक्रमात् ।
एकैकामाहुतिं सम्यक सर्पिषा देशिकोत्तमः ।७३
ततोऽन्येंऽपि कुण्डेषु संस्कृतेषु यथाविधि ।
आचार्योविहरेदग्निं पर्वादिषु समाहितः ।७४
त्विजो गन्धपुष्पाद्यै रंगाद्यावरणान्विताम् ।
तन्त्रोक्तदेवतामिष्ठा पञ्चविंशतिसंख्यया ।७५
भूलेनाज्येनजुहुयुः साज्येन चरुणा तथा ।
प्रातरुत्थाय जुहुयुः पुनराज्यान्वितैस्तिलैः ।७६

अभीष्ट पदार्थों के देने वाली वह्नि के स्वरूप वाली देवता का मन्त्रधारी के सम्मुख में पच्चीस की संख्या में हवन करना चाहिये ।७०। मूल मन्त्र से आज्य के द्वारा यह वह्नि का एकीकरण होता है । आत्मा के साथ वह्नि और देवता के एक्य की भावना करनी चाहिये ।७१। मूलमन्त्र के द्वारा आज्य से बारह आहुतियाँ देवे । इसको आगमों के ज्ञाता पुरुषों के द्वारा नाड़ी संस्थान उद्दिष्ठ किया गया है ।७२। आकृतियो अनुक्रम से अङ्गमुख्यों को हवन करना चाहिये । देशिकों में उत्तम को चाहिये कि वह भली-भाँति घृत से एक-एक आहुति देवे ।७३। पूर्वादि दिशाओं में समाहित होकर आचार्य फिर अन्य संस्कार किये हुये कुन्डों में विधि के अनुसार अग्नि को विहृत करे ।७४। ऋत्विज गन्ध—पुष्पादि के द्वारा अङ्गादि आवरणों से समन्वित - मन्त्रोक्त देवता का यजन करके पच्चीस संख्या में आज्य के सहित चरु से तथा मूल के द्वारा आज्य से हवन करना चाहिए । पुनः प्रात-काल में उठकर आज्य से संयुत तिलों के द्वारा हवन करे ।७५-७६।

द्रव्यैर्वा कल्पविहितै सहस्रं साष्टकं पृथक् ।
ततो सुधौतदन्तास्यं स्नात शिष्यं समाहितम् ।७७
पाययित्वा पञ्चगव्यं कुण्डस्थान्तिकमानयेत् ।
विलोक्य दिव्यदृष्ट्या तं तच्चैतन्यं हृदम्बुजात ।७८
गुरुरात्मनि संयोज्य कुर्यादध्वविशोधरम् ।
उक्तं कलाध्वा तत्वाध्वा भुवनाध्वेति च त्रयम् ।७९
वर्णाध्वा च पदाध्वा च मन्त्राध्वेत्परं त्रयम् ।
निवृत्याद्याः कलाः पञ्च कलाध्वेति प्रकीर्तिताः ।८०
तत्वाध्वा बहुधाभिन्नः शिवाद्यागमभेदतः ।
षड्विंशच्छिवतत्वानि द्वाविंशद्वैष्णवानि तु ।८१
चतुर्विंशतितत्वानि मैत्राणि प्रकृतेः पुनः ।
तत्वानि शैवान्युच्यन्ते शिवशक्तिः सदाशिवः ।
ईश्वरोविद्यया सार्द्धं पञ्च शुद्धान्यमूनि हि ।८३

अथवा कल्प में विहित द्रव्यों से एक हजार आठ बार पृथक होम करना चाहिये । इसके अनन्तर भली-भाँति धुले हुए दाँत तथा मुखवाले स्नान किये हुए-समाहित शिष्य को पञ्चगव्य का पान कराकर फिर कुन्ड के समीप में ले आवे । दिव्य दृष्टि से उसका अवलोकन करके उसके चैतन्य के हृदय कमल से गुरु आत्मा में संयोजित करके अध्य का विशोधन करे । ये 'कलाध्वा'–तत्वाध्वा' और भुवनाध्वा' तीन बताये गये हैं ।७७-७९। वर्णाध्वा पदाध्वा और मन्त्रध्ववा—वे दूसरे तीन होते हैं । निवृति आद्य पाँच कलायें कलाध्वा इस नाम से कीर्त्तित हुए हैं ।८०। शिवादि आगम के भेद से तत्वाध्वा बहुधा भिन्न होता है । छब्बीस शिवतत्व होते हैं और बाईस वैष्णव तत्व होते हैं ।८१। फिर प्रकृतिके मैत्र चोवीस तत्व होते हैं । दशब्रह्म तत्व कहेगये हैं और त्रिपदात्मा के सात हैं ।८२। अब शिव सम्बन्धित तत्व कहे जाते हैं–शिवशक्ति सदाशिव, विद्या के साथ ईश्वर ये पाँच शुद्ध है ।८३।

माया कालश्च नियतिः कलाविद्याः पुनः स्मृता ।
रागः पुरुष एतानि शुद्धाशुद्धानि सप्त च ।८४
प्रकृतिर्बुध्यहङ्कारी मनोज्ञानेन्द्रियाण्यथ ।
कर्मेन्द्रियाणि तन्मात्राः पञ्च भूतानि देशिकः ।८५
एतान्याहुरशुद्धानि चतुर्विंशतिरागमे ।
शेवानामिति तत्वानां विभागोऽत्र प्रदर्शितः ।८६
जीवः प्राणाधिपश्चित्तं ज्ञानकर्मेन्द्रियाण्यथ ।
तन्मात्राः पञ्च भूतानि हृत्पद्मं तेजसां त्रयम् ।८७
वासुदेवादयश्चेति तत्वान्येतानि शार्ङ्गिणः ।
पञ्च लतानि तन्मात्रा इन्द्रियाणि मनस्तथा ।८८
गर्वो बुद्धिः प्रधान च मैत्राणीति बिदुर्बुधा ।
निबृत्याद्याः कलाः पञ्च ततो बिन्दुकलाः पुनः ।८९
नादः शक्तिः सदा पूर्वः शिवश्च प्रकृतेबिदुः ।
आत्मविद्या शिवः पश्चाच्छिवो विद्या स्वयं पुनः ।९०
सर्वतत्वं च तत्वानि प्रोक्तानि त्रिपदात्मनः ।
तत्वाध्वा कथितोह्येष तत्तदागमभेदिभिः ।९१

माया, काल, नियति पुनः कलाविद्या कही गई है। राग पुरुष ये सात शुद्धाशुद्ध हैं ।८४। प्रकृति-बुद्धि अहङ्कार,मन,ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ, पञ्च तन्मात्राये और पाँच भूत ये आगम में चौबीस हैं । देशिक इनको स द्ध कहते हैं । वहाँ शेव तत्वों का विभाग प्रदर्शित किया गया है ।८५-८६। प्राणों का अधिप जीव चित्त, ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्रायें, पाँच भूत हृदयका पद्म तीन तेज और वासुदेव प्रभृति ये शार्ङ्गी के तत्व होते हैं । पंचभूत, तन्मात्रायें, इन्द्रियाँ-मन-अहङ्कार बुद्धि और प्रधान-इनको बुध गण मैत्र कहते हैं । निवृति आदि पाँच कलायें फिर बिन्दु कलायें, नाद, शक्ति, सदाशिव ते प्रकृति के होते हैं । आत्म विद्या, शिव पश्चात् शिव और पुनः स्वयं विद्या और सर्व सत्व

ये त्रिपदात्मा के तत्व बताये गये हैं। इसकी आगमों के ज्ञाताओं के द्वारा तत्वाध्वा ही कहा गया है ।८७-९१।

ईरितो भुवनाध्वेति भुवनानि मनीषिभिः ।
वर्णाध्वेति वदन्त्यर्णानादिक्षान्तान्मनीषिणः ।९२
वर्णसंघः पदाध्वा स्वान्मन्त्राध्वा मन्त्रराशयः ।
क्रमादेतान्पुनः षट् च शोधयेगुरुसत्तमः ।९३
पादान्धुनाभिहृद्भत्लमूर्द्धस्वपि शिशोः स्मरेत् ।
यत कूर्चेन विधिवत्तं स्पृशञ्जुहुयाद्गुरुः ।९४
आचार्य कुण्डे संशुदुधैस्तलैराज्यपरिप्लुतैः ।
शोधयाम्यमुमध्वान स्वाहेति पृथगध्वनः ९५
तारादममाहुतीरष्टौ क्रमात्तां विलयं नयेत् ।
शिवे, शिवान्तान्संलीनाञ्जनयेत्सृष्टिमार्गतः ।९६

मनीषियों के द्वारा भुवनों को ही भुवनाध्वा कहा गया है । मनीषीगण आदि से लेकर क्षकार पर्यन्त रहने वाले वर्णोंको वर्णाध्वा बोलते हैं ।९२। वर्णों का संघ ही पदाध्वा होता है और मन्त्रों की राशियाँ ही मन्त्राध्वा हैं । श्रेष्ठ गुरु को चाहिए कि क्रम से वह इन छै का शोधन करे ।९३। शिशु के पाद, अन्धु, नाभि, हृदय, भाल और मूर्धा में भी स्मरण करे । फिर कूर्च से विधि के सहित गुरु उसका स्पर्श करते हुये हवन करे ।९४। आचार्य कुण्ड में शुद्ध आज्य क परिप्लुत तिलों से 'अमु' अध्वामं शोधयामि स्वाहा' इससे अध्वा के पृथक् प्रणव के आदि द्वारा आठ आहुतियाँ देवे और क्रमसे उसको विलयको प्राप्त कर देवे । शिव में संलीन शिवान्तों का सृष्टि मार्ग से जनन करना चाहिए ।९५-९६।

विलोकयन्दिव्यदृष्टया तं शिशुं देशिकोत्तमः ।
आतमस्थितं तच्चैतन्यं पुनः शिष्ये नियोजयेत् ।९७
स्रुचा पूर्णाहुतिं दत्वा मूलमन्त्रेण देशिकः ।
उद्वास्य देवतां कुम्भे साङ्गां सावरणां गुरुः ।९८

पुनर्व्याहृतिभिहुत्वा जिह्वादीनां विभावसोः ।
एकैकामहुतिं दत्वा परिषियाद्भिरात्मनि ।९९
पावकं योजयित्वा स्वे परिधींन्सपरिस्तरान् ।
नैमित्तके दहेन्मन्त्री नित्ये तु न दहेदिमाम् ।१००
नेत्रे शिष्यस्य बध्नीयान्नेत्रमन्त्रेण वाससा ।
करे गृहीत्वा तं शिष्यं कुण्डतो मण्डलं नयेत् ।१०१
तस्याञ्जलिं पुनः पुष्पैः पूरयित्वा यथाविधि ।
कलशे देवताप्रीत्यै क्षेपयंन्मूलमुच्चरन् ।१०२

देशिको में परम श्रेष्ठ को चाहिए कि उस शिशु को दिव्य दृष्टि के द्वारा विलोकन करते हुए आत्मा मे स्थित उस चैतन्य को फिर शिष्य रूप में नियोजित करे ।९०। स्रुवासे पूर्णाहुति देकर देशिक(आचार्य)मूल मंत्र के द्वारा गुरु अङ्गों के सहित तथा आवरणों से समन्वित देवता भी कुम्भ में उद्भासित करे और व्याहृतियों के द्वारा होम करे जो कि विभवसु की जिहवादिक का है। एक-एक आहुति देकर आत्मा में जल से परिषिचन करना चाहिए ।९८-९९। अपने में पावक की योजित करके सपरिस्तर परिधियों का मंत्रधारी नैमितिक में दहन करे। और नित्य कर्म में इसका दहन न करना चाहिए ।१००। नेत्र मंत्र से वस्त्र के द्वारा शिष्य के नेत्रों को बांध देवे। उस शिष्य को कर में ग्रहण करके कुन्ड से मण्डल में ले जाना चाहिए ।१०१। विधि के अनुसार उसकी अंजलि को पुष्पों से भर देव और कलश में देवता की प्रीति के लिए मूल मन्त्र को उच्चारण करते हुए क्षेपण करना चाहिए ।१०२।

व्यपोह्य तं नेत्रबन्धमासीनं दर्भसंस्तरे ।
आत्मयागक्रमाद्भूयः सहृत्योत्पाद्य देशिकः ।१०३
तत्तन्मन्त्रोदितान् न्यासान्कुर्याद्देहे शिशोस्तदा ।
पंचोपचारैः कुम्भस्थां पूजयित्वेष्टदेवताम् ।१०४
तस्यां तन्त्रोक्तमार्गेण विदध्यात्सकलीकृतिम् ।
मण्डलेऽलङ्कृते शिष्यमन्यस्मिन्नुपवेशयेत् ।१०५

नदत्सु पंचवाद्येषु साद्धं विप्राशिषा गुरुः ।
विधिवत्कुम्भमुद्धृत्य तन्मुखस्थान्सुरद्रुमान् ।१०६
शिशो शिरसि विंयस्य मातृकां मनसा जपन् ।
मूलेन साधितेस्तोयैरभिषिञ्चेत्तामात्मवित् ।१०७

फिर उस वस्त्र द्वारा नेत्रों के बन्धन को दूर हटाकर दर्भों के संस्तरण पर बैठे हुए शिष्य को फिर आत्म याग के क्रम से देशिक संहार करके तथा उत्पादन करके उन-उन मन्त्रोंसे उदित न्यासों को उस समय में शिशु के देह में करना चाहिए। पाँच उपचाओं के द्वारा कुम्भ में संस्थित इष्ट देवता का पूजन करके उसमें फिर तन्त्र शास्त्र में कथित मार्ग द्वारा सकलों कृति को करना चाहिए । अन्य समलकृत मण्डल में शिष्य की उपदिष्ट करा देवे ।१०३-१०५। पाँच वाद्यों के बजाये जाने पर विप्रों के आशीर्वाद के साथ गुरु विधि पूर्वक कुम्भ को उठाकर उसके मुख में स्थित सुरद्रुमों को शिशु के लिए में विन्यप्त करके मातृकाओं का मन द्वारा जप करता हुआ आत्म वेत्ता मूल मन्त्र के द्वारा साधित जल से उनका अभिषिचन करे ।१०६-१०७।

पजितां पुनराय वर्धनीमस्त्ररूपिणीम् ।
तस्यां सुसाधितैस्तोयैः सिञ्चेद्रक्षार्थमञ्जसा ।१०८
अविशिष्टेन तोयेन शिष्यमाचामयेद्गुरुः ।
ततस्तं सकलीकुर्याद्देवतात्माहमात्मवित् ।१०९
उत्थाय शिष्यो विमले वाससी प्ररिधाय च ।
आचम्य वाग्यतो भूत्वा निषीदेत्सन्निधौ गुरोः ।११०
देवतामात्मनाः शिष्ये संक्रान्तां देशिकोत्तमः ।
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यै रैक्यं सम्भावयंस्तयोः ।१११
दद्याद्विद्यां ततस्तस्मै विनीतायाम्बुपूर्वकम् ।
गुरोर्लब्धां पुनर्विद्यामष्टकृत्वो जपेत्सुधीः ।११२
गुरुविद्यादेवतानामैक्यं सम्भावयन्धिया ।
प्रणमेद्दण्डवद्भूमौगुरुं तं देवतात्मकम् ।११३

य पादाम्बुजद्वन्द्वं निजमूद्र्धनि योजयेत् ।
शरीरमर्थं प्राणं च (णांश्च) सर्वं तस्मै निवेदयेत् ।११४

फिर पूजित अस्त्र रूप वाली वर्धनी का आदान करके तुरन्त ही उसमें सुसाधित जलों द्वारा रक्षा के लिए सिंचन करना चाहिए ।१०८। गुरु बचे हुए जल के द्वारा शिष्य को आचमन करावे । इसके उपरान्त आत्मवेत्ता देवता की आत्मा का सकलीकरण करे ।१०९। फिर शिष्य उठकर वस्त्रों का परिधान करे—आचमन करके मोनी कहकर गुरुदेव की सन्निधि से निषण्ण हो जावे ।११०। देशिक वर शिष्य में आत्मा के सक्रान्त देवता का गन्ध पुष्पादिक के द्वारा अर्चन करे और उन दोनों की एकता की भली भांति भावना करनी चाहिए ।१११। अम्बुपूर्वक विनीत उस शिष्य के लिए विद्या देवे । गुरु से प्राप्त हुई विद्याको सुधी आठ बार जप करे ।११२। बुद्धिके द्वारा गुरु-विद्या और देवताकी एकता की भावना करते हुए उस देवता के स्वरूप वाले गुरु को भूमि में पढ़कर दण्डे की भाँति होते हुए प्रणाम करना चाहिए अर्थात् साष्टाङ्ग प्रणाम करे ।११३। शिष्य गुरु के दोनों चरण कमलों को अपने मस्तक पर योजित करे, शरीर, अर्थ और प्राण सभी कुछ उस गुरु के लिये निवेदन कर देवे ।११४।

ततः प्रभृति कुर्वीत गुरोः प्रियमनन्यधीः ।
ऋत्विग्भ्यो दक्षिणा दत्त्वा समग्रां प्रीतमानसः ।११५
ब्राह्मणांस्तर्पयेत्पश्चाद्भक्ष्यभोज्यैः सदक्षिणैः ।
एषा क्रियावती दीक्षा प्रोक्ता सर्वसमृद्धिदा ।११६
अथ वर्णात्मिकां वक्ष्ये दीक्षामागमचोदिताम् ।
पुम्प्रकृत्यात्मका वर्णाः शरीरमपि तादृशम् ।११७
यतस्तस्मात्तनौ न्यस्य द्वर्णान् शिष्यस्य देशिकः ।
तत्तत्स्थानयुतान्वर्णान्प्रतिलोमेन संहरेत् ।११८
स्वाज्ञया देवताभावाद्विधिना देशिकोत्तमः ।
तदा विलीमतत्त्वोऽयं शिष्योदिव्यतनुर्भवेत् ।११९

मयी दीक्षा के विषय में बतलाता जायगा। शिशु के शरीर के मध्य में चार दलों वाले मूलाधार में विमल तथा तीन तेजों से विजृम्भित त्रिकोण के मध्य में तीन वलय से संयुक्त विद्युत के करोड़ों की सख्या के समान प्रभा वाली।११६। चेतना मात्र विग्रह वाली शिव शक्ति मयी देवी है जो सूक्ष्म-सूक्ष्मन्तर है। शक्तिका भेदन करके तुरन्त ही मध्य मार्ग से षट् चक्र में गमन कर रही है। जो पर शिवावधि दिव्या है। वकार से आदि लेकर सकार के अन्त तक दलों में स्थित वर्णो का कमलासन में संहार करना चाहिए। ३०-१३१।

तं षट्पत्रमयं पद्मे वादिलान्ताक्षरान्विते ।
स्वाधिष्ठाने समायोज्य वेधयेदाज्ञया गुरुः ।१३२
तान्वर्णान्संहरेद्विष्णौ तं पुनर्नाभिपङ्कजे ।
दशपत्रे डादिफान्तवर्णाढ्ये योजयेद्गुरुः ।१३३
यान्वर्णान्संहरेद्रुद्रे तं पुनर्हृदयाम्बुजे ।
कादिठान्तार्कपत्राढ्ये योजयित्वेश्वरे गुरुः ।१३४
तान्वर्णान्संहरेदस्मिस्तं भूयः कण्ठपङ्कजे ।
स्वराढ्ये षोढशदले योजयित्वा स्वरान्पुनः ।१३५
सदाशिवे तान्संहृत्य तं पुनर्भ्रूसरोरुहे ।
द्विपत्रे हक्षलसिते योजयित्वा ततो गुरुः ।१३६
तदर्णौ संहरेद्बिन्दौ कलाया तं नियोजयेत् ।
तां नादेऽन्तर नाद नादान्ते योजयेद्गुरुः ।१३७

उसको वकार के आदिसे लेकर लकारके अन्त तक अक्षरों से समान्वित-षट्पत्रोंसे परिपूर्ण पद्ममें अपने अधिष्ठान में सयोजित करके गुरु आज्ञा से वेधन करे।१३२। उन वर्णो का संहार करे और विष्णु के नाभिपंकज में जो दश पत्रों से अन्वित और डकार से लेकर फकार के अन्त तक युक्त है, गुरु योजित करे।१३३। उन वर्णो को रुद्र मे संहृत करे फिर उसको क से आदि ढकार के अन्त तक अर्क पत्र से आढ्य अर्थात् द्वादश दलों से युक्त हृदय कमल में ईश्वर में योजित करे।१३४।

गुरु उन वर्णों की इस में संहार करे। फिर उसको कन्ठ पंकज में जो स्वरोंसे अन्वित और सोलह दलों वाला है योजित करके फिर स्वरों को उनको सदाशिव में संहार करके उसको पुनः भ्रूसरोरुह में, जो दो पत्रों वाला है और हक्ष से लसित हो उसमें योजित करके फिर गुरु उन वर्णों को बिन्दु से संहार करे और उसको कला में नियोजित करना चाहिए। उसको नाद में और इसके अनन्तर नाद को नादान्त में गुरु योजित करे।१३५-१३७।

तमुन्मुन्यां समायोज्य विधु (ष्णु) वक्त्रान्तरे च ताम्।
तां पुनर्गुरुवक्त्रे तु योययद्देशिकोत्तमः।१३८
सहेवात्मना शक्ति वेधयेत्परमेश्वरे।
गुर्वाज्ञया छिन्नपाशस्तदा शिष्यः पतेद्भुवि।१३९
संजातदिव्यबोधोऽसौ सर्वं विदन्ति तत्क्षणात्।
साक्षाच्छिवोभवत्येष नात्र कार्यं विचारणा।१४०
एषा वेधमयी दीक्षा (१) सर्वसंवित्प्रदायिनी।
क्रमाच्चतुर्विधा दीक्षा तत्रोऽस्मिन्सक्ष्यगीरिता।१४१
अथात्र होमद्रव्याणां प्रमाणमभिधीयते।
कर्षमात्रं घृत होमे शुक्तिमात्रं पय स्मृतम्।१४२

उन्मनी में समायोजित करके और उसको विष्णु के मुख के अन्दर और फिर गुरु के मुख में उसको देशिक योजित करे।१३८। इस तरह से आत्मा के सहित ही शक्ति का परमेश्वर में वेधन करना चाहिए। गुरु की आज्ञा से उस समय में पाशों का छेदन कर देने वाला शिष्य भूमि में पतन करे।१३९। इसको दिव्य बोध उत्पन्न हो जाता है और यह उसी क्षण में सब कुछ प्राप्ति कर लिया करता है। यह फिर साक्षात् शिव हो जाता है—इसमें कुछ भी विचारणा नहीं है। अर्थात् लेश मात्र भी संशय नहीं है।१४०। यह वेधमयी दीक्षा होती है जो सम्पूर्ण संवित् के प्रदान करने वाली है। क्रम से चार प्रकार की दीक्षा इस तन्त्र में भली भाँति बतला दी गयी है।१४१। उसी वहाँ पर

होम के द्रव्यों का प्रमाण कहा जाता है। होममें एक कर्ष तो घृत होना चाहिए और एक शुक्ति प्रमाण वाला पय बताया गया है।१४२।

उक्तानि पञ्चव्यानि तत्समानि मनीषिभिः।
तत्समे मधुदुग्धान्कमक्षमात्रमुदाहृतम् ।१४३
दधि प्रसृतिमात्रं स्याल्लाजाः स्युर्मुष्टिसंमिताः।
पृथुकास्तत्प्रमाणः स्युः सक्तवोऽपि तथोदिताः।१४५
गुडं पलार्द्धमानं स्याच्छर्कराऽपि तथामता।
ग्रासार्द्धं चरुमानं स्यादिक्षुः पर्वावधिर्मतः।१४५
एकैकं पत्रपुष्पाणि तथाऽपूपानि कल्पयेत्।
कदलीफलनारङ्गफलान्येकैकशोविदुः।१४६
मातुलिङ्गं चतुः खण्डं पनसं दशधा कृतम्।
अष्टधा नारिकेलानि खण्डे तानि विदुर्बुधाः।१४७

मनीषियों के द्वारा उनके समान ही पञ्च गव्य कहे गये हैं। उसके समान मधु-दुग्धान्न अक्षमात्र बताया गया है।१४ ।। दधि एक प्रसृति परिमाण वाला होना चाहिए तथा लाजा मुष्टि के प्रमाण वाले होवे। उसी के परिमाण वाले पृथुक होवें और उसी भाँति सक्तु होने चाहिए जो बताये गये हैं।१४४। गुड़ आधे पलके परिमाण वाला होवे और उसी भाँति शर्करा मानी गई है। चरु का मान ग्रास का आधा होवे और ईख एक पर्व की अवधि से अन्वित होना चाहिए—ऐसा ही माना गया है।१४५। एक-एक पत्र और पुष्प होवे उसी भाँति अपूर्वों (पूओं) की कल्पना करनी चाहिए। कदली के फल-नारङ्गी के फल एक-एक ही जानने चाहिए।१४६। मातुलिङ्ग का चतुर्थ खन्ड तथा पनस (कटहर) का दशवाँ खन्ड होना चाहिए। आठवाँ भाग नारियल का फल होवे। बुध पुरुष इनको खन्डों में ही समझ लेवे।१४७।

त्रिधा कृतं फलं विल्वं कपित्थं खण्डितं त्रिधा।
उर्वारुकफलं होमे चोदितं खण्डित त्रिधा।१४८

फलान्यन्या (न्येता) निःखन्डानि समिधः स्युर्दशांगुलाः ।
दूर्वात्रयं समुद्दिष्ट गुडूची चतुपङ्गुला ।१४६
व्रीहयो मुष्टिमात्राः स्युर्मुग्दमाषयवा अपि ।
तण्डुलाः स्युस्तदर्द्धांशाः, कोद्रवा मुष्टिसंमिताः ।१५०
गोधूमरक्तकमला विहिना मुष्टिमानतः ।
तिलाश्चुलुकमात्र,: स्युः सर्षपास्तत्प्रमाणकाः ।१५१
शुक्तिप्रमाणं लवणं मरीचान्येकविंशतिः ।
पुर्वदरमानः स्याद्रामठं तत्ममं स्मृतम् ।१५२

बिल्व के फल का तथा कपित्थ का फल का तीसरा खन्ड होना चाहिए। होम में उर्वारुक फल का भी तीसरा खन्ड बतलाया गया है। ।१४८। अन्य फलों के भी खन्ड ही ग्रहण करने चाहिए और समिधायें दश अंगुल के प्रमाण वाली होनी चाहिए। दूर्वा तीन बताई गई है और गुडूची (गिलोय) चार अंगुल परिमाण की होती है ।१४६। व्रीहि एक मुट्ठी भर होवे। मूंग और माष भी ऐसे ही होवे। उसके आधे अंश वाले सण्डुल होवे और को द्रवभी एक मुट्ठीभर होने चाहिए ।१५०। गोधूम (गेंहूँ) तथा रक्त कमल मुष्टि मात्र ही विहित किये गये हैं। तिल एक चुल्लू भर होवे और इसी परिमाण वाले सरसों के दाने होने चाहिए ।१५१। एक शुक्ति के परिमाण वाला लवण होवे और इक्कीस मिर्च होनी चाहिए, वदर के मान वाला गुरु तथा रामठ भी उसी के समान होवे। ऐसा कहा गया है ।१५२।

चन्दनागुरु-कर्पूर-कस्तूरी-कुङ्कुमानि च ।
तिन्तिडाबीजमानानि समुद्दिष्टानि देशिकैः ।१५३
वैश्यानरं स्थितं ध्यायेत्समिद्धोमेषु देशिकः ।
शयानभाज्यहोमेषु निषण्णं शेशवस्तुषु ।१५४
सधूमोऽग्निःशिरो ज्ञेयं निर्धूमेश्चक्षुरेवहि ।
ज्वलत् कृष्णो भवेत्कर्णः काष्ठमग्रे मनस्तथा ।१५५

प्रज्वलोऽग्निस्तथा जिह्वा एतदेवाग्निलक्षणम् ।
आस्यान्तर्जुहुयादग्नेर्विपश्चित्सर्वकर्मसु ।१५६
कर्णहोमे भवेद्व्याधिर्नेत्रेऽन्धत्वमुदीरितम् ।
नासिकायां मनः पीडा मस्तते धनसंक्षयः ।१५७

देशिकों के द्वारा चन्दन, अगुरु, कपूर कस्तूरी, कुंकुम और तिन्तिडीके बीजोंका परिमाण कहा गया है ।१५३। देशिकको समिधाओं के होमों में वैश्वानर को स्थित हुये का ध्यान करना चाहिए । आज्य के द्वारा होमों में शयन किये हुए और शेष वस्तुओं में निषण्ण हुए का ध्यान करे ।१५४। धूम के सहित अग्नि को शिर जानना चाहिए और निर्धूमको चक्षुजाने । जलता हुआ कृष्ण कर्ण होता है तथा काष्ठ अग्नि का मन होता है ।१५५। प्रज्वलित अग्नि जिह्वा है–यह ही अग्नि का लक्षण होता है । विद्वान् सभी कर्मों में अग्नि के मुख के अन्दर होम करे । कर्ण के होम में व्याधि होती है और नेत्र के होम में अन्धापन कहा गया है । नासिका के होम में पीड़त होती है और मस्तक के होम करने में धन का क्षय हुआ करता है ।१५६-१५७।

स्वर्णसिन्दूरबालाककुङ्कुमक्षौद्रसन्निभ· ।
सुवर्णरेतसोवर्णः शोभनः परिकीर्त्तितः ।१५८
वेरीत्रारिदहस्तीन्द्रस्वनिर्वह्नेःशुभावहा ।
नागचम्पकपुन्नागपाटला यूथिकानिभः ।१४९
पद्मेन्दीवरकल्हारसर्पिर्गुग्गुलुसन्निभः ।
पावकस्य शुभो गन्ध इत्युक्तं तन्त्रवेदिभिः ।१६०
प्रदक्षिणास्त्यक्तकम्पाश्छत्राभाः शिखिनः शिखाः ।
शुभदा यजमानस्य राज्यस्यापि विशेषत ।१६१
कुन्देन्दुधवलो धूमो वह्नेः प्रोक्तः शुभावहः ।
कृष्णः कृष्णगतेर्वर्णो यजमानं विनाशयेत् ।१६२

स्वर्ण, सिन्दूर, बालाक, कुंकुम और क्षौद्र के सदृश सुवर्ण रेत का वर्ण परम शोभन कीर्त्तित किया गया है ।१५८। वह्नि की ध्वनि

भेरी-मेघ और गजेन्द्र की-सी शुभ का आवाहन करने वाली हुआ करती है। नाग, चम्पा, पाटल और यूथिका के तुल्य, पदूम, इन्दीवर, कल्हार, घृत, गूगल के सदृश, पावक का गन्ध शुभ देने वाला होता है, ऐसा तन्त्र के ज्ञाताओं के द्वारा कहा गया है ।१५६-१६०। दक्षिण की ओर जाने वाली, कम्प से रहित, छत्र कों आभा वाली अग्नि की शिखा होतो है। यह यजमान को शुभ देने बाली है और विशेष रूप से राज्य का भी शुभ करने वाली होती है ।१६१। कुन्द और इन्दु के समान धवल वह्नि का धूम का आवाहन करने वाला कहा गया है। कृष्ण में गत कृष्ण वर्ण यजमान का विनाश करता है।१६२।

श्वेतोराष्ट्रं निहन्त्याशु वायसस्वरसन्निभः ।
खरस्वरसमोवह्नेर्ध्वनिः सर्वविनाशकृत् ।१६३
पूतिगन्धोहुतभुजोहोतुर्दुःखप्रदोभवेत् ।
छिन्नावर्तां शिखा कुर्यान्मृत्युं धनपरिक्षयम् ।१६४
शुकपक्षनिभो धूमः पारावतसमप्रभः ।
हानिं तुरगजासीनां गवां च कुरुतेऽचिरात् ।१६५
एवं विधेषु दोषेषु प्रायश्चित्ताय देशिकः ।
भूतेनाज्येन जुहुयात्पञ्चविंशति माहुतीः ।१६६

श्वेत वर्ण वाला धूम शीघ्र ही राष्ट्र का निहनन किया करता वायस के स्वर के समान और खर के स्वर के तुल्य ध्वनि सबका विनाश करने वाली हुआ करती है ।१६३। पूति गन्ध अग्नि का होता को दुःखप्रद होता है और अग्नि की छिन्नावर्त शिखा मृत्यु और धन का परिक्षय किया करती है।१६४। शुक्र के पंख या कबूतर का सा धूम अशुभ होता है। ऐसा धूम अश्व और गज आदि की हानि तथा गौओं को हानि अविलम्ब ही किया करता है।१६५। इस प्रकार के होने पर आचार्य प्रायश्चित करता है, जिसके लिए उसको मूल मन्त्र के द्वारा घृत से पच्चीस आहुतियाँ देनी चाहिए ।१६६।

——

षष्ठ पटल

अथ वर्णतनुं वक्ष्ये विश्वबोधविधायिनीम् ।
यस्यामनुपलब्धायां सर्वमेतज्जगज्जडम् ।१
ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्ठो गायत्रं छन्द ईरितम् ।
सरस्वती समाख्याता देवता देशिकोत्तमैः ।२
अक्लीवह्रस्वदीर्घान्तिर्नतैः षड्वर्गकैः क्रमात् ।
षडङ्गानि विधेयानि देशिकैर्जातिसंयुतम् ।३
पञ्चाशल्लिपिभिर्विमुक्तमुखदान्तो मध्यवक्षःस्थलां
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलाताीनतुङ्गस्तनीम् ।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढयकलश विद्यां च हस्ताम्बुजैः
विभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनाँ वाग्देवतामाश्रये ।४
ललाटमुखवृत्ताक्षिश्रुतिघ्राणेषु गण्डयोः ।
ओष्ठदन्तोत्तमाङ्गास्ये दोःपत्सन्ध्यग्रकेषु च ।५
पार्श्वयोः पृष्ठतो नाभो जठरे हृदयेंऽसके ।
ककुद्यंसे च हृत्पूर्वं पाणिपादयुगे तथा ।६
जठराननयोर्न्यस्येन्मातृकार्णान्यथाक्रमात् ।
त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रात्मकान्विदुः ।७

इसके अनन्तर वर्ण तनु अर्थात् मातृका का वर्णन करूँगा जो विश्व के बोध की कराने वाली होती है जिसके उपलब्ध न होने पर यह सम्पूर्ण जगत् जड़ होता है ।१। उत्तम आचार्यों ने इसका ऋषि ब्रह्मा–गायत्र छन्द कहा है । और सरस्वती देवी इसकी देवता कही गई है । ।२। आचार्यो को आक्लीव, ह्रस्व, दीर्घ अन्त वाले षड् वर्गों के द्वारा क्रम से जाति संयुत षट् अङ्ग करने चाहिए ।३। पचास लिपियों से विमुक्त मुख-दाँत और मध्य में वक्षः स्थल वाली, जो मस्तकमें बाँधे हुए देदीप्यमान चन्द्र की कला से संयुत है, जिसके कुच युग स्थूल और

समुच्च हैं, जिसके करकमलों में मुद्रा, अक्षमाला, सुधा से परिपूर्ण दो कलश और विद्या धारण किये हुए हैं, विशद प्रभा को धारण करती हुई और तीन नयनों से समन्वित वाग्देवता का मैं समाश्रय ग्रहण करता हूँ ।४। मातृका के वर्णों का क्रम से ललाट मुख, वृत्त, नेत्र, कान, नासिका, दोनों कपोल, ओष्ठ, दाँत, मस्तक, मुख, संधियों का अग्रभाग, दोनों पार्श्व, पृष्ठ-नाभि, उदर, हृदय, कन्धा, ककुद्यंस, हृत्पूर्ण, दोनों हाथ, दोनों चरण, जठर और आनन में न्यास करना चाहिए । तथा त्वचा, रुधिर, मांस मेद, अस्थि, शुक्र के स्वरूप वालों में भी न्यास करे ।५-७।

वादिहान्तान् न्यसेदात्मपरमज्ञानपूर्वकान् ।
दीक्षितः प्रोक्तमार्गेण न्यसेल्लक्ष समाहितः ।८
जपेत्तत्सख्यया विद्वानयुत मधुराप्लुतैः ।
विदधीत तिलैर्होमं मातृकामन्वह जपेत् ।६
व्योमेन्द्वौरसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केसर
पत्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णादित्रिवर्गं क्रमात् ।
आशास्वस्त्रिु लान्तलाङगलियुजा त्रोणापुरेणावतं
पद्मं कल्पित्रमत्र यूजयतु तां वर्णात्मिकां देवताम् ।१०
आधारशक्तिमारभ्य पोठशक्त्यन्तमर्चयेत् ।
मेधा प्रज्ञा विद्या श्रीर्वृतिस्मृतिबुद्धयः ।११
विद्येश्वरीति सम्प्रोक्ता भारत्या नव शक्तयः ।
वर्णाब्जेनासनं दद्यान्मर्तिम्मलेन कल्पयेत् ।१२
आवाह्य पजयेत्तस्यां देवीमावरणैः सह ।
अङ्गैरावरणं पूर्वं द्वितीयं युग्मशः स्वरैः ।१३
अष्टवर्गैस्तृतीयं स्यात्तच्छक्तिभिरनन्तरम् ।
पञ्चमं मातृभिः प्रोक्तं षष्टं लोकेश्वरैः स्मृतम् ।१४

लकार से आदि हकार के अन्त तक आत्म परम ज्ञान पूर्वकों का दीक्षित व्यक्ति न्यास करे । और परम समाहित होकर एक लाख जप

करना चाहिए। जाप की संख्या से विद्वान् को दश सहस्र मधुर से आप्लुत तिलों के द्वारा होम करे और मातृका का प्रतिदिन जप करना चाहिये।८-९। व्योम, हकार, इन्दु, क्ष:ओ, स्वरूप, रसनार्ण, विसर्ग, से युक्त कर्णिका से संयुत स्वरों के द्वन्दों के स्फुरित केसरों से समन्वित, पत्रों में अन्दर रहने वाले पाँच कादि वर्ग और यज्ञल आदि त्रिवर्ण को क्रम से दिशाओं में लान्त लाङ्गलि से युक्त भूपुर से समावृत एक पद्म की कल्पना करे और उस वर्णो के स्वरूप वाले देवता का पूजन करना चाहिये।१०। आधार शक्ति से आरम्भ करके पीठ शक्ति के अवसाम पर्यन्त अभ्यर्चन करना चाहिए। मेधा, प्रज्ञा, प्रभा, विधा, श्री, धृति, स्मृति, बुद्ध, विद्योश्वरी ये भारती की नौ शक्तियाँ कही गई हैं। वर्णाब्ज से आसन अर्पित करे और मूल मन्त्र के द्वारा मूर्ति की कल्पना करनी चाहिए।११-१२। उसमें दवी का आवाहन करके फिर आवरणों के सहित देवी का अर्चन करे। पूर्व आवरण अङ्गी के द्वारा होता है और दूसरा दो-दो स्वरों के द्वारा हुआ करता है।१३। आठ वर्गो से तीसरा आवरण होता है और शक्तियों के द्वारा चौथा आवरण हुआ करता है। पाँचवाँ आवरण मातृकाओं से होता है और छठवाँ लोकेश्वरों के द्वारा हुआ करता है।१४।

लोकपालायुधैः प्रोक्तं वज्राद्यैः सप्तमं ततः।
विधिनानेन वर्णेशीमुपचारैः प्रपूजयेत्।१५
व्यापिनी लापिनी पश्चात्पाविनी क्लेदिनी तथा।
धारिणी मालिनी भूयो हसिनी शङ्खिनी स्मृता ॥१६
शुभ्राः पत्रेषु सम्पूज्या धृताक्षजुणपुस्तकाः।
ब्राह्मी माहेश्वरी भूयः कौमारी वैष्णवी मता।१७
वाराह्यनन्तरेन्द्राणी चामुण्डा सप्तमी मता।
अष्टमी स्वान्महालक्ष्मीः प्रोक्तास्यु विश्वमातरः।१८
दण्डं कमण्डलुं पश्चादक्षसूत्रमथाभयम्।
विभ्रती कनकच्छाया ब्राह्मी कृष्णाजिनोज्ज्वला।१९

शूल परश्वध क्षुद्र दुन्दुभि नृकरोटिकाम् ।
वहन्ती हिमशङ्काशा ध्येया माहेश्वरी शुभा ।२०
अङ्कुश दण्डखट्वाङ्गौ पाश च दधती करैः ।
बन्धूकपुष्पसङ्काशा कौमारी कामदायिनी ।२१

वज्र रादि लोकपालों के आयुधों के द्वारा सातवाँ आवरण कहा गया है। इसी विधि से उपचारों के द्वारा वर्णेशी का पूजन करना चाहिए ।१५ । व्यापिनी, नागिनी, पाविसी, क्लेदिनी धारिणी मालिनी, हंसिनी, शंखिनी बताई गई हैं। १६। इन परम शुभ्रों का जो अक्षों की माला और पुस्तक को धारण किये हैं पत्रों में पूजनी चाहिए । फिर ब्राह्मी, महेश्वरी कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और सातवीं चामुन्डा मानी गई हैं ।१७। आठवी महालक्ष्मी है, ये विश्व की माताऐं कही गई हैं।१८। अब इनका स्वरूप बतलाया जाता है। ब्राह्मी सुवर्ण की कान्ति से युक्त है और कृष्ण अजिन से समुज्ज्वला है। यह अपने करकमलों के द्वारा दन्ड, कमन्डलु, अक्षमाला और अभयदान को धारण करने वाली है।१९। परम शुभ माहेश्वरी का फिर ध्यान करना चाहिए जो शूल, परशु, वधा क्षुद्र दुन्दुभि, नृकरोटिका को धारण करती हुई है और हिम के समान स्वरूप वाली हैं । २० । कौमारी कामनाओं के प्रदान करने वाली है और बन्धूक के पुष्प के सदृश वर्ण वाली हैं। यह अपने करों में अंकुश, खट्वाङ्ग, दन्ड और पाश को धारण करने वाली है।२१।

चक्रं घन्टां कपालं च शंख च दधता करैः ।
तमालश्यामला ध्येया वैष्णवी विभ्रमोज्ज्वला ।२२
मुशलं करवाल च खेटकं दधती हलम् ।
करैश्चतुर्भिर्वाराही ध्येया कालघनच्छविः ।२३
अंकुशं तोमरं विद्युत्कुलिशं बिभ्रती करैः ।
इन्द्रनीलनिभेन्द्राणी ध्येया सर्वसमृद्धिदा ।२४

शूलं कृपाणं नृशिर कपालं दघती करः ।
मुण्डस्रड् मण्डिता ध्येया चामुण्डा रक्तविग्रहा ।२५
अक्षस्रजं बीजकपूरं कपालं पंकजं करै ।
वहन्ती हेनसंङ्काशा महालक्ष्मीः समीरिता ।२६

वैष्णवी तमाल के समान श्यामल वर्ण से सयुत है और विभ्रमों के द्वारा परम उज्ज्वल हैं ऐसे ही स्वरूप वाली का ध्यान करना चाहिए। वह चक्र-घन्टा-कपाल और शंख को कर कमलों में धारण करने वाली है ।२२। वाराही काले मेघ के तुल्य छवि वाली है-ऐसा ही ध्यान करे। यह अपने चार कर कमलों द्वारा मुशलकर बाल-खेटक और हल को धारण करने वाली है ।२३। इन्द्रनील मणि के सदृश समस्त समृद्धियों के प्रदान करने वाली इन्द्राणी का ध्यान करना चाहिए जो करों में अंकुश, तोमर, विद्युत और कुलिश को धारण करने वाली है ।२४। रक्त शरीर बाली ओर मुन्डस्रक् सं मन्डित चामुन्डा देवी का ध्यान करना चाहिए, जो शूल, कृपाण, नरमुन्ड, और कपालको करों में धारण करने वाली है। महालक्ष्मी का स्वरूप सुवर्ण के सदृश बताया गया है जो अपने कर-कमलोंमें अक्षमाला, बीजपूर-कपाल और पंकज को धारण करने वाली है ।२५-२६।

पूजयेन्मातृकामित्थं नित्य साधकसत्तमः ।
न्यसेत्यगर्गान्वितां सृष्टया ध्यात्वा देवी यथाविधि ।२७
सर्गबिन्द्वन्तिका न्यस्येत् डार्णाद्यां स्थितिवर्त्मना ।
विद्यात्पूर्वोदितान्विद्वानृष्यादीनङ्गसंयुतान् ।२८
ध्यायेद्वर्णेश्वरीमत्र वल्लभेन समन्विताम् ।
सिन्दूरकान्तिममिताभरणांत्रिद्यत्रांविद्याक्षसूत्रमृगपोतवरंदधानाम्।
पार्श्वस्थितां भगवतीमपि काञ्चनाङ्गीध्यायेत्कराव्जधृतपुस्तकवर्ण मालाम् ।२९
अभ्यर्चनादिक सर्वं वित्ध्यात्पूर्वत्मंमना ।
बिन्दुयुक्तामिमां न्यस्येत्संहृत्याप्रतिलोमतः ।३०

विद्यात्पूर्वोदितान्विद्धानृष्यादीनङ्गसंयुतान् ।
ध्येयावर्णमयो पोठे देवी वाग्ल्लभा शिवा ।३१
अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटङ्कं
विद्यां करैरविरतं दधती त्रिनेत्राम् ।
अर्द्धेन्दुमौलिमरूणामरविन्दवासां
वर्णेश्वरी प्रणमतः स्तनभीरनम्राम् ।३२
न्यासार्चनादिकं सर्वं कुर्यात्पूर्वोक्तवर्त्मना
तारोत्थाभिः कलभिस्तां न्यसेत्साधकसत्तमः ।३३

साधना करने वालों में श्रेष्ठ को चाहिए कि वह नित्य ही इसी रीति से मातृकाओं का अभ्यर्चन करे। देवी का विधि के अनुसार ध्यान करके सृष्टि से सर्गान्विता का न्यास करे।२७। सर्ग और बिन्दु जिसके अन्त में है तथा स्थिति के मार्ग से डकार वर्ण की आदि वाली है। विद्वान् को चाहिए कि वह पूर्व में कथित अङ्गोंसे समन्वित-ऋषि आदि का ज्ञान प्राप्त करें।२८। अपने बल्लभ से समन्वित वर्णेश्वरी का यहाँ पर ध्यान करना चाहिए। अब ध्यान बतलाया जाता है, सिन्दूर के समान वर्ण संयुत, अपरिमित आभूषणों से विभूषित, तीन नेत्रोंसे युक्त, विधा, अक्षमाला और मृगपोत तथा वरदान का धारण करने वाली, करकमलों में पुस्तक और वर्णमाला को रखने वाली, पार्श्व में विराजमान, काञ्चन के तुल्य अङ्गों वाली भगवती का भी ध्यान करे।२९। पूर्वोक्त मार्ग के द्वारा ही अभ्यर्चन आदि सबको करना चाहिए अप्रतिलोम से संहार करके बिन्दु से अन्विती का न्यास करे।३०। विद्वान् को उचित है कि पूर्व में वर्णित अङ्गों से समन्वित ऋषि आदि का ज्ञान प्राप्त करे। वर्णों से परिपूर्ण पीठ में वाग्वल्लभा शिवा देवी का ध्यान करका चाहिए।३१। ध्यान-अपने करकमलोंके द्वारा अक्षमाला, मृगशिशु, उदग्र टङ्क और विद्या के निरन्तर धारण करने वाली, तीन नेत्रों से युक्त, मस्तक में अर्ध चन्द्र को रखती हुई, अरविन्दोंके वस्त्र से युक्त अरुण वर्ण वाली, और पीन स्तनों के भार से नीचे की ओर झुकी हुई

वर्णेश्वरी को प्रणाम करिये ।३२। न्यास और यजन प्रभृति सर्व पूर्व में कथित मार्ग द्वारा करना चाहिए । श्रेष्ठ साधक तारोत्थ कलाओं से उसका न्यास करे ।३३।

वर्णाद्यास्तारसंयुक्ता न्यस्तव्यास्ता नमोन्विताः ।
ऋषिः प्रजापतिश्छन्दोगायत्रं समुदाहृतम्। ३४
कलात्मा वर्णजननी देवता शारदा स्मृता ।
ह्रस्वदीर्घान्तरगतैः षडङ्गं प्रणवैः स्मृतम् ।३५
हस्तैः पद्मं रथाङ्गं गुणमथहरिणं पुस्तकं वर्णमालां टङ्कं ।
शुभ्रं कपालं वरममृतलसद्धेमकुम्भं वहन्तीम् ।
मुक्ता विद्युत्पयोदस्फटिकनवजपाबन्धक पञ्चवक्त्रैः ।
स्त्र्यक्षैर्वक्षोजनम्रां सकलशशिनिभां शारदां ता नमामि ।३६
अर्चयेदुक्तमार्गेण शारदां सर्वकामदाम् ।
तात्तीयपूर्वां तां न्यस्यन्नमोऽन्तां रुद्रसंयुताम् ।३७
सधातुप्राणशक्त्यात्मयुक्तावादिषु ते क्रमात् ।
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्तिगायत्रं छन्दईरितम् ।३८
अर्धनारीश्वरः प्रोक्तो देवता तन्त्रवेदिभिः ।
हसा षड्दीर्घयुक्तेन कुर्यादङ्गानि देशिकः ।३९

अकारादि वर्णो के आदि वाली प्रणवसे युक्त तथा नमः—इस पद से समन्वित उनका न्यास करना चाहिये । इनका ऋषि प्रजापति है और छन्द गायत्र कहा गया है ।३४। कला के स्वरूप वाली, वर्णों को जनन करने वाली शारदाको इसका देवता बताया गया है । ह्रस्व और दीर्घ के अन्तर में स्थित प्रणवों के द्वारा षडङ्ग कहा गया है ।३५। अव ध्यान बतलाया जाता है—अपने कराम्बुजों के द्वारा पद्म, रथाङ्ग (चक्र)-गुण (अक्षमाला), हरिण, पुस्तक, वर्णमाला, टंक, शुभ्र कपाल-वरदान, अमृत से शोभित हेम के कुम्भ को वहन करती हुई, मुक्ता विद्युत पयोद, स्फटिक, नवीन जपा, बन्धूक पाँच मुखोंसे शोभित, तीन

नेत्रों से समन्वित-वक्षोज (स्तन) के भार से विनम्र-पूर्ण, चन्द्र के तुल्य उस शारदा देवी को प्रणाम करता हूँ ।२६। समस्त कामनाओं के प्रदान करने वाली शारदा देवी का वर्णित मार्ग द्वारा अर्चन करना चाहिए। जिसके पूर्व में तार्त्तीय (भैरव का एक भेद) है और जिसके अन्त में 'नम:'—यह पद है ऐसी रुद्र संयुता उसका न्यास करे ।३७। वे रुद्र धातु अर्थात् त्वचा, रुधिर, माँस, वेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र-प्राण शक्ति और आत्मा यकारादि व्यापक देशों में क्रम से जानने चाहिए। इसका ऋषि दक्षिणा मूर्ति है और छन्द गायत्र कहा गया है ।३८। इसका देवता तन्त्र शास्त्र के ज्ञाताओं द्वारा अर्ध नारीश्वर बताये गये हैं। देशिक को चाहिए कि वह छः अर्थात् आ, ई, ऊ, ऐ, औ, अः दीर्घ युक्त छैः से हकार तथा सकार से अंगों को करे ।३९।

बन्धूककाञ्चननिभं रुचिराक्षमालां
पाशाङ्कुशौ च वरद निजवाहुदण्डै।
विभ्राणमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्र
मर्द्धाम्बिकेयमनिशं वपुराश्रयामः ॥४०
पूर्वोक्तेनैव मार्गेण पूजतेत्तं यथाविधि।
स्मराद्यां मातृकां न्यस्येत्केशवादिनमोन्वितामू ॥४१
साधातुप्राणशक्त्यातमयुक्ता यादिषु विष्णवः।
ऋषिः प्रजापतिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ।४२
अर्द्ध लक्ष्मीर्हरिः साक्षाद्देवतात्र समीरिता।
दीर्घयुक्तादिबीजेन षडङ्गानि समाचरेत् ॥४३
हस्तैर्बिभत्सरसिजगदाशंखचक्राणि विद्या-
पद्मादशौ कनककलशं मेघविद्युद्विलासम्।
वामोत्तुङ्गस्तनमविरलाकल्पमाश्लेषलोभा-
देकीभूतं वपुरवतु वः पुण्डरीकाक्षलक्ष्योः ॥४४

अव ध्यान बताया जाता है—बन्धूक और सुवर्ण के तुल्य, अपने बहु-दण्डों के द्वारा रुचिर अक्षमाला, पाश, अंकुश और वरदान को धारण

करने वाले चन्द्र खण्ड के आभरण से भूषित, तीन नेत्र धारी, ऐसे अर्धा-म्बिकेय वपु का होम समाश्रय ग्रहण करते हैं ।४०। पूर्व में बतलाते हुए मार्ग के ही द्वारा विधि के सहित उनका अर्चन करना चाहिए । जिसके आदि में केशव हो और नमः इस पद से समन्वित हो ऐसी स्मराद्य मातृका का कर न्यास करना चाहिए ।४१। वह धातुऐं, त्वचा स्रक् मांसादि, प्राण शक्ति और आत्मा से युक्त मकारादि में क्रम से हैं। इसका ऋषि प्रजापति और छन्द गायत्र कहा गया है ।४२। अर्ध लक्ष्मी हरि को यहाँ पर साक्षात देवता को कहा गया है। दीर्घ छैः हैं जो अभी पूर्व में बताये गए हैं । इनसे युक्त आदि बीज से षट् अंगों का समाचरण करना चाहिए ।३३। अब ध्यान हैं—अपने करों से सरसिज, गदा, शंख, विद्या परम-आदर्श (दर्पण)—मेघ की विद्युत के विलास से संयुक्त सुवर्ण निर्मित कलशको धारण करने वाले, वाम भागमें अविरला कल्प उत्तंग स्तन के आश्लेश के लोभ से ऐकीभूत पुण्डरीकाक्ष और लक्ष्मी का वपु रक्षा करे ।४४।

अत्रार्चनादिकं सर्व प्राग्वन्मंत्री समाचरेत् ।
शक्तिपूर्वां तनौ न्यस्येन्मातृकां मन्त्रवित्तमः ।४५
ऋषिः शक्तिः स्मृतं छन्दोगायत्रं देवता बुधैः ।
संप्रोक्ता विश्वजननी सर्वसौभाग्यदायिनी ।४६
दीर्घाद्धेन्दुयुजाङ्गानि कुर्यान्मायात्मना बुधः ।४७
उद्यत्कोठिदिवाकरप्रतिभरोत्तुङ्गोरुपीनस्तनीं
वद्धार्द्धेन्दुकिरीटहाररसनामञ्जीर संशोभिता ।
बिभ्राणा करपंकजैर्जपवटीं पाशाङ्कुशौ पुस्तकं
दिश्याद्वो जगदीश्वरी त्रिनयना पद्म निषण्णा सुखम् ।।४८
पुरोदितेन विधिना देवीमन्वहमर्चयेत् ।
न्यसेच्छ्रबीजसंपन्नां मातृकां विधिना तनौ ।४९
ऋषिर्भृगुः स्मृतं छंदो गायत्रं, देवता स्मृता ।
समस्तसम्पदामादिर्जगतां नायिका बुधैः ।५०
प्रावप्रस्तुतेन वीजेन कुर्यादङ्गानि साधकः ।५१

यहाँ पर मन्त्रधारी व्यक्ति अर्चन आदि सब कर्म का पूर्व की ही भाँति समाचरण करे। मन्त्र वेत्ताओं में श्रेष्ठ पुरुष तनु में पूर्व में शक्ति से समन्वित मातृका का न्यास करे।४५। बुधों के द्वारा इसका ऋषि शक्ति, गायत्र छन्द और देवता सब प्रकार के सौभाग्यों का प्रदान करने वाली विश्व जननी को कहा गया है।४६। बुध पुरुष छँ दीर्घ जो कि अभी पूर्व कहे गये हैं—अर्धेन्दु-विन्दु, इससे युक्त माया के स्वरूप वाले बीज से अंगों का समाचरण करे।४७। अब ध्यान कहा जाता है—उगते हुए करोड़ों दिवाकरों के समान प्रतिभरा, ऊँचे और पीन स्तनों से शोभित कर कमलों के द्वारा जपवटी, पाश, अंकुश, पुस्तक को धारण करने वाली, तीन नयनों से समन्वित, पद्मासन पर सुखपूर्वक विराजमान जगदीश्वरी आपका कल्याण करे।४८। पूर्वमें वर्णित विधि-विधान से ही प्रतिदिन देवी का अभ्यर्चन करना चाहिए। और विधि के साथ ही तनु में श्रीबीज से सुसम्पन्ना मातृका का न्यास करे।४९। इसका ऋषि भृगु-छन्द गायत्र और इसका देवता बुधों के द्वारा सम्पूर्ण सम्पदाओं की आदि जगतों की नायिका कही गयी है।५०। साधक पूर्व में प्रस्तुत बीज के द्वारा अङ्गों को करे।५१।

विद्युद्दामसमप्रभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुभिर्गजैः।
शुण्डादण्डसमुद्धृतामृतघटैरासिच्यमानामिमाम्।५१
विभ्राणां करपङ्कजैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकम्।
भास्वद्रत्नसमुज्ज्वलां कुचनतां ध्यायेज्जगत्स्वामिनीम्।५२
आराधयेदिमां प्रोक्तावर्त्मना कुसुमादिभिः।
न्यसेत्स्कराद्यां वपुषि मातृकां मङ्गलप्रदाम्।५३
ऋषिः संमोहनः प्रोक्तश्छन्दो गायत्रमुच्यते।
देवता मंत्रिभिः प्रोक्ता समस्तजननी परा।५४
स्मरेण दीर्घयुक्तेन विदध्यादङ्गकल्पनम्।५५
बालार्ककोटिरुचिरां स्फटिकाक्षमालां
कोदण्डमिक्षुजनितं स्मरपञ्चबाणान्॥

विद्यां च हस्तकमलैर्दधतीं त्रिनेत्रां
ध्यायेत्समस्तजननीं नवचन्द्रचूडाम् ।।५६

ध्यान—विद्युल्लता के सदृश प्रभा से अन्विता, हिमवान् पर्वत के समान अर्थात् विशाल चार गजों के द्वारा सूड़ों के द्वारा समुद्धृत अमृत के कलशों से अभिषिश्चिन की गयी, कर कमलों से जपवटी, दो परम पुस्तक को धारण करने वाली, देदीप्यमान रत्नों के समुदाय से समुज्ज्वल, स्थूल कुचों के भार से नीचे की ओर झुकी हुई जगतों की स्वामिनी का ध्यान करना चाहिए ।५२। पूर्व में वर्णन की हुई विधि से कुसुम आदि उपचारों के द्वारा इनकी आराधना करनी चाहिए । समराद्या-मंगलों की प्रदात्री मातृका शरीर में न्यास करे ।५३। इसका ऋषि सम्मोहन और छन्द गायत्र कहा जाता है । मन्त्र धारियों ने इसका देवता परा समस्त जननी बताया है ।५४। दीर्घों से युक्त स्मर से अंगों की कल्पना करनी चाहिए ।५५। ध्यान कहा जाता है—करोड़ों बाल सूर्यों के समान रुचिरा, हस्त कमलों के द्वारा स्फटिकाक्षों की माला, इक्षुजनित कोदण्ड स्मर (कामदेव) के पाँच वाण और विद्या को धारण करनी वाली, तीन नेत्रों से अन्वित, नवीन चन्द्र को चूड़ा में रखने वाली समस्तों को जन्म देने वाली का ध्यान करना चाहिए ।५६।

अर्चनाविक्रियाः सर्वाः प्रोक्ताः पूर्वविधानतः ।
शक्तिश्रीकामबीजाद्याँ देवी वर्णतनुं भजेत् ।५७
ऋषिः पूर्वोदितश्छन्दोगायत्रं, देवता बुधैः ।
सम्मोहनी समुद्दिष्टा सर्वलोकवशङ्करी ।५८
आवर्तितैस्त्रिभिर्बीजैः षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ।।५६
ध्यायेयमक्षवलयेक्षुशरासपाशान् पद्मद्वयाङ्कुशशरान्नबपुस्तकञ्च।
आविभ्रतीं निजकरैररुणां कुचार्तां संमोहनीं त्रिनयनां तरुणेन्दु-
चूडाम् ।६०
यजेदावरणैः सार्द्धमुमचारैः सुशोभनाम् ।
प्रपञ्चयाग वक्ष्यामि सच्चिदानन्दसिद्धिदम् ।६१

वेदादिशक्तिरजपा परमात्ममहामनुः ।
वह्नेर्जाया च कथिताः पञ्चमन्त्राः शुभावहाः ।६२

तारशक्त्यादिकां न्यस्येदजपाऽऽत्मद्विठान्तिकाम ।
मातृकामुक्तमार्गेण सृष्ट्या देहे विधानवित् ।।६३

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टश्छन्दो गायत्रमीरितम् ।
समस्तवर्णसंव्याप्तं परं तेजोऽस्य देवता ।।६४

अर्चन आदि की पूर्ण क्रिया सभी पूर्व विधान से कही गयी है । शक्ति,श्री, काम बीजाद्या, वर्ण तनु वाली देवी का ध्यान करना चाहिये। ।५७। बुधों के द्वारा ऋषि पूर्व में कहा गया है । छन्द इस । गायत्र होता है और इसका देवता सब लोकों को वश में करने वाली सम्मोहनी बताया गया है ।५८। अवर्तित तीन बीजों से षडङ्गों की कल्पना करनी चाहिए ।५९। (ध्यान) अपने कर कमलों के द्वारा अक्ष वलय, इक्षु,धनुष, पाश, दो पद्म, अंकुश, शर, नव पुस्तक को धारण करने वाली, अरुण वर्ण वाली, पीन एवं उत्तङ्ग कुच युग के भार से पीड़ित, तीन नयनों की धारिणी, तरुण चन्द्र को अपनी चूड़ा में रखने वाली सम्मोहनी का ध्यान करता हूँ ।६०' उपचारों के द्वारा आवरणों के सहित सुशोभना का अभ्यर्चन करना चाहिए । अब प्रपञ्चयाग के विषय में बतलाया जाएगा जो सच्चिदानन्द की सिद्धि के प्रदान करने वाला होता है । वेदादि प्रणव, शक्ति, अजपा-हन्स, परमात्मा का महामन्त्र–सोऽहम्, वह्नि की जाया, स्वाहा के पाँच मन्त्र परम शुभके आवाहन करने वाले कहे गये हैं ।६१।६२। आत्मा-परमात्मा का मन्त्र, अजपा पूर्व में अभी बताया गया है, और अन्त में दो प्रकार वाली अर्थात् द्वन्द्व इस रूप वाली तारशक्ति आदिक का न्यास करे । विधान के ज्ञान रखने वाला पुरुष देह में सृजन से कथित मार्ग के द्वारा मातृका न्यास करे । इसका ऋषि ब्रह्मा कहे गए हैं और छन्द गायत्र बताया गया है । समस्त वर्णों में भली भाँति व्याप्त परम तेज ही इसका देवता होता है ।६३।६४।

स्वाहाद्यैः पञ्चमनुभिः पञ्चाङ्गनि प्रकल्पयेत् ।
अस्त्रं दिक्षु बुधः कुर्याद्भूयो हरिहराक्षरैः ।६५
तारा दिपञ्चमनुभिः परिचीयमानं
मानैरगम्यमनिशं जगदेकमूलम् ।
सच्चित्समस्तगमनश्वरमच्युतं तत्तेजः
परम्भजत सान्द्रसुधाम्बुराशिम् ।।६६
पञ्चभूतमया वर्णा वर्गेभ्यः प्रागुदीरिताः ।
तस्माज ज्ञानेन्द्रियात्मानः प्रपञ्च मन्मयं विदुः ।६७
देहोऽपि तादृशस्तस्मिन्न्यसेद्वर्णान्विलोमतः ।
तत्तत्स्थानयुतान्मत्री जुहुयात् परतेजसि ।६८
एवं वर्णमयं होमं कृत्वा दिव्यतनुर्भभेत् ।
न्यस्य मन्त्री यथान्यायं देहे विश्वस्य मातरम् ।६९
जपेन्मन्त्रान्भजेद्देवान्यजेदग्निमनन्यधीः ।
द्रव्यैश्च जुहुयादग्नौ मन्त्रवित्तन्त्रचोदितैः ।७०

स्वाहा आदि पाँच मन्त्रों के द्वारा पांच अंकों की कल्पना करनी चाहिए । बुध पुरुष अस्त्र को दिशाओं में करे और पुनः हरिहर अक्षरों के द्वारा करना चाहिए । ध्यान बतलाया जाता है—तारा आदि पाँच मन्त्रों के द्वारा परिचीयमान-मन्त्रों के द्वारा अगम्य-निरन्तर जगतों का एकमात्र मूल-सच्चित् समस्त में गमन करने वाले-अनश्वर अर्थात् नित्य एवं नाश रहित-अच्युत-सान्द्र (सघन) सुधा का महा सागर उस परम तेज का सेवन करो ।६५।६६। वर्ण पाँच भूतों के स्वरूप वाले होते हैं । जो पूर्व में ही वर्गों के द्वारा कहे गए हैं । इस कारण से ज्ञानेन्द्रियों के स्वरूप वाले प्रपंच को तन्मय कहा करते हैं ।६७। यह देह भी ठीक उसी भाँति का होता है विलोमसे वर्णों का न्यास करना चाहिए । मन्त्रधारी उस-उस स्थान से युक्तों का पर तेज में हवन करे ।६८। इसी रीति में वर्णों के स्वरूप वाले होम को करके होम करने वाला दिव्य शरीर से युक्त हो जाया करता है । मन्त्र को धारण करने वाला पुरुष न्याय के

अनुसार विश्व की माता का देह में न्यास करे ।६९। अनन्यधी वाले को चाहिए कि वह मन्त्रों का जप करे—देवगणों का सेवन करे और उसको अग्नियों का यजन करना चाहिए । मन्त्रों के ज्ञान रखने वाले पुरुष को तन्त्र ग्रन्थों में बताये हुए द्रव्यों के द्वारा अग्नि में हवन करना चाहिए ।७०।

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षन्यग्रोधसमिधस्तिलाः ।
सिद्धार्थपायसाज्यानि द्रव्याण्यष्टौ विदुर्बुधाः ।७१
अमीभिर्जुहुयाल्लक्षं तदर्द्धं वा समाहितः ।
सर्वान्कामानवाप्नोति परां सिद्धिं च विन्दति ।७२
एभिरर्कसहस्राणि हुत्वा मन्त्री विनाशयेत् ।
रिपूःक्षुद्रग्रहान्भूतान् ज्वरान्छपांञ्च पन्नगान् ।७३
मन्त्राणामयथावृत्तिप्रतिपाद्यसमुद्भवान् ।
विकारान्नशयेदाशु होमोऽयं समुदीरितः ।७४
एभिस्त्रिमधुरोपेतै जुंहुयाल्लक्षमानतः ।
अचिरादेव स सवेत्साक्षाद्भूमिपुरन्दरः ।७५

बुधजन हवन करने के लिए आठ द्रव्यों को बतलाते हैं—पीतल, गूलर, पाकड़ वट की समिधायें, तिल सिद्धार्थ, पायस और घृत ये आठ हैं ।७१। इन्हीं उक्त द्रव्योंके द्वारा एक लाख आहुतियाँ देनी चाहिए । अथवा परम सावधान होकर उसका आधा भाग अर्थात् पचास हजार आहुतियाँ देवे । ऐसा होम करने वाला पुरुष अपनी सभी मनोवञ्छित कामनाओं की प्राप्ति किया करता है और उसको परासिद्धि प्राप्त हो जाया करती है ।७२। इनके ही द्वारा बारह सहस्र आहुतियाँ देकर मन्त्र धारी शत्रुओं को, क्षुद्रग्रहों को, भूतों को ज्वरों को, शापों को, पलगों को विनष्ट कर दिया करता है ।७३। मन्त्रों की अथवा वृत्ति की प्रति॰ पत्ति से समुत्पन्न विकारों को बहुत ही शीघ्र यह होम नाश कर दिया करता है—ऐसा ही इसको कहा गया गया है ।७४। तीन मधुरों से उपेत इनके द्वारा एक लाख प्रमाण वाली आहुतियाँ देवे तो वह होम

कर्त्ता पुरुष अविलम्ब ही थोड़े समय में साक्षात् भू मण्डल का इन्द्र हो जाया करता है ।७५

अमीभिः साधको हुत्वा वश्यादीनापि साधयेत् ।
हुत्वा लक्षं तिलैः शुद्धै मुच्यते सर्वपातकैः ।७६
पायसान्नेव जुहूयान्मत्री सर्वसमृद्धगे ।
पद्मानां लक्षहोमेन महतीं श्रियमाप्नुयात् ।७७
घृतेन जुहूयाल्लक्षं प्राप्नुयात् कीत्तिमुत्तमाम् ।
जातीकुसुमहोमेन सर्वलोकं वशं नयेत् ।७८
संशोधितैस्त्रिमध्वक्तै र्लवणैर्लक्षमानतः ।
जूहूयाद्गुलिकाः कृत्वा वशयेत्सर्वभञ्जसा ।७९
लिखित्वा पत्रखण्डेषु मातृकार्णान्पृथक् पृथक् ।
अभ्यर्च्य जुहूयाद्वह्नौ तत्पत्राक्षरमुच्चरन् ।८०
अभिचारहरो होमः सर्वरक्षाप्रसिद्धिदः ।
सहस्रहोमे वितरेद्दक्षिणान्निष्कमानतः ।८१

साधना करने वाला पुरुष इनके द्वारा हवन करके वश्य आदि को भी साधित कर लिया करता है। शुद्ध तिलों के ही द्वारा होम करके जो कि एक लाख आहुतियों को होना चाहिए, मनुष्य समस्त पातकों से छुटकारा पा जाया करता है ।७६। मन्त्रधारी पुरुष सब प्रकार की समृद्धि की प्राप्ति करने के लिये पायसान्न के द्वारा होम करे। एक लाख पद्मों के होम करने से मनुष्य बड़ी भारी श्री की प्राप्ति किया करता है ।७७। घृत से एक लाख आहुतियों के द्वारा होम करे तो वह उत्तम कीर्त्ति को प्राप्ति कर लिया करता है। जाती के कुसुमों के द्वारा होम करने से सम्पूर्ण लोक को अपने वश में कर लिया करता है। ।७८। संशोधित तीन मधुरों से अक्त लवणों से एक लाख मान वाला होम करे और गुलिका बनाकर करे तो तुरन्त ही सबको अपने वश में कर लिया करता है ।७९। पत्रों के खण्डों में मातृका के वर्णों को पृथक्-पृथक् लिखकर फिर उनका अभ्यर्चन करे और इसके अनन्तर उन पत्रों

के अक्षरों को मुख से उच्चारण करते हुए अग्नि से होम करे तो यह होम अभिचार के हरण करने वाला होता है और सबसे रक्षा करने वाला तथा प्रसिद्धि के देने वाला हुआ करता है। एक सहस्र के होम में एक निष्क प्रमाण की अवधि वाली दक्षिणा का वितरण करना चाहिए। ।८०८१।

ऊर्द्ध वा शक्तितोदद्याद्यथोक्तं फलयाप्नुयात् ।
तनया सप्त सञ्जप्तं पिवेत्प्रातर्द्दिने दिने ।८२
सलिलं स भवेद्वाग्मी लभते कवितां पराम् ।
ब्राह्मीरस वचा कल्के पयसा विपचेद् घृतम् ।८३
अयुतं मातृकाजप्तमर्चितं च विधानतः ।
पिवेत्प्रातः स मेधावी भवेद्वाक्पतिसत्तमः ।८४
ब्राह्मीसहस्रसंजप्तां वचां वा पयसा पिवेत् ।
स लभेन्महतीं मेधामचिरान्नात्र संशयः ।८५
पूर्वोक्तं पङ्कज कृत्वा कुम्भं संस्थाप्य पूर्ववत् ।
क्वाथेन पूरयेन्मन्त्री यथावत् क्षीरशाखिनाम् ।८६
अष्टगन्धं विलोडयास्मिन्नवरत्नसमन्विते ।
आवाह्य पूजयेद्देवीं मातृकामुक्तमार्गतः ।८७

अथवा एक निष्क सुवर्ण की दक्षिणा देने की शक्ति न होवे तो अपनी शक्ति के अनुसार ही देवें या आधा निष्क देवें। जैसा कहा गया है इसका भी वैसा ही फल प्राप्त किया करता है। इसके द्वारा सात बार जप किये हुए का प्रातःकाल में प्रतिदिन जल का पान करे तो वह पीने वाला वाग्मी हो जाता है और परम कवित्व की शक्ति का लाभ लिया करता है। ब्राह्मी बूँटी का रस और वच के कल्क को दूध के साथ घृत का पाचन करे और दश सहस्र मातृका के द्वारा अभिमन्त्रित और विधान से समर्चित करके प्रातःकाल पान करें तो वह परम मेधावी और श्रेष्ठ वाक्पति हो जाया करता है।८२।८४। एक सहस्रवार जप की हुई ब्राह्मी अथवा वच को दूध के साथ पीवे तो वह पुरुष बड़ी भारी

मेधा का लाभ करता है और शीघ्र ही किया करता है—इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है ।८५। पूर्व में वर्णित किए हुये पद्म को बनाकर पहिली की भाँति कुम्भ की संस्थापना करे । फिर मन्त्रधारी पुरुष क्षीर वाले वृक्षों के क्वाथ से उसे पूरित कर देवे ।८६। इसमें अष्टगन्ध को विलोड़ित करके उसे नौ प्रकार के रत्नों से समन्वित कर देवे । फिर उसमें पूर्व में कहे हुए मार्ग के द्वारा मातृका देवी का आवाहन करके उसका पूजन करना चाहिये ।८७।

सहस्रासाधितैस्तोयैरभिषिञ्चेत्प्रियं नरम् ।
भानुवारं शेभे लग्ने ब्राह्मणानपि भोजयेत् ।८८
गुरवे दक्षिणां दद्याद् भक्तियुक्तः स्वशक्तितः ।
रक्षाकरं विशेषेण कृत्वा द्रोहोपशान्तिदम ।८९
ऐश्वर्यजननं पुंसां सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ।
अभिषेकमिमं प्राहर्विश्वसंवननं (मोहनं) परम् ।९०
पूर्वोक्तं मण्डलं कृत्वा मन्त्री नवपदान्वितम् ।
मध्यादि स्थापयेत्तेषु पदेषु कलशान्नव ।९१
तन्तुभिर्वेष्टितान् शुद्धान्वहिश्चन्दनचर्चितान् ।
सुधूपवासितान् मन्त्री दूर्वाक्षतसमन्वितान् ।९२

एक सहस्र बार साधित अर्थात् अभिमन्त्रित जल से अपने प्रिय मानव का अभिषिञ्चन करना चाहिए । रविवार के दिन किसी परम शुभ लग्न में करे और ब्राह्मणो को भी भोजन कराना चाहिए ।८८। भक्ति की भावना से समन्वित होकर अपनी शक्ति के अनुसार गुरुदेव को दक्षिणा समर्पित करे । यह द्रोह की उपशान्ति का देने वाला विशेष रूप से रक्षा के करने वाला होता है । यह पुरुष के ऐश्वर्य को उत्पन्न करने वाला है और सब सौभाग्य की सिद्धि का प्रदाता होता है । इस अभिषेक को मनीषीगण विश्व का पर मोहन करने वाला कहा करते हैं ।८९।९०। मन्त्रधारी पूर्वमें कथित नौ पदोंसे समन्वित मण्डल बनावे, मध्यादि में उन पदों में नौ कलशों की स्थापना करनी चाहिए ।९१।

उनको तन्तुओं से वेष्टित करे और शुद्धतापूर्वक बाहिर चन्दन से चर्चित कर देना चाहिए। मन्त्रधारी पुरुष उनको सुन्दर धूप से सुवासित करे और दूर्वा तथा अक्षतों से अन्वित कर देवे ।९२।

आपूर्य शुद्धतोयैस्तु (स्तान्) वेष्टयेडंशुकैस्तुतान् ।
मुक्तामाणिक्यवैदूयगोमेदान्वज्रविद्रुमौ ।९३
पुष्परागं मरकतं गरुडोन्दारमेव च ।
उक्तानि नव रत्नानि तेषु कुम्भेषु निःक्षिपेत् ।९४
विष्णुक्रान्तामिन्द्रवल्लीं देवीं दूर्वाश्च निःक्षिपेत् ।
स्थापयेत्कुम्भवक्त्रेषु कङ्कोलांश्चूतपल्लवान् ।९५
विन्यसेदक्षतोपेतांश्च फलान्वितान् ।
मध्येकुम्भं समाराध्य देवी मन्त्री वृषादितः ।९६
अर्चयेद्दिक्षु कुम्भेषु व्यापिन्याद्याः पुरोदिताः ।
वर्णमन्त्रयुता प्रोक्तलक्षणः सर्वसिद्धिदाः ।९७
शर्कराघृतसंयुक्तं पायसं च निवेदयेत् ।
स्पृष्ट्वा कुम्भान्कुशैर्विद्यां जपेत्साग्रंशतं शतम् ।९८

फिर उन कलशों को शुद्धि जल से आपूरित करे और उनको वस्त्रों से वेष्टित कर देना चाहिए। नौ रत्नों के नाम—मुक्ता, माणिक—वैदूर्य—गोमेद—वज्र (हीरा)—विद्रुम—पुष्परग मरकल—गरुडोन्दार ये नौ रत्न होते हैं। इन नौ रत्नो के नाम वता दिए गए हैं इनको उन कलशों में डाल देना चाहिए ।९३।९४। फिर उनमें विष्णु क्रान्ता—इन्द्र बल्ली—देवी और दूर्वा का निक्षेप करे। उन कुम्भों के मुखों में कंकोल और आम्र के पत्तों को स्थापित कर देना चाहिये ।९३। ।९५। वहाँ पर अक्षतों से उपेत तथा फलोंसे अन्वित चषकों का विन्यास करे। मध्य में जो कुम्भ हैं वहां पर मन्त्रधारी देवी की समाराधना करके वृषादि से दिशाओं में कुम्भों में पूर्व में उदिन व्यापिनी आदि का अर्चन करना चाहिए। पूर्व में कहे हुए लक्षणों से युक्त-वर्ण और मन्त्र से युक्त सब सिद्धियों की प्रदात्री है ।९७। शर्करा और घृत

से संयुत पायस को निवेदित करे। कुशाओं से कुम्भों का स्पर्श करके साग्रशत-शत विद्या का जप करना चाहिए।६८।

अभिषिञ्चेद्विलोमेन साध्यं त दत्तदक्षिणम्।
सर्वपापक्षयकरं शुभदं शान्तिसिद्धिदम्।६६
कृत्याद्रोहादिशमनं सौभाग्यश्रीजयप्रदम्।
पुत्रप्रदं च वन्ध्यागाभभिषेकमिमम्बिदुः।१००
ज्वरार्त्तस्वपूरः स्थित्वा जपेत्साग्रं सहस्रकम्।
ज्वरो नश्यति तस्याश क्षुद्रभूतग्रहा अपि।१०१
परतेजसि सञ्चिन्त्य शुभ्रं स्त्रुतसुधामयम्।
बिधुं विद्यां जपेद्योगो त्रिषरोगविनाशकृत्।१०२
बलीपलितरोगध्नः क्षुत्पिपासाप्रणाशनः।
पुष्टिदः सर्वसौभाग्यदायी लक्ष्मीशुभप्रदः।१०३

विलोम से दी हुई दक्षिणा वाले उस साध्य का अभिषिञ्चन करना चाहिए। यह अभिषेक समस्त पापोंके क्षय कर देने वाला शुभोंका दाता और शान्ति तया सिद्धि के देने वाला होता है। यह कृत्वा के दोषों का प्रशमन करने वाला—सौभाग्य, श्री और जय के देने वाला है। वह अभिषेक वन्ध्या नारी को पुत्र प्रदान करने वाला होता है।६६-१०० जो मनुष्य ज्वर से आर्त्त होवे उसके आगे स्थित होकर साग्रसहस्र बार जप करे तो उसका ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाया करता है और क्षुद्र भूत ग्रह भी विनिष्ट हो जाया करते हैं।१०१। पर तेज में शुभ्र स्त्रुत सुधामय को सञ्चित्य करके विधु विद्या का जप करे तो यह योग विष-रोग के विनाश करने वाला होता है।१०२। बली और पलित के रोग का नाशक तथा क्षुधा और पिपासा के विनाश करने वाला हैं। यह पुष्टि का दाता–सब प्रकार के सौभाग्य का प्रदाता और लक्ष्मी एव शुभ का देने वाला है।१०३।

सोमसूर्याग्निरूपाः स्युवर्णाः लोहत्रयं तथा।
रौप्यमिन्दुः स्मृतो हेम सूर्यस्ताम्रं हुताशनः।१०४

लोहभागाः समुद्दिष्टाः स्वरात्तक्षरसंख्यया ।
तैर्लोहैः कारयेमुद्रामसङ्कलितसङ्गताम् ।।१०५
साग्रं सहस्रं सञ्जप्य स्पृट्वा यां जुहयात्ततः ।
तस्यां सम्पातयेन्मन्त्री सर्पिषा पूर्वसंख्यया ।१०६
निःक्षिप्य कुम्भे तां मुद्रामभिषेकोक्तवर्त्मना ।
आवाह्य पूजयेद्देवीमुपचारैः समाहितः ।१०७
अभिषिच्य विनीताय दद्यात्तां मुद्रिकां गुरुः ।
इयं रक्षः क्षुद्ररोगविषज्वरविनाशिनी ।१०८
व्यालचौरमृगादिभ्यो रक्षां कुर्याद्विशेषतः ।
युद्धे विजयमाप्नोति धारयन्मनुजेश्वरः ।१०९
विभजेन्मातृकां मन्त्री नव वर्गान्यथाक्रमात् ।
अष्टावष्टौ स्वराः स्पर्शाः पंचशो व्यापका अपि ।११०

तीन प्रकार के लोह सोम-सूर्य और अग्नि के स्वरूप वाले हैं। इनके वर्ण इसी प्रकार के होते है। रौप्य (चाँदी) चन्द्रमा है, हेम सूर्य कहा गया है और ताम्र अग्नि है।१०४। लोह भाग स्वर आदि अक्षरों की संख्या से समुद्दिष्ट किये गये हैं। उन लोहों के द्वारा असंकलित अर्थात् अमिलित से सङ्गत मुद्रा करनी चाहिए ।१०५। साग्र अर्थात् अष्टाधिक एक सहस्र भली भाति जप करके उमका स्पर्श करके फिर होम करना चाहिए। मन्त्रधारी उसमें पूर्व संख्या से घृत से सम्पातन करे ।१०६! उस मुद्रा को अभिषेक में कहे हुए मार्ग से कुम्भ में निक्षिप्त करके देवी का आवाहन करके पूजनोपचारों के द्वारा सावधान होकर पूजा करे ।१०७। गुरु अभिषेक करके उन मुद्राओं को विनीत साधक को दे देवे। यह मुद्रा राक्षस, क्षुद्र रोग, विष और ज्वर का विनाश करने वाली होती है।१०८। विशेष रूप से व्याल, चोर और पशु आदि से रक्षा किया करती है। राजा इसको धारण करता हुआ युद्ध में विजय को प्राप्त किया करता है।१०९। मन्त्रधारी मातृका को यथा क्रम नौ वर्गों में विभाजित करे। आठ-आठ स्वर हैं और स्पर्श पाँच व्यापक भी हैं।११०

नव वर्गाः समुत्पन्ना नवरत्नेश्वरा ग्रहाः ।
अर्केन्दुरक्तज्ञगुरुभृगुमन्दाहिकेतवः ।१११
माणिक्यं मौक्तिकं चारु विद्रुमं गारुडं पुनः ।
पुष्परागं लसद्वज्रं नीलं गौमेदिकं शुभम् ।११२
वैदूर्यं नव रत्नानि मुद्रान्तैः कल्पयेच्छुभाम् ।
जपहोमादिकं सर्वं कुर्यात्पूर्वोक्तवर्त्मना ।११३
योमुद्रां धारयेदेनां तस्य स्युर्वशगा ग्रहाः ।
वद्र्धते तस्य सौभाग्यं लक्ष्मीरव्याहता भवेत् ।११४
कृत्याद्रोहा विनश्यन्ति नश्यन्ति सकलापदः ।
रक्षोभूतपिशाचाद्या नेक्षन्ते तं भयाकुलः ।११५
उपर्युपरि वद्र्धन्ते धनरत्नादिसम्पदः ।११६
तार्तीयोज्ज्वलकाणकं स्वरयुगैराविर्भवत्केसरम्
वर्गोद्भासिवसुच्छेद वसुमतीगेहेन सम्वेष्टितम् ।
ताराधीश्वरवारिवर्णविलसद्दिक्कोणसंशोभितम्
यन्त्रं वर्णतनोः पदं निगदित सर्वामयघ्नं परम ।११७

नौ वर्ग उत्पन्न हुए। नौ रत्न हैं और नौ ग्रह होते हैं। उन ग्रहों के नाम—सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, भृगु, शनि, राहु और केतु ये होते हैं ।१११। माणिक्य, मौत्तिक, विद्रुम, गारुड, पुष्पराग, वज्र, नीलम, गोमेद, चारु ये रत्नों के नाम होते हैं ।११२। उनमें वैदूर्य—नवरत्न से शुभमुद्रा की कल्पना करनी चाहिए। जप और होम आदि सब पूर्व में बताये हुए मार्ग से करे ।११३। जो पुरुष इस मुद्रा को धारण किया करता है उसके वश में गमन करने वाले सभी ग्रह हुआ करते हैं। उस पुरुष का सौभाग्य बढ़ा करता है और उसकी अव्याहत गति होती है ।११४।कृत्या कृत द्रोह विनिष्ट हो जाया करते हैं और सभी आपदाऐं विनाश को प्राप्त हो जाया करती हैं। राक्षस, भूत और पिशाच आदि तो भय से बेचैन होकर उसकी ओर अपनी दृष्टि भी नहीं डाला करते हैं ।११५। धन और रत्नों आदि की सम्पदायें

ऊपर-ऊपर हो जाने की उस मनुष्य के गृह में स्पर्धा किया करती हैं अर्थात् एक दूसरों से अत्यधिक वढ़ जाने की होड़ किया करती हैं ।११६। अब एक मन्त्र बतलाया जाता है—तार्त्तीय—कर्णिका वीज—ताराधींश्वर, वारिवर्ण—वकार इनसे शोभित कोण ओर दिशा से भूषित, तार्ती से उज्ज्वल कोण युक्त दो स्वरों से आविभूत केसर वाला-वर्गोद्भासी आठ मन्त्रों वाला भूपुर से संवेष्डित यह वर्णतनु का मन्त्र कहा गया है, जो सब भयों का नाशक होता है ।११७।

सप्तम पटल

अथ भूतलिपिं वक्ष्ये सुगोप्यमतिदुर्लभम् ।
यां प्राप्य शम्भोर्मुनयः सर्वान्कामान्प्रपेदिरे ।१

पञ्च ह्रस्वाः सन्धिवर्णा व्यामेराग्निर्जलन्धरा ।
अन्त्यमाद्यं द्वितीयं च चतुर्थं मध्यमं क्रमात् ।२

पञ्च वर्गाक्षराणि स्युर्वान्तश्वतेन्दुभिः सह ।
एषा भूतलिपिः प्रोक्ता द्विचत्वारिंशदक्षरैः ।३

आयम्बरार्णं वर्गार्णाः पञ्चमाः शार्णसंयुताः ।
वर्गाद्या इति विज्ञेया नव वर्गाः स्मृता अमी ।४
व्योमेराग्निजलक्षोणी वर्गवर्णान्पृथक् विदुः ।
द्वितीयवर्गे भूर्न स्यान्नवमे जल धरा ।५

इसके अनन्तर भूत लिपि के विषय में वतलायेंगे जो बहुत ही सुगोपनीय हैं और अत्यन्त दुर्लभ है। जिसको शम्भु से प्राप्त करके मुनिगण ने अपनी समस्त कामनाओं को प्राप्त कर लिया था ।१। पाँच ह्रस्व हैं—यथा—अ इ उ ऋ लृ, सन्धि वर्ण—ए-ऐ-ओ-औ है क्योंकि अकार और इकार की सन्धि होने पर ही 'ए' वनता है । व्योम—

हकार, ई, ऐ—यकार, अग्नि—रकार, जल—वकार धरा—लकार–यह तीसरा वर्ग होता है। अन्त्य अर्थात् अन्त में होने वाला ङकार और आद्य अर्थात् आदि में रहने वाला—ककार । द्वितीय—खकार, चतुर्थ घकार मध्यम—गकार, यही क्रम चारों में होता है। इस प्रकार के वर्गों का अष्टक होता है। पांच वर्ग के अक्षर होते हैं बान्त—शकार, चेत:—षकार, इन्दु—सकार। यह भूतलिपि बयालीस अक्षरों की कही गयी हैं।२।३। अम्वरार्ण का अर्थ हकार होता है। अ-ए और अम्वरार्ण इनमें द्वन्द्व समास होता है। वर्गार्ण का अर्थ अ-क-च-र-त-प-य और श अर्थ है। ये वर्गों के आद्य अक्षर होते हैं। ये नौ वर्ग कहे गये हैं।४। अब वर्णों के अक्षरों की भूत स्वरूपता बतलायी जाती है—अर्थात् नौ वर्गों के प्रथम आदि वर्ण व्योम आदि नामों वाले होते हैं। आकाश, वायु, अग्नि, जल और भूमि इन वर्गों के वर्णों को पृथक्-पृथक जानना चाहिये। द्वितीय वर्ग में भू नहीं है और नवम में जल और धरा नहीं है।५।

विरिञ्चिविष्णुरुद्राश्विप्रजापतिदिगीश्वरा: ।
क्रियादिशक्तिसंहिता: क्रमात्स्युर्वर्गदेवता: ।६
ऋषि: स्याद्दक्षिणामूर्तिगायत्रं छन्द ईरितम् ।
देवता कथिता सद्भि: साक्षद्वर्णेश्वरी परा ।७
हादिषड्वर्गकै: कुर्यातषडङ्गानि सजातिभि: ।
ध्यायेल्लिपितरोर्मूले देवी तन्मयपङ्कजे ।८
वदन्ति सुधियोवृक्षं नित्यं वर्णमयं शुभम् ।
परसम्विन्महावीज विन्दुनादमहाशिफम् ।९
पृथिव्यक्षरशाखाभि: सर्वाशासु विजृम्भितम् ।
सलिलाक्षरपत्रै :स्वैस्संछादितजगत्त्रयम् ।१०

अब नौ वर्गों के देवता बतलाये जाते हैं—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, अश्वि प्रजापति और दिगीश्वर अर्थात् यम, वरुण और सोम ये क्रिया आदि शक्ति के सहित क्रम मे वर्गों के देवता होते हैं।६। इसका ऋषि दक्षिणा-

मूर्त्ति है और छन्द गायत्र कहा गया है । इसका देवता सत्पुरुषों के द्वारा साक्षात् परा वर्णेश्वरी कही गयी है ।७। हकार से आदि सजाति षड् वर्गों के द्वारा षड अङ्गों को करना चाहिए । लिपि वृक्ष के मूल में तत्स्वरूप पंकज में देवी का ध्यान करना चाहिए ।८। सुधीगण इसको वर्णमय परम शुभ और नित्य वृक्ष कहते हैं । इसका परसम्विन् महा-बीज है और विन्दुनाद महाशिफा है ।९। पृथिवी के अक्षरों की शाखाओं से सभी दिशाओं में विजृम्भित है । अपने सलिलाक्षर सत्रों से तीनों जगतों को आच्छादित करने वाला है ।१०।

वह्निवर्णाङ्कुरैर्दीप्तं रत्नैरिव सुरद्रुमम् ।
मरुद्वर्ण लसत्पुष्पैर्द्योयन्तं वपुः श्रियम् ।११
आकाशार्णफलैर्नंद्यं सर्वभूताश्रयं परम् ।
पर मृताख्यमधुभिस्सिञ्चन्त परमेश्वरीम् ।१२
वेदागमादिभिः क्लृप्तं समुन्नतिमनोहरम् ।
शिवशक्तिमयं साक्षात् छाया श्रितगत्त्रयम् ।१३
एनमाश्रित्य मुनयः सर्वान्कामानवाप्नुयुः ।१४
अङ्कोन्मत्तशशाङ्ककोटिसदृशीमापीनतुङ्गस्तनीम्
चन्द्रार्द्धकितमस्तकां मधुमदादालोलनेत्रयाम् ।
विभ्राणामनिशं वरं जपवटीं विद्यां कपालं करै
सन्दृप्त्यां यौवनगर्विताां लिपितनुं वागीश्वरीमाश्रये ।१५

रत्नों से सुरद्रुम की ही भाँति यह वह्नि वर्णों के अंकुरों से दीप्त है । मरुद् वर्णों से शोभित पुष्पों के द्वारा वपु की श्री को द्योतित करने वाला है ।११। आकाश वर्णों के स्वरूप वाले फलों से नम्र और सर्वभूतों का आश्रय स्थल है । परामृत नामक मधुओं से परमेश्वरी का सिञ्चन करता हुआ है ।१२। यह वेदों आगमों आदि से क्लृप्त है तथा भली भाँति उन्नति ऊँचाई से मनोह है । यह साक्षात् शिव शक्ति से परिपूर्ण साक्षात् भ्रू छाया से तीनों जगतों का आश्रय दिए हुए हैं ।१३। मुनिगण इस प्रकार से इस का समाश्रय ग्रहण करके सभी कामनाओं

कामनाओं को प्राप्त करते थे ।१४। अब ध्यान बतलाते हैं—अंक में करोंड़ों उन्मत्त चन्द्रों के सदृश है, थोड़े पीन (स्थूल) और ऊँचे कुच-युगों वाली, अर्ध चन्द्र से अंकित मस्तक से युत, मधु के मद से ईषत् चञ्चल तीन नेत्रों से अन्वित, करकमलों में निरन्तर वरदान—जपवटी, विद्या, कपाल को धारण करने वाली, यौवन के गर्व से संदृप्त, लिपि के तनुवाली भगवती वागीश्वरी का मैं समाश्रय ग्रहण करता हूँ ।१५।

आधारदेशेऽधिष्ठाने नाभौ हृदि गले पुनः ।
बिन्दौ नादे ततः शक्तयां शिवे देशिकसत्तमः ।१६
नवाधारेषु विन्यस्य स्वरान्नव यथाविधि ।
हादिवर्णास्तनौ न्यस्येन्मुखे ऊदूर्ध्वादितः सुधीः ।१७
ऊद्ध्र्वमाहेन्द्रयाम्योदक्पश्चिमेषु समाहितः ।
दोः पत्सु पञ्चवर्गाणां वर्णान्देशिकसत्तमः ।१८
अग्रमूलोपमूलाग्रमध्यदेशक्रमेण तु ।
जठरे पार्श्वयुगले नाभौ पृष्ठे समाहितः ।१९
गुह्यहृद्भ्रूबिले न्यस्येत शादिवर्णत्रयं क्रमात् ।
सृष्टौ सर्गावसना स्यात्स्थितौ वह्निमरुत्पयः ।२०
वियद्भूमिक्रमान्न्यस्येद्बिन्दुसर्गावसानिकाम् ।
संहृतौ प्रतिलोमेन विन्यसेद्बिन्दुभूषिताम् ।२१

श्रेष्ठ आचार्य आधार देश में, अधिष्ठान में, नाभि में, कण्ठ में, बिन्दु में, नाद में, शिव में, शक्ति में नवाधारों में विन्यास करके फिर नौ स्वरों को विधि पूर्वक सुधी हकार से आदि वर्णों को स्तनों में न्यास करे और मुख में ऊर्ध्वादि से करे ।१६।१७। ऊर्ध्व में समाहित होकर माहेन्द्री, याम्य, उत्तर और पश्चिम में न्यास करे। श्रेष्ठ आचार्य पाँचों वर्गों के वर्णों का बाहुओं और पादों में न्यास करे। अग्रमूल, उपमूलाग्र और मध्य देश के क्रम से समाहित होकर जठर में, पार्श्वों के युगल में अर्थात् दोनों पार्श्वों में, नाभि में, पृष्ठ में

न्यास करे ।१८-१९। क्रम से शादि तीन वर्णों का गुह्य-हृदय और भ्रू विल में न्यास करना चाहिए । सृष्टि में सर्ग के अवमान वाली होवे और स्थिति में यह्नि, जल, आकाश और भूमि के क्रम से बिन्दु और विसर्ग के अवसान वाली का न्यास करे। और संहार में प्रतिलोम से विन्दुभूषिता का न्यास करना चाहिए ।२०-२१।

आगमोक्तेन मार्गेण दीक्षितः साधकोत्तमः ।
लक्षं न्यसेज्जपेत्तावदयुतं जुहूयात्तिलैः ।२२
पूजयेदन्वहं देवीं पीठे प्रागीरिते सुधीः ।
वर्णाब्जेनासनन्दद्यान्मूर्त्ति मूलेन कल्पयेत् ।२३
देवीं सम्पूजयेत्तस्यामङ्गाद्यावरणान्यजेत् ।
आदावङ्गावृतिः पश्चादम्बिकाद्याभिरीरिता ।२४
द्वितीया मातृभिः प्रोक्ता तृतीया द्वष्टशक्तिभिः ।
चतुर्थी पञ्चमी प्रोक्ता द्वात्रिंश्च्छाक्तिभिः पुनः ।२५
चतुः षष्ट्या स्मृता षष्ठो शक्तिःभिर्लोकनायकैः ।
सप्तमी पुनरेतेषामस्त्रैः स्यादष्टमावृतिः ।२६
एवं पूज्या जगद्धात्री श्रीभूतलिपिदेवता ।
स्थानेषु तेषु विधिवदभ्यर्च्याङ्गानि पूर्ववत् ।२७

आगमों में वर्णित मार्ग से साधकों में उत्तम दीक्षित होकर एक लाख जप करे और दश सहस्र तिलों के द्वारा होम करना चाहिए ।२२ सुधी को चाहिए कि वह पूर्व में वर्णित पीठ पर देवी का प्रतिदिन पूजन करे। वर्णाब्ज से आसन अर्पित करे। और मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करे ।२२। उसमें देवी का भली-भाँति पूजन करे और अंग आदि आवरणों का यजन करना चाहिए। आदि में अंगों की आवृत्ति और पीछे अम्बिकाद्याओं से कही गयी है ।२४। दूसरी मातृकाओं से बतायी गयी है। तीसरी सोलह शक्तियों के द्वारा होती है। फिर चौथी और पाँचवी बत्तीस शक्तियों से कही गयी हैं ।२५। शक्तियों से और लोक नायकों के द्वारा चौंसठ से छठवीं बतायी गयी

हैं। फिर इनके अस्त्रों से सातवीं करे। इस प्रकार से अष्टम आवृत्ति होती है।२६। इस रीति से जगतों की धात्री श्रीभूत लिपि देवता का पूजन करना चाहिए। पूर्व की भाँति उन स्थानों में विधि के साथ अंगों का अभ्यर्चन करे।२७।

अम्बिका वाग्भवी दुर्गा श्रीशक्तिश्चोक्तलक्षणाः।
ब्राह्म्याद्याः पूर्ववत् प्रोक्ताः कराली विकराल्युमा।२८
सरस्वती श्रीदुर्गोषा लक्ष्मीश्रुत्यौ स्मृतिर्धृतिः।
श्रद्धा मेधा मतिः कान्तिरार्या षोडशक्तयः।२९
खड्ग खेटकधारिण्यः श्यामाः पूज्याः स्वलङ्कृताः।
विद्या ह्री पुष्टयः प्रज्ञा सिनावाली कुहूः पुनः।३०
रुद्रा वीर्या प्रभानन्दा स्याद्योषा ऋद्धिदा शुभा।
कालरात्रिर्महारात्रिर्भद्रकाली कपर्दिनी।३१
विकृतिर्द्दण्डिमुण्डिन्यौ सेन्दुखण्डा शिखण्डिनी।
निशुम्भशुम्भमथिनी महिषासुरमर्दिनी।३२
इन्द्राणी चैव रुद्राणी शङ्करार्द्धशरीरिणी।
नारी नारायणी चैव त्रिशूलिन्यपि पालिनी।३३
अम्बिका ह्लादिनी चैव द्वात्रिंशच्छक्तयःस्मृतः।
चक्रहस्ताः पिशाचास्याः सम्पूज्याश्चोरुभूषणाः।३४

अम्बिका, वाग्भवी, दुर्गा, और श्री शक्ति ये सब उक्त लक्षणों वाली है। ब्राह्मी आदि पूर्व में की ही तरह कही गयी है। कराली, विकराली, उमा, सरस्वती, श्री, दुर्गा, ऊषा, लक्ष्मी, श्रुति, स्मृति, धृति, श्रद्धा, मेधा, मति, कान्ति और आर्या ये सोलह शक्तियां हैं।२८।२९। ये सब खड्ग और खेटक के धारण करने वाली हैं—श्यामा और स्वलंकृता हैं, इनका पूजन करना चाहिए। विद्या, ह्री, पुष्टि, प्रज्ञा, सिनीवाली, कुहू, रुद्रा, वीर्या, प्रभा, मन्दा, योषा, ऋद्धिहा, शुभा, कालरात्रि, महारात्रि, भद्रकाली, कपर्दिनी, विकृति दण्डी, मुण्डिनी, इन्दु खण्डा, शिखण्डिनी, निशुम्भ, शुम्भमथिनी महिषासुर मर्दिनी, इन्द्राणी, रुद्राणी

शंकरार्धशरीरिणी, नारी, नारायणी त्रिशूलिनी, पालिनी, अम्बिका, ह्लादिनी ये बत्तीस शक्तियाँ कही हैं। चक्र, हस्ता, पिशाचा, और उरुभूषणा पूजने योग्य हैं।२९।३४।

पिङ्गलाक्षी विशालाक्षी समृद्धिर्वृद्धिरेव च।
श्रद्धा स्वाहा स्वधाऽभिख्या माया संज्ञा वसुन्धरा।३५
त्रिलोकधात्री सावित्री गायत्री त्रिदशेश्वरी।
सुरूपा बहुरूपा च स्कन्दमाताऽच्युतप्रिया।३६
विमला चामला पश्चादरुणी पुनरारुणी।
प्रकृतिर्विकृतिः सृष्टिः स्थितिः संहृतिरेव च।३७
सन्ध्या माता सती हंसी मर्द्दिका कुब्जिकाऽपरा (१)।
वेदमाता भगवती देवकी कमलासना।३८
त्रिमुखी सप्तमुख्यान्या सुरासुरवमर्दिनी।
लम्बोष्ठी चोर्ध्वकेशी च बहुशीर्षा वृकोदरी।३९
रथरेखाह्वया पश्चाच्छशिरेखा तथाऽपरा।
गगनवेगा पवनवेगा च तदनन्तरम्।४०
ततोभुवनमालाख्या ततः स्यान्मदनातुरा।
अनङ्गाऽनङ्गमदना तथैवानङ्गमेखला।४१
अनङ्गकुसुमा विश्वरूपाऽसुरभयङ्करी।
अक्षोभ्यासत्यवादिन्यौ वज्ररूपा शुचिव्रता।४२

पिङ्गलाक्षी, विशालाक्षी, समृद्धि, वृद्धि, श्रद्धा, स्वाहा, स्वधा, माया, वसुन्धरा, संज्ञा, त्रिलोक धात्री, सावित्री, गायत्री, त्रिदशेश्वरी, सुरूपा, बहुरूपा, स्कन्दमाता, अनुच्युत प्रिया, विमला, अमला, अरुणी, आरुणी, प्रकृति, सृष्टि, स्थिति, संहृति, संन्ध्या, माता, सती, हंसी, मर्द्दिका: कुब्जिका, अपरा, देवमाता, भगवती, देवकी, कमलासना, त्रिमुखी, सप्तमुखी, अन्या, सुरासुर विमर्दिनी, लम्बोष्ठा, ऊर्ध्व केशी, बहुशीर्षा, वृकोदरी, रथरेखा, शशिरेखा, अपरा, गगन, वेगा, पवन,

वेगा, भुवनमाला, मदनातुरा, अनङ्गा मदना, अनङ्गमेखला, अनङ्ग-कुसुमा, विश्व रूपा, असुर भयङ्करी, अक्षोभ्या, सत्यवादिनी, वज्ररूपा, शुचिव्रत ।३५।४२।

वरदाख्या च वागीशा चतु:षष्टि: समीरिता: ।
चापवाणधरा सर्वा ज्वालाजिह्वा: समीरित: ।४३
दंष्ट्रिण्यश्चोद्ध्र्वकेश्यस्ता युद्धोपक्रान्तमनसा: ।
सर्वाभरणसदीप्ता: पूजनीथा: प्रयत्नत: ।४४
लोकेशा: पूर्वंत्पूज्या स्तद्वद्वज्रादिकान्यपि ।
इत्थं य: पूजयेन्मन्त्री श्रीभूतलिपिदेवताम् ।४५
श्रीवाण्यो: स भवेभूमिदेवैरप्यभिवन्द्यते ।
कमलैरयुतं हुत्वा राजानं वशमानयेत् ।४६
उत्पलैर्जुहुयात्तद्वन्महालक्ष्मी: प्रजायते ।
पलाशकुसुमैर्हुत्वा वत्सरेण कविर्भवेत् ।४७
राजी–लवणहोमेन वनितां वशमानयेत् ।
मातृकोक्तानि कर्म्माणि कुर्यादत्रापि साधक: ।४८
भूतलिप्या पुटीकृत्यं योमन्त्रं भजते नर: ।
क्रमोत्क्रमाच्छतावृत्त्वा यस्य सिद्धो भगेन्मनु: ४९

वरदा, वागीशा, ये चौंसठ कही गई हैं। ये सब चाप और वाणों के धारण करने वाली हैं और इनकी जिह्वा ज्वाला बताई गई है। ।४३। ये दाढ़ों वाली है और ऊपर की ओर केशों वाली हैं। और ये युद्ध करने के लिए उपक्रान्त मन वाली हैं। ये समस्त आभरणों से दैदीप्यमान हैं। इनका प्रयत्न पूर्वक पूजन करना चाहिए ।४३।४४। लोकेशों का पूजन पूर्व की ही तरह करे तथा उनके आयुध वज्र आदि का भी अर्चन करना चाहिए। इस तरह से मन्त्रधारी जो श्रीभूत लिपि देवता का पूजन करता है वह श्री और वाणी का स्थान हो जाता है और देवगणों के द्वारा भी वन्दना किया जाया करता है। दश हजार आहुतियां कमलों के द्वारा देकर राजा को भी अपने वश में ले आया

पुस्तकालय 1315 अशोक

करता है ।४५।४६। उसी भाँति उपलों से हवन करे तो महालक्ष्मी प्रसन्न हो जाती है । ढाक के पुष्पों से होम करके एक ही वर्ष में कवि हो जाया करता है ।४७। राजी (राई) और नमक के होम से वनिता को वश में कर लेता है । मातृका में कहे हुए कर्म यहाँ पर भी साधक को करने चाहिए ।४८। भूतलिपि मे सम्पुट देकर जो मनुष्य मन्त्र का सेवन करता है और क्रमोत्क्रम से सौ आवृत्ति करे तो उसका मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।४९।

सुषुप्तभुजगाकारां कुण्डलीमध्यवर्त्मना ।
संगमय्य परं स्थानं प्राणवित्तांपरामृतैः ।५०
प्लावयेन्मूर्द्धिन मूलान्तं योगोऽयं सर्वसिद्धिदः ।
अनया न्यस्तदेहस्तु तेजसा भास्करोभवेत् ।५१
यन्त्रक्रियाविशेषास्तु ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ।५२
विन्द्वाढयं गगन तदेव शिवयुक् ज्ञानी चतुर्थ्यायुतो
नत्यन्तो मनुरेष मध्यविहितः साध्यस्य बन्ध्वक्षरैः ।
पत्रेष्वक्षरशो हकारपुटितांस्तद्भूतवर्णाल्लिखे-
दन्त्यं चान्त्यदले विलिख्य मतिमान् वृत्तेन संवेष्टयेत् ।५३
विपद्यन्त्रमिदं प्रोक्त लाक्षाचन्दननिर्मितम् ।
रोहिण्याभुदये राहाविषघ्न सर्वशान्तिदम् ।५४

सुषुप्त अर्थात् सोये हुए भुजङ्ग के आकार वाली कुण्डली के मध्य मार्ग के द्वारा परस्थान में सङ्क्रमित करके प्राणवित्ता को परामृत से मूर्धा में मूल के अन्त पर्यन्त प्लावित करना चाहिए । यह सिद्ध योग सब सिद्धियों के प्रदान करने वाला है । इसके द्वारा देह में जो न्यास करता है वह तेज से भास्कर ही हो जाता है ।५०।५१। यन्त्र की क्रिया के विषयों का ज्ञान प्राप्त करके कर्मों का साधन करना चाहिए ।५२। अब विषद् यन्त्र बतलाया जाता है—गगन—हकार जो बिन्दु से आढ्य होवे, वह शिव अर्थात् एकादश एकार से युक्त होवे और ज्ञानी शब्द चतुर्थी विभक्ति से युक्त होना चाहिए । अन्त में नमः—यह पद

होवे, जो वर्णिका में लिखना चाहिए। साध्य जो भी हो उसके विपाद से ग्रस्त अमुक व्यक्ति के वक्त्र अक्षरों को अक्षरश: हकार से पुटित पत्रों में लिखे। मतिमान पुरुष अन्य को अन्तिम दल में लिखे और उसे वृत्त से संवेष्ठित कर देना चाहिए।५३। वह विपद् यन्त्र कहा गया है जो लाख और चन्दन से निर्मित होता है। रोहिणी में राहू के उदय में यह विष के हनन करने वाला और सब प्रकार की शान्ति का प्रदाता होता है।५४।

यौ द्वौ साक्ष्यधरेन्दुखण्डशिरसौ स्यातां क्रमान् ङ्युतं
कोपेशं नमसाऽन्वित विरचयेन्मध्ये दलेष्वष्टसु।
वायव्यान् यपुटान्विलिख्य विधिना शिष्टार्णमन्त्ये दल।
यन्त्रं वायुगृहेण वेष्टितमिदं स्यात्तालपत्रस्थितम्।५५
स्वात्य मन्दोदये यन्त्रं वायव्ये निखनेद्रिपो:।
द्वयुंच्चाटनकृत्तस्य मृतिर्वा भवति ध्रुवम्।५६
वह्नेर्बीजयुगं क्रमाच्छ्रवणसद्यार्द्धेन्दुयुक् स्यात्स्वरी
रो: फट्हृन्मनुरेष मध्यविहित: पत्रेषु वह्न्युद्भवान्।
वर्णान्वह्निनिरोधितान् प्रविलिखेत्साध्याक्षरै:पोषकै-
रन्त्य चान्त्यदले कृशानुपुरगं भूर्जोदरे कल्पितम्।५७
शुभवारर्क्षसंयोगे लाक्षाकुङ्कुमानिर्मितम्।
रक्षाकृत्सर्वभूतानां यन्त्रमाग्नेयमीरितम्।५८
घातजाक्षरमिश्र तत्कृत्तिकायां कुजोदये।
चिताङ्गारेण नवस्त्रे लिखितं नाशयेद्रिपुम्।५९

अब वायव्य मन्त्र बतलाया जाता है—दो मकार होवे जो अक्षि-इकार, शशधर—एकार, इन्दु खण्ड—विन्दु के शिर वाले होवे, चतुर्थी से युत को पेश पद होवे और अन्त में नम:—यह पद होवे। मध्य में अष्ट दलों में विरचित करे। य से पुटित वायव्यों लिखकर विधि से शिष्ट वर्ण को अन्त्य दल में लिखे। इस यन्त्र को वायु गृह से वेष्टित करके ताल पत्र पर स्थित करे।५५। स्वाति नक्षत्र में मन्द अर्थात् शनि

के उदय शत्रु के गृह के द्वार में वायव्य में खोदकर रक्खें तो शत्रु का उच्चाटन करने वाला होता है अथवा निश्चित रूप से मृत्यु हो जाती है ।५६। अब आग्नेय को बतलाया जाता है—श्रवण—(उः) सद्य ओ, अर्धेन्दु—विन्दु इनमें युक्त वह्नि के बीज दो अर्थात् दो रेफ, हुन्नमः७ यह पद और फट् होवे—यह मन्त्र मध्य में विहित होवे । पोषक साध्य के अक्षरों से युक्त वह्नि निरोधित वर्णों को पत्रों में लिखना चाहिए अनय को अन्तिम दल लिखे और कृशानुपुर में जर करके भोज पत्र में कल्पित करे ।५७। शुभ बार नक्षत्र के संयोग में लाक्षा और कुम्कुम से निर्माण किया हुआ यह समस्त प्राणियों की रक्षा करने वाला आग्नेय यन्त्र होता है—ऐसा कहा गया है ।५८। वह घातक अक्षरों से मिश्रित कृत्तिका में मंगल के उदय में चिता के अङ्गार से उसके वस्त्र पर लिखे तो यह रिपु का नाश कर दिया करता है ।५९।

नासार्द्धेन्दुमदम्बु तन्मनुबुतं सार्द्धेन्दुडेन्तोविधु-
विध्वन्तेतु भुवे नमोविगदितो मध्ये मनुर्वारुणान् ।
वर्णान्पित्रपुटेषु वाक्षरपुटान्साध्यस्य वन्ध्वक्षरै-
रालिख्याप्यपुरेण वेष्टितमिदं यन्त्रं भवेद्वारुणम् ।६०
भूर्जपत्रे लिखेदेतद्रक्तचन्दनवारिणः ।
तरुणर्त्रोदये काव्ये यन्त्रं वश्यादिकृद्भवेत् ।६१
गण्डो बिन्दुविभूषितोवसुमती स्यात्ताद्दशी गण्डयो
मध्यस्थौ तु जगौ लुके नतिरिम मन्त्रं लिखेन्मध्यतः ।
लान्ताल्लांणपुटीकृतान्वसुमतीवर्णान् दलेष्वालिखे-
त्सेवावर्णयुतान्यथाविधि भुवोगेहेन संवेययेत् ।६२
ज्येष्ठायामुदिते सौम्ये मृदि गैरिकनिर्मितम् ।
पार्थिवं यन्त्रमचिरात्सर्वत्र स्तम्भकृद् भवेत् ।६३

अब वारुण यन्त्र बतलाते हैं—नासा—ऋः, अर्ध्वेन्दु, विन्दु-अम्बुका, मनु शब्द का अर्थ चतुर्दशवां स्वर है अतः मनु से ओंकार कहा जाता है । इससे युत हो और चतुर्थी के अन्त वाला विधु होवे । फिर भुवे नमः— यह होना चाहिए । मध्य में मन्त्र होवे । फिर वकाराभूर पुटित

साध्य के वन्धु अक्षरों के सहित वारुण वर्णों को पद्मपुटों में लिखकर आप्यपुर से वेष्टित करे तो यह वारुण यन्त्र हो जाता है ।६०। इस मंत्र को रक्त चन्दन के जल से भोज्य पत्र पर लिखना चाहिए । तरुण नक्षत्र के उदय में भृगु बार में बनावे तो यह यन्त्र वश आदि के करने वाला होता है ।६१। पार्थिव मन्त्र बतलाते हैं—गण्ड—लूं, वसुमती—लकार गण्ड बिन्दु से युक्त होवे । गण्ड वर्णों के मध्य में स्थित ज और ग—ये वर्ण होवे । लुके स्वरूप है । अन्त में नमः—यह होता है । इस मन्त्र को मध्य में लिखे । ल वर्ण से पुटीकृत लान्त वसुमती के वर्णों को दलों में लिखना चाहिए जो सेवा वर्ण युक्त होवे । विधि के साथ भूपुर वेष्टित करे ।६२। ज्येष्ठा ! नक्षत्र के उयय में सौम्य में मिट्टी में गैरिक से निर्मित यह पार्थिव यन्त्र शीघ्र ही सर्वत्र स्तम्भन करने वाला होता है ।६३।

गुह्याद्गुह्यतरां नित्यां श्रीभूतलिपिदेवताम् ।
यः सेवते शुभैः पुत्रैर्धनधान्यैश्च पूर्यते ।६४
अत्रिर्वरुणसंरुद्धो दवाग्वादिनि ठद्वयम् ।
वागीश्वर्या दशार्णोऽयं मन्त्रो वाग्विभवप्रदः ।६५
ऋषिःकण्वोविराट्छन्दो देवता वाकसमीरिता ।
शिरः श्रवण हृङ्नासावदनान्धगुदेष्विमान् ।६६
न्यस्यार्णान् प्राग्वदङ्यानि मातृकोक्तानि कल्पयेत् ।६७
तरुणशकलमिन्दोर्विभ्रतीशुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णा सिताब्दे ।
निजकरकमलद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्धयै पातु वाग्देवता नः ।६८

यह गुह्य से भी अधिक गुह्य है । इस नित्या श्री भूत लिपि देवता को जो सेवन दिया करता है वह शुभ-पुत्र और धन-धान्य से परिपूर्ण हो जाया करता है ।६४। अत्रि—हकार, वरुण—वकार । इससे सम्पुटित होवे । फिर दवाग्वादिनि और फिर दो ठकार होवें । यह वागीश्वरी का दश वर्णों का मन्त्र होता है जो वाग्विभव के देने वाला है ।६५

इस मन्त्र का ऋषि कण्व है और बिराट् छन्द है तथा वाक् इसका देवता बताया गया है। शिर, श्रवण, नेत्र, नासिका, मुख, अन्धु और गुदा में इन वर्णों का न्यास करके पूर्व की ही तरह मातृका में कथित अंगों की कल्पना करनी चाहिए।६७। अब ध्यान बतलाया जाता है— चन्द्र के एक खण्ड को धारण करने वाली, शुभ्र क्रान्ति से संयुत, कुच युग भार से निमित अङ्ग वाली, सितकमल पर विराजमान, अपने करों में लेखनी, पुस्तक श्री को धारण करती हुई वह वाग्देवता सम्पूर्ण वैभव की सिद्धि के लिए जापकी रक्षा करे।६८।

दशलक्षं जपेन्मत्रं दशांशं जुहुयात्ततः।
पुण्डरीकैः पयोभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुराप्लुतैः।६९
मातृकौदीरिते पीठे वागीशीमर्चयेत्सुधीः।
वर्णाब्जेनासनं दद्यान्मूर्ति मूलेन कल्पयेत्।७०
आदावङ्गानि संपूज्य पश्चाच्छक्तीरिमा यजेत्।
योगा सत्या च विमला ज्ञाना बुद्धिः स्मृतिः पनः।७१
मेधा प्रज्ञा च पत्रेषु मुद्रापुस्तकधारिणीः।
दलाग्रेष समभ्यर्च्या ब्राह्मयाद्यास्ता यथाविधि।७२
लोकपाला बहिः पूज्यास्तेषामस्त्राणि तद्वहिः।
एवं संपजयेन्मन्त्री जपहोमादितत्परः।७३

इस मन्त्र का दश लाख जप करे और जप का दशांश होम करना चाहिए। हवन दूध में अक्त कमलों से अथवा मधुर में आप्लुम तिलों से करें। सुधी पुरुष मातृका में उदीरि पीठ पर वागीशी का अर्चन करे, वर्णाब्ज से आसन देवे और मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करे।६९।७०। आदि में अंगों का पूजन करके पीछे इन शक्तियों का यजन करना चाहिए। योग, सत्या, विमला, ज्ञाना, बुद्धि, स्मृति, मेधा और प्रज्ञा का पत्रों में अर्चन करे। दलों के अग्र भागों में मुद्रा तथा पुस्तक को धारण करने वाली ब्राह्मणी आदिका विधि के साथ समभ्यर्चन करना चाहिये।७१।७२। लोकपालों का यजन बाहिर करे तथा उनके

आयुधों का अर्चन उनके बाहिर करना चाहिए। इस प्रकार से जप और होम आदि में परायण मन्त्रधारी भली-भाँति पूजन करे ।७३।

ब्रह्मचर्यरतःशुद्धःशुद्धतन्तनखादिकः ।
संस्मरन्सर्ववनिताः सततं देवताधिया ।७४
कवित्वं लभते धीमान् मासैर्द्वादशभिध्र्रुवम् ।
कृत्वा तन्मन्त्रित तोयं सहस्रं प्रत्यहं पिबेत् ।७५
महाकविर्भवेन्मन्त्री वत्सरेण न संशयः ।
उरोमात्रे जले स्थित्वा ध्यायेन्मर्तण्डमण्डले ।७६
स्थितां देवीं प्रतिदिनं त्रिसहस्रं जपेन्मनुम् ।
लभते मण्डलात्सिद्धि वाचमप्रतिमां भुवि ।७७
पलाशबिल्वकुसमैर्जुहुयान्धुरोक्षितैः ।
समिद्भिर्वा तदुत्थाभिर्यशः प्राप्नोति वाक्पतेः ।७८

ब्रह्मचर्य व्रत में रत और दाँत तथा नरकों को शुद्ध रखने वाला पुरुष निरन्तर सव वनिताओं का देवता की बुद्धि से निरन्तर स्मरण करता हुआ पुरुष वारह मासों में ही धीमान् होकर निश्चय ही कवित्व का लाभ किया करता है। इस मन्त्र से एक सहस्र वार अभिमन्त्रित करके जल को प्रतिदिन पान करे तो मन्त्रधारी एक ही वर्ष में महा-कवि हो जाया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है। वक्षःस्थल पर्यन्त जल में स्थित होकर मार्तण्ड मण्डल में स्थित देवी का ध्यान करे और नित्य ही तीन सहस्र मन्त्र का जप किया करे तो मण्डल से सिद्धि का लाभ करता है और भूमण्डल में अप्रतिम वाणी को प्राप्त कर लेता है ।७४।७५।७६।७७। पलाश-विल्व के पुष्पों से मधुर में उक्षित करके अथवा उनसे ग्रहण की हुई समिधाओं से हवन करे तो वाणी के स्वामी के यश को प्राप्त कर लेता है ।७८।

होमोऽयं सर्वसौभाग्यलक्ष्मीवश्यप्रदोभवेत् ।
राजवृक्षसमुद्भूतैः प्रसूनैर्मधुराप्लुतैः ।७९

तत्समिद्भिश्च जुहुयात्कवित्वमतुलं लभेत् ।
एवं दशाक्षरी प्रोक्ता सिद्धये वाक्मिच्छताम् ।८०
हृदयान्ते भगवति वद शब्दयुगं पुनः ।
वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत् ।८१
मनुं षोडशवर्णाढ्यं वागैश्वर्यफलप्रदम् ।
मनोः षडभि पदैः कुर्यात्षडङ्गानि सजातिभिः ।८२
शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां
वाख्यामक्षगुणं सुधाढयकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः ।
बिभ्राणां कमलासनां कुचनतां वाग्देवतां सुस्मिताम् ।
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम् ।८३

यह होम सब प्रकार के सौभगय-लक्ष्मी और वश्य के प्रदान करने वाला होता है । राज वृक्ष से समुत्पन्न पुष्पों से मधुर में आप्लुत करके और उसकी समिधाओं से होम करे तो अनुपम कवित्व की प्राप्ति कर लिया करता है । इस प्रकार से वाक् शक्ति की इच्छा रखने वालों के लिये यह दशाक्षरी सिद्धि के लिए बतलायी गयी है ।७९।८०।८१। हृदय के अन्दर 'भगवती' वद (यह शब्द दो बार) कहे । वाग्देवि-यह कहकर 'वाग्भवाद्यं स्वाहा' यह कहे—ऐसे मन्त्र का उद्धार करना चाहिए । यह मन्त्र सोलह अक्षरों से युक्त है जो वाक् के ऐश्वर्य का फल का प्रदाता होता है । मन्त्र के छै स्वजाति पदों मे षट् अङ्गों को करे ।८२ अब ध्यान बतलाया जाता है—परम स्वच्छ विलेपन और वस्त्र से समन्विता-परम शुभ्र—चन्द्र खण्ड के धारण करने से अतीव समुज्ज्वला कर कमलों में व्याख्या—अक्षमाला, सुधा से पूर्ण कलश और विद्या की धारण करन वाली—कमल के आसन पर विराजमान—कुच युगल के भार से नम्रा-सुन्दर स्मित वाली-वाग्विभव की प्रदात्री—तीन नयनों से युक्त—सौभाग्य और सम्पदा करने वाली देवी की मैं वन्दना करता हूँ ।८३।

हविष्याशी जपेत्सम्यग्वसुलक्षमनत्यधीः ।
दशाशं जुहुतादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः ।८४
मातृकोक्ते यजेत्पीठे देवीं प्रागीरिते क्रमात् ।
पिवेत्तन्मन्त्रित तोयं प्रातःकाले दिनेदिने ।८५
विद्वान्वत्सरतो मन्त्री भवेन्नास्ति विचारणा ।८६
अभिषिञ्चेज्जलैर्जप्तैरात्मानं स्नानकर्मणि ।
तर्पयेत्तां जलैःशुद्धै रतिमेधामवाप्नुयात् ।८७
पुष्पगन्धादिकं सर्वं तज्जप्तं धारयेत्सुधीः ।
सभायां पूज्यते सद्भिर्वादे च विजयी भवेत् ।८८

हविष्य के अशन करने वाला, अनन्य बुद्धि वाला भली-भाँति आठ लाख मन्त्र का जाप करे तथा जप का दशांश अज्य से परिप्लुत तिलों से होम अन्त में करना चाहिए । मातृकाओं में कथित पीठ पर जो पूर्व में कहा गया है । उस पर क्रम से यजन करना चाहिए । उस मन्त्र में अभिमन्त्रित जल को प्रात:काल में प्रतिदिन पान करना चाहिए । ।८४।८५। मन्त्रधारी एक ही वर्ष में विद्वान् हो जाया करता है—इसमें कुछ भी विचार करने की आवश्यकता नहीं है ।८६। स्नान के कर्म में जप किए हुए जल से अपने आपका अभिषेक करे और जल से उस देवी का तर्पण करे तो अत्यधिक मेधा की प्राप्ति किया करता हैं ।८७। पुष्प और गन्ध आदि सभी को उस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित करके धारण करना चाहिए । वह सुधी पुरुष सभामें सत्पुरुषों के द्वारा पूजित हुआ करता है और वह वाद में विजयी होता है ।८८।

तारो मायाऽधरो बिन्दुः शक्तिस्तारः सरस्वती ।
ङेन्तोनत्यन्तिकोमन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ।८९
ब्रह्मरन्ध्रभ्रुवोर्मध्ये नवरन्ध्रेषु च क्रमात् ।
मंत्रवर्णान्न्यसेन्मत्री वाग्भवेनाङ्गकल्पना ।९०
वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रर्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः संविभ्रतीमादरात् ।

वीणामक्षगुणं सुधाढचकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनी ।
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढा भजे ।९१
जपेद्द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः ।
नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहूयात्साधकोत्तमः ।९२
मातृकोक्ते यजेत्पीठे वक्ष्यमाणक्रमेण तान् ।
वर्णाब्जेनासनं कुर्यामूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।९३

अव हंस वाणीश्वरी मन्त्र का उद्धार वताया जाता है—प्रणव, माया भुवनेश्वरी, अक्षर-ऐ, बिन्दु शक्ति-प्रणव-सरस्वती जो चपुर्थी विभक्ति से युक्त हो अन्त में नमः—यह पद है, यह ग्यारह अक्षरों वाला मन्त्र होता है ।८८। मन्त्रधारी को चाहिए कि वह ब्रह्मरन्ध्र—भ्रूओं के मध्य में और क्रम से नौ रन्ध्रों में मन्त्र के वर्णों का न्यास करे और वाग्भव से अङ्गों की कल्पना करनी चाहिए ।९०। ध्यान वताया जाता है—पूर्ण चन्द्र से उज्ज्वल मुख से युत, कपूर और कुन्द के समान प्रभा वाली—चन्द्र से अंकित मस्तक से संयुत, आदर के साथ अपने कर कमलों में वीणा, अक्षमाला, सुधा से पूरित कलश और विद्या को धारण करती हुई, उन्नत वक्षोजी वाली, दिव्य आभूषणों से भूषित शरीर से समन्वित हंस पर समारूढा देवी का सेवन करता है ।९१। इस मन्त्र का वारह लाख जप और उसकी सहस्र श्वेत कमलों से अथवा नाग चम्पक के पुष्पों से साधकोत्तम होम करे ।९२। मातृका में उक्त पीठ पर आगे वताये जाने वाले क्रम से यजन करना चाहिए। वर्णाब्ज के द्वारा आसन अर्पित करे और मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिये । ।९३।

देव्या दक्षिणतः पूज्या संस्कृता वाङ्मयी तनुः ।
प्राकृता वामतः पूज्या वाङ्मयी सर्वसिद्धिदा ।९४
इष्ट्वा पर्वंवदङ्गानि प्रज्ञाद्याः पूजयेत्ततः ।
प्रज्ञा मेधा श्रुतिः शक्तिः स्मृतिर्वागीश्वरी मतिः ।९५

स्वस्तिश्चेति समाख्याता ब्राह्मयाद्यास्तदनन्तरम् ।
लोकेशानर्चयेद्भूयस्तदस्त्राणि त तद्बहिः ।९६
इति सम्पूजयेद्देवी साक्षाद्वाग्वल्लभो भवेत् ।
दशाक्षरीसमुक्तानि कर्माण्यत्रापि साधकः ।९७
वाचस्पतेऽमृतेभूयः प्लुतः प्लुरितिकीर्तयेत् ।
वागाद्यो मुनिभिः प्रोक्तो रुद्रसंख्याक्षरो मनुः ।९८
कुर्यादंगानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः ।९९
आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं
बिभ्राणा तरुणेन्दुबद्ध मुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा।
भालोन्मीलितलोचना कुचभराकान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुतिगणैरासेव्यमानाऽनिशम् ।१००

देवी के दक्षिण की ओर संस्कार की हुई वाङ्मयी तनु का पूजन करना चाहिए। प्राकृता का वाम भाग में पूजन करे। यह वाङमयी सव सिद्धियों के देने वाली है ।९४। पूर्वकी तरह अङ्गों का यजन करके फिर ब्रह्मादि का पूजन करे। प्रज्ञा-मेधा-श्रुति-शक्ति स्मृति वागीश्वरी मति ओर स्वस्ति का पूजन करके उसको अनन्तर ब्राह्मी आदि क यजन करना चाहिए। फिर जो केशों का अर्चन कर उनके वाहिर उनके अस्त्रों का यजन करना चाहिए ।९४।९६। इस रीति से देवी का भली-भांति अर्चन करने से पूजक साक्षात् वाक्का वल्लभ हो जाता है। यहां पर भी दशाक्षरी में कथित कर्मों को साधक करें ।९७। वागात्र वाग्भव का आद्य-वाचस्पते फिर अमृते प्लुत और प्लुनि-इसका कीर्तन करे। यह मन्त्र मुनियों के द्वारा एकादश अक्षरों वाला कहा गया है। ।९८। वागाद्य पाँच पदों से अङ्गों का समाचरण सविधि करना चाहि। ।९९। अब ध्यान है—कमल के आसन पर विराजमान, करों से जप की माला, दो पद्म और पुस्तक को धारण करती हुई, तरुणचन्द्र से मुकुट को वांधे हुए, मोती, चन्द्र और कुन्द के समान प्रभा वाली

भाल में उन्मीलित लोचन में समन्वित—अपने स्थूल कुचों के भार से समाक्रान्त—निरन्तर मुनिगणों के द्वारा सेव्यमाना वाक् की अधिदेवता आपकी भूति के लिए होवे ।१००।

रुद्रलक्षं जपेन्मंत्रं दशांशं जुहुयाद्घृतैः ।
मातृकाकल्पिते पीठे पूजयेत्तां यथा पुरा ।१०१
पलाशकुसुमैर्हुत्वा परां सिद्धिमवाप्नुयात ।
कदम्बकुसुमैस्तद्वत्फलैः श्रीवृक्षसम्भवैः ।१०२
अचराच्छ्रियमाप्नोति वाचां कुन्दसमुद्भवैः ।
नन्द्यावर्तप्रसूर्वा हुत्वा वाग्वल्लभो भवेत् ।१०३
ब्राह्मीरसे स्वकल्काढ्यं कपिलाज्यं पचेज्जपन् ।
पिबेद्दिनादौ तं नित्यं सर्वशास्त्रर्थविद्भवेत् ।१०४
अनया विद्यया जप्तं ब्राह्मीपत्रञ्चभक्षयेत् ।
न विस्मरति मेधावी श्रुत्वा वेदागमान्पुनः ।१०५

इस मन्त्र का ग्यारह लाख जप करना चाहिए और जप का दशांश घृत से होम करे । मातृका कल्पित पीठ पर पूर्व की ही भाँति उस देवी का अभ्यर्चन करे ।१०१। ढाक के पुष्पों से हवन करके परा सिद्धिकी प्राप्ति किया करता है । उसी के समान कदम्ब के पुष्पों से और श्री वृक्ष के फलों से होम करने पर भी फल हुआ करता है ।१०२। कुन्द से समुत्पन्न अथवा नन्द्यावर्त के पुष्पों से होम करके शीघ्र ही श्री की प्राप्ति किया करता है और वाग्वल्बभ हो जाता है ।१०३। अपने ही कल्क से युक्त ब्राह्मी बूँटी के रस को कपिला गौ के घृत में जप करता हुआ पाचन करे । उसको दिन के आदि में नित्य पीवे तो सब शास्त्रों के अर्थों का ज्ञाता हो जाया करता है ।१०४। इस विद्या से अभिमन्त्रित किए हुए ब्राह्मी बूँटी के पत्रों का भक्षण करे तो मेधावी और वेद आगमों का श्रवण करके कभी भी भूलता नहीं है ।१०५।

बहुना किमियं विद्या जपतां कामदामणिः ।
तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखः ।१०६
बिन्द्वर्धीशयुतो वह्निर्बिन्दुसद्योऽम्बुमाम भृगुः ।
उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतार्थिनाम् । १०७
अङ्गानि कल्पयेद्बीजैर्द्विरुक्तैर्जातिसंयुतैः ।१०८

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालङ्कृतां वाहुभिःस्वै
र्व्याख्यां वर्णाक्षमालां मणिमयकलशं पुस्तकं चोद्वहन्ती ।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविनम्रन्मध्यदेशामधीशां
वाचा, मीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम् ।१०९
त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात्तदशांशतः ।
पायसेनाज्यसिक्तेन संस्कृते हव्यवाहने ।११०

इस विद्या के विषय में अधिक क्या कहा जावे, इसके जप करने वालों को यह कामनाओं के देने वाली चिन्तामणि ही हैं । अब अन्य मन्त्र का उद्धार बतलाया जाता है—विष्णोः शयन—आकार, तोयस्थ-वकारस्थ, चतुर्मुख केवल स्वर रहित ककार, अर्धीश-ऊ, वह्नि-रेफ से युक्त सम-ओकार, अम्बु-वकार, भृगु-सः, ये सत्पुरुषों के द्वारा सारस्वत के अर्थियों के लिए तीन बीज कहे गये हैं ।१०६।१०७। दो बार कहे हुए जाति संयुत बीजों से अङ्गों की कल्पना करनी चाहिए ।१०८। ध्यान बताया जाता है—मोतियों के हार के समान अवदात अर्थात् श्वेत-शिर में चन्द्रमा की कला से विभूषित अपनी बाहुओं के द्वारा व्याख्या-वर्णों की अक्षमाला, मणिमय कलश और पुस्तक को वहन करती हुई-आपीन (स्थूल) और ऊँचे स्तनों के भार से विनम्र मध्य देश वाली तीनों भुवनों के द्वारा वन्दित, पुण्डरीक पर विराजमान वाणी की अधीशा का मैं स्तवन करता हूँ ।१०९। इस मन्त्र का तीन लाख जप करना चाहिए और जप का दशांश होम करे । होम संस्कार किए हुए अग्नि में आज्य से सिक्त पायस के द्वारा करना चाहिए ।११०।

वागीशी पूजयेत्पीठे विधिना मातृकोदिते ।
प्राक् प्रस्तुतेन मार्गेण प्रत्यहं साधकोत्तमः ।१११
व्याघातकुसुमैर्हुत्वा वाक्सिद्धिमतुलां लभेत् ।
जाती पुष्पैः सिताम्भोजैः सिक्तैश्चन्दनवारिणा ।११२
नन्द्यावर्तैः शुभैः कुन्दैर्हुत्वा वाक्सिद्धिमाप्नुयात् ।
जपन् बीजत्रयं मन्त्री सभायां जयमाप्नुयात् ।११३
सितां वचां वा ब्राह्मीं वा जप्त्वा खादेद्दिनागमे ।
मेधां काममवाप्नोति साधकोनात्र संशयः ।११४
एवमुक्तेषु मन्त्रेषु दीक्षितोयतमानसः ।
एवं यो भजते भक्तया स भवेद् मुक्तिभुक्तिभाक् ।११५
सुसितैर्गन्धकुसुमैः पूजा सारस्वते विधौ ।
दूर्वाबीजाङ्कुरं पुष्पं राजवृक्षसमुद्भवम् ।११६
उत्पलानि प्रशस्तानि सिन्दुवारांकुराणि च ।
भजेत्सरस्वतीं नित्यमेतानि परिवर्जयेत् ।११७

मातृका में कथित पीठ पर विधि से वागीशी का अर्चन करना चाहिए। साधकोत्तम को पूर्व से प्रस्तुत मार्गके ही द्वारा प्रतिदिन पूजन करे ।१११। व्याघात पुष्पों से होम करके अतुल वाक् सिद्धि की प्राप्ति करता है। जाती के पुष्पों-श्वेत कमलों को चन्दन के जल में सिक्त करके अथवा नन्द्यावर्त के शुभ पुष्पों से कुन्द पुष्पों से हवन करके वाक् सिद्धि को प्राप्त किया करता है। मन्त्रधारी तीनों बीजों का जप करता हुआ सभा में विजय प्राप्त करता है ।११२।११३। सित वचा अथवा ब्राह्मी बूँटी, को अभिमन्त्रित करके दिन के आगम में खावे तो साधक पूर्ण मेधा को प्राप्ति किया करता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।११४ इस तरह से उक्त मन्त्रों में दीक्षित यतमानस जो ऐसा भक्ति से सेवन करता है वह भुक्ति और मुक्ति को प्राप्त करने वाला होता है ।११५। सारस्वत विधि में सुन्दर श्वेत गन्ध और पुष्पों से पूजा होती है। दूर्वा कुर, पुष्प, राजवृक्ष मे समुद्भूत पुष्प और उत्पल तथा सिन्दु

धारांकुर प्रशस्त होते हैं। सरस्वती देवी का नित्य सेवन करना चाहिए और इनको वर्जित कर देवे।११६।११७।

आम्रातं गृञ्जनं विल्वं कलञ्जं लशुनं तथा।
तैलं पलाण्डुं पिण्याकं शाङ्गष्टिमपि भोजने।११८
सर्वं पर्युषितं त्याज्यं सदा सारस्वतार्थिना।
नाचरेन्निशि ताम्बूलं स्त्रियं गच्छेद्दिवा न च।११९
न सन्ध्ययोः स्वपेज्जातु नाशुचिः किञ्चिदुच्चरेत्।
प्रदोषेषु भवेन्मौनी दिग्वस्त्रा न विलोकयत्।१२०
न पूष्पितां स्त्रियं गच्छेन्न निन्देद्वामलोचनाम्।
न मृषा वचनं ब्रयान्नाक्रमेत्पुस्तकं सुधीः।१२१
अक्षराढयानि पत्राणि नोपेक्षेन न लंघयेत्।
चतुर्दर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्ग्रहणेषु च।१२२
संक्रमेषु च सर्वेषृ विद्यां नैव पठेद्द्विजः।
व्याख्याने सन्त्यजेन्निद्रामालस्य जृम्भणं बुधः।१२३
क्रोधं निष्ठीवनं तद्वन्नीचाङ्गस्पर्शनं तथा।
मनुष्यसर्पमार्जारमण्डूकनकुलादयः।१२४
अन्तरा यदि गच्छेयुस्तदा व्याख्यां परित्यजेत्।
निशासु दीपध्वंसेषु पाठं सद्यः परित्यजेत्।१२५
ज्ञात्वा दोषानिमान्सम्यग् भक्त्यायो भारती यजेन्।
वाचां सिद्धिमवाप्नोति वाचस्पतिरिवापरः।१२६

आम्रत, गाजर, विल्व, कलञ्ज, लशुन, तेल, प्याज, पिण्याक, और शाङ्गष्टिक इनका भोजन में वर्जन कर देना चाहिए। सभी वस्तु जो पर्य्युषित हो त्याग देनी चाहिये। जो सारस्वत का इच्छुक हो उसे ऐसा त्याग कर देना चाहिए। रात्रि में ताम्बूल का सेवन न करे और दिन में कभी स्त्री का गमन न करे।११८।११९। दोनों सन्ध्याओं में कभी शयन न करे और अशुचि रहकर कुछ भी उच्चारण न करे। प्रदोषों में मौनी ब्रतधारी रहे और नग्न स्त्री को कभी नहीं देखना

चाहिए ।१२०। जो स्त्री रजो धर्म में हो उसका गमन नहीं करे और सुन्दर नेत्रों वाली स्त्री की निन्दा नहीं करनी चाहिए। असत्य वचन कभी न बोले और सुधी पुरुष पुस्तक का अतिक्रमण नहीं करे ।१२१। जो भी पत्र अक्षरों युक्त हों उनकी उपेक्षा न करे तथा उनको लांघन भी नही चाहिए। चतुर्दशी, अष्टमी, पर्व दिन, प्रतिपदा, उग्र ग्रहण, सब संक्रमणों में द्विज विद्या न पढ़े। बुध पुरुष व्याख्यान में निन्दा का तथा जँभाई और आलस्य का त्याग कर देवे ।१२२।१२३। क्रोध, थूकना, नीच के अङ्ग का स्पर्श न करे। मनुष्य, सर्प, मार्जार, मेंढ़क और नकुल आदि यदि बीच में होकर जावें तो व्याख्या का परित्याग कर देना चाहिए ।१२४। निशा में दीप के बुझने पर पाठ का तुरन्त त्याग कर देवे। इन दोषों का ज्ञान प्राप्त कर भली भाँति भक्ति से जो भारती का यजन करता है वह दूसरे वाचस्पति के ही समान सिद्धि को प्राप्त किया करता है ।१२५।१२८।

अष्टम पटल

लक्ष्मी मन्त्र प्रकरण

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान् ।
यस्याः कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्द्धते ।१
वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम् ।
बीजमेतत् श्रियः प्रोक्तं चिन्तामणिरिवापरः ।२
ऋषिर्भृगुर्निचृच्छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।
षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्यादङ्गानि षट्क्रमात् ।३
कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजे-
हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।

विभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिसितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ।४
भानुलक्षं जपेन्मत्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः ।
श्रियमभ्यर्चयन्नित्यं सुगन्धिकुसुमादिभि ।५
तत्सहस्रं प्रजुहुयात्कलशैर्मधुरोक्षितैः ।
जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ।६
बिल्वै फलैर्वाजुहुयात् त्रिभिर्वा साधकोत्तमः ।
अत्र सम्यग्यजेत्पीठं नवशक्तिसमन्वितम् ।७

इसके अनन्तर श्रीदेवी के मन्त्रों के विषय में वर्णन करूंगा जो श्री और सौभाग्य के फलों का प्रदान करने वाले हैं। जिस श्रीदेवी के कटाक्ष मात्र से ही तीनों लोक वृद्धि को प्राप्त होते हैं ।१। अब मन्त्र का उद्धार कहा जाता है—वह्नि से समारूढ़ वान्त हो और वाम नेत्र इन्दु से संयुत होवे—यही श्रीदेवी का बीज कहा गया है जो दूसरी चिन्तामणि के ही समान होता है । वन्ता का अर्थश है—वह्नि का अर्थ रेफ होता है—वाम नेत्र ईकार को कहते हैं--इन्दु का तात्पर्य विन्दु होता है । चिन्तामणि का यह प्रभाव है कि उसके समक्ष में जो भी मन में विचारा जावे वही पूर्ण हो जाता है ।२। इस मन्त्र का ऋषि भृगु है—निचृछन्द है और श्री देवता कहा गया है । षट्क्रम से षड् दीर्घ युक्त बीज के द्वारा अङ्गों का कर्म करना चाहिए ।३। अब ध्यान बतलाया जाता है—जो देवी अपनी कान्ति के द्वारा सुवर्ण के सदृश है जो हिमवान् पर्वत के समान परम विशाल कार्य चार गजों के द्वारा सूडों से उक्षिप्त सुवर्ण निर्मित और अमृत से भरे हुए कुम्भों से असिच्चमान श्रीदेवी को जो अपने करों से वरदान-दो कमल और अभयदान को धारण करने वाली और किरीट् से परमोज्ज्वल तथा क्षोम वस्त्र से नितम्ब विम्बों को बाँधकर अतीव शोभित मन से विराजमान है, उस श्री देवी की मैं वन्दना करता हूँ ।४। दीक्षा ग्रहण करके दीक्षित होकर अपनी इन्द्रियों को जीतने वाले को इस मन्त्र का बारह लाख जप करना चाहिए और

नित्य प्रति सुगन्धित पुष्प आदि अर्चनोपचारों के द्वारा श्री देवी का अभ्यर्चन करना चाहिए ।५। उसका एक सहस्र मधुरोक्षित कलशों से प्रकर्ष रूपसे हवन करना चाहिए । अथवा जपके अन्त में मन्त्रधारी व्यक्ति को मधुर से समाप्लुत तिलों से हवन करना चाहिए ।६। अथवा साधना करने वालों में परम श्रेष्ठ पुरुष को विल्व के फलों के द्वारा हवन करना चाहिए । यहाँ पर 'विभिन्न' इस पद का भावार्थ है कि श्री सूक्त के द्वारा एक-एक वार हवन करके पीछे मूल के द्वारा हवन करना चाहिए ।७।

विभूतिरुन्नतिः कान्तिः सृष्टिः कीर्तिश्च सन्नतिः ।
पुष्टिरुत्कृष्टिरृद्धिश्च सम्प्रोक्ता नव शक्तयः ।८
अन्तःबाह्य यजेद्देवीं परिवारसमन्विताम् ।
बीजाढ्यमासनन्दत्त्वा मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।६
यजेत्पूर्ववदङ्गानि दिग्दलेष्वर्चयेत्ततः ।
वासुदेवं सङ्कर्षणंच प्रद्युम्नमनिरुद्धकम् ।१०
हिमपीततमालेन्द्रनीलाभान्पीतवाससः ।
शंखचक्रगदापद्मधारिणस्तान् चतुर्भुजान् ।११
विदिग्गतेष पत्रेषु दमकादीन्गजेद्रजान् ।
दमकं सलिलं चैव गुग्गुलं च कुरुण्टकम् ।१२
जपेच्छंखनिधिं देव्या दक्षिणे दयितान्वितम् ।
मुक्तामाणिक्यसंकाशौ किंचित्स्मितमुखाम्बुजौ ।१३
अन्योन्यालिङ्गनपरौ शंखपङ्कजधारिणौ ।
विलसद्रत्नवर्षाभ्यां शंखभ्यां परिलाञ्छितौ ।१४

नौ शक्तियाँ, विभूति, उन्नति, कान्ति, सृष्टि, कीर्ति, सन्नति, पुष्टि, उत्कृष्टि और ऋद्धि—ये नौ शक्तियाँ कहीं गयी हैं ।८। यहाँ पर देवी का आवाहन करके परिवार से संयुत देवी का यजन करना चाहिये । बीज से आढ्य आसन अर्पित करके मूल के द्वारा मूर्ति की कल्पना करनी चाहिए ।६। पूर्व की ही भाँति अङ्गों का यजन करे फिर दिग्दलों में अभ्यर्चन करना चाहिए । भगवान वासुदेव, संकर्षण, प्रदुयुम्न और अनि-

रुद्र का दिशाओ में यजन करे, जो क्रम से हिम, पीत, तमाल और इन्द्र नील के समान आभा वाले हैं और पीत वर्ण के वस्त्र धारण किए हुए हैं। उन सबकी चार-चार भुजायें हैं और उनमें शंख, चक्र, गदा और पद्म को धारण करने वाले हैं।१०।११। विदिशाओं में रहने वाले दलों में दमक आदि गजों का यजन करे। उनके नाम ये है—दमक, सलिल, गुग्गुल और कुरुण्टक।१२। देवी के दक्षिण भाग में दयिता से समन्वित शंख निधि का जप करना चाहिए। ये मुक्तामणि के सदृश हैं और उनके मुख कमल पर कुछ-कुछ मन्द मुस्कान विराज रही है।१३। ये दोनों परस्पर में एक दूसरे के आलिङ्गन में तत्पर हैं तथा शंख और पंकज को धारण करने वाले हैं और रत्नों की वर्षा करने वाले शंखों से परिलांछित होते हुए शोभित हैं।१४।

तुन्दिलं कम्बुकनिधिं वसुधारां घनस्तनीम्।
वामतः पङ्कजनिधिं प्रियया सहितं यजेत्।१५
सिन्दूराभौ भुजाश्लिष्टौ रक्तपद्मोत्पलान्वितौ।
निःसरद्रत्नधाराभ्यां पद्माभ्यां मूर्ध्विनलाञ्छितौ।१६
तुन्दिलं पङ्कजनिधिं तन्वीं वसुमतीमपि।
दलाग्रेषु यजेदेता बलाकाद्याः समन्ततः।१७
वलाकीं विमलांचैव कमलां नवमालिकाम्।
विभीषिकां मालिकां च शाङ्करी वसुमालिकाम्।१८
पङ्कजद्वयधारिण्यो मुक्ताहारसमप्रभाः।
लोकेशान् पूजयेदन्ते वज्राद्यस्त्राणि तद्वहिः।१९
इत्थं यो भजते देवीं विधिना साधकोत्तमः।
धनधान्यसमृद्धिः स्याच्छ्रियमाप्नोत्यनिन्दिताम।२०
वक्षः प्रमाणे सलिले स्थित्वा मन्त्रामिमं जपेत्।
त्रिलक्षं संयतो मन्त्री देवीं ध्यात्वाऽर्कमण्डले।२१
स भवेदल्पकालेन रमाया वसतिः स्थिरः।
विष्णुगेहस्थविल्वस्य भूलतास्थाय मन्त्रवित्।२२

तुन्दिल अर्थात् स्थूल उदर वाले—कम्बुक निधि-घने स्तनों वाली वसुधारा तथा वाम भाग में पकज निधि का प्रिया के सहित यजन करे ।१५। ये दोनों सिंदूर की आभा वाले हैं—भुजाओं के द्वारा आश्लिष्ट हैं—और रक्त पद्मोत्पलों से समन्वित हैं—जिनसे रत्नों की धारा निःसरण कर रही हैं ऐसे पद्मों से मूर्द्धा में लाँछित है अथातु मस्तक में ऐसे रत्नों की धारा के निःसरण करने वाले पद्म संस्थित है ।१६। तुन्दिल पंकजनिधि का और तन्वी वसुमती का भी दलों के अग्र भागों में सभी ओर से इन बलाका आदि का यजन करना चाहिए ।१७। बलाकी, विमला, कमला, नव मालिका, विभिषिका, मालिका, शांकरी वसुमालिका, ये दो कमलों की धारण करने वाली और मुक्ताहार के समान प्रभा वाली हैं। अन्त में लोकेशों की पूजा करे और उनके बाहिर वज्र आदि अस्त्रों का यजन करना चाहिए ।१८।१९। इस प्रकार से विधि के साथ जो साधकोत्तम देवी का यजन किया करता है, उसको धन-धान्य की समृद्धि होती है और वह अनिन्दित श्री की प्राप्ति किया करता है ।२०। वक्षःस्थल के प्रमाण वाले जल में स्थिर होकर इस मन्त्र का जप करे। मन्त्र के धारण करने वाला परम संयम से युक्त होकर सूर्य मण्डल में देवी का ध्यान करके तीन लाख जप करे। वह जप करने वाला बहुत थोड़े ही समय में रमादेवी की वासस्थली में स्थिर हो जाया करता है। वह मन्त्र का ज्ञाता भगवान विष्णु के गृह में स्थित बिल्व वृक्ष के मूल में समास्थित होकर जप करे ।२१।२२।

त्रिलक्षं प्रजपेन्मंत्रं वाञ्छितं लभते धनम्।
अशोकवह्नौ जुहुयात्तण्डुलैराज्यलोलितैः ।२३
वशयत्यचिरादेव त्रैलोक्यमपिसन्त्रवित्।
जुहुयात्तण्डुलैः शुद्धैरर्काग्नौ नियुतं वशी ।२४
राज्यत्तियमवाप्नोति राजपुत्रो महीयसीम।
जुहुयात् खादिरे वह्नौ तण्डुलै र्मधुरोक्षितैः ।२५

राजावश्योभवेच्छीघ्रं महालक्ष्मीश्च वर्द्धते ।
विल्वच्छायामधिवसन् विल्वमिश्रहविष्यभुक् ।२६
संवत्सरद्वयं हुत्वा तत्फलैरथवाम्बुजैः ।
साधकेन्द्रो महालक्ष्मीं चक्षुषा पश्यतिध्रवम् ।२७
हविषा धृतसिक्तेन पायसेन सर्सपिषा ।
हुत्वा श्रियमवाप्नोति नियुतं मन्त्रवित्तमः ।२८
मधुराक्तारुणाम्भ जैर्जुहुयाल्लक्षमादरात् ।
नमुञ्चति रमा तस्य वंशमाभूतसंप्लवम् ।२९

मन्त्रधारी पुरुष मन्त्र का तीन लाख जप करे तो वह अपना वांछित धन प्राप्त कर लिया करता है । घृत से आप्लुत तण्डुलों के द्वारा अशोक की वह्नि में हवन करना चाहिए ।२३। मन्त्र का ज्ञाता पुरुष तीनों लोकों को भी तुरन्त ही अपने वश में कर लिया करता है । वशी पुरुष को एक नियुत संख्या में आक की अग्नि में शुद्ध तण्डुलों के द्वारा हवन करना चाहिए ।२४। राजपुत्र बहुत बड़ी राज्य की श्री का लाभ कर लिया करता है । मधुर से उक्षिप्त तण्डुलों के द्वारा खदिर वह्नि में होम करे ।२५। बहुत ही शीघ्र राजा वश्य हो जाया करता है और उसको महालक्ष्मी की वृद्धि हो जाती है । विल्व के वृक्ष की छाया में अर्थात् बेल के वृक्षके नीचे अधिवास करके बिल्व फल से मिश्रिन हविष्य को भोजन करने वाला दो वर्ष पर्यन्त बिल्व के ही फलों के अथवा कमलों के द्वारा हवन करके साधना करने वालों में शिरोमणि पुरुष अपने नेत्रों से ही महालक्ष्मी का दर्शन निश्चित रूप से प्राप्त कर लेता है ।२६।२७। मन्त्र वेत्ताओं में श्रेष्ठ पुरुष घृत से सिक्त हवि से और घृत से संयुत क्षीर से हवन करके जो एक नियुत आहुतियाँ देवे, तो श्री की प्राप्ति कर लेता है ।२८। बड़े आदर के भाव से मधुर से अक्त अरुण कमलों के द्वारा हवन करे । उस पुरुष को संसार के संल्पव पर्यन्त तथा उसके वंश वालों को रमादेवी कभी भी परित्याग नहीं करती है अर्थात् सदा ही रहा करती है ।२९।

वाग्भव वनिता विष्णोर्माया मकरकेतनः।
चतुर्बीजात्मको मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥
अङ्गानि कुर्याद्दीर्घाढ्यरमाबीजेन मन्त्रवित् ।३०
माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्ताग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां मुद्रा ।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतीर्दधानां हरेः ।
कान्तां, कांक्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम् ।३१
भानुलक्षं हविष्याशी जपेदन्ते सरोरुहैः ।
जुहुयादरुणैः फुल्लै तत्सहस्रं जितेन्द्रियः । २
रमायाः कल्पिते पीठे तद्विधानेन पूजयेत् ।
कुर्य्यात्प्रयोगांस्तत्रस्थान्मनुना तेन साधकः ।३३
निधिभिः सेव्यते नित्यं मूर्तिमद्भिरुपासितैः ।
दीर्घा यादिविसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरां ।३४
वान्ते सिन्यै प्रिया वह्नेर्मनः प्रोक्तो दशाक्षरः ।
ऋषिर्दक्षो विराट्छन्दो देवता श्रीः समीरिता ।३५
देव्यै हृदयामाख्यातं पद्मिन्यै शिर ईरितम् ।
विष्णुपत्न्यै शिखाप्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम् ।३६

वाग्भव-विष्णु भगवान की वनिता—माया–मकरकेतन—यह चार बीजों के स्वरूप वाला मन्त्र चारों वर्गों के अर्थात् धर्म—अर्थ—काम–मोक्ष के फलों का प्रदान करने वाला होता है। मन्त्र का ज्ञाता दीर्घ से संयुत रमा के बीज के द्वारा अङ्गों को करे ।३०। ध्यान एवं वन्दना बतलाते हैं—माणिक्य के समान प्रभावाली—जिनकी सूडों में रत्नों से निर्मित जल से परिपूर्ण कलश है ऐसे हिम (वर्फ) के सदृश चार गजों के द्वारा आनन्द पूर्वक आसिच्यामान है अर्थात् गजों की सूड़ों में स्थित कलशों से अभिषेक की जा रही है—जिसकी भुजाओं में जो कमल समान कर वाली हैं उनमें वरदान पद्मों का जोड़ा और अभयदान धारण किये हुईं हैं। ऐसी भगवान हरि की कान्ता की जो

अभीष्ट मनोरथों के लिए कल्प लतिकाके सदृश हैं और कमल के आसन पर विराजमान हैं मैं वन्दना करता हूँ ।३१। हविष्य का भोजन करने वाला पुरुष बारह लाख जप के अन्त में अरुण तथा विकसित कमलों के द्वारा इन्द्रियों को अपने वश में रखते हुए बारह सहस्र आहुतियों का हवन करे ।३२। रमादेवी के कल्पना किये हुए पीठ पर उसके विधान से अभ्यर्चन करे । साधक वहाँ पर स्थित प्रयोगों को उस मन्त्र के द्वारा करे ।३३। वह उपासक उपासना की हुई मूर्तिमान निधियों के द्वारा नित्य ही सेवित हुआ करता है । नकार शक्ति–जिसके अन्त में विसर्ग हों ऐसा ककार और मकार-वकार के अन्त में स्वरूप और स्वाहा–यह दश अक्षरों वाला मन्त्र है । इसका ऋषि दक्ष है तथा विराट् छन्द है और देवता इसका श्रीदेवी कही गयी है ।३४।३५। देवी के लिए हृदय कहा गया है और पद्मिनी के लिए शिर बताया गया है । विष्णुपत्नी के लिए शिखा कही गयी है तथा वरदान के लिए तनुच्छद बताया गया है ।३६।

अस्त्रं कमलरूपायै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ।
अंगमन्त्राः समुद्दिष्टा ध्यायेद्देवीमनुन्यधीः ।३७
आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती ।
दानं पद्मयुगाभये च वपुषां सौदामिनीसन्निभा ।
मुक्तादामविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी ।
पायाद्वः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्ती हरिम् ।३८
दशलक्षं जपेन्मंत्रं मंत्रविद्विजितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयान्मंत्रान् मधुरात्तैः सरोरुहैः ।३९
श्रीपीठे पूजयेद्देवीमङ्गानि प्रथमं यजेत् ।
बलाकाद्यास्ततः पूज्या लोकेशातिस्त्रावृतीरपि ।४०
इति सम्पूजयेद्देवीं सम्पदामालयोभवेत् ।
समुद्रगायां सरिति कण्ठमात्र जले स्थितः ।४१

त्रिलक्षं प्रजपेन्मत्री साक्षाद्वैश्रवणोभवेत् ।
आराध्योत्तरनक्षत्रे देवीं स्रक्चन्दनादिभिः ४२

अस्त्र कमल रूपा के लिये है । ये नमः अन्त वाले तथा प्रणव आदि वाले हैं । ये अङ्ग मन्त्र कहे गये हैं । अनन्य बुद्धिवाला होकर देवी का ध्यान करना चाहिए ।३७। ध्यान और वन्दना वतलायी जाती है–देवी कमल पर विराजमान है–मुख पर मन्द मुस्कान की छटा दिखाई दे रही है–अपने कर कमलोसे वरदान–दो पद्म और अभयदान को धारण किये हुईं हैं—देवी का शरीर विद्युल्लता के सदृश है । जिनके ऊपर मोतियों की माला विराजमान है ऐसे स्थूल एवं समुन्नत स्तनों से सुशोभित हैं—अपने कटाक्षों के वैभव के द्वारा श्री हरि को आनन्दित करती हुए कमला देवी आपका परित्राण करें ।३८। अपनी इन्द्रियों को जीत लेने वाला मन्त्र का ज्ञाता इस मन्त्र का दस लाख जप करे । जप के दशम भाग को मधुर से अक्त कमलों के द्वारा आहुति देवे ।३९। श्रीपीठ पर देवी का यजन करे और अङ्गों का यजन पहिले करना चाहिए । वलाका आदि का इसके अनन्तर पूजन करे और फिर लोकेशी के यजन की तीन आवृत्ति भी करे ।४०। इस रीति से देवी का भला भाँति अभ्यर्चन करना चाहिए । वह यजन करने वाला सम्पदाओं का निवास स्थान बन जाया करता है । महासागर में गमन करने वाली सरिता में कण्ठ मात्र तक जल में स्थित होकर मन्त्रधारी को तीनलाख जप करना चाहिए । इसके प्रभाव से वह साक्षात् वैश्रवण हो जाया करता है । तीनों उत्तरा नक्षत्रों में माला पुष्प चन्दन आदि के द्वारा देवी की आराधना करे ।४१।४२।

नन्द्यावर्तभवैः पुष्पैः सहस्रं जुहुयात्ततः ।
पौर्णमास्यां फलैर्विल्वैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः ।४३
पञ्चम्यांविशदाम्भोजैः शुक्रवारे सुगन्धिभिः ।
अण्यैर्वाविशदैः पुष्पैः प्रतिमासं विशालधीः ।
स भवेदब्दमात्रेण सर्वदा संपदां निधिः ।४४

वाग्भभं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः ।
तार्तीयं हि जगत्पार्श्वोवह्निबीजसमुज्ज्वलः ।४५
अर्घीशाढयोभृगुस्त्यैहृत् मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
महालक्ष्म्याः समुद्दिष्ट स्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः ।४६
ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्ट श्छन्दो गायत्रमीरितम् ।
देवता जगतामादिर्महालक्ष्मीः समीरिता ।४७
हस्तौ संशोध्य मंत्रेण तारादिहृदयांतिकम् ।
बीजानां पञ्चकं न्यस्येदंगुलीषु यथाक्रमम् ।४८
मंत्रशेषं न्यसेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि ।
मूर्धादि चरणं यावत् मन्त्रेण व्यापक न्यसेत् ।४९

नदी या आवर्त्त में समुत्पन्न पुष्पों के द्वारा फिर एक सहस्र आहुतियां देवें। पूर्णिमा तिथि में बिल्व के फलों से जो तीनों मधुरों से समाप्लुत होवें हवन करे। पंचमी तिथि में शुक्रवार के दिन विकसित कमलों से होम करे जो सुगन्धित होवें। विशाल बुद्धि वाले को प्रति मास हवन करना चाहिए चाहें कमलों के अभाव में अन्य विकसित पुष्प होवें। ऐसा करने वाला व्यक्ति केवल एक वर्ष पर्यन्त करने पर सम्पदाओं की निधि हो जाया करता है ।४३।४४। वाग्भव—माया—वीज रमा—मकर केतन–तार्तीय वाला का या भैरवी का स्वरूप यकार–रेफ युक्त लेनप्र—ॐ से आढ्य सकार उससे सू—स्वरूप—हन्तम्—ताराद्य यह मन्त्र द्वादश अक्षरों वाला है जो महा लक्ष्मी का उद्दिष्ट किया गया है। ताराद्य सब सिद्धियों का देने वाला है ।४५।४६। इसके ऋषि ब्रह्मा कहे गये हैं और छन्द गायत्री होता है इसका देवता जगतों का आदि महालक्ष्मी बताई गई है ।४७। दोनों हाथों को भली भाँति-शुद्ध करके मन्त्र के द्वारा तार से आदि लेकर हृदय के समीप तक पाँचो बीजों का क्रमानुसार अंगुलियों में न्यास करना चाहिए ।४८। मन्त्रधारी को चाहिये कि मन्त्र के शेष दोनों तलों में न्यास करे। मूर्धा से आदि लेकर चरण पर्यन्त मन्त्र के द्वारा व्यापक न्यास करना चाहिए ।४९।

मूर्धादिवक्षोगुह्या ड्घ्रो पञ्चबीजानि विन्यसेत् ।
शेषान्न्यसेत्सप्तवर्णान् हृदये सप्तधातुषु ।५०
अङ्गानि पञ्चभिर्बीजैरस्त्रं शिष्टाक्षरैर्भवेत् ।
ज्ञानैश्र्यादिभिर्युक्तैश्चतुर्थ्यंतैः सजातिभिः ।५१
ज्ञानमैश्वर्यशक्ती च बलवीर्ये सतेजसा ।
ज्ञानैश्वर्यादयः प्रोक्ताः षट् क्रमादंगदेवताः ।५२
एवं न्यस्तशरीरोऽसौ स्मरेदुद्यानमुत्तमम् ।
चम्पकाशोकपुन्नागपाटलैरुपशोभितम् ।५३
लवंगमालतीबिल्त्वदेवदारुनमेरुभिः ।
मंदारपारिजाताद्यैः कल्पवृक्षैः सुपुष्पितै। ।५४
चन्दनैः कर्णिकारैश्च मातुलिंगैश्च वञ्जुलैः ।
दाडिमीलकुचांकोलैः पूगैः कुरवकैरपि ।५५
कदलीकुंदमंदारनालिकेरैरलङ्कृतैः ।
अन्यैः सुगंधिपुष्पाद्यैर्वृक्षसंघश्च मण्डितम् ।५६

मूर्धा के आदि में—वक्ष—,गुह्य और दोनों चरणों में पाँच बीजों का न्यास करे। शेष सात वर्णों को हृदय में न्यास करे। पाँच बीजों से अङ्गों को सप्तधातुओं में न्यास करे और निरन्तर शिष्टाक्षरों द्वारा होवें। ज्ञान ऐश्वर्य आदि से युक्त—सजाति और जिसके अन्त में चतुर्थी विभक्ति हो। ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, बल, वीर्य तेजके सहित होवे ये क्रम से ज्ञानैश्र्यादिक अङ्ग देवता कहे गये हैं ।५०।५१।५२। इस रीति से जिसने शरीर में न्यास कर लिया है वह एक उत्तम उद्यान का स्मरण करे जो उद्यान चम्पक—अशोक पुन्नाग और पाटल से उप शोभित होवे ।५३। जो लवंग, मालती, बिल्व, देवदारु, नमेरु, मन्दार पारिजात आदि कल्प वृक्षों से शोभा सम्पन्न होवे, जिन वृक्षों में सुन्दर पुष्प भी होवें। चन्दन, कर्णिकार, मातुलिंग, वञ्जुल, दाड़िम, लकुच, कङ्कोल, पूग, कुरवक, कदली, कुन्द, मन्दार, नारियल से अलंकृत होवे—ऐसे ही अन्य सुगन्धित पुष्पादि से तथा वृक्षों के समुदायों से मण्डित होवे ।५४।५५।५ ।

मालती मल्लिका जाती केतकी शतपत्रकेः ।
पारन्ती तुलसी नन्द्यावर्तेर्दमनकैरपि ।५७
सर्वतुं कुं सुमोपेतैर्नमद्भिरुपशोभितम् ।
मन्दमारुतसंभिन्नकुसुमामोदिदिङ् मुखम् ।५८
तस्य मध्ये सदोत्फुल्लैः कुमुदोत्पङ्कजैः ।
सौगन्धिकैश्च कह्लारर्नवैः कुवलयैरपि ।५९
हंसासारसाकारण्ड भ्रमरैश्चक्रनामभिः ।
अन्यैः कलकलारावैर्विहंगैरुपशोभितम् ।६०
तहासरसि तन्मध्ये पुलिनेऽतिमनोहरे ।
परितः पारिजाताढ्यंमण्डपं मणिकुट्टिमम् ।६१
उद्यदादित्यसंकाश भास्वर शशिशीतलम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं हेमप्राकारशोभितम् ।६२
रत्नोपक्लृप्तिसंशोभि कपाटाष्टकसंयुतम् ।
नवरत्नसमावलृप्त तुङ्गगोतुरतोरणम् ।६३

मालती—मल्लिका—जाती—केतकी—शतपत्रक—पारन्ती—तुलसी-नन्द्यावर्त्त—दमनकों से तथा सव ऋतुओं में होने वाले कुसुमों से युक्त नीचेकी ओर झुके हुये होवें । इनसे उपशोभित होवें । ऐसाध्यान हो—यही स्मरण करना चाहिए । मन्द वायु से विकसित हुए पुष्पों की गन्ध से युक्त जिसमें दिशाओं का मुख होवें ।५७।५८। उसके मध्य में सदा उत्फुल्ल कुमुद उत्पल और पंकज होवें तथा सौगन्तिक—कल्हार नव कुवलय होवें—इनसे उपशोभायमान होवें ।५९। अन्य कल-कल रव (ध्वनि) वाले पक्षियों वह शोभायमान है ! उनमें एक महान् सरोवर है जिसका पुलिन अतीव मनोहर है । दोनों ओर पारिजाति के वृक्ष हैं, उनसे संयुत एक मण्डप है जिसमें मणियों का फर्श लग रहा है ।६०।६१। वह उदोयमान सूर्य के समान है जो परम भास्कर है और चन्द्रमा के सदृश शीतल है । उसमें चार द्वार हैं तथा सुवर्ण की चार दिवारी से परम शोभित है । वह रत्नों की उपक्रृति से शोभा

वाला है अर्थात् उसमें रत्न लगे हुए हैं। उस मण्डप के आठ कपाट (किवाड़) हैं। वह नव रत्नों से अन्वित हैं और उसमें ऊँचे गोपुर और तोरण हैं।६२।६३।

हेमदण्डसमालंबि ध्वजावलिपरिष्कृतम्।
नवरत्नसमाबद्धस्तम्भराजिविराजितम्।६४
सहस्रदीपसंयुक्तदीपदण्डविराजितम्।
तप्तहाटकसक्लृप्तवातायनमनोहरम्।६५
जानावर्णांशुकोवद्धसुवर्णशतकोटिभिः।
किंकिणीमालिकायुक्तं पताकाभिरलङ्कृतम्।६६
जातरूपमयैरत्नविचित्रै रतिविस्तृतैः।
माणिक्यरत्नैर्वेदूर्य्यस्वर्णमालावलीयुतैः।६७
अन्तरान्तरसम्बद्धरत्नैर्दृष्टिमनोहरैः।
विचित्रैश्चित्रवर्णैश्च वितानैरुपशोभितम्।६८
सर्वरत्नसमायुक्तं हेमकुट्टिसमुज्ज्वलम्।
केतकीमालतीजातीचम्पकोत्पलकेसरैः।६९
मल्लिकातुलसीजातीनन्द्यावर्थकदम्बकैः।
एतैरन्यैश्च कुसुमैरलङ्कृतमहीतलम्।७०

उस मण्डप पर ध्वजाऐं लगी हुई हैं, जिससे सुपरिष्कृत हो रहा है और वे ध्वजाऐं सुवर्ण रचित दण्डों में बँधी हुयीं हैं। नौ प्रकार के रत्नों द्वारा समावद्ध खम्भों से शोभायमान है।६४। सहस्रों द्वीप दण्डों में सहस्रों ही दीपों से समायुक्त है। उस मण्डप में वातायनों की परम सुन्दरता है जो तपाये हुए सुवर्ण से सक्लृत हैं।६५। अनेक वर्ण के वस्त्रों से उपवद्ध हैं जिसमें सैकड़ों करोड़ सुन्दर वर्ण हैं। वह किंकिणियों की मालाओं से समन्वित है। और वहुत—सी पताकाओं से युक्त है।६६। वह वितानों से उपशोभित हैं जो सुवर्ण से परिपूर्ण रत्नों से विचित्र हैं और अत्यधिक विस्तार वाले हैं। जो माणिक्य (लाल वर्ण का रत्न) रत्नों से और वैदूर्य एवं स्वर्ण की मालाओं से संयुत है।६७। बीच-

वीच में सम्बद्ध रत्नों के द्वारा दृष्टि को मनोहर लगने वाले हैं ऐसे अद्भुत और चित्रों से परिपूर्ण है उन बितानों के द्वारा अतीव मनोहर है।६८। सभी प्रकार के रत्नों से समाबद्ध-सुवर्ण के कुट्टिम वाला तथा अति उज्ज्वल है। केतकी, मालती, जाती, चम्पा, उत्पल केसरों मे, मल्लिका, तुलसी, जाती, नन्द्यावर्त्त, कदम्बो से, इन कथितों के द्वारा तथा अन्य पुष्पों से महीतल अलंकृत है।६९।७०।

अम्बुकाश्मीरकस्तूरीमृगनाभितमालकैः।
चन्दनागरुकर्पूरैरामोदितदितदिगन्तरम।७१
एव सञ्चिन्त्य मनसा मण्डपं सुमनोहरम्।
तन्मध्ये भावयेन्मन्त्री पारिजातं मनोहरम्।७२
तस्याधस्तात्स्मरेन्मन्त्री रत्नसिंहासनं शुभम्।
तस्मिन्सञ्चिन्तयेदेवी महालक्ष्मीं मनोरमाम्।७३
वालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलहत्कोटीरहारोज्ज्वलाम्।
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालैः करैर्मञ्जरीम्।
पद्मे कौस्तुभरत्नमप्यविरतं सम्बिभ्रतीं सुस्मिताम्।
फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत्परां देवताम्।७४
सिञ्जन्मञ्जीरसंशोभिपादाम्भोजविराजिताम्।
नवरत्नगणाकीर्णकाञ्चीदामविभूषिताम्।७५
मुक्तामाणिक्यवैदूर्यसम्बद्धोदरबन्धनाम्।
विभ्राजमानां मध्येन वलित्रितयशोभिताम्।७६
जाह्नवीसरिदावर्तशोभिनाभिविभूषिताम्।
पाटीरपङ्ककर्पूरकुङ्कुमालङ्कृतस्तनीम्।७७

उस मण्डप के सभी दिशाओं में अम्बु काश्मीर (केशर) कस्तूरी, मृगनाभि, तमाल, चन्दन, गूगल, कपूर से आमोद फैला हुआ था अर्थात् सभी ओर परम सुगन्ध छायी हुई थी।७१। उसके मध्य में मण्डप में मन्त्रधारी व्यक्ति को परम मनोहर पारिजात की भावना करनी चाहिए। इसके पूर्व मन में अतीव सुन्दर का चिन्तन कर लेवे।७२। उसके नीचे

की ओर मन्त्रधारी को परम शुभ रत्नों के सुन्दर सिंहासन का स्मरण करना चाहिए। उस पर मध्य में मनोरमा महालक्ष्मी देवी का स्मरण करना चाहिए।७३। अब ध्यान बतलाया जाता है—लाल सूर्य के सदृश्य कान्ति से संयुत—चन्द्रमा के खण्ड से शोभित, कोटीर मुकुट हार से समुज्जल, रत्नाकल्प से विभूषित, स्थूल स्तनों से विनम्र होने वाली करों द्वारा मञ्जरी, पद्मयुगल, कौस्तुभ रत्न को निरन्तर धारण करती हुई, स्मित से युक्त आनन वाली, विकसित कमलों के सदृश लोचनों से समन्वित परादेवता का ध्यान करना चाहिए।७४। बजती हुई मंजीरों से विभूषित चरण कमलों से विराजमान, नौ प्रकार के रत्नों के समूह से समाकीर्ण काञ्चीदाम (कौंधनी) से शोभित भागीरथी गङ्गा नदी के आवर्त (भँवर) के समान शोभा वाली नाभि से विभूषित, पाटीर के पंक, कपूर और कुंकुम से समसंकुल स्तनों वाली महालक्ष्मी का चिन्तन करे।७५।७७।

वारिवाहविनिर्मुक्तमुक्तादामगरीयसीम्।
वहन्तीमुत्तरासङ्गेन्दुकूलपरिकल्पितम्।७८
तप्तकाञ्चनसन्नद्धवैदूर्याङ्गदभूषणाम्।
पद्मरागस्फुरद्वर्णकङ्कणाढ्यकराम्बुजाम्।७६
माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकाभिरलङ्कृताम्।
तप्तहाटकसंक्लृप्तमालाग्रैवेयशोभिताम्।८०
विचित्रविविधाकल्पकम्बुसंकाशकन्धराम्।
उद्यद्दिनकराकारमणिताटङ्कमण्डिताम् ८१
रत्नाङ्कितलसत्स्वर्णकर्णापूरोपशोभिताम्।
जपाविद्रुमलावण्यललिताधरपल्लवाम्।८२
दाडिमोफलबीजाभदन्तपङ्क्तिविभूषिताम्।
कलङ्ककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चन्द्रनिभानाम्।८३
पुण्डरीकदलाकारनयनत्रसुन्दरीम।
भ्रूलताजितकन्दर्पकरकार्मुकविभ्रमामू।८४

वारिवाहों (मेघों) से विर्निमुक्त मोतियों की लड़ी से महान्, उत्तरासङ्ग वहन करती हुई, वस्त्रों से परिकल्पित, तपे हुए सुवर्ण से सन्नद्ध वैदूर्य (मणिविशेष) से निर्मित, अगदों (बाजूबन्द) के भूषण से समन्वित !७७।७८। पद्मराग मणि के समान स्फुरण करने वाले वर्ण से युक्त कंकणों से संयुत कर कमलों वाली ।७९। माणिक्य (लाल रङ्ग का रत्न विशेष) के खण्ड से आवद्ध अंगूठी से विभूषित, तपे सुवर्ण से सक्लप्त माला तथा धैर्य्य से सुशोभायमान, माला और विचित्रा कम्बु से सदृश कन्धरों वाली, उदीयमान सूर्य के आकार वाली मणि से युक्त, ताटङ्क (तरकी, कान का भूषण) से विभूषित, रत्नों से अंकित शोभित सुवर्ण के कर्णापुरों से उपशोभित, जपा के पुष्प तथा विद्रुम के सदृश लावण्य से ललित अधरपल्लवों वाली, अनार के बीजों की आभा से संयुत दांतों की पंक्ति से शोभायमान्, कलंक की कालिमा से रहित शरत्कालीन चन्द्र के सदृश आनन वाली कमल के दल के आकार वाले तीन नेत्रों से परम सुन्दरी-भृकुटियों के द्वारा जीत लिया है कामदेव के धनुष का विभ्रम जिन्होंने ऐसी भौंहों वाली महालक्ष्मी देवी का चिन्तन करे ।८०।८४।

विलसत्तिलपुष्पश्रीविजयोद्यतनासिकाम् ।
ललाटकान्तिविथविजितार्द्धसुधाकराम् ।८५
सान्द्रसौरभसम्पन्नकस्तूरीतिलकाङ्किताम् ।
मत्तालिमालाविलसदलकाढ्यमुखाम्बुजाम् ।८६
पारिजातप्रसूनश्रीवाहिधम्मिल्लबन्धनाम् ।
अनर्घ्यरत्नघटितमुकुटाङ्कितमस्तकाम् ।८७
सर्वलावण्यसतिं भवनं विभ्रमश्रियः ।
तेजसां जन्मभूमिं तां महालक्ष्मीं मनोहराम् ।८८
एवं सञ्चित्य यो देवी हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
भानुलक्षं जपेन्मन्त्र दशांशं जुहुयाद् वृतैः ।८९
जुहुयाच्छ्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतं ततः ।
तर्पयेत्सलिलैः शुद्धैः सुगन्धैरयुत द्वयम् ।९०

श्रीबीजस्योदिते पीठे महालक्ष्मीं प्रपूजयेत् ।
श्रीबीजेनासनं दद्यान्मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।६१

शोभित तिल के फूल की श्री पर विजय प्राप्त करने के लिए समुद्यत सुन्दर नासिका से समन्वित ललाट की कांति के द्वारा पराभूत किये हुए,आधे सुधाकर की किरणों वाली, सान्द्र (घने) सौरभ से युक्त कस्तूरी के तिलक से चिन्हित, मत्त भौंरों की माला से शोभित दलसे संयुत मुख कमल वाली, पारिजात के पुष्पों की शोभा का वहन करने वाले धम्मिल के पुष्पों से वन्धन वाली—वेश कीमती रत्नों से सुघटित मुकुट से युक्त मस्तक से समन्वित, सब प्रकार के लावण्य के निवास स्थान-विभ्रम की श्री का भवन स्वरूप, तेजों के प्रभव का स्थान ऐसी परमाधिक मनोहर महालक्ष्मी का ध्यान करे। इस प्रकार से उसी देवी का हृदय में चिन्तन करके हविष्य का अशन करने वाला तथा इन्द्रियों को जीतकर वश में रखने वाला होवे। बारह लाख मन्त्र का जप करे और जप का दशम भाग का घृत से हवन करना चाहिए। इसके अनन्तर प्रत्येक का श्री फलों से तथा पद्मों से दश हजार आहुतियाँ देवे। बीस हजार शुद्ध जल द्वारा जिसमें सुन्दर गन्ध हो तर्पण करना चाहिए। श्री वीज के उदित पीठ में महालक्ष्मी का पूजन करे। श्री बीज से आसन देना चाहिए तथा मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करे।८५।६१।

पूजयेद्दक्षिणे पार्श्वे देव्याः शङ्करनन्दनम् ।
अन्यतः पुष्पधन्वानं पुष्पाञ्जलिकरं यजेत् ।६२
अङ्गानि पूर्वमुक्तेषु स्थानेषु विधिवद्यजेत् ।
उमाद्याः पत्रमध्यस्थाः शक्तीरष्टौ यजेत् क्रमात् ।६३
अथोमा श्रीसरस्वत्यौ दुर्गा धारणिसंयुता ।
गायत्री देव्युषा चैवपद्महस्ताः सुभूषणाः ।६४
जह्नुसूर्यसुते पूज्ये पादप्रक्षालनोद्यते ।
शंखपद्मनिधी पूज्यौ पार्श्वयोर्धृतचामरा ।६५

धृतातपत्रं वरुणं तूजयेत्पश्चिमे ततः ।
संपूज्य राशीन्परितो यजेदथ नवग्रहान ।९६
अर्चयेद्दिग्गजान् दिक्षु चतुर्दन्तविभूषितान् ।
ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः ।९७
पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रमीकश्च दिग्गजाः ।
अभ्यर्चेदथेन्द्रादीन् तदस्त्राणि वहिर्यजेत् ।९८

देवी के दाहिने भाग में शंकर नन्दन (श्रीगणेश) का अभ्यर्चन करे। अन्य और पुष्पधन्वा (कामदेव) यजन करे जिनके कर में पुष्पांजलि होवे। उनके अङ्गों का पूर्व की भाँति पहिले कथित स्थानों में विधि के साथ यजन करना चाहिए। उमा आदि का जो पत्रों के मध्य में संस्थित हैं इन आठ शक्तियों का क्रम से अभ्यर्चन करे। इसका अनन्तर उमा, श्रीसरस्वती, दुर्गा-धरणी गायत्री देवी, उषा इनका यजन करे जो पद्म करों में लिए हुई हों और सुन्दर भूषणों से विभूषित होवें। जह्नु की सुता (गंगा) और सूर्य की सुता (यमुना) का पूजन करे जो पादों का प्रक्षालन करने के लिए समुद्यत होवे। दोनों पार्श्वभागों में चमर लिए हुए हों ऐसे पद्म निधि और शख निधियों का यजन करे। पश्चिम में आतपत्र (छत्र) धारी वरुण का पूजन करना चाहिए। सब ओर राशियों का पूजन करके नव ग्रहों का यजन करे। दिशाओं में दिकपालों गजों का पूजन करे जो चार दांतों से विभूषित होवें। उनके नाम हैं—ऐरावत पुण्डरीक वामन, कुमुद, अञ्जनु, पुष्पदन्त, सार्वभीम, सुप्रतीक, ये दिग्गज होते हैं। इसके अनन्तर इन्दादिक का यजन करे और उनके अस्त्रों का वाहिर की ओर पूजन करना चाहिए।९२।९८।

आगमोक्ते विधिना सुगन्धैः सुमनोहरैः ।
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यै र्देवीमन्वहमादरात् ।९९
दूर्वाभिराज्यसिक्ताभिर्जुहुयादायुष नरः ।
दशरात्रं समिद्धेऽग्नौ अष्टोत्तरसहस्रकम् ।१००

गडूचीराज्यसंसिक्ता जुहुयात्सप्तवासरम् ।
अष्टोत्तरसहस्रं यः स जीवेच्छरदां शतम् ।१०१
हुत्वा तिलान् घृताभ्यक्तान्दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।
आरभ्यार्कदिने मन्त्री दशरात्रे दिनेदिने ।१०२
आज्याक्तार्कसमिद्धोमादारोग्य लभते ध्रुवम् ।
कण्ठमात्रोदके स्थित्वा ध्यात्वा देवी दिवाकरे ।१०३
ऊर्ध्वबाहुर्दशशतमष्टोत्तरमिमं हुनेत् ।
आरोग्यं लभते सद्यो वाञ्छितान्यपि मन्त्रवित् ।१०४
शालीभिर्जुह्वतो नित्यमष्टोत्तरसहस्रम् ।
अचिरादेव महती लक्ष्मीः संजायते ध्रुवम् ।१०५

आगम में वर्णित विधि से सुगन्धित और सुमनोहर गन्ध पुष्प आदि उपचारों के द्वारा बड़े आदर से प्रतिदिन देवी का अभ्यर्चन करना चाहिए ।९९। घृत से अक्त दूर्वाओं से मनुष्य को आयु के लिए हवन करना चाहिए । दश रात्रि में समिद्ध अग्नि में एक हजार आठ आहुतियां घृत से अक्त गुडची (गुलोय) से देवे जो सात दिन तक देनी चाहिए । जो पुरुष एक सहस्र आठ आहुतियाँ देता है । वह सौ वर्ष तक जीवित रहता है ।१००।१०१। घृत से अभ्यक्त तिलों का हवन करके मनुष्य दीर्घ आयु को प्राप्त किया करता है । रविवार से आरम्भ करके मन्त्रधारी व्यक्ति प्रतिदिन दश रात्रि पर्यन्त आक की समिधा के होम करने से निश्चय ही आरोग्य का लाभ किया करता है । कण्ठ पर्यन्त जल में स्थित होकर सूर्य देवी का ध्यान करे और अपनी बाहुओं को ऊपर की ओर कर लेवे और फिर एक सहस्र आठ बार इसका हवन करे तो मन्त्र का ज्ञाता व्यक्ति तुरन्त ही आरोग्य का लाभ करता है । और जो भी मनोवांछित होते हैं उनको भी प्राप्त किया करता है। जो शालि चावलों के द्वारा अष्टोत्तर सहस्र का नित्य हवन करता है उसको अविलम्ब ही महती (बहुत बड़ी) लक्ष्मी का निश्चय ही लाभ होता है ।१०२।१०५।

प्रसूनैर्जुहुयान्मत्री लक्ष्मीवल्लीसमुद्भवैः ।
नन्द्यावर्तसमुत्थैर्वा सिद्धार्थैश्च घृतप्लुतैः ।१०६
महतीं श्रियमाप्नोति मन्यते सर्वजन्तुभिः ।
मरीचैर्जीरकोन्मिश्रैर्नारिकेलरजाप्लुतैः ।१०७
सगुडैराज्यसंकपक्वैरपूपैराज्यलोलितैः ।
जुहुयात्पयसाहरो मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।१०८
अष्टोत्तरशतं नित्यं मण्डलाद्धनदोभवेत् ।
हविषा गुडमिश्रेण जुहुयादर्थवान् भवेत् ।१०९
जपापुष्पाणि जुहुयादष्टोत्तरसहस्रकम् ।
गृहीत्वा प्रजपेद्भस्म नागवल्लीसमन्वितम् ।११०
तिलकं तनुयात्तेन सर्ववश्यकरं भवेत् ।
ब्रह्मवृक्षसमित्पुष्पैर्ब्राह्मणान्वशयेद्वशी ।१११
जातीपुष्पैश्च राजानं वैश्यान् रक्तोत्पलैः शुभैः ।
शूद्रान्नीलोत्पलैर्हुत्वा वशयेन्मत्रविन्नरः ।११२

मन्त्रधारी व्यक्ति लक्ष्मीवल्ली समुत्पन्न पुष्पों से तथा नन्द्यावर्त से प्रसूत प्रसूनों से और घृत से प्लुत सिद्धार्थों से आहुतियां देता है,वह बहुत बड़ी श्री को प्राप्त किया करता है और सभी प्राणियों के द्वारा मान किया जाता है। जो जीरक से मिश्रित मिरचों से तथा अजाप्लुत नारिकेलोंसे गुड़ के सहित, घृत में पकाये हुए घृत में लोलित पूओं से हवन करे तथा पायस का आहर करे और इन्द्रियों को जीत लेने वाला रहकर नित्य एक सौ आठ आहुतियाँ देवे तो मण्डल में वह धनद हो जाया करता है। गुड़से मिश्रित हवि से हवन करे तो मनुष्य अर्थ वाला होता है। मंडल का अर्थ उनचास दिन होता है। एक सौ सहस्र बार जपा के पुष्पों से आहुतियाँ देवे और फिर भस्म ग्रहण करके नाग वल्ली से समन्वित करके उससे तिलक करे तो सबको वश्य करने वाला होता है। पलाश के वृक्ष की समिधा और पुष्पों से वह ब्राह्मणों को वशीभूत कर लिया करता है। जाती के पुष्पों से राजा को, रक्त कमलों से वैश्यों को

और नील कमलों से शूद्रों को मन्त्र का ज्ञाता हवन करके वश में कर लिया करता है ।१०६।११२।

पुष्पैर्मधूकजैर्हुत्वा वशमान्यति स्त्रियः ।
कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलं यन्त्रभूषितम ।११३
अभिषेकं प्रकुर्वीत विधिना सर्वसिद्धये ।
कलशान्स्थापयेत्तष पदेषु शुभलक्षणान् ।११४
चन्दनालिप्तसर्वाङ्गान् दूर्वाक्षतसमन्वितान् ।
दुकूलवेष्टितानेतान्पूरयेत्तीर्थवारिणा ।११५
नवरत्नसमाबद्धं कर्षकाञ्चनकल्पितम् ।
मध्यकुम्भे क्षिपेत्पद्म यन्त्राढ्यं देशिकोत्तमः ।११६
चन्दनोशीरकर्पूरजातीकङ्कोलकुङ्कुमम् ।
कुष्ठागरुतमालैलायुतं संपिष्य भागतः ।११७
विलोडय सर्वकुम्भेषु रत्नान्यपि विनिःक्षिपेत् ।
लक्ष्मी दूर्वा सदाभद्रा सहदेवी मधुव्रता ।११८
मुशली शक्रवल्लीच क्रान्ताऽपामार्गपत्रकान् ।
प्रियंगु मुद्गगोधूमव्रीहींश्च सचिलान्यवान् ।११९

उक्त विधि से ही मधूक के पुष्पों से हवन करके स्त्रियों को वश कर लेता है । नवपद स्वरूप वाला यन्त्र विशेश को लिखकर मण्डल यन्त्र में भूषित करे फिर विधि से अभिषेक समस्त सिद्धि के लिए करना चाहिए । उन स्थानों में शुभ लक्षण वाले कलशों की स्थापना करे जो चन्दन से सर्वाङ्ग में आलिप्त होवे और दूर्वा तथा अक्षतों से समन्वित होवे । इनको वस्त्र से वेष्टित करके तीर्थ के जल से भर देवे । उत्तम आचार्य को चाहिए कि कुम्भ के मध्य में एक सौ साठ रत्तियों के प्रमाण वाले सुवर्ण से प्रकल्पित और नौ रत्नों से समावद्ध यन्त्र से संयुत पद्म को क्षिप्त करे । चन्दन, उशीर (खस) कपूर, जाती, कंकोल, कुंकुम, कुष्ठ, अगरु, तमाल, एला (इलायची) से संयुत भाग बराबर पीस कर सब कलशों में विलोड़न करके रत्नों का भी प्रक्षेपण कर देवे । लक्ष्मी,

दूर्वा, सदाभद्रा, सहदेवी, मधुव्रता, मुशली, शक्रवल्ली, क्रान्ता, अपामार्ग इनके पत्तों को प्रियंगु, गोधूम (गेहूँ), मूंग, व्रीहि, तिल, यव, शालि तण्डुल, उर्द इनका प्रक्षालन करके इनमें सबक प्रक्षेपण कर देवें ।११३। ११६।

शालितण्डलमाषांश्च प्रक्षाल्यैतेषु निःक्षिपेत् ।
धात्रीलकुचबिल्वानां कदलीनालिकेरयोः ।१२०
फलान्यपि विनिःक्षिप्य पुष्पाण्येतानि निःक्षिपेत् ।
पद्मं सौगन्धिकं जाति मल्लिकां वकुलं तथा ।१२१
चम्पकाशोकपुन्नागतुलसीकेतकोद्भवम् ।
पल्लवानि वटाश्वत्थप्लक्षोदुम्बरशाखिनाम् ।१२२
ब्रह्मकूर्चं विनिःक्षिप्य चम्पकैः सफलान्वितैः ।
पिधाय कुम्भवक्त्राणि क्षौमैराच्छदयेत्ततः ।१२३
आवाह्य मध्यकलशे महालक्ष्मीं प्रपूजयेत् ।
यजेदुमाद्याः शिष्टेषु कलशेष्वष्टसु क्रमात् ।१२४
गन्धैर्मनोहरैः पुष्पैर्धूपदीप समन्वितैः ।
निवेद्य भक्ष्यभोज्यानि तान्स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मनुम् ।१२५
त्रिसहस्रं, जपस्यान्ते साध्यमानीय संयतम् ।
संस्थाप्य स्थण्डिले पीठं तस्मिंस्तं विनिवेशयेत् ।१२६

धात्री (आँवला) लकुच, विल्व, केला, नारियल में फलों का निक्षेपण करके इनके पुष्पों का भी क्षेपण कर देवे । पद्म, सौगन्धिक, जाती मल्लिका, वकुल, चम्पक, अशोक, पुन्नाग, तुलसी और केतकी से समुत्पन्न पुष्प लेवे और प्रक्षिप्त करे । वट, अश्वत्थ (पीपल) प्लख (पाखर) उदुम्बर (गूलर) के वृक्षों के पत्ते तथा सफलान्वित चम्पक के सहित ब्रह्म कूर्च को निःक्षिप्त करके कुम्भों के मुखों को ढककर क्षौम वस्त्र से आच्छादित कर देवे । जो मध्य में कलश है उसमें भली भाँति आवाहन करके महालक्ष्मी का पूजन करे । शेष बचे हुए कलशों में जो आठ हैं क्रम से उमा आदि का यजन करना चाहिए । सुगन्ध, सुन्दर पुष्प, धूप,

दीप, भक्ष्य, भोज्य उनको निवेदित करके स्पर्श करके फिर मन्त्र का जप करे। तीन सहस्र जप करके अन्त में साध्य का अनायन करे जो स्नात हो। स्थण्डिल में संस्थापन करके उसमें उसका विनिवेश करना चाहिए।१२०।१२६।

रम्यैराभरणैर्वस्त्रै रलङ्कृत्य समादरात्।
सुमङ्गलीभिर्नारीभिः क्षिप्तपुष्पाक्षतान्वितम्।१२७
अर्चितानां द्विजातीनामाशीर्वादपुरःसरम्।
नदत्सु पञ्चवाद्येषु मुहूर्ते शोभने सुधीः।१२८
मध्यस्थं कुम्भमुत्सृज्य महालक्ष्मीमनुस्मरन्।
अभिषिञ्चेत्क्रमादन्यैः कलशैरपि देशिकः।१२६
करेणास्य शिरःस्पृष्ट्वा प्रयुञ्जीताशिषं गुरुः।
भद्रमस्तु शिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु।१३०
रक्षन्तु त्वां सदा देवाः संपदः सन्तु सर्वदा।
अथोत्थायाभिषिक्तः सन् वाससी परिधाय च।३१
यथाविधि समाचाम्य दण्डवत्प्रणमुद्गुरुम्।
वस्त्रै राभरणैर्धान्यैर्धनैर्गोमहिषादिभिः।१ २
दासीदासैश्च विधिवत्तोषयेद्देवताधिया।
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दीनान्धकृपणैः सह।१३३

उसको सुन्दर भूषणों से—वस्त्रों से आदर के साथ समलंकृत करके फिर सुमङ्गली नारियों के द्वारा उसमें पुष्प और अक्षतों का प्रक्षेपण करावे। पूजित विप्रों के आशीर्वाद पूर्वक वाद्यों के बजाये जाने पर शोभन मुहूर्त में विद्वान् मध्य में स्थित कुम्भ का उत्सर्जन करके महालक्ष्मी का अनुस्मरण करते हुए आचार्य क्रम से अन्य कलशों के द्वारा भी अभिषिञ्चन करे। गुरु कर से इसके शिर का स्पर्श करके आशीर्वचन का प्रयोग करे। आशीर्वचन इस निम्न प्रकार से करे—'कल्याण' होवे—मङ्गल होवे—महालक्ष्मी प्रसन्न होवे। आपको सदा ही देवगण रक्षित रक्खें और सर्वदा सम्पदाऐं होवें। इसके अनन्तर अभिषिञ्च

होकर वस्त्रों का परिधान करे और विधि के साथ आचमन करके गुरु को साष्टाङ्ग प्रणाम करे। और उन गुरुदेव को देव बुद्धि के साथ वस्त्र भूषण धन, धान्य, गौ, महिषी, दासी, दास आदि से विधि के सहित सन्तुष्ट करे। फिर ब्राह्मणों को भोजन करावे तथा जो दीन, अन्धे और दया के पात्र होवे उनको भी भोजन करावे ।१२७।१३३।

महान्तमुत्सवं कुर्याशुभवने वन्धुभिः सह ।
तदा कृतार्थमात्मानं मन्यते मनुजोत्तमः ।१३४
अभिषिक्तो नरपतिः परान् विजयतेऽचिरात् ।
पदेच्छुः पदमाप्नोति राजपुत्रो न संशयः ।१३५
अभिषिक्ता सती बन्ध्या सूते पुत्रं महामतिम् ।
महारोगेषु जातेषु कृत्याद्रोहेषु देशिकः ।१३६
भूतेष दुर्निमित्तादौ विदध्यादभिषेचनम् ।
सर्वसम्पत्करं पुंमां सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ।१३७
सर्वरोगप्रशमनं सर्वापद्विनिवारणम् ।
गर्भरक्षाकरं स्त्रीणां दीर्घायुर्जनकं परम् ।१३८
प्रसूतानामपि स्त्रीणां सूतिकागाररक्षकम् ।
प्रनष्टपुष्पगर्भाणां पुष्पगर्भाभिरक्षम् ।१३९
आसन्नशत्रुभीतीनां नाशनं च महीभृताम् ।
अभिषेकमिनं प्राहुरागमार्थविशारदाः ।१४०

अपने भाई बन्धुओं के साथ गृह में महान् उत्सव करावे। उसी अवसर पर मनुष्य अपने आपको कृतार्थ मानता है। इस प्रकार से अभिषेक किया हुआ नरपति अपने शत्रुओं पर शीघ्र ही विजय प्राप्त किया करता है। राजपुत्र आदि पद पाने की इच्छा वाला हो तो निश्चय ही पद को प्राप्त कर लेता है—इसमें लेश मात्र की संशय नहीं है। यदि सती वन्ध्या हो तो अभिषिक्त होकर मतिमान् पुत्र का प्रसव किया करती है। आचार्य का कर्त्तव्य है कि महान् रोगों के हो जाने पर-कृत्या द्रोह में-भूतों में और दुरनिमित्तों में अवश्य ही अभिषेक

करावे । यह अभिषेक पुरुषों के लिए सभी सम्पदाओं का करने वाला होता है—सब प्रकार से सौभाग्यों का और सिद्धियों का प्रदान करने वाला है । स्त्रियों क गर्भ की रक्षा करने वाला है और परमदीर्घ आयु के समुत्पन्न करने वाला है । जो स्त्रियाँ प्रसव कर चुकी हैं उनके प्रसूत गृह की रक्षा करने वाला यह अभिषेक होता है—ऐसा आगमों के ज्ञाता मनीषी गण कहा करते है ।१३४।१४०।

वेदादिस्थितसाध्यनाम युगशः श्रीशक्तिमारान्वितं
किञ्जल्केषु दिनेशपत्रविलसन्मन्त्राक्षर तद्वहि ।
पद्म व्यञ्जनकेसरं स्वरलसत्पत्राष्टयुग्मं धरा-
विम्बभ्यां वषडन्तया त्वरितया यन्त्रं लिखेद्वेष्टितम् ।१४१
भूपुरद्वयकोणेषु ह्क्षौ लेख्यौ पुनःपुनः ।
महालक्ष्मीयन्त्रमिदं सर्वैश्वर्यफलप्रदम् ।१४२
सर्वदुःखप्रशमनं सर्वापद्विनिवारणम् ।
वहुना किमिहोक्तेन परमस्मान्न विद्यते ।१४३
शम्भुपत्नी श्रिया रुद्धा कमौ भगवतां मही ।
प्रह्मादित्यौ धरादीर्घा लः क्षादिर्भगवान् मरुत् ।१४४
प्रसीदयुगलं भूयः श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी ।
महालक्ष्म्यै नमोऽन्तः स्यात्प्रणवादिरय मनुः ।१४५
सप्तविंशत्यक्षराढयः प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः ।
कमले हृदयेप्रोक्तं शिरः स्यात्कमलालये ।१४६
शिखा प्रसीद तेनैव कवच चतुरक्षरः ।
अस्त्रमेतैः पदैः कुर्यात्त्रिवीजपुटितैः पृथक् ।१४७

अब मन्त्र के विषय में वतलाया जाता है—यन्त्रपद्म के रूप वाला है—ऐसा ही उसे लिखे—प्रणव में स्थित साध्य साधक के कर्म का वाम हो अर्थात् उसकी कीर्णिका में होना चाहिए । दो वार श्री शक्ति और मार से संयुत होवे—आद्य में किंजल्क में श्रीशक्ति हो और परमें मार और श्री होवे—वारह दलों में शोभित मन्त्र के अक्षर होवे ।

उसके बाहिर ककार आदि का व्यंजन होवे। सोलह दलों में स्वर होवे-अन्त में वषट् होवे और धरा बिम्बों से वेष्टित करे—ऐसा ही यन्त्र लिखना चाहिए। भूपुर से दोनों कोणों में ह और क्ष वार वार लिखे-यही महालक्ष्मी का यन्त्र होता है जो सब ऐश्वर्यों के फल का प्रदान करने वाला है। यह सब दुःखों का शमन करने वाला और सभी आपदाओं का निवारण करने वाला होता है। इसके विषय में वहुत अधिक क्या कहा जावे—इतना ही पर्याप्त है कि इसके समान अन्य कोई भी यन्त्र ही नहीं है। अब अन्य मन्त्र बतलाते हुए उसका उद्धार कहते हैं—माया बीज श्रीबीज से पुटित होवे—ककार, तकार और एकार से युक्त लकार, ककार और मकार और लकारे दीर्घ युक्त होवे—इकार और मरुत एकार से मुक्त हो। दो बार प्रसीद बद होवे। पुनः भुवनेश्वरी श्री होवे। महालक्ष्मी के अन्त में नमः यह पद दो और आदि में प्रणव हो—यही मन्त्र होता है—यह सत्ताईस अक्षरों से युक्त होता है जो सभी समृद्धियों का प्रदाता है—ऐसा कहा गया है। हृदय कमल में कहा गया है और शिर कमलालय में वताया गया है—प्रसीद शिखा हैं उसी के चार अक्षरों का कवच बताया गया है। पृथक् तीन बीजों से पुटित इन पदों से अस्त्र करना चाहिए।१४१।१४७।

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतिं सौन्दर्यवारि निधिम्।
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम्।
हस्ताब्जैर्वसुपत्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
भावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्प्रियां शार्ङ्गिणः।१४८
लक्ष जपेत्फलैर्बैल्वैर्जुहुयान्मनुरोक्षितैः।
दशांशं संस्कृते वह्नौ प्राक् प्रोक्तं नैव वर्त्मना। १४९
श्रीबीजोक्ते यजेत्पीठे वक्ष्यमाणक्रमेण ताम्।
अङ्गावृत्तेर्बहिः पूज्या मूर्तयः श्रीधरादया।१५०
श्रीधराख्यं हृषीकेशं बैकुण्ठं विश्वरूपकम्।
वासुदेवं सङ्कर्षणं प्रद्युम्नमनिरुद्धकम्।१५१

दलमूलेषु सम्पूज्य पत्रमध्येषु संयजेत् ।
भारतीं पार्वतीं चान्द्रीं शचीं च दमकादिकान् ।१५२
दलार्द्धेष्वर्चयेद्बाणान् महालक्ष्म्याः क्रमादमून् ।
अनुरागं च संवादं विजयं बल्लभं मदम् ।१५३
हर्षं बलं च तेजश्च लोककाथाननन्तरम् ।
तदायुधानि तद्बाह्ये पूजयेत्साधकोत्तमः ।१५४

अब ध्यान बताया जाता है—सिन्दूर के तुल्य अरुण कान्तियुत, कमल में निवास करने वाली, सुन्दरता की महासागर, मुकुट, अङ्गद, हार, कुण्डल, कटि सूत्र आदि से विभूषित, हस्त कमलों द्वारा आठ दलों वाले दो कमल और आदर्श धारण किये हुए हैं, निरन्तर परिचारिकाओं से आवीत है, ऐसी परादेवी भगवान विष्णु की प्रिया का ध्यान करना चाहिए। इस मन्त्र का एक लाख जप करे और मधुरों से उक्षित वेल के फलों से हवन करे। जप का दशांश संस्कार की हुई अग्नि में होम करना चाहिए। हवन की विधि जो पहिले कही गयी है वही होवे। उसका अर्चन श्री बीजोक्त पीठ पर करे। क्रम यह है कि कर्णिका में अङ्गों का पूजन करे फिर श्रीधर आदि मूर्त्तियों का यजन करे। श्रीधर, हृषीकेश, वैकुण्ठ, विश्वरूपक, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध का दलों के भूतों में पूजन करके दलों के मध्य में पार्वती, चान्द्री, शची का भली-भाँति यजन करे। फिर महालक्ष्मी के दमकादि वाणों का दलों के अर्ध भाग में क्रम से यजन करना चाहिए। अनुराग, संवाद, विजय, वल्लभ, मद, हर्ष, वल और तेज ये वाण हैं। इसके अनन्तर लोकनाथों का पूजन करे। उसके वाहिर साधक को उनके अस्त्रों का पूजन करना चाहिए ।१४८।१५४।

अनेन विधिना देवीं महालक्ष्मीमुपासते ।
ये तेषु निवसेल्लक्ष्मीरस्मरन्तीनिजालयम् ।१५५

उत्पलैर्जुहुयाल्लक्षं चन्दनाम्भसि लोलितैः ।
शत्रूणां लभते राज्यं बिना युद्धेन पार्थिवः ।१५६
जपन् राजसभां गच्छेत्सम्भाव्येत तथा नरः ।
दूर्वा देवी महालक्ष्मीर्विष्णुकान्ता मधुव्रता ।१५७
मुसली शक्रावल्ली च सदाभद्राञ्जलिप्रिया ।
हरिचन्दनकर्पूरचन्दनाङ्कोलरोचनाः ।१५८
मालूरकेसरौ कुष्ठं सर्वं पिट्वा निशारसः ।
अष्टोत्तरसहस्रं तु जपित्वा तिलकक्रियाम् ।१५९
कुर्वतो मन्त्रिणः सर्वे वशास्तिष्टन्त्यहर्निशम् ।
श्रियोमन्त्रं जपेन्मन्त्री श्रीसूक्तान्यपि संजपेत् ।१६०
भूयसीं श्रियमाकाङ्क्षन् सत्यवादीं भवेत्सदा ।
प्रत्यागाशामुखीऽश्नीयात्स्मितपूर्वं प्रियं वदेत् ।१६१

जो इस विधि से देवी महालक्ष्मी की उपासना क्रिया करते हैं उनके गृहों में वह अपने निवास स्थान का स्मरण करती हुई निवास किया करती है । चन्दन के जल में लोलित किए हुए उत्पलों से नित्य ही हवन करे । आहुतियों की संख्या एक लाख होनी चाहिए । इससे राजा युद्ध के बिना ही शत्रुओं के राज्यको प्राप्त कर लिया करता है । इसका जप करता हुआ राजसभा में गमन करे तो मनुष्य प्रतिष्ठा प्राप्त किया करता है । दूर्वा, देवी, महालक्ष्मी, विष्णुकान्ता, मधुव्रता, मुशली, शक्रवल्ली, सदाभद्रा, अञ्जलि प्रिया, हरि चन्दन, कपूर, चन्दन, अंकोत, रोचना, माजूर, केशर, कुष्ठ, इन सबको निशा (हल्दी) के रस के साथ पीसकर एक सहस्र आठ वार जप करके तिलक की क्रिया को करने वाले नृप के सव मन्त्रीगण रात-दिन वश में स्थित रहा करते हैं । श्री के मन्त्र का जप करते हुए मन्त्रधारी श्री सूक्त का भी भली-भाँति जप करे । वहुत अधिक श्री की आकांक्षा रखता हुआ सदा सत्य बोलने वाला होना चाहिए । प्रत्येक दिशा की ओर मुख वाला

होकर अशन करे और सर्वदा मुस्कान के साथ प्रिय भाषण करना चाहिए ।१५५।१६१।

पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यै रात्मानं नियतः शुचिः ।
शयीत शुद्धशय्यायां तरुण्या सह नान्यया ।१६२
नग्नोनावतरेदम्भस्नैतैलाभ्यक्तोन भक्षयेत् ।
हरिद्रां न मुखेलिम्पेन्नस्वपेदशुचिः क्वचित् ।१६३
न वृथा विलिखेद्भूमिं न बिल्वं द्रोणामम्बुजन् ।
धारयेन्मूर्द्धनि नैवाद्याल्लोणं तैलं च केवलम् ।१६४
मलिनो न भवेज्जातु कुत्सितांन्नं न भक्षयेत् ।
द्रोणपंकजविल्वानि पद्भयां जातु न लंघयेत् ।१६५
सहदेवीमिन्द्रवल्लीं श्रीवल्लीविष्णुवल्लभाम् ।
इत्याचारपरो नित्यंविष्णुभक्तो दुर्लभाम् ।१६६
श्रियमाप्नोति महतीं देवानामपि दुर्लभाम् ।१६७

नियत और शुचि होकर गन्ध-पुष्पादिक के द्वारा आत्मा का पूजन करे। शुद्ध शैया में शयन करे और अन्य तरुणी के साथ कभी भी शयन न करे ।१६२। नग्न होकर जल में अवतरण न करे और तेल से अभ्यक्त होकर भक्षण नहीं करना चाहिए । हरिद्रा को कभी मुख पर लेपन न करे और अशुचि रहकर कहीं पर भी शयन नहीं करना चाहिए । भूमि में वृथा न लिखे—विल्व—द्रोण—अम्बुज को मस्तक में धारण न करे और केवल लवण और तेल का अशन नहीं करना चाहिए । कभी मलिन न होवे तथा कुत्सित अन्न का भक्षण न करे। द्रोण—पंकज और विल्व को पैरों से कभी नहीं लांघना चाहिए ।१६३।१६५। सह देवी—इन्द्रवल्ली—श्री बल्ली—विष्णु वल्लभा—कन्या—अम्बुज—और प्रबाल को सदा मस्तक पर धारण करे ।१६६। इस प्रकार के आचार में परायण—विष्णु भगवान का भक्त और दृढ़ ब्रत पुरुष बहुत बड़ी श्री को प्राप्त किया करता है जो कि देवों को भी दुर्लभ होती है। ।१६७।

नवम पटल

भुवनेश्वरी प्रकरण

अथ वक्ष्ये जगद्धात्रीमधुना भुवनेश्वरीम् ।
ब्रह्मादयोऽपि यां ज्ञात्वा लेभिरे श्रियसूर्जिताम् ।१
लकुलीभोग्निमारूढो वामनेत्रार्द्धं चन्द्रवान् ।
वीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ।२
ऋषिः शक्तिर्भवेच्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
कथिता सुनसघेन सेविता भुवनेश्वरी ।३
षड्दीर्घयुक्तबीजेन कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।
संहारसृष्टिमार्गेण मातृकान्यस्तविग्रहः ।४
मन्त्रन्यासं ततः कुर्याद्देवताभावसिद्धये ।
हृल्लेखां मूर्द्घ्नि वदने गगनं हृदयाम्बुजे ।५
रक्तां करालिकां गुह्ये महोच्छुष्मां पदद्वये ।
ऊर्ध्वप्रागदक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु च ।६
सद्यादिह्रस्वबीजाद्या न्यस्तव्या भूतसप्रभा ।
अङ्गानि विन्यसेत्पश्चाज्जातियुक्तानि षट्क्रमात् ।७

इसके अनन्तर इस समय में जगत् की धात्री भुवनेश्वरी के विषय में बतलाऊँगा । जिसका ज्ञान प्राप्त करके ब्रह्मा आदि देवगण भी परम अर्जित श्री को प्राप्त किया करते हैं ।१। हकार, रकार, ईकार और विन्दु इस प्रकार से मिलकर एक बीज होता है । सिद्धि की इच्छा वालों का सेव्य उसका बीज कहा गया है । ऋषि वसिष्ठ का सुत शक्ति है गायत्री छंद है-मन्त्र का देवता सुरों के समुदाय के द्वारा सेवित भुवनेश्वरी कही गई है ।२-३। छै से युक्त वीज द्वारा क्रम से छै अङ्गों को

करे। संहार-सृष्टि के मार्ग के द्वारा मातृका न्यास के विग्रह वाला होवे ।४। फिर देवता के भाव की सिद्धि के लिए मंत्र न्यास करना चाहिए। हृल्लेखाना मूर्धा में—मुख में गगन का- हृदयाम्बुज में रक्त का—पुह्य में करालिका का—और महोच्छुष्मा का दोनों पदों में न्यास करे। ऊर्ध्व में, पूर्व में, दक्षिण में, उत्तर में, पश्चिम में, मुखों में सद्यादि ह्रस्व बीज युक्त भूतसप्रभाओं का न्यास करना चाहिए। पीछे षट्क्रम से जाति युक्त अङ्गों का न्यास करे ।५-७।

ब्रह्मागं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सह संयुतम् ।
सावित्र्या संयुतं विष्णुं कपोले दक्षिणे न्यसेत् ।८
वागीश्वर्या समायुक्तं वातगण्डे महेश्वरम् ।
श्रिया धनपतिं न्यस्येत् वामकर्णाग्रके पुनः ।९
रत्या स्मरं मुखे न्यस्य पुष्ट्या गणपतिं न्यसेत् ।
सव्यकर्णोपरि निधी कर्णगण्डान्तरालयोः ।१०
न्यस्तव्यौ, वदने मूलं भूयश्चैतास्तनौ न्यसेत् ।
कर्णमूले स्तनद्वन्द्वे वामांसे हृदयाम्बुजे ।११
सव्यांस पार्श्वं युगले नाभिदेशे च देशिकः ।
भालांसपार्श्वजठरपार्श्वा सापरके हृदि ।१२
ब्रह्मा याद्यास्ततोन्गस्या विधिना प्रोक्तलक्षणाः ।
मूलेन व्यापकं देहे न्यस्य देवीं विचिन्तयेत् ।१३
उद्यदिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मरेमुखीं वरवाङकुशपाशाभीतिकरां प्रजजेद्भुवनेश्वरीम् ।१४

गायत्री के साथ संयुत ब्रह्माजी का भाल में न्यास करे। दक्षिण कपोल में सावित्री से संयुत भगवान् विष्णु का न्यास करना चाहिए। वागीश्वरी से संयुत भगवान् महेश्वर का वामगण्ड में न्यास करे। फिर श्री से समायुक्त धनपतिका वामकर्ण के अग्रभाग में न्यास करे ।८-९। रति से समन्वित कामदेव का मुख में न्यास करके पुष्टि से संयुत गणपति का न्यास सव्यकर्ण के ऊपर करना चाहिए। कर्णों और गण्डों के

अन्तरालों में निधियों का न्यास करे। मुख में मूल का और फिर इनके स्तनों का न्यास करे। कर्णों के मूल में-दोनों स्तनों में-वाम कंधे में हृदय म्बुज में सव्यअंस, दोनों पार्श्वभाग में-नाभिदेश में देशिक न्यास करे। मान, अंस, पार्श्व, जठर, पार्श्वा सापर हृदय में जिसके लक्षण कथित है, उन ब्राह्मणी आदि का विधिपूर्वक न्यास करना चाहिए। मूलमन्त्र से देह में व्यापक न्यास करके फिर देवी का ध्यान करना चाहिए।१० ।१३। ध्यान बतलाया जाता है—उदीयमान दिन की द्युति से युक्त—चन्द के किरीट वाली—उन्नत स्तनों से संयुत—तीन नेत्रों वाली—स्मित सहित मुख से समन्वित—वरदान—पाश—अभय को करकमलों में धारण करने वाली भुवनेश्वरी का भजन करे।१४।

प्रजपेन्मंत्रवित्मंत्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः।
त्रिस्वादुअक्तैः प्रजुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः।१५
दद्यादर्घ्यं दिनेशाय तत्र संचिन्त्य पार्वतीम्।
पद्मसमष्टदलं बाह्ये वृत षोडशभिर्दलैः।१६
विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम्।
ततः संपूजयेत्पीठं नवशक्तिसमन्वितम्।१७
जयाख्या विजया पश्चादजिता चापराजिता।
नित्या विलासिनी दोग्ध्री अघोरा मङ्गला नव।१८
बीजाद्यमासनं दत्त्वा मूर्ति तेनैव (मूलेन) पूजयेत्।
तस्यां संपूजयेद्देवीमावाह्यावरणैः सह।१९

मन्त्र धारण करने वाले को बत्तीस लाख की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिए। त्रिस्वादु से अक्त अष्ट द्रव्यों से दशाँश हवन करे।१५। वहाँ पर पार्वती का ध्यान करके दिनेश्वर के लिए अर्घ्य देवे। सोलह दलों से वृत बाहिर में आठ दलों वाला पद्म लिखे। कर्णिका के मध्य में अत्यन्त सुन्दर षट्कोण लिखे। वहाँ पर नौ शक्तियों से समन्वित पीठ का भली-भाँति अर्चन करना चाहिए।१६।१७। उन नौ शक्तियों के नाम—जया—विजया—अजिता—अपराजिता नित्या—

विलासिनी—दोग्ध्री—अघोरा—मङ्गला हैं ।१८। बीजाद्य आसन देकर मूर्त्तिका मूल से ही पूजन करना चाहिए। उनमें आवरणों के सहित आवाहन करके देवी का भली-भाँति पूजन करना चाहिए ।१९।

मध्यप्राग्याम्यसौम्येषु पश्चिमेषु यथाक्रमात् ।
हृल्लेखाद्याः समभ्यर्च्याः पञ्चभूतसमप्रभाः ।२०
वरपाशाङ्कुशा भीतिधारिण्योऽमितभूषणाः ।
स्थानेषु पूर्वमुक्तेषु पूजयेदङ्गदेवताः ।२१
षट्कोणेषु यजेन्मंत्री पश्चान्मिथुनदेवताः ।
इन्द्रकोण लसद्दण्डकुण्डिकाक्षगुणाभयाम् ।२२
गायत्रीं पूजयेन्मन्त्री ब्रह्माणमपि तादृशम् ।
रक्षःकोण शङ्ख्चक्रगदापङ्कजधारिणीम् ।२३
सावित्रीं पीता वस्त्रां यजेद्विष्णुं च तादृशम् ।
वायुकोणे परश्वक्षमालाभयवरान्विताम् ।२४
यजेत्सरस्वतीमित्थं रुद्रं तादृशलक्षणम् ।
वह्निकोणे यजेद्रत्नकुम्भं मणिकरण्डकम् ।२५
कराध्यां विभ्रतं पीठ तुन्दिलं धननायकम् ।
आलिङ्ग्य सव्यहस्तेन वामेनाम्बुजधारिणीम् ।२६
धनदाङ्कसमारूढां महालक्ष्मी प्रपूजयेत् ।
वारुणे मदनं बाणं पाशाङ्कुशशरासनम् ।२७
धारयन्तं ज्यरक्तं पूजयेद्रत्नभूषणम् ।
सव्येन पतिमाश्लिष्य वामेनांत्पलधारिणीम् ।२८

मध्य में—पूर्व—याभ्य—सौम्य—पश्चिम में कर्म के अनुसार पाँच भूतों के तुल्य प्रभा से समन्वित हल्लेखा आदि का भली-भाँति अभ्यर्चन करना चाहिए ।२०। वरदान—पाश—अंकुश और अभीष्ट के धारण करने वाले अपरिमित भूषण से समन्वित देवताओं को पूर्व में वर्णित स्थानों में पूजित करना चाहिए ।२१। मन्त्र के धारण करने वाले को पीछे षट्कोणों में मिथुन देवता का यजन करना चाहिए ।

इन्द्र कोण में शोभित दण्ड-कुण्डिका अक्ष अभय वाली गायत्री का मंत्र-धारी पूजन करे और उसी प्रकार वाले ब्रह्माजी का भी यजन करना चाहिए। राक्षस कोण में शंख—चक्र गदा और पद्म के धारण करने वाली पीतवस्त्र से संयुत सावित्री का अर्चन करे और उसी प्रकार से विष्णु का यजन करे। वायुकोण में परशु—अक्षमाला—अभय और वरदान से युक्त सरस्वती का अर्चन करे और इसी प्रकार से उसी तरह के लक्षणों वाले रुद्र का भी यजन करना चाहिये। अग्निकोण में मणि-करण्डक रत्न—कुम्भ का अर्चन करे। वरों से धारण किये हुए पीत-तुन्दिल धन नायक को सव्यहस्त से आलिंगन करके वाम हस्त से धनद के अङ्क में समारूढ़ अम्बुजधारिणी महालक्ष्मी का अभ्यर्चन करना चाहिये। वारुण में मदन, वाण, पाश, अंकुश, शरासन को धारण करते हुए जया के समान रक्त रत्न भूषण धारिणी का पूजन करे।२२-२८।

पाणिना, रमणाङ्कस्थां रतिं सम्यक् समर्चयेत्।
ऐशाने पूजयेत्सम्यक् विघ्नराजं प्रियान्वितम्।२९
सृणिपाशधरं कान्तावराङ्गस्पृक्करांगुलिम्।
माध्वीपूर्णकपालाढ्यं विघ्नराजं दिगम्बरं।३०
पुष्करे विलसद्रत्नस्फुरच्चषकधारिणम्।
सिन्दूरसदृशाकारामुद्दाममदविभ्रमाम्।३१
धृतरक्तोत्पलामन्यपाणिना तु ध्वजस्पृशम्।
आश्लिष्टकान्तामरुणां पुष्टिमर्चेद्दिगम्बराम्।३२
कर्णिकायां, निधी पूज्यौ षट्कोणोभयपार्श्वयोः।
अङ्गानि केसरेष्वेताः पश्चात्पत्रेषु पूजयेत्।३३
अनङ्गाकुसुमा पश्चादनंगकुसुमातुरा।
अनंगमदना पश्चादनंगमदनातुरा।३४
भुवनपाला गगन—वेगा चैग ततः परम्।
शशिरेखाथ गगन-रेखा चैवाष्टशक्तयः।३५

पाणि से रमण की गोद में संस्थिता रति का भली भाँति पूजन

करे। ऐशान दिशा में प्रिया से समन्वित विघ्नराज का अर्चन करना चाहिए ।२९। सृणि और पाश को धारण करने वाले कान्ता के श्रेष्ठ अङ्ग का स्पर्श करती हुई कर की अंगुलियों से संयुत—माध्वी से परिपूर्ण कपाल से समन्वित दिगम्बर अर्थात् वस्त्र रहित नग्न विघ्नराज हैं।३०। विघ्नराज पुष्कर में कान्तिमान् रत्नों से स्फुरण करते हुए चषक को धारण करने वाले हैं। ऐसे ही स्वरूप वाले विघ्नराज का अर्चन करना चाहिए। सिन्दूर के सदृश आकार वाली—उद्दाम मद के विभ्रमों से संयुत रक्तोत्पल को धारण की हुई और अन्य कर से ध्वज का स्पर्श करने वाली कान्त का अश्लेष की हुई अरुण और दिगम्बरा पुष्टिका यजन करे ।३१-३२। कर्णिका में षट्कोण के दोनों पार्श्वों में निधियों का पूजन करना चाहिए। केसरों में अङ्गों का यजन करे। इसके पीछे पत्रों में इनका अर्चन करना चाहिए ।३३। ये आठ शक्तियाँ हैं—अनङ्ग कुसुमा—पीछे अनङ्ग कुसुमातुरा, अनङ्ग मदना, अनङ्ग मदनातुरा, भुवनपाला, गगनवेगा, शशिरेखा, गगनरेखा—इन आठों का अभ्यर्चन करे ।३४-३५।

पाशाङ्कुशवराभीतिधारिण्योऽरूणविग्रहाः ।
ततः षोडशपत्रेषु कराली विकरालयुसा ।३६
सरस्वती श्रीदुर्गोषा लक्ष्मीश्रुत्यौ स्मृतिधृतिः ।
श्रद्धा मेधा मतिःकान्तिरार्याः षोडश शक्तयः ।३७
खड्गखेटकधारिण्यः श्यामा पूज्यश्च मातरः ।
पद्मादबहिस्समभ्यर्च्याः शक्तयः परिचारिकाः ।३८
प्रथमाऽनंगरूपा स्यादनंगमदना ततः ।
मदनातुरा भुवन-वेगा भुवनपालिका ।३९
स्यात्सर्वशिशिरानंगवेदनाऽनंगमेखला ।
चषकं तालवृन्तंच ताम्बूलं छत्रमुज्ज्वलम् ।४०
चामरेचांऽशुकं पुष्प विभ्राणा कर पङ्कजैः ।
सर्वाभरणसंदीप्ताल्लाकपालान्वहिर्यजेत् ।४१

वज्रादीन्यपि तद्बाह्ये देवीमित्थं प्रपूजयेत् ।
पूज्यते सकलैर्देवैः किंपुनर्मनुजोत्तमैः ।४२

ये सब पाश, अंकुश, वरदान, अभयदान के धारण करने वाली हैं और इनका शरीर अरुण वर्णमाला है । इसके उपरान्त सोलह पत्रों में षोडश शक्तियों का यजन करे—कराली, विकराली, उमा, सरस्वती, दुर्गा, श्रीउषा लक्ष्मी, श्रुति, स्मृति, घृति, श्रद्धा, मेघा, मति, कान्ति, आर्या, ये सोलह शक्तियाँ हैं । ये खड्ग और खेटक के धारण करने वाली ये श्यामा मातायें पूजा के योग्य हैं । कमल के बाहिर परिचारिका शक्तियों का अभ्यर्चन करना चाहिए ।३६।३८। प्रथमा अनङ्ग रूपा है फिर अनङ्ग मदना, मदनपुरा, भुवनवेगा, भुवन पालिका, सर्व शिशिरा, अनङ्ग वेदना, अनङ्ग मेखला, ये चम्पक, तालवृन्त, ताम्बूल, उज्ज्वल छत्र, चमर, अंशुक और पुष्प को कर कमलों से धारण किये हुए हैं । समस्त आभूषणों से संदीप्त लोकपालों का यजन बाहिर करना चाहिये ।३९।४१। उनके बाहिर वज्र आदि आयुधों का अर्चन करे इस प्रकार देवी का पूजन करना चाहिए । इसी भाँति ये समस्त देवगणों के द्वारा पूजी जाया करती है फिर मनुष्यों के द्वारा पूजा किया जाना तो कहा ही क्या जा सकता है ।४२।

मंत्री त्रिमधुरोपेतैर्हुत्वाश्वत्थसमिधवरैः ।
ब्राह्मणान्वशयेच्छीघ्रं पार्थिवान्पद्महोमतः ।४३
पालाशपुष्पैस्तत्पत्नीमन्त्रिणः कुमुदैरपि ।
पञ्चविंशतिसञ्जप्तैर्जलैः स्नानं दिनेदिने ।४४
आत्मानमभिषिञ्चेद्यः सर्वसौभाग्यवान् भवेत् ।
पंचविंशतिसंजप्तं जल प्रात पिबेन्नरः ।४५
अवाप्य महतीं प्रज्ञां कवीनामग्रणीर्भवेत् ।
कर्पूरागुरुसंयुक्तं कुंकुमं साधु साधितम् ।४६
गृहीत्वा तिलकं कुर्याद्राजवश्यमनुत्तमम् ।

शालिपिष्टमयीं कृत्वा पुत्तलीं मधुरान्विताम् ।४७
जप्तां प्रतिष्ठितप्राणां पूजयेद्रविवासरे ।
वशं नयति राजानं नारी व नरनेव वा ।४८
कण्ठमात्रेदके स्थित्वा बीक्ष्य तोयगतं रविम् ।
त्रिसस्रं जपेन्मन्त्रमिष्टां कन्यां लभेन्नरः ।४६

मन्त्रधारी पीपल की श्रेष्ठ समिधाओं को त्रिमधूर से समाप्लुत करके फिर उनसे हवन करे तो शीघ्र ही ब्राह्मणों को अपने वश में कर लेता है ।पद्मों से होम करके पार्थिवों को वशीभूत कर लिया करता है—पलाश (ढाक) के पुष्पों के द्वारा होम करके उनकी पत्नियों को अपने वश में करता है और कुमुदों का हवन करके मन्त्रियों को वश में कर लेता है । पच्चीस वार जप किये हुए जल से प्रतिदिन स्नान करे और जो अपने आपका अभिषेक करे तो वह सभी प्रकार से सौभाग्य वाला हो जाता है । पच्चीस वार जप करके अभिमन्त्रित जल जो प्रातःकाल में पीता है तो मनुष्य बहुत बड़ी प्रज्ञा का लाभ कर कवियों का भी अग्रणी (अगुआ) हो जाया करता है। कपूर, गुग्गल से संयुत कुंकुम से भली भाँति साधित को लेकर तिलक करे तो बहुत ही उत्तम राजा को वश्य करने वाला होता है । शाली के पिष्ट से परिपूर्ण और मधुर से युक्त पुतली वनाकर उसका जप करके प्राण प्रतिष्ठा करे और रविवार के दिन उसका अर्चन करना चाहिए तो वह पुरुष राजा को अपने वश में कर लेता है और नारी अथवा नर को वश्य कर लिया करता है ।४३।४८। कण्ठ मात्र जल में स्थित होकर जल में सूर्य का दर्शन करे । तीन सहस्र मन्त्र का जप करे तो मनुष्य अपनी अभीष्ट कन्या को प्राप्त कर लिया करता है ।४६।

अन्नं तन्मन्त्रितं मन्त्री भुञ्जीत श्रीप्रसिद्धये ।
लिखितां भस्मना मायां ससाध्यां फलकादिषु ।५०
तत्काले दर्शयेद्यन्त्रं सुखं सूयेत् गर्भिणी ।५१
शक्तयन्तः स्थितसाध्यकर्मभवने वह्नेर्वृतं शक्तिभिः—

बाह्ये कोणगर्तेयुतं हरिहरैर्वर्णैः कपोचार्पितैः ।
पश्चात्तैः पुनरीयुतैर्लिपिभिरप्यावीतमिष्टार्थदं ।
यन्त्रं भुपुरमध्यगं त्रिगुणितं सौभाग्यसम्पत्प्रदम् ।५२
बीजान्तः स्थितसाध्यनामशरशोभायारमामन्मथैः ।
वीतं वह्निपुरद्वये रसपटे स्वाख्याढय्बीजत्रषम् ।
स्वात्मानात्मकमीं शिख हरिहरैराबद्धगण्डंबहिः-
षडवीजैरनुबद्धसधिलिपिभिर्वीतं गृहाध्यां भुवः ।५३
चिन्तामणिनृसिंहाभ्यां लसत्कोणमिदं लिखेत् ।
यन्त्रं षड्गुणितं दिव्य वहतां सर्वसिद्धिदम् ।५४
बीजं व्याहृतिभिर्वृतं गृहयुगद्वन्द्व वसोः कोणगः ।
दौर्ग बीजमनन्तरं लिपियुगैराबद्धगण्ड लिखेत् ।
गायत्र्या रविशक्तिवद्धविवरं त्रिष्टुव्वृतं तत्ततो-
वीतं मातृकयो धरापुरयुगे सत्सिहचिन्तामणिम् ।५५
मन्त्रं दिनेशगुणितं प्रोक्तं रक्षाप्रसिद्धिदम् ।
सर्वसौभाग्यजननं सर्वशत्रुनिवारणम् ।५६

मंत्रधारी उस मन्त्रसे अन्तको अभिमन्त्रित करके उसका अशन करे तो श्री की प्रकृष्ट सिद्धि हो जाया करती है । साध्यके सहित माया को भस्मसे फलक (पट्टे आदि) पर लिखे उस मन्त्रको गर्भिणीको दिखावे तो दह तत्काल में सुखपूर्वक प्रसव किया करती है ।५०।५१। अब त्रिगुणित मंत्र बतलाया जाता है जो कि सौभाग्य और सम्पदा के प्रदान करने वाला होता है ऊर्ध्व के अग्रभाग में त्रिकोण में मध्य में शक्ति बीज स्थित है उसमें साध्य—साधक का कर्म हो और शक्तियों से वृत होंगे। वाह्य में अर्थात् त्रिकोण के अग्रभागों में कमोसार्पित अर्थात् गण्ड स्थल लिखित हरिहर वर्णों से कोण के गर्त्त में संयुत पीछे फिर उन ईकार युत लिपियों से भी आवीत हो—यह भूपुर के मध्य में स्थित यन्त्र अभीष्ट अर्थ का दाता होता है ।५२। अब षड्गुणित यन्त्र बतलाते हैं—वह्नि का तात्पर्य यह है कि परस्पर में व्यति भिन्न त्रिकोण द्वय में

कथित परिमाण वाला वृत बनाकर पूर्व—पश्चिम में सूत्र को स्फालित करके उनके अग्रभागों में सूत्र को अधिष्ठित करे । वृत्तके अर्ध परिमाण वाले सूत्र से दो मत्स्य बनावे । ऐसा करने पर चार मत्स्य निष्पन्न होते हैं । पूर्व और पश्चिम के दो—मत्स्यों में दक्षिणोत्तर में रहने वाले दोनों सूत्रों का आस्फालित करे । इत्यादि रीति से सम्पुटित करने पर वह्निपुर द्वय होते हैं । शक्ति बीज के अन्दर स्थित साध्य और साधक के कर्म का नाम पँर्व की ही भाँति लिखे । पाँच प्रकार से रमा, माया और मन्मथ से वीत होवे । रस पुट में अपने नाम से संयुक्त तीन बीज लिखे । ऊर्ध्वभाग में बिन्दु के सहित तीन बीजों का लेखन करना चाहिये । ईकारगत ऊर्ध्वभाग तीन कोणों में साधक नाम वाले बिन्दु सहित तीन बीजों को लिखे कोणान्तर के अग्र प्रदेश में ईम्–यह लिखे । हरिहरै वद्ध गण्डम्–यहाँ पर गण्डशब्द से षट्कोश कोण के दोनों पार्श्व भाग कहे जाते हैं । ूर्व की ही भाँति हरिहिर वर्णों को लिखना चाहिए । षड्माया बीजोंसे अनुबद्ध सन्धि–इससे एकान्तरित सन्धि वन्ध विवक्षित होता है ।५३। चिन्तामणि और नृसिह से शोमित इस कोण को लिखे । यह दिव्य षड्गुणित मन्त्र सब प्रकार की सिद्धियों के प्रदान करने वाला है ।५४। अग्नि के वारह कोणों में स्थित व्याहृतियों से वृत लिखे और लिपि के युगों से आवद्ध गण्ड अनन्तर में दीर्ग बीज का लेखन करे । गाय के घीसे कोणाग्र के बाहिर स्थापित द्वादश शक्ति बीजों से बद्ध विवर त्रिष्टुत् से वृत करे और भूपुर युग में मातृका से वीतसर्तिसह चिन्तामणि का लेखन करना चाहिए ।५५। यह द्वादश गुणित मन्त्र बताया गया है जो रक्षा और प्रसिद्धि का देने वाला है । यह सब तरह के सौभाग्य को उत्पन्न करने वाला और समस्त शत्रुओं के निवारण करने वाला होता है ।५६।

लिखेत्सरोजं रसपत्रयुक्तं मध्ये दलेष्वप्यभिलिख्य मायाम् ।
स्वरावृत यन्त्रमिदं वधूनां पुत्रप्रदं भूमिगृहान्तरस्थम् ।५०

षट्कोणमध्ये प्रविलिख्य शक्ति कोणेषु तामेव विलिख्यः भूयः।
ससाध्यगर्भं वसुधापुरस्थं यन्त्रं भवेद्वश्यकरं नराणाम् ।५८
वाग्भवं शम्भुवनिता रमा वीजत्रयात्मकम् ।
मंन्त्र समुद्धरेन्मंत्री त्रिवर्गफलसाधनम् ।५६
षडदीर्जर्घभाजा मध्येन वाग्भवाद्येन कल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि मन्त्रवित ।६०
कुर्यात्पूर्वोदितान्नयासान् तथैवात्रापि साधकः ।६१
सिन्दूरारुणविग्रहां त्रियनयनां माणिक्यमौलिस्फुरा
त्तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषक रत्नोत्पलं बिभ्रतीं ।
सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ।६२
रविलक्षं जपेन्मंत्रं पायसैर्मधुरप्लुतैः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्रीं पीठे प्रागीरिते यजेत् ।६३

छैः पत्रों से संयुत पद्म को लिखे और मध्य में दलों में माया का अभिलेखन करे । यह स्वरों से समावृत यन्त्र भूमिगृह के अन्दर स्थित करे तो बंधुओं को पुत्र प्रदान करने वाला होता है ।५०। षट्कोण के मध्य में शक्ति को लिखकर फिर उसी का लेखन कोणों में करना चाहिए । गर्भ में साध्य के सहित भूपुर में स्थित यह यन्त्र मनुष्य का वश्य करने वाला होता है ।५८। वाग्भव—शम्भु वनिता और रमा अर्थात् सरस्वती, शिवा और लक्ष्मी, इन तीन वीजों के स्वरूप वाला मन्त्र है । मन्त्रधारी इसका उद्धार करे । यह तीन वर्गों के फल का साधने वाला है ।५६। छै दीर्घों के भजने वाले वाग्भवाद्य मध्य से कल्पना करे । मन्त्र का ज्ञाता पुरुष इस मन्त्र के जातियुक्त छै अङ्गों की कल्पना करे ।६०। साधक पूर्व में उति न्यासनों को उसी भाँति यहाँ पर भी करना चाहिए ।६१। अब मन्त्र का ध्यान बतलाया जाता है—सिन्दूर के समान शरीर वाली तीन नेत्रों से समन्वित, मणिक्य मौलि [illegible] स्फुरित चन्द्रशेखर से युक्त—मुस्कानयुक्त मुखवाली—स्थूल

स्तनों से संयुत—दोनों हाथों में मणियों से पूर्ण रत्ननिर्मित चषक और रक्त कमल को धारण करती हुई-परम सौम्य स्वरूप रूप वाली—रत्नों के घट में दाहिने चरण को रखने वाली परा अम्बिका का ध्यान करना चाहिए ।६२। इस मन्त्र का बारह लाख जप करना चाहिए और मधुरप्लुत पायस के द्वारा आहुतियाँ देवे जो जप की दशांश ही होवें। मंत्रधारी को पूर्व में वर्णित पीठ में ही यजन करना चाहिए ।६३।

देवीं प्रागुक्तमार्गेण गन्धाद्यै रतिशोभनैः ।
हुत्वा पलाशकुसुमैर्वाक्श्रियं महतीं व्रजेत् ।६४
ब्राह्मीवृत पिबेज्जप्तं कवित्वं वत्सराद्भवेत् ।
सिद्धार्थान् लवणोपेतान् हुत्वा मन्त्री वशं नयेत् ।६५
नरनारीनरपतीन् नात्रकार्या विचारणा ।
चतुरङ्गुलजैः पुष्पैः चन्दनाम्भः समुक्षितैः ।६६
हुत्वा वशीकरोत्याशु त्रैलोक्यमपि साधकः ।
जुहुयादरुणाम्भोजैरयुतं मधुरप्लुतैः ।६७
राज्यश्रियमवाप्नोति सतिलैस्तण्डुलैस्तथा ।
प्रागुक्तान्यपि कर्माणि मन्त्रेणानेन साधयेत् ।६८
वाग्बीजपुटिता माया विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।
मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेत् ।६९
अङ्गानि जातियुक्तानि क्रमेण मन्त्रवित्तमः ।
यथा पुरा समुद्दिष्टान् न्यासान्कुर्वीत मन्त्रवित् ।७०

पूर्व में कथित मार्ग के द्वारा अतीव शोभन गन्धादि से देवी का ढाक के पुष्पों से हवन करके साधक बहुत बड़ी श्री की प्राप्ति किया करता है ।६४। मन्त्र के द्वारा जप किए हुए ब्राह्मी धृत का पान करे तो एक ही वर्ष के अन्दर कवित्व को प्राप्त कर लिया करता है। लवण से संयुक्त सिद्धार्थों का हवन करके मन्त्रधारी वश में कर लेता है ।६५। मनुष्य नरों को नारियों को और नरपतियों को सभी को अपने वश में कर लिया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं करना चाहिए। साधक

राजवृक्ष के पुष्पों से, जो चंदन के जल में समुक्षित करके हवन करे तो बहुत ही शीघ्र तीनों लोकों को अपने वश में कर लेता है। मधुर से प्लुत अरुण कमलों के द्वारा दश हजार आहुतियाँ देवें तथा तिलों के सहित तण्डुलों से हवन करे तो साधना करने वाला पुरुष राज्यश्री को प्राप्त कर लेता है। पूर्व में वर्णित कर्मों का भी इसी मन्त्र के द्वारा साधन करना चाहिए।६६-६८। वाग्बीज से सम्पुटित माया—यह तीन अक्षरों वाली विद्या हैं। मध्य में दीर्घ संयुक्त वाक्पुट से कल्पित करे। मन्त्र का ज्ञान रखने वाला पुरुष क्रम से जातियुक्त अङ्गों का जिस तरह से पूर्व में समुद्दिष्ट किये हैं न्यासों को करे। तात्पर्य यह है पूर्वोक्त रीति से ही अङ्गन्यास करना चाहिए।६६-७०।

श्यामांगी शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं
रत्नाढय् चषकं वरम्भयहरं संविभ्रतीं शाश्वतीम्।
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं।
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम्।७१

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्र जुहुयात्तद्दशांशतः।
पलाशपुष्पैः स्वादक्तैः पुष्पैर्वाराजवृक्षजैः।७२
हृल्लेखाविहिले पीठे पूजयेत्परमेश्वरीम्।
मध्यादि पूजयेन्मन्त्री हृल्लेखाद्याः पुरोदिताः ७३

मिथुनानि यजेन्मत्री षट्कोणेषु यथा पुरा।
अंगपूजा केशरेषु पूज्याः पत्रेषु मातरः।७४
भैरवाङ्कसमारूढाः स्मेरवक्त्रा मदालसाः।
असितांगोरुरुश्चण्डः क्रोध उन्मत्तभैरवः।७५
कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्ट भैरवाः।
शूलं कपालं प्रेतं च विभ्राणाः क्षुद्रन्दुभिम्।७६

गजत्वगम्बरा भीमाः कुटिलालकशोभिताः।
दीर्घाद्या मातरः प्रोक्ता ह्रस्वाद्या भैरवाः स्मृताः।७७

ध्यान बतलाया जाता है—श्याम वर्ण के अंगों वाली–चन्द्र को मस्तक में धारण करती हुई–अपने कर कमलों में रक्त कमल रत्नों से संयुत चषक-वरदान-अभयदान को निरन्तर धारण करने वाली–मोतियों के हार से सुशोभित स्तनों के भार से नत–तीव्र नेत्रों के द्वारा उल्लास वाली– रक्त कमल पर विराजमान–सुरगणों के द्वारा समर्जित भगवान् शंकर की प्रिया की मैं वन्दना करता हूँ ।७१। चौबीस लाख मन्त्र का जप करना चाहिए और जप का दशांश भाग का पलाश के पुष्पों से जो मधुर से अक्त होवें अथवा राजवृक्ष के पुष्पों से हवन करना चाहिए । हृल्लेखा से विहित पीठ पर परमेश्वरी का अभ्यर्चन करना चाहिए । मन्त्रधारी को मध्य और आदि में पहिले बताई हुई हृल्लेखा आदि का पूजन करना चाहिए ।७२-७३। पूर्व के ही समान षट्कोणों में मिथुनों का यजन करे । केसरों में अंगों की तथा पत्रों में मातृगणों की पूजा करनी चाहिये ।७४। जो मातृगण भैरव के अंग से समारूढ़ है जिनके मुख पर मन्द हास्य है और जो मद से अलस हैं । असितांग-रुरु-चण्ड-क्रोध-उन्मत्त भैरव-कपाली-भीषण-और संहार–ये आठ भैरव होते हैं । शूल–कपाल और प्रेत को धारण करने वाले क्षुद्रन्दुभि गज के त्वचा के अम्बर वाले भीम–कुटिल केशों से शोभित दीर्घाद्य मातृगण बताई गई हैं और ह्रस्वाद्य भैरव कहे गये हैं ।७५-७६ ७७।

पूज्याः षोडशपत्रेषु कराल्याद्याः पुरोहिताः ।
तद्बाह्येऽनंगरूपाद्याः लोकेशास्त्राणि तद्बहिः ।७८
एवमाराधयेद्देवीं शास्त्रोक्तेनैव वर्त्मना ।
वशं नयति राजानं वनिताश्च मदालसाः ।७९
अन्नमाज्येन जुहुयाल्लभते वसु वाञ्चितन् ।
सुगन्धैः कुसुमैर्हुत्वा श्रियमाप्नोति वाञ्छिताम् ।८०
मन्त्रेणानेन संजप्तमश्नीयादन्नमन्वहम् ।
भवेदरोगी नियतं दीर्घमाप्नुयात् ।८१

अनन्तो विन्दुसंयुक्तो माया ब्रह्माग्नितारवान् ।
पाशादित्र्यक्षरो मन्त्रः सर्ववश्यफलप्रदः ।८२
ऋष्याद्याः पूर्वमुक्ताः स्युर्बीजिनाङ्गक्रिया मता ।८३
वराङ्कुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् ।
बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेयमाद्यां भुवनेश्वरीताम् ।८४

सोलह पत्रों में पूर्व में वर्णित कराली आदि का पूजन करना चाहिए। उनके बाहिर अनङ्ग रूपा आदि का यजन करे। उनके बाहिर लोकपालों तथा उनके अस्त्रों का अर्चन करना चाहिए।७८। इसी रीति से शास्त्रों में कहे गए मार्ग के द्वारा ही देवी की अराधना करे। इसका यह प्रभाव होता है कि साधक व्यक्ति इससे राजा को तथा मदालसा वनिताओं को अपने वश में कर लिया करता है।७९। आज्य (घृत) से युक्त अन्न का होम करे तो अपना अभीष्ट धन प्राप्त कर लिया करता है। सुगन्धित पुष्पों के द्वारा हवन करके मनोवाञ्छित श्री की प्राप्ति कर लेता है।८०। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित अन्न का नित्य ही अशन करे तो नियत रूप से रोग से रहित होता है और दीर्घायु को प्राप्त किया करता है।८१। अनन्त अर्थात् आकार जो बिन्दु से संयुत होवे—माया बीज से युक्त ककार-अग्नि-रेफ और प्रणव के संयुत-पाश आदि वाला तीन अक्षरों का मन्त्र होता है जो सबको वश्य करने के फल का प्रदान करने वाला है।८२। इसके ऋषि आदि पूर्व में ही कहे गए हैं और बीज से अङ्ग क्रिया मानी गयी है।८३। ध्यान बतलाया जाता है करकमलों के द्वारा वरदान, अंकुश पाश और अभयदान को धारण करने वाली, कमल के आसन पर विराजमान करोड़ों बाल सूर्यों के तुल्य तेज से समन्विन तीन नेत्री वाली उस आद्य भुवनेश्वरी देवी का मैं भजन करता हूँ।८४।

हविष्यभुग् जपेन्मन्त्रं तत्त्वयक्षं जितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयाज्जपान्ते मन्त्रचित्तमः ।८५

दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्भिः क्षीरभूरुहाम् ।
तत्संख्यया तिलैः शुद्धैः पयोक्तैर्जुहुयात्ततः ।८६
हृल्लेखाविहिते पीठे नवशक्तिसमन्विते ।
अर्चयेत्परमेशानी वक्ष्यमाणक्रमेण ताम् ।८७
हृल्लेखाद्या यजेदादौ कर्णिकायां यथाविधि ।
अङ्गानि केसरेषु स्युः पत्रस्था मातरः क्रमात् ।८८
इन्द्रादयः पुनः पूज्यास्तेषामस्त्राणि तद्बहिः ।
एवं संपूजयेद्देवीं साक्षाद्वैश्रवणो भवेत् ।८६
दृश्यते सकलैर्लोकैस्तेजसा भास्करोपमः ।
अनेनाधिष्ठितं गेहं निशि दीपशिखाकुलम् ।६०
दृश्यते प्राणिभिः सर्वेर्मन्त्रस्यास्य प्रभावतः ।
सर्वपैर्लोणसंमिश्चैराज्याक्तैर्जुहुयात्रिशि ।६१

अपनी सब इन्द्रियों को जीत लेने वाला हविष्य का भोजन करने वाला पुरुष यन्त्र का चौबीस लाख जप करे । मन्त्रोंका ज्ञान रखने वाला जप के अन्त में उतना ही सहस्र होम करे । फिर दही, शहद और घृत से अक्त करके दूध वाले वृक्षों की समिधाओं से उसकी संख्या से शुद्ध तिलों के द्वारा जो पय से अक्त होवें हवन करना चाहिए और उसकी संख्याके ही अनुसार होम करे ।८५।८६। उस परमेशानी का आगे बताये जाने वाले क्रम से नव शक्तियों से समन्वित हृल्लेखाविहित पीठ पर अभ्यर्चन करना चाहिए ।८७। आदि में विधि के अनुसार कर्णिका में हृल्लेखा आदि का यजन करे । केसरों में अङ्ग होवें और मातृगण क्रमसे पत्रों में स्थित होनी चाहिए ।८८। फिर इन्द्र आदि का पूजन करे और उनके बाहिर उनके अस्त्रों का यजन करे । इस प्रकार से देवी का अर्चन करे तो साक्षात् वैश्रवण ही हो जाया करता है ।८६। वह मनुष्य तेजसे समस्त लोकों के द्वारा सूर्यके ही तुल्य दिखलाई दिया करता है । इसके द्वारा अधिष्ठित गेह रात्रि में दीप शिखा से समाकुल होता है ।६०। इस मन्त्र के प्रभाव से सभी प्राणियों के द्वारा वह ऐसा दिखलाई दिया

करता है। नमक से संमिश्रित सर्षपों से जो आज्य से अक्त होवें रात्रि के समय में हवन करना चाहिए।६१।

राजानं वशयेन्सद्यस्तत्पत्नीमपि साधकः।
अन्नवानन्नहोमेन श्रीमान्पद्महुताद्भवेत्।६२
राजवृक्षसमुद्भूतै पुष्पैर्हुत्वा कविर्भवेत्।
अरोगी तिलहोमेन घृतेनायुरवाप्नुयात्।६३
प्राक्प्रोक्तान्यपि कर्माणि साधयेत्साधकोत्तमः।६४
आलिख्याष्टदिमर्गलान्युदरगं पाशादिकं त्र्यक्षरं
कोष्ठेष्वङ्गमनून् परेषु विलिखेदष्टार्णमन्त्रद्वयम्।
अच्पूर्वापरषट्कयुग्लयवरान् व्योमासनानर्गले-
ष्वालिख्येन्द्रजलाधिपादिगुणशः पङ्क्तिद्वयं तत्परम्।६५
कोष्ठेष्वष्टयुगार्णमात्मसहितां युग्मस्वरान्तर्गतां
मायां केसरदिग्दलेषु विलिखे मूलं त्रिपङ्क्तिक्रमात्।
त्रिःपाशाङ्कुशवेष्टितं लिपिभिरावीयं क्रमाद्व्युत्क्रमात।
पद्मस्थेन घटेन पङ्कजमुखेनावेष्टितं तद्बहिः।६६
घटार्गलमिदं यन्त्रं मन्त्रिणां प्राभृतं मतम्।
पाशश्रीशक्तिकन्दर्पकामशक्तीन्दिरांकुशाः।६७
प्रथमोऽष्टाक्षरो मन्त्रः ततः कामिनि रञ्चिनि।
स्वाहान्तोऽष्टाक्षरः सद्भिरपरः परिकीर्त्तितः।६८

साधक व्यक्ति तुरन्त ही ऐसा करने से राजा को अपने वश में कर लिया करता है और उनकी पत्नी को भी वश्य कर लेता है। अन्न के होम से अन्न वाला हो जाता है। पद्मोंके होम से श्रीमान् होता है।६२। राज वृक्ष में समुत्पन्न पुष्पों से हवन करके कवि हो जाया करता है। तिलों के होम से रोग रहित और घृत के हवन करने से आयु को प्राप्त किया करता है।६३। साधना करने वालों में उत्तम साधक व्यक्ति पूर्व में वर्णित भी कर्मों को करे।६४। अव घटार्गल यन्त्र बतलाते हैं—आठ

दिशाओं में अर्गलाओं को लिखकर उदरगं पाश आदि तीन अक्षरों को कोष्ठों में और दूसरों में अङ्ग मन्त्रोंको लिखें। आठ अक्षरोंके ये दो मंत्र हैं। अच पूर्वा पर षट्क से युक्त लयवरो को व्योमासनों को अर्गलों में लिखकर इन्द्र जलाधिप (वरुण) आदि के गुण से उससे परे दो पंक्तियों को लिखे।९२। कोष्ठों में अष्ट युगार्ण को युग्म स्वरों के अन्तर्गत आत्म सहित मायाको केसर दिग्दलों में लिखना चाहिए। तीन पंक्तियों के द्वारा आवीत उसके बाहिर पद्म में स्थित पङ्कज मुख घट से आवेष्टित करे। ।९६। यह घटार्गल यन्त्र होता। जो मन्त्रधारियों का प्राभृत माना गया है। पद्म श्री शक्ति—कन्दर्प—काम शक्ति—इन्दिरा—अंकुश हैं। प्रथम आठ अक्षरों वाला मन्त्र होता है। इसके उपरान्त कामिनी—रञ्चिनि और अन्त में स्वाहा होता है—यह सत्पुरुषों के द्वारा दूसरा आठ अक्षरों वाला मन्त्र कीर्त्तित किया गया है।९७।९८

ह्रीं गौरि रुद्रदयिते योगेश्वरि सवर्म फट्।
द्विठान्तः षोडशार्णोऽयं मन्त्रः सद्भिरुदीरितः।९९
लिखित्वा भूर्जपत्रादौ यन्त्रमेतद्यथाविधि।
धारयेद्वामवाहौ वा कण्ठे वा निजमूर्द्धनि।१००
वशयेत्सकलान्मर्त्यान् विशेषेण महीपतिम्।
नीलपट्टे विलिख्यैतद्गुटिकीकृत्य तत्पुनः।१०१
साध्यप्रतिकृतौ सिकथनिर्मितायां हृदि न्यसेत्।
पात्रे त्रिमधुरापूर्णे–निःक्षिप्यैनां विधानतः।१०२
सम्पूज्य गन्धपुष्पाद्यैर्वलि निःक्षिप्य रात्रिषु।
मूलमन्त्रं जपेन्मन्त्री नित्यमष्टसहस्रकम्।१०३
सप्ताद्वाहाच्छितां नारीमाहरेत्स्मरविह्वलाम्।
भूर्जपत्रे विलिख्यैतत् गुटकीकृत्य तत्पुनः।१०४
लाक्षया ताम्ररजतकाञ्चनैर्वेष्टयेत्क्रमात्।
तत्कुम्भे न्यस्य सम्पूज्य यथावद्भुवनेश्वरीम्।१०५

'ह्रीं गौरि रुद्र दयिते योगेश्वरि' वर्म के सहित फट् जिसके अन्त में दो ठकार होवें—यह सोलह वर्णों वाला मन्त्र सत्पुरुषों के द्वारा कहा गया है ।९९। इस मन्त्र को भोजपत्र आदि पर विधि के साथ लिखकर इसको साधक अपनी वांयी वाहु में अथवा कण्ठ में या अपने मस्तक में बाँधे तो वह सब मनुष्यों को वशमें कर लिया करता है और विशेष रूप से नृपति को अपने वशमें कर लेता है । नील पट्ट पर इसको लिखकर फिर गुटिका बनाकर सिक्थ के द्वारा निर्माण की हुई साध्यकी प्रतिमा के हृदय में न्यस्त कर देवे । तीन मधुरों से परिपूर्ण पात्र में इसको निधान से निक्षिप्त कर देवे । गन्ध पुष्प आदि के द्वारा भली· भाँति पूजन करके रात्रि के समय में वलि का विक्षेरण करे । मन्त्रधारी को नित्य ही मूल मन्त्रका आठ सहस्र जप करना चाहिये । १००-१०३ एक ही सप्ताह में अपनी मनोवांछित काम वासना से विह्वल नारी का आहरण कर लेता है । भोजपत्र पर इसको लिखकर फिर उसकी गुटिका बनावे ।१०४। लाख से ताम्र, चाँदी, सुवर्ण से क्रम से इसको वेष्टित करे । उसको कुम्भ में न्यस्त करके भुवनेश्वरी देवी का यथा रीति से भली-भाँति अर्चन करना चाहिये ।१०५

संस्पृश्य तञ्जपन्मन्त्रं दिवाकरसहस्रकम् ।
अभिषिच्य प्रियं साध्यं बध्नीयाद्यन्त्रमाशिखम् ।१०६
कान्ति पुष्टि धरारोग्यशांति लभते नरः ।
भित्तौ विलिख्य तद्यन्त्रं पूजतेन्नित्यमादरात् ।१०७

भूतप्रेतपिशाचास्तं न वीक्षितुमपि क्षमाः ।
तद्विलिख्य शिरस्त्राणे साधितं धारयेद्भटः ।१०८
युद्धे रिपून् बहून्हत्वा जयताप्नोति पार्थिवः ।१०९
वज्राङ्किते वह्निपुरद्वये तां पाशांकुशाद्यभ्यामुदरस्थसाध्यम् ।
मध्येऽथकोणेष्वथ बाह्यवृत्ते पुनः पुनस्तां विलिलेत्समन्तात् ।११०
भूर्जे लिखितमेतत्स्यात्सर्ववश्यकरं नृणाम् ।

आरोग्यैश्वर्यजननं युद्धेषु विजयप्रदम् ।१११
लिखेत्सरोजे स्वरकेसराढ्ये वर्गाष्टपत्रे वसुधापुरस्थे ।
पाशाङ्कुशाभ्यां गुणशः प्रबद्धां मायांलिखेन्मध्यगतांससाध्याम्११२
सर्वोत्तममिदं यन्त्रं धारितं कुरुते नृणाम् ।
आरोग्यैश्वर्यसौभाग्यविजयादीननारतम् ।११३

पभ्यर्चन करने के पश्चात् बारह हजार की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिये । प्रिय साध्य का अभिषेक करके यन्त्र को शिखा में बाँध लेवे ।१०६। इसके प्रभाव से मनुष्य कान्ति, पुष्टि, धरा, आरोग्य और शान्ति लाभ करता है । नित्य ही ही बहुत अधिक आदर से पूजन करना चाहिए ।१०७। भूत-प्रेत और पिशाच उसका अवलोकन करने में भी समर्थ नहीं हुआ करते हैं । फिर इसको साधित करके अपने शिरस्त्राण में लिखकर धारण करे ।१०८। राजा युद्ध में शत्रुओं का हनन करके विजय का लाभ किया करता है ।१०९। वज्र से अङ्कित वह्निपुर द्वय में पाश और अंकुश से संयुत उसको मध्य में और वाह्य वृत्त में कोण में उदरस्थ साध्य को बारम्बार चारों ओर लिखना चाहिये ।११०। भोजपत्र पर लिखा हुआ यह यन्त्र मनुष्योंको अपने वश्य करने वाला हुआ करता है । यह आरोग्य और ऐश्वर्य को उत्पन्न करने वाला है और युद्धों में विजय प्रदान करने वाला हुआ करता है ।१११। स्वर केसर से आढ्य वसुधापुर में स्थित वर्गाष्ट पत्र में सरोज में पाश और अंकुश से युक्त गुणों से प्रबुद्ध साध्य के सहित मध्यगता माया को लिखें ।११२। यह सबसे उत्तम यन्त्र है । यह धारण किया हुआ मनुष्यों के आरोग्य, ऐश्वर्य, सौभाग्य और विजय आदि को निरन्तर किया करता है ।११३

———

दशम पटल

दुर्गा प्रकरण

ततो दुर्गामनुं वक्ष्ये द्रष्टाद्रष्टफलप्रदम् ।
मायाऽत्रिः कर्णविन्द्वाढ्यो भूयोऽसौ सर्गवान्भवेत् ।१
पञ्चान्तकः प्रतिष्ठावान्मारुतो भौतिकासनः ।
तारादिर्हृदयान्तोऽयं मन्त्री वस्वक्षरात्मकः ।२
ऋषिश्च नारदश्छन्दो गायत्रं देवनामनोः ।
दुर्गा समीरिता सद्भिर्दुरितापन्निवारिणी ।३
नमस्कारयुक्तेन मूलमन्त्रेण साधकः ।
ह्रामाद्यैः सह कुर्वीत षडङ्गानि यथाविधि ।४
सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्यैश्चतुर्भिर्भुजैः ।
शंखं चक्रधनुः शरांश्च दधतीं नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता ।
आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीरणन्नूपुरा
दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्कुण्डला ।५
वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलैर्मधुरलोलितैः ।
पयोऽन्धसा वा जुहुयात्तत्सहस्रं जितेन्द्रियः ।६
पीठमित्थं यजेत्सम्क् नवशक्तिसमन्वितम् ।
प्रभा मया जया सूक्ष्मा विशुद्धा नन्दिनी पुनः ।७
सुप्रभा विजया सर्वसिद्धिदा नव शक्तयः ।
अच्मिर्ह्रस्वत्रयक्लीवरहितैः पूजयेदिमाः ।८

इसके अनन्तर दुर्गा के मन्त्र के विषय में वतलाऊँगा जो दृष्ट और अदृष्ट के फल को प्रदान करने वाला होता है। अव मन्त्र का उद्धार वतलाया जाता है—माया—शक्ति का वीज—हकार, ठकार, विन्दु से आढ्य हूँ, फिर विसर्गों से युक्त हुकार, पञ्चान्तक मकार आकार से युक्त गा, यकार, भौतिकासन अर्थात् थं, मारुत से यकार जिसके आदि में प्रणव है और अन्त में हृदय है यह मन्त्र आठ अक्षरों वाला होता है

।१-२। इस मन्त्र का ऋषि नारद है—गायत्री छन्द है और इस मन्त्र का देवता दुर्गा कही गई है, जिनको सत्पुरुषों ने वतलाया है। यह दुरितों और आपदाओं के निवारण करने वाला है।३। साधक को चाहिये कि नमस्कार से रहित मूल मन्त्र से ह्रामद्यों के सहित विधिपूर्वक षट् अङ्गों को करे।४। ध्यान–सिंह के वहन पर विराजमाना चन्द्र को मस्तक पर धारण करने वाली—मरकतप्रस्थ अपनी चार भुआओं के द्वारा शङ्ख-चक्र-धनुध और शरों को धारण करने वालों है–तीन नेत्रों से शोभित—मोतियों के हार, अङ्गद, कङ्कण में से युक्त तथा झनकार करने वाली काञ्ची और नूपुरों वाली है—रण में उल्लसित कुण्डलों से विभूषित्त दुर्गादेवी आपके दुर्गों अर्थात् कष्टों का हरण करने वाली होवे।५। इस मन्त्र का आठ लाख जप करे। इन्द्रियों को जीत लेने वाला साधक मधुर से लोलित तिलों के द्वारा अथवा पयोन्ध से लोलित किये हुओं से एक सहस्र आहुतियाँ देवे।६। इस रीति से नौ शक्तियों से समन्वित पीठ को भली-भाँति पूजन करें—नौ शक्तियों के नामों को वतलाया जाता है—प्रभा, माया, जया, सूक्ष्मा, विशुद्धा, नन्दिनी, सुप्रभा, विजया और सर्व सिद्धिदा—ये नौ शक्तियाँ हैं। इनका ह्रस्वत्रयकलीवों से रहित अचो से यजन करना चाहिये।७-८।

प्रणवान्तरे वज्रनखदंष्ट्रायुधाय च।
महासिंहाय वर्मास्त्रं नतिः सिंहमनुर्मतः।९
दद्यादासनमेतेन मूर्ति मूलेन कल्पजेत्।
तस्यां संपूजयेन्मूतौ देवीमावाह्य मन्त्रवित्।१०
अङ्गावृत्ति पुराभ्यर्च्य शक्तीः पत्रेषु पूजयेत्।
जया च विजया कीर्ति प्रीतिः पश्चात्प्रभा पुनः।११
श्रद्धा मेधा श्रुतिः प्रोक्ता स्वनामाद्यक्षरादिकाः।
पत्राग्रेष्वर्चयेदष्टायुधानि यथाक्रमात्।१२
चक्रशङ्खगदाखड्गपशांकुशशरान्धनुः।
लोकेश्वरांस्ततो वाह्ये तेषामस्त्राण्यनन्तरम्।१३

इत्थं जपादिभिर्मन्त्री मन्त्रे सिद्धे विधानवित्।
कुर्यात्प्रयोगानेतेन मनुना स्वमनीषितान् ।१४

अब सिंह मन्त्र बतलाया जाता है, प्रणव के अनन्तर वज्रनख दृष्ट्रायुधाय—वह स्वरूप है, सिंहाय—यह स्वरूप है इसके अनन्तर हूँ फट् और अन्तमें नमः यह पद होता है। यही सिंह मन्त्र माना गया है। ।९। इस मन्त्र द्वारा आसन अर्पित करे और मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए। मन्त्र के ज्ञाता को चाहिए कि उसमें मूर्त्ति में देवी का आवाहन करके भली-भाँति उनका अर्चन करे।१०। पहिले अङ्गावृति का यजन करके फिर पत्रों में शक्तियोंका यजन करे। जया, विजया, कीर्त्ति, प्रीति, प्रभा, श्रद्धा, मेधा, श्रुति ये बताई गयी हैं। इनसे अपने नाम के आदि अक्षर का उच्चारण करे। पत्रों के अग्र भागों में क्रम के अनुसार आठ आयुधों का अर्चन करना चाहिए।११-१२। ने आठ आयुध ये हैं—शंख, चक्र, गदा, खड्ग, पाश, अंकुश, शर और धनुष। इसके उपरान्त बाहिर लोकेश्वरों का तथा उनके अनन्तर उनके अस्त्रों का पूजन करे। इस रीति से मन्त्रधारी जो विधान का ज्ञाता होवे जप आदि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर इस मन्त्र के द्वारा अपने मनीषित प्रयोगों को करे।१३-१४।

प्रतिष्ठाप्य विधानेन कलशान्नव शोभनान्।
रत्नहेमादिसंयुक्तान्पदेषु नवसु स्थितान् ।१५
मध्यस्थे पूजयेद्देवीमितरेषु जयादिकाः।
पूज्य गन्धपुष्पाद्यै रभिषिञ्चेन्नराधिपम् ।१६
राजा विजयते शत्रून्साधकोविजयश्रियम्।
रोगी दीर्घायुः सर्वव्याधिविवर्जितः ।१७
वन्ध्याभिषिक्ता विधिना लभते तनयं वरम्।

मन्त्रेणानेन सजाप्तमाज्यं क्षुद्रज्वरापहम्।
गर्भिणीनां विशेषेण जप्तं भस्मादिकं तथा ।१८

मध्ये तारे बीजमन्तस्थसाध्यं पत्रेष्वष्टौ मन्त्रवर्णान्विलिख्य ।
त्रिष्टुप्गीतं वेष्टितं मातृकार्णैर्यन्त्रं दौर्गं भुपुरस्थं विदध्यात् ।१६
क्षुद्रभूतमहारोगचौरसर्प निवारणम् ।
विजयश्रीप्रदं पुंसां गर्भिणीना सुखप्रदम् ।२०
भ्रान्तं वियत्सनयनं श्वेतो मर्द्दिनि ठद्वयम ।
अष्टाक्षरीयमाख्याता विद्या महिषमर्द्दिनी ।२१

इसके अनन्तर विधानके साथ परम शोभन नौ कलशोंकी प्रतिष्ठा, पित करके, जोकि रत्न औके सुवर्ण से संयुक्त होवें—नौ पदों में स्थित करे। जो कलश मध्य में स्थित है उसमें देवी का अर्चन करे और इतर कलशोमें जया आदि का पूजन करना चाहिए। गन्ध पुष्पादि उपचारों के द्वारा भली-भाँति पूजन करके नराधिप का अभिषेक करे ।१५।१६। इससे राजा अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त किया करता है और साधक विजय श्री को प्राप्त किया करता है। जो रोगी हो वह दीर्घ आयु की प्राप्ति करता और समस्त व्याधियों से रहित हो जाया करता है ।१७। विधि से अभिषेक की हुई वन्ध्यानारी परम श्रेष्ठ सुत को प्राप्त करती है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित आज्य क्षुद्रज्वर के अपहरण करने वाला होता है। विशेष रूप से जप की हुई भस्म आदि लाभ किया करती है ।१८। अब मन्त्र बतलाते हैं–मध्य में, कर्णिका में, तार में (प्रणव में) अन्त: सम स ध्य अर्थात् मध्यास्थि साध्य साधक नाम कर्म के सहित दौर्ग बीज को लिखे और आठ पत्रोंमें मन्त्रके वर्णों का लेखन करे तथा त्रिष्टुप् से वीत और मातृका वर्णों से वेष्टित करे इस यन्त्र को भूपुर के मध्य में स्थित करना चाहिए ।१९। यह मन्त्र यन्त्र क्षुद्र भूत, महारोग, चारों ओर सर्पों का निवारण करने वाला होता है। पुरुषों को विजय और श्री के प्रदान करने वाला होता है। तथा गर्भिणियों के सुख का प्रदाता है ।२०। भ्रान्त—मकार, विद्युत्—ढकार, सनयन—इकार के सहित, श्वेत—षकार, मर्हिनि—स्वरूप, दोठकार और स्वाहा—यह विद्या अष्टाक्षरों वाली महिष-मर्दिनी कही गयी है ।२१।

महिषहिंसिके हुँ फट् हृदयं परिकीर्तितम् ।
महिषशत्रो शार्ङ्गि हुँ फट् शिरोऽङ्गं समुदाहृनम् ।२२
महिषं भीषयद्वन्द्वं हुँफडन्तः शिखामनुः ।
महिष हनयुग्मान्ते देवि हुँफट् तनुच्छदम् ।२३
महिषान्ते सूदिति हुँफडन्तमस्त्रसमीरितम् ।
मन्त्रै रेतैर्जातियुक्तैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ।२४
गारुडोपलसन्निभां मणिमौलिकुण्डलमण्डिताम् ।
नौमिभालविलोचनां महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम् ।२५
चक्रशंखकृपाणखेटकवाणकर्मुकशूलकान् ।
तर्जनीमपिविभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम् ।२६
अष्टलक्ष जपेन्मन्त्र तत्सहस्रं तिलैः शुभैः ।
हुत्वा प्रागीरीते पीठ यजेन्महिषमर्दिनाम् ।२७
संपूज्याङ्गानि पत्रेषु दुर्गाख्यां वरवर्णिनीम् ।
आर्याह्वां तृतीयां च चतुर्थीं कनकप्रभाम् ।२८
पञ्चमीं कृत्तिकासंज्ञा षष्ठीमप्यभयप्रदाम् ।
कन्यां सुरूपां प्रभजेन्मन्त्री दीर्घस्वरैः क्रमात् ।२९

महिष हिंसि के हुँफुट्—वह हृदय कीर्त्तित किया गया है—महिष शत्रो शर्ङ्गि हुँफट्—शिर अङ्ग कहा गया है ।२२। महिर्ष भीषयद्वन्द्वं हुँफट्—शिखा मन्त्र है । महिष दो हन के अन्त में देवि हुँ फट्—यह तनुच्छद है ।२३। महिष के अन्त में सूदिनि हुँ फट्—यह अस्त्र कहा गया है । इन मन्त्रों से जातियुक्त हैं पञ्च अङ्गों को प्रकल्पित करना चाहिए ।२४। ध्यान—गारुडोपल के सदृश—मणि मौलि कुण्डलों से मण्डित—भाल में विलोचन वाली—महिष के उत्तम अङ्ग पर विराजमान—शङ्ग, चक्र, कृपाण खेटक, वाण, कार्मुक और शूल को धारण करने वाली—मस्तक में चन्द्र को धारण करती हुई—तर्जनी को भी अपनी वाहुओंसे विभरण करने वाली को नसस्कार करता हूँ ।२५-२६ इस मन्त्र का आठ लाख जप करे । एक सहस्र शुभ तिलों से हवन करे

पूर्व में वर्णित पीठ पर महिष मर्दिनीका यजन करना चाहिए ।२७। पत्रों अङ्गों का पूजन करना चाहिए । दुर्गा, वरवर्णिनी, आर्या, चौथी कनक प्रभा, पाँचवी कृत्तिका, छटवीं अभयप्रदा, कन्या स्वरूप का मन्त्र धारी क्रम से दीर्घ स्वरों से प्रभजन करे ।२८-२९।

यजेदग्रेष्वायुधानि चक्रशङ्खासिखेटकान् ।
वाणं बाणासनं शूल कपाल यादिभिः क्रमात् ।३०
लोकपालाः पुनः पूज्यास्तदस्त्राणि ततः परम् ।
वशयेत्तिमहोमेन नरान्नरपतीनषि ।३१
सिद्धार्थे हुंयान्मत्री रोगा-मुच्येत तत्क्षणात् ।
पद्मैर्हुत्वा जयेच्छत्रून्दूर्वाभिःशान्तिमाप्नुयात् ।३२
पलाशंकुसुमैः पुष्टि धान्यैर्धान्यश्रियं व्रजेत् ।
काकपक्षैः कृतोहोमो द्वेषं वितनुते नृणाम् ।३३
मरीचहोमान्मरणं रिपुराप्नोति सर्वथा ।
क्षुद्रादिचोरभूनाद्यान्ध्यात्वा देवीं विनाशयेत् ।३४
तारो दुर्गेयु रक्तमन्त्यं ठान्तं सलोचनम् ।
द्विठान्ता जयदुर्गेयं विद्या वेद्या दशाक्षरी ।३५

आगे आयुधों का—शङ्ख चक्र का असि और खेटकों का—वाण—वाणासन–शूल–कपाल का यादि से क्रम से यजन करे ।३०। फिर लोक पालों का पूजन करे उनके आगे उनके अस्त्रों का यजन करना चाहिए । इस तरह से करने वाला साधक तिलों के होम से नरों और नर पतियों को भी अपने वश में कर लिया करता है ।३१। मन्त्रधारी सिद्धार्थों (श्वेत सर्षपों) से हवन कर के रोग ने तत्क्षण में ही मुक्त हो जाया करता है । पद्मों से हवन करके शत्रुओं पर विजय पाता है और दूर्वाओं से होम करके शान्ति को पाता है ।३२। पलाश के पुष्पों के द्वारा होम करके पुष्टि का लाभ किया करता है और धान्यों से हवन करके धान्य श्री को प्राप्त करता है । कौए के पङ्खों से होम करने वाला मनुष्यों में द्वेषका विस्तार करता है ।३३। मिर्चों के होम से शत्रु सर्वथा

मरण को प्राप्त कर लेता है। देवी का ध्यान करके क्षुद्रादि—चोर—भूत आदि का विनाश कर दिया करता है ।३४। अब जय दुर्गा का मन्त्र बतलाते हैं प्रणव, दो वार दुर्गे पद, रेफ, अन्त में क्षकार, ईकार के सहित णकार और अन्त में दो ठकार—यह दश अक्षरों वाली जय दुर्गा जान लेनी चाहिए ।३५।

तारादिदुर्गे हृदयं दुर्गे शिर उदाहृतम् ।
दुर्गायै स्याच्छिखा वर्म भूतरक्षिणि कीर्तितम् ।
तारादिदुर्गे युगलं रक्षिण्यस्त्रं समीरितम् ।३६
कालाभ्र भां कटाक्षं ररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खञ्चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपिकरैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेविता सिद्धिकामैः ।३७
बाणलक्षं जपेन्मत्रं घृतेन जुहुयात्ततः ।
दशांश संस्कृते वह्नौ ब्राह्मणानपि भोजयेत् ।३८
लष्टाक्षारोपिते पीठे पूजयेत्पर्ववत्सुधीः ।
मन्त्रं जपन् विशेद्युद्धे शत्रून्हन्याद्विशेषतः ।३९
प्रजपेद्वय्वहारादौ तत्रापि विजयी भवेत् ।
अर्चयेदस्त्रशस्त्राणि जयार्थी विद्ययाऽनया ।४०
ज्वलज्वलपदान्ते स्याच्छूलिनीति पद वदेत् ।
दुष्टग्रहं हुमस्त्रान्तो वह्निजायावधिर्मनुः ।४१
भूतेन्द्रियाक्षरैः प्रोक्तो ग्रहक्षुद्रारिनाशकः ।
ऋषिदीर्घतमाः प्रोक्तः ककुप्छन्द उदाहृतम् ।४२

तारादि दुर्गे—यह हृदय है और दुर्गे—यह शिर कहा गया है। दुर्गायैं—यह शिखा हैं—भूत रक्षिणि—यह वर्म कहा गया है ।३६। तारादि दुर्गे युगल और रक्षिणि—यह अस्त्र कहा गया है ।३६। अब ध्यान वताया जाता है—काले मेघ की आभा वाली—अपने कटाक्षों के द्वारा शत्रुओं के समुदाय को भय प्रदाव करने वाली—मस्तक में इन्दु रेखा को धारण

करती हुई, तीन नेत्रों से युक्त, कर-कमलों के द्वारा शङ्ख, कृपाण, त्रिशिख को धारण करने वाली, सिंह के स्कन्ध पर अधिरूढ़, अपने तेज के द्वारा सम्पूर्ण त्रिभुवन को पूरित करने वाली, देवगणों से परि-वृत, सिद्ध कामों के द्वारा सेवित, जय नाम वाली दुर्गा का ध्यान करे ।३७। पाँच लाख मन्त्र का जप करे फिर घृत से होम करे। हवन संस्कार की हुई अग्नि में दशांश करना चाहिए। ब्राह्मणों को भोजन करावे ।३८। सुधी पुरुष को चाहिए कि पूर्व की ही भाँति अष्टाक्षरोपित पीठ पर पूजन करे। मन्त्र का जप करते हुए युद्ध में प्रवेश करे तो विशेष रूप से शत्रुओं का हनन किया करता है ।३९। व्यवहार आदि प्रकृष्ट रूप से जप करे तो वहाँ पर भी विजय होता है। इस विद्या के द्वारा जप का अर्थी अस्त्रों और शस्त्रों का अर्चन करे ।४०। ज्वल-ज्वल पदों के अन्त में शूलिनि—इस पद को कहे। दुष्टग्रह हैं—इस अस्त्र के अन्त वाला अन्त में स्वाहा होता है ।४१। भूतेन्द्रियाक्षरों के द्वारा कहा हुआ मन्त्र ग्रह–क्षुद्र शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसका ऋषि दीर्घतमा कहा गया है और इसका ककुप छन्द कहा गया है ।४२।

शूलिनि देवता प्रोक्ता समस्तसुरवन्दिता।
दुर्गे हृदवरदे शीर्षं विन्ध्यवासिनि तच्छिखा ।४३

वर्म्मासुरान्ते मर्द्दिनी युद्धपूर्वप्रिये पुनः।
त्रासयद्वितयश्चास्त्रं देवसिद्धसुपूजिते ।४४

नन्दिनी स्याद्रक्षयुगं महायोगेश्वरि क्रमात्।
शूलिन्याद्या हुं फडन्ताः पञ्चांगमनवः स्मृताः ।४५

अध्यारूढां मृगेन्द्रं सजलजलधरश्यामलां हस्तपद्मैः
शूलं बाणं कृपाणमरिजलजगदाचापपाशान्वहन्तीम्।

चन्द्रोत्तंसा त्रिनेत्रां चतसृभिरसिना खेटकान् बिभ्रतीभिः
कन्याभिः सेव्यमानां प्रतिभटभयदां शूलिनि भावयामि ।४६

मन्त्रमेन जपेन्मत्री वर्णलक्षं विचक्षणः ।
सर्पिषान्नेन होमस्तु दद्शांशमितो भवेत् ।४७
प्रागुक्तं पूजयेत्पीठे वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।
विधाय पूजामंगानां पूज्याः पत्रेषु शक्तयः ।४८
दुर्गाद्या वरदाविन्ध्यवासिन्यसुरमद्दिनी ।
युद्धप्रिया पञ्चमी स्याद्देवसिद्धसुपूजिता ।४९

समस्त सुरगणों द्वारा वन्दित शूलिनि देवता बतायी गयी है । दुर्गे हृदय है—वरदे शीर्ष है और विन्ध्यावासिनी उसकी शिखा है-असुरान्ते और फिर मर्दिनि युद्ध पूर्व प्रिये—वर्म है । युद्ध प्रिये त्रासयत् द्वितीय अस्त्र है—देवसिद्ध सुपूजिते रक्ष युग, महायोगेश्वरि क्रम से नन्दिनी है । शूलिनी आदि में और हुँफट् अंत वाले—ये पांच अंग मन्त्र कहे गये हैं । ४३।४४।४५। ध्यान—मृगेन्द्र पर समारूढ़, जल से परिपूर्ण मेघ के समान श्याम वर्ण वाली—कर कमलोंके द्वारा शूल, बाण, कृपाण, जलज, गदा, चाप और पाश को वहन करती हुई, चन्द्र के उत्तंस वाली, तीन नेत्रों से संयुत, असि से युत खेटकों को धारण करती हुई चोर कन्याओं के द्वारा सेवित, प्रतिभटों को भय देने वाली शूलिनि की भावना करता हूँ ।४६। विचक्षण पुरुष को चाहिए कि इस मन्त्र का वर्णलक्ष जप करे अर्थात् मन्त्र में जितने वर्ण होवे उतने ही लाख जप करना चाहिए । उस जप का दशांश सर्पिष के सहित अन्न से हवन करे ।४७। आगे बताये जाने वाले मार्ग से पूर्व कहे हुए पीठ पर यजन करे । अङ्गों की पूजा करके पत्रों में शक्तियों की पूजा करनी चाहिए ।४८। आद्या दुर्गा है वरदा विन्ध्यवासिनी, असुर मर्दिनी, पाँचवी युद्ध प्रिया, देवसिद्ध सुपूजिता ।४९।

सप्तमी नन्दिनी प्रोक्ता महायोगेश्वरी परा ।
दलाग्रेषु तदस्त्राणि शङ्खचक्रमसिं पुनः ।५०
गदेषुचापशूलानि पाशं पश्चाद्दिशाधिपान् ।
इत्थं जपादिभिः सिद्धः कुर्यात्कर्मनिजेप्सितम् ।५१

अष्टोत्तरसहस्रं यस्तिलैस्त्रिमधुराप्लुतैः ।
नित्यं तजुहुयात्तस्य शक्तिः स्यादतिमानुषी ।५२
अष्टोत्तरशता नित्यं सर्पिषा जुहुयान्नरः ।
वाञ्छितां वत्सरादर्वाक् प्राप्नुयान्महतीं श्रियम् ।५३
दूर्वाहोमो भवेन्नृवाञ्छितसिद्धिदः ।
छुरिकाद्यानि शस्त्राणि जप्तानि मनुनाऽमुना ।
संपाताज्यविलिप्तानि वितरन्ति जयश्रियम् ।५४
अश्वत्थार्कसमिद्भिर्वा तिलैस्त्रिमधुरोक्षितैः ।
होमो वशयति क्षिप्रमीप्सितान्मन्त्रिणोनरान् ।५५
उद्यदायुधहस्तां तां देवी कालघनप्रभाम्
ध्यात्वाऽऽत्मागं जपेग्मन्त्रं स्पृष्ट्वार्तं मुञ्चति ग्रहः ।५६

सप्तमी नन्दिनी कही गयी है—दूसरी महायोगेश्वरी है । दलो के अग्र भागों में उनके अस्त्रों का यजन करना चाहिए । शङ्ख, चक्र, असि, गदा, इषुचाय, शूल और पाश का यजन करे । इसके पीछे दिक्पालों का अर्चन करना चाहिए । इस रीति से जप आदि के द्वारा सिद्ध होता है और फिर अपना ईप्सित कर्म करना चाहिए ।५०।५१। जो एक सहस्र आठ बार मधुर से अक्त तिलों के द्वारा नित्य हवन करता है उसकी अतिमानषी शक्ति हो जाती है ।५२। जो मनुष्य अष्टोत्तर शत घृत से आहुतियाँ देता है वह एक वर्ष से पहिले ही अपनी वाञ्छित महती श्री प्राप्ति किया करता है ।५३। दूर्वा से किया हुआ होम मनुष्यों के लिए सब वाञ्छितों की सिद्धि का प्रदाता होता है । इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित छुरिका आदि शस्त्र सम्पाताज्य से विलिप्त किये हुए जय श्री को वितरित किया करते हैं ।५४। पीपल और आक की समिधाओं से अथवा तीनों मधुरों में उक्षित तिलों से किया हुआ होम शीघ्र ही ईक्षित मन्त्रियों को और नरों को अपने वश कर लिया करता है ।५५। उठाये हुए आयुध के हाथ में ग्रहण करती हुई—काले मेघ के तुल्य प्रभा से समन्वित उस देवी का ध्यान

करके आत्मा का स्पर्श करके मन्त्र का जप करे तो उसको ग्रह छोड़ दिया करता है ।५६

सर्पाखुवृश्चिकादीनां विषमाशु विनाशयेत् ।
मनुनानेन विधवन्मन्त्रविद्देवताधिया ॥५७
मन्त्रेणाऽनेन सञ्जप्तान्वाणानादाय साधकः ।
विमुञ्चेत्प्रतिसेनायां सा द्रुत विद्रुता भवेत् ।५८
शूलपाशधरां देवीं ध्यात्वात्मानमनाकुलः ।
प्रविशेद्युद्धदेश यो जित्वाऽऽयाति स निर्व्रणः ।५९
जुहुयात्तिलसिद्धार्थैर्लक्षमेकं यथाविधि ।
नामयुक्तं जपेन्मन्त्रं यस्यासौ मृत्युमेष्यति ।६०
गुटिका गोमयोत्पन्ना हुत्वाऽष्टशतसंख्यया ।
सप्ताहात्कुरुते मन्त्री विद्वेष स्निग्धयोर्मिथः ।६१
गृहीत्वा गोमयं व्योम्नि त्रिसहस्रं जपेत्ततः ।
गमिष्यतां द्वारदेशे निखातं स्तम्भनं भवेत् ।६२
वहुनोक्तेन किंसर्वं साधयेन्मनुनाऽमुना ।
उत्तिष्ठ पदमाभाष्य पुरुषि स्यात्पदं ततः ।६३

सर्प, चूहा, विच्छू, आदि के विषको शीघ्र ही विनष्ट कर देता है। मन्त्र का ज्ञाता पुरुष इस मन्त्र के द्वारा देवता की बुद्धि से प्रयोग करे तो विषों की शान्ति होती है ।५७। इस मन्त्र के द्वारा भली भाँति जप किये हुए वाणों को साधक लेकर अपने शत्रु की सेना में यदि उनको छोड़े तो वह सेना बहुत शीघ्र ही भाग जाया करती है ।५८। अनाकुल होकद्व शूल और पाश को धारण करने वाली देवी का आत्मा में ध्यान करके जो कोई भी यदि युद्ध देश में प्रवेश करे तो वह व्रण रहित होता हुआ ही उसको जीत करके आता है ।५९। विधिके अनुसार एक लाख मंत्र का जप करके तिल और सिद्धार्थोंसे होम करे और नाम से युक्त मन्त्र का जप करें जिसका नाम रक्खे वह मृत्युको प्राप्त हो जाता है । गोमय से उत्पन्न गुटिकाओं की एक सौ आठ वार आहुतियाँ देवें तो मन्त्रधारी

एक सप्ताह में दो परस्पर में अत्यन्त स्नेह वालेभी हों तो उसमें विद्वेष कर दिया करता है ।६०-६१। व्योम में गोमय को ग्रहण करके फिर तीन सहस्र जप करे और जाने वालों के द्वार देश में खोदकर गाड़ देने तो स्तम्भन हो जाता है ।६२। बहुत इसके विषयों में कहने से क्या लाभ है, साधक इस मंत्र के द्वारा सबका साधन कर लेता है । उत्तिष्ठ, इस पद को कहकर इसके अनन्तर पुरुष-यह पद होना चाहिए ।६३।

पितामहः सनेत्रेन्दुः स्वपिषि स्याद्भयं च मे ।
समुपस्थितः मुच्चार्य यदि शक्यमनन्तरम् ।६४
अशक्यं वा पुनस्तन्मे वदेद्भगवति ततः ।
शमयाग्निवधूः सप्तत्रिंशद्वर्णात्निकोमनुः ।६५
ऋषिरारण्यकश्छन्दो प्रत्यनुष्टुपुदाहृतम् ।
देवता वनदुर्गा स्यात्सर्वदुर्गविमोचनी ।६६
पादाष्टसन्धिषु गुदलिङ्गाधारोदरेषु च ।
पार्श्वहृत्स्तनकण्ठेषु पुनर्बाह्विष्टसन्धिषु ।६७
मुखनासाकपोलाक्षिकर्णभ्रूमध्यमूर्द्धसु ।
मंत्राक्षराणि विन्यस्य देवताभावसिद्धये ।६८
षड्भिश्चतुर्भिरष्टाभिरष्टाभिः षड्भिरिन्दयैः ।
मंत्रार्णैरङ्गक्लृप्तिः स्याज्जातियुक्तैर्यथाक्रमम् ।६९
सौवर्णाम्बुजमध्यग त्रिनयनां सौदामिनीसन्निभां ।
चक्रं शंखवराभयानि दधतीमिन्दोः कलां बिभ्रतीम् ।७०
ग्रैवेयाङ्गदहारकुण्डलधरामाखण्डलाद्यैस्तुतां ।
ध्यायेद्विन्ध्यनिवासिनीं शशिमुखीं पार्श्वस्थपञ्चाननाम् ।७१

इकार और बिन्दुके सहित ककार-फिर स्वपिषि, यह पद है, फिर मे भय समुपस्थित, यदि शक्यु में अथवा आशक्य होवे, इसके उपरान्त भगवति, यहपद कहे इसके आगे 'स्वाहा' कहे । और 'शमय' पद कहे । यह सैंतीस वर्णका मन्त्र होता है।६४-६५। इसकाऋषि आरण्यक है और इसका छन्द अनुष्टुप कहा गया है । इनका देवता वनदुर्गा है जो सभी

दुःखों का विनाश करने वाली है ।६६। पादों की अष्ट सन्धियों में, गुदा लिङ्गाधार, उदर में, पार्श्व, हृदय, स्तन, कन्ठ, में पुन वह्निनष्ट संधियों में मुख, नासिका, कपोल, आँख, कान भौंहों का मध्य भाग मूर्धा में मन्त्र के अक्षरों का विन्यास करे जो देवता के भाव को सिद्धि के लिये करना चाहिये ।६७-६८। छै, चार, आठ और छँ इन्द्रिया मन्त्र के वर्णो से जो जाति युक्ति हो क्रमानुसार अंगक्लृप्ति होती है ।६९। ध्यान बतलाया जाता है–सोवर्ण कमल के मध्य में विराजमान, तीन नेत्रों से समन्वित, विद्युल्लता के तुल्य, करकमलों से शंख, चक्र, वरदान और अभयदान को धारण करती हुई—मस्तक में चन्द्रमा की कला को वहन करने वाली, ग्रैवेय, अंगद, हार, कुन्डलो को धारण करती हुई-इन्द्रादि देवगणों के द्वारा स्तवन की हुई–जिसके समीप में सिहस्थित है—ऐसी चन्द्रमुखी विन्ध्य वासिनी देवी का ध्यान करना चाहिए ।७०-७१।

एव ध्यात्वा जपेल्लक्षाचतुष्कं तद्दशांशतः ।
जुहुयाद्धविषा मत्री शालिभिः सर्पिषा तिल।७२
प्रागीरिते जपेत्पोठे देवीमङ्गदिभिः सह ।
अङ्गपूजा यथापूर्वं दलमूलेष्वमा यजत् ।७३
आर्या दुर्गा च भद्राख्या भद्रकाली ततोऽम्बिका ।
क्षेमान्या वेदगर्भाख्या क्षेमङ्कर्य्यष्टशक्तयः ।७४
अस्त्राणि पत्रमध्येषु शंखचक्रासिखेटकान् ।
बाणकोदण्डशूलानि कपालान्तानि पूजयेत् ।७५
ब्राह्मयाद्मा: स्युर्दलाग्रेषु लोकपालास्ततः परम् ।
सिद्धमत्रः प्रयोगेषु देवीमित्य विचिन्तयेत् ।७६
कालपावकसन्निभां कलितार्द्धचन्द्रशिरोरुहाम् ।
भालनेत्रविभूषणां भयदायिसिंह निषेदुषीम् ।
चक्रशंखकृपाणखेटकचापबाणरोटिकां,
शूलवाहिभुजां भजे विजिताखिलासुरसैनिकाम् ।७७

ऐसा ध्यान करके चार लाख मन्त्र का जप करे। मन्त्रधारी उसका दशांश शाली, घृत और तिलों से ही हवि से हवन करे।७२। पूर्व से कहे हुये पीठ पर अंग आदि के साथ देवी का यजन करे। पूर्व की ही भाँति अंग पूजा करे और दलों में निम्न वर्णित इनका पूजन करना चाहिये—आर्या, दुर्गा, भद्रा, भद्रकाली, अम्बिका, क्षेमा, वेदगर्भा, क्षेमंकरी—ये आठ शक्तियाँ हैं।७३-७४। पत्रों के मध्य में शंख, चक्र, असि खेटक, वाण, कोदन्ड, शूल और कपालान्त अस्त्रों का पूजन करे।७५। दलों के अग्रभागोंमें ब्रह्माणी आदि का यजन करके इसके पश्चात लोकपालों का पूजन करना चाहिये। यह प्रयोगोंमें सिद्ध मन्त्र है। इस रीति से देवी का चिन्तन करे।७७। ध्यान, कालाग्नि के सदृश, केशों में अर्ध चन्द्र शोभित हैं—भाल में नेत्र के भूषण वाली, भय देने वाले सिंह के ऊपर समारूढ़, शंख, चक्र, कृपाण, खेटक, चाप और वाणों को करों में धारण करती हुई—शूल वाली भुजा से संयुत समस्त असुर सैनिकों विजित करने वाली देवी का मैं ध्यान करता हूँ।७७।

प्रातः स्नानरतो नित्यमष्टोत्तरसहस्रकम् ।
जपेत्तस्याशु सिद्धयन्ति धनधान्यादिसम्पदः।७८
अनेनैव विधानेन ग्रहक्षुद्ररिपून्जयेत् ।
नाभिमात्रोदके स्थित्वा देवीमर्कगतां स्मरन् ।७९
जपेदष्टोत्तरशतं लभेत महतीं श्रियम् ।
अयुतं वटवृक्षोत्थैः सम्भृडैरर्चितेऽनले ।८०
होमं समिद्वरैः कुर्यान्नाशयत्यापदां कुलम् ।
घोराभिचानान्भूतादीन् शमयेद्विधिनाऽमुना ।८१
अपामार्गसद्भिर्वा तिलैर्वा काननोद्भवैः ।
सर्षपैर्वा कृतोहोमः क्षुद्रापस्मारनाशनः।८२
अभीष्टसिध्यै जुहुयादार्कैर्मन्त्री समिद्वरैः।
सहस्रमर्कवारादिदिवसान्देश संयतः।८३

सारान् शुद्धान्समादाय शकलान्मनुनामृता ।
जुहुयादेधिने वह्नौ सप्तरात्रमतन्द्रितः ।८४

प्रातःकाल में स्नान में रत होकर नित्य ही एक सहस्र आठ बार मन्त्र जप करे तो शीघ्र ही धन-धान्य आदि सम्पदायें सिद्ध हो जाती हैं ।७८। इसी विधान के द्वारा ग्रह और क्षुद्र रिपुओं पर विजय प्राप्त किया करता है । नाभि मात्र जलमें स्थित होकर सूर्य मन्डलमें विराजमान देवी का स्मरण करे ।७९। इस प्रकार से एक सौ आठ बार जप करे तो यह जापक महती श्री को प्राप्त करता है । फिर सर्रचित अग्नि में मृङ्ग सहित वट वृक्ष की समिधाओं से दश हजार आहुतियाँ देवे तो आपदाओं के समुदाय का विनाश कर दिया करता है । इस विधि से परम धोर भूतादि अभिचारों का शमन कर दिया करता है । अथवा अपामार्ग की समिधाओं से या वन में सनुत्पन्न हुए तिलों से अथवा सघर्षों के द्वारा होम करने वाला क्षुद्र अपस्मार का नाश करने वाला होता है ।८०-८२। मन्त्रधारी पुरुष फो अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए आक की श्रेष्ठ समिधाओं से होम करना चाहिए । अर्क वार से आदि लेकर दश दिन तक परम संयत होकर होम करे ।८३। इस मन्त्र से शुद्ध सारों के खन्डो का समादन करे और तन्द्रा रहित होकर सात रात्रि पर्यन्त प्रज्वलित अग्नि में हवन करे ।८४।

साधयेदखिल स्वभीष्टं मन्त्रवित्तमः ।
कुमुदैर्वशयेद्विप्रान्नृपतीन्पद्महोमतः ।८५
तत्पत्नीरुत्पलैः फुल्लैर्वैश्यान्कह्लारहोमतः ।
शूद्रान् लवणहोमेन जातीपुष्पैः समान (१) बुधः (पुनः) ।८६
व्रीहिभिर्जुहुयान्नित्यं वत्सराद्व्रीहिमान्भवेत् ।
दूर्वाहोमेन दीर्घायुर्मधुना रत्नवान्भवेत् ।८७
अन्नैरन्नसमृद्धिः स्यादाज्येन लभते धनम् ।
गोदुग्धेन गवां वृद्धिमाप्नुयन्नात्र सशयः ।८८

ज्वरे ग्रहे गरे सर्पे तर्जन्या संस्पृशञ्जपेत् ।
स्मृत्वा शूलकरां देवीं तत्क्षणादेव तान्हरेत् ।८९
गर्भितं साध्यनामार्णैः पत्रे मनुमिमं लिखेत् ।
कुलालमृत्कृतायां तत्प्रतिमायाँ हृदि न्यसेत् ।९०
कृतप्राणप्रतिष्ठान्तां पूजितां कुसुमादिभिः ।
निधायाग्रे जपुन्मंत्रष्टोत्तरसहस्रकम् ।९१

इसका प्रकार यह होता है कि वह मन्त्र का ज्ञाता पुरुष निरन्तर अपने सम्पूर्ण अभीष्ट को साधित कर लिया करता है । कुमुदों के होम से विप्रों को और पद्मों के हवन से नृपतियों को वश में कर लिया करता है ।८५। बुध पुरुष विकसित उत्पलों के होम से उनकी पत्नियों को और कल्हार के पुष्पों से वैश्यों को तथा लवण के होम स शूद्रों को और जाती पुष्पों के होम से समनरों को वश में कर लेता है ।८६। व्रीहियों के द्वारा नित्य हवन करे तो एक वर्ष में वह व्रीहि वाला हो जाता है । दूर्वा के होम से दीर्घ आयु वाला और मधु के होम से होम करने वाला रत्नों वाला हो जाया करता है ।८७। अन्न के होम से अन्न की समृद्धि होती है तथा आज्य के होम से धन का लाभ किया करता है । गाय के दूध से होम करने से गौओं भी वृद्धि हुआ करती है इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।८८। ज्वर में, ग्रह, में विष में और सर्प दंशन में अपनी तर्जनी के द्वारा स्पर्श करते हुए जप करना साहिए उस समय में शूल कर में धारण करने वाली देवी का स्मरण करके ही स्पर्श करें तो उसी क्षण उन सबका हरण कर दिया करता है ।८९। साध्य के साथ के वर्णों से गर्भित पत्र में इस मन्त्र को लिये । कुम्हार की मिट्टी से निर्मित की हुई प्रतिमा के हृदय में न्यास करे । उसकी प्राण प्रतिष्ठा करके पुष्प आदि के द्वारा पूजित करें । उसको अपने आगे रखकर के एक सहस्र आठ बार मन्त्र का जप करे ।९०-९१।

सध्यास पक्षमात्रेण वशमायाति वाँछितम् ।
अभ्यर्च्य देवीमनले तीक्ष्णतैलेन मंत्रवित् ।९२

हुत्वायुतं निधायाग्रे तीक्ष्णास्त्रिशच्छरान्पुनः ।
तेषु संपातयेद्भूयः स्पृष्ट्वा तान्नियुतं जपेत् ।६३
वेधयेत्परसेनायां क्षणान्नष्टा दिशो दश ।
प्राप्नुयान्नष्टसंज्ञा सा पलायनपरायणा ।६४
जपित्वा सितगुञ्जानां कुडवं कुलिकोदये ।
विकिरेच्छत्रुसेनायां गूढः तन्नापणादिषु ।६५
ज्वरमारी महारोगैः पीडिता सैन्यनायकैः ।
परस्परविरोधेन नश्येद्नच्छेन्म्रियेत सा ।६६
सेनासंस्तम्भने मंत्री कारस्करसमुद्भवैः ।
पुष्पैः सहस्रं जुहुयात्तत्पत्रैस्ता निवर्तयेत् ।६७
अंगारवारे कुलिके जप्त्वा भस्म चितोद्भवम् ।
विनिःक्षिपेद्रिमूर्ध्नि विद्विष्टो देशतो ब्रजेत् ।६८

सन्ध्या में जप करना चाहिये तो एक पक्ष भर में वाँछित वश में आ जाया करता है। मन्त्र का ज्ञाता अग्नि में देवी का अर्चन करके तीक्ष्ण तैल के द्वारा दश हजार आहुतियाँ देकर उसे अपने आगे निधापित करे। तीक्ष्ण तीव्र शरों को उनमें सम्मानित करे, फिर उनका स्पर्श करके नियुत जप करे।६२-६३। उनसे शत्रु की सेना में वेध कर तो क्षण भर में दशों दिशाओं में सेना नष्ट हो जाती है। वह सेना नष्ट संज्ञा को प्राप्त होती है और पलायन करने में तत्पर हो जाया करती कुलिकोदय के समय में चार प्रस्थ सफेद गुंजाओं को जप करके शत्रु की सेना में विकीर्ण कर देवे और आप आपण आदि में गूढ होकर रहे।६५। ज्वर भारी महारोगों से पीड़ित सेना नायक आपस में ही विरोध के द्वारा नष्ट हो जाते हैं गमन कर जाते हैं और मर ज ते हैं।६६। सेना के संस्तम्भन करने से मन्त्रधारी कारस्कर से समुत्पन्न पुष्पों से एक सहस्र आहुतियाँ देवे और उनके पत्रे से होम करे तो सेना को निवर्त्तित कर दिया करता है। ६७। अंगार बार में कुलिक वेला में जप करके

चिता की अद्भुत भस्म को शत्रु के मस्तक में निक्षिप्त कर देवे तो विद्विष्ट देश से गमन कर जाया करता है।९८।

मरुन्निपातितैः पत्रैः कारस्करसमुद्भवैः।
तस्य पादरजोयुक्तै र्होमादुश्चायेदरीन् ।९९
कारस्करमयीं कृत्वा प्रतिमां च सुशोभनाम्।
जप्तां प्रतिष्ठितप्राणां छेदयेदंगशः पुनः ।१००
काकोलूकवसायुक्तष्टोत्तरसहस्रकम्
कृष्णपक्षचतुर्दश्यां श्मशाने हव्यवाहने ।१०१
जुहुयान्म्रियतेऽरातिरेवमेव दिनत्रयात्।
उन्मतसमिधां होमान्मृताः स्युः शत्रवः क्षणात् ।१०२
उलूककाकयोः पत्रैः स्ववसारक्तसंयुतैः।
जुहुयान्निशि कांतारे शत्रुः कालातिथिर्भवेत् ।१०३
शत्रोः प्रतिकृतिं मंत्री प्रतिष्ठितसमीरणाम्।
शोषणेन विलिप्तांगीमत्युष्णां निःक्षिपेज्जले ।१०४
ज्वराक्रांतो भवेच्छीघ्रन्दग्धसेकाच्छमं नयेत्।
तर्जनीं त्रिशिख दोर्भ्यांधारयन्तीं भयङ्कराम् ।१०५
रक्तां ध्यात्वा रवेर्बिम्बे प्रजपेदयुतं मनुम्।
मारयेदचिरादेव रिपुन्बन्धुसमन्वितान् ।१०६
खड्गखेटकसन्नद्धां संक्रुद्धां भानुमण्डले।
ध्यात्वा मंत्र जपेन्मंत्रो नाशयेदचिरादरीन् ।१०७

वायु के द्वारा गिराये हुये कारस्कर से समुत्पन्न पत्रों से जो उसके चरणों की रज से युक्त होंवे, इससे होम करने से शत्रुओं का उच्चाटन करे।९९। कारस्कर से परिपूर्ण सुशोभन प्रतिमा का निर्माण करके प्राण प्रतिष्ठा करके अभिमन्त्रित करे। फिर अंकुश से छेदन करे और काक तथा उल्लू की वसा से युक्त करके एक सहस्र आठ वार कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी में अग्नि में श्मशान में हवन करे इससे तीन दिन में ही शत्रु की मृत्यु हो जाती है। उन्मत्त की समिधाओं के होम से एक ही क्षणमें

शत्रुओं की मृत्यु हो जाती है।१००-१०२। उल्लू और कौओं के पंखों से जो अपनी उनकी ही बसा और रक्त से संयुत होवे वन में रात्रि में होम करे तो शत्रु काल का अतिथि हो जाता है।१०३। मंत्रधारी शत्रु की प्रतिकृत करके उसकी प्राण प्रतिष्ठा करे फिर उसे शोषण से विलिप्त अङ्गों वाली करे। फिर अत्यन्त उष्ण जल में निक्षिप्त कर देवे।१०४। इसका यह प्रभाव है कि वह शीघ्र ही ज्वराक्रान्त हो जाता है। दुग्ध के सेक से समन करे। दोनों बाहुओं से तर्जनी और त्रि-शिख का वहन करने वाली-भयंकर रक्षा का सूर्य के बिम्बमें ध्यान करे और दश हजार मन्त्र का जप करे। इसका यह प्रभाव है कि थोड़े ही समय में वन्धुओं से समन्वित शत्रुओंका मरण कर देता है।१०५-१०६। खड्ग और खेटक से सन्नद्ध-बाहु और बहुत अधिक क्रुद्ध देवी का सूर्य मन्डल में ध्यान करके मन्त्रधारी जप करे तो थोड़े ही समय में शत्रुओं का विनाश कर दिया करता है।१०७।

चापबाणधरां भीमां सिंहस्थां ज्वलनोपमाम् ।
सृजन्तीं बाणनिवहान्धावन्ती तादृशं रिपुम्।१०८
ध्यात्वा जपेन्नमनुमिममयुतं तोयमध्यगः ।
रिपुं च परसेनां च द्रुतमुच्चाटयेद्ध्रुवम् ।१०९
आनित्यकृमसिद्धोमान्मुच्यते रोगशोकतः ।
पुष्पैस्तदीयैर्वंशयेन्मधुराक्तैर्मतङ्गजान् ।११०
रक्षायै पञ्चगव्येन लिम्पेज्जप्तेन दन्तिनः ।
गव्याज्यतिलसिद्धार्थैरानित्यकसमिद्वरैः ।१११
दुग्धान्नापञ्चगव्याभ्यां तण्डुलेन घृतेन च ।
एतैः पृथक् पृथक् द्रव्यै रष्टोत्तरसहस्रकम् ।११२

चाप-वण को धारण करने वाली—भीम—सिंह पर समारूढ़—अग्नि के तुल्य जाज्वल्यमान-वाणों के समुदाय का सृजन करती हुई और उसी भाँति के शत्रु की ओर धावन करती हुई देवी का ध्यान करके जल के मध्य में स्थित होकर इस मन्त्र का दश हजार जप करना चाहिए। इससे जापक व्यक्ति शत्रु को और पराई सेना को शीघ्र निश्चित रूप से उच्चाटन कर देता है ।१०८-१०९। आनित्यक की समिधाओं के होम से रोग और शोक से मुक्त हो जाता है। मधुर से अक्त उसके पुष्पों से होम करने पर मतंगजों को वश में कर लेता है। ।११०। रक्षा के लिये उप किये हुये पञ्चगव्य से रक्षा के लिये हाथियों का लिम्पन करे। गायका धृत तिल-सिद्धार्थ-आनित्यक की श्रेष्ठ समिधाओं से दुग्धान्न, पंचगव्यों से—तन्डुल से और धृत से—इन द्रव्यों से अलग-अलग एक सहस्र आठ बार होम करना चाहिए ।१११-११२।

ज़ु याद्दिनशोविप्रान्भोजयेन्मधुरादिभिः ।
गुरवे दक्षिणां दद्याद्वस्त्राभरणसंयताम् ।११३
मातङ्गाश्च तुरोङ्गश्च वर्द्धन्ते विधिनाऽमुना ।
सर्वव्याधिविनिर्मुक्ताः क्षुद्रपीडाविवर्जिताः ।११४
कारयेद्व्रक्ष्मवृक्षेण शिल्पिनाऽऽयुधपञ्चकम् ।
शंखखड्गथाङ्गाधि शाड्र्ग कौमोदकीं क्रमात् ।११५
पंचगव्येषु निःक्षिप्य तानि स्पृष्ट्वा मनुं जपेत् ।
सम्यक् पंचसहस्राणि तेषु संपातयेत्पुनः ।११६
तावदाज्जेन जुहुयान्यन्त्वैः स्वैः पूजयेत्क्रमात् ।
उद्धृत्य पञ्चगव्येभ्यः पूर्ववत्प्रजपेन्मनुम् ।११७
अत्रटान्पञ्च निखनेद्दिक्षु मध्यादिषु क्रमात् ।
अवटेष्वेषु पूर्णेषु पञ्चगव्येन साधकः ।११८
आयुधानि प्रजप्तानि पञ्च घोषपुरः सरम् ।
विन्यसेत्तेषु मध्यादिपूजां कुर्याद्यथापुरा ११९

और विप्रों को मधुर आदि के द्वारा भोजन करावे। अपने श्री

गुरुदेव के लिये वस्त्रों और आभरणों से समन्वित दक्षिणा देवे ।११३। इस मन्त्र के द्वारा हाथी और घोड़े बढ़ जाते हैं। वे सब व्याधियों से रहित होते हैं और क्षुद्र पीड़ा से वर्सित हुआ करते हैं ।११४। ब्रह्म वृक्ष से किसी शिल्पी के द्वारा पाँच आयुधों का निर्माण करावे। क्रम से शंख, खंग, रथांग (चक्र), शांर्ग और कौमोदकी—ये पाँच आयुध हैं ।११५। पंचगव्य में निक्षेप करके उनका स्पर्श करके मन्त्र का जप करना चाहिये। भली-भाँति पांच सहस्र जप करे और फिर उनमें सम्पतन करे ।११६। तब तक घृत से होम करे और क्रम से अपने २ मन्त्रों के द्वारा पूजन करे। पंचागव्य से निकालकर पूर्व की ही तरह मन्त्र का जप करना चाहिये ।११७। मध्यादि दिशाओं में क्रम से पाँच अवटों को खनन करे। साधक के द्वारा ये सब अवट पंचागव्य से परिपूर्ण होने पर ध्वनि के साथ पाँच आयुधों को मन्त्र के अभिमन्त्रित करें और उनको उन अवटों में डाल देवे अर्थात् विन्यस्त करे। और पहिले के समान मध्याह्न की पूजा करे ।११८-११९।

बालुकाभिः समापूर्य मृद्भिः कुर्यात्समस्थलम् ।
बलिं च विकिरेत्तत्र तेषां मंत्रैर्यथाक्रमम् ।१२०
दिक्पतिभ्या बलि दत्वा ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ।
दीनान्धकृपाणादींश्च तोषयेद्भोजनादिभिः ।१२१
गुरुवे दक्षिणां दद्यादात्मवित्तानुसारतः ।
यत्रैवं विहिता रक्षा देशे वा नगरे पुरे ।१२२
ग्रामे गेहेऽथवा तत्र वर्द्धन्ते सम्पदः सदा ।
अश्मपातादयो दोषा भूतप्रेतादिसंयुताः ।१२३
अभिचारकृताः कृत्यारिपुचौरादुयपद्रवाः ।
नेक्षन्ते तां दिशं भीतास्तर्जिता देवताज्ञया ।१२४

बालुका प्रभृति से समापूरित करके सिद्धि से उनको समस्थल कर देवे। उनके मन्त्रों के द्वारा क्रमानुसार वहाँ पर बलि का विकिरण करना चाहिये। दिक्पालों को बलि देकर फिर ब्राह्मणों को भोजन

करावे। और भोजन आदि के द्वारा दीन अन्ध और कृपण आदि का तोष करना चाहिये।१२०-१२१। अपने वित्त शक्ति अनुसार गुरुदेव के लिये दक्षिणा देवे। जहां पर इस प्रकार से रक्षा विहित होवे -देश में नगर में, पुर में, ग्राम में अथवा गृह में रक्षा की जावे वहाँ पर सदा ही सम्पदायें वृद्धि को प्राप्त हुआ करती है। अशमपात आदि दोष--भूत-प्रेत से संयुत--अभिचार से किये हुये तथा कृत्या, रिपु और चोरों आदि के उपद्रव ये सब देवता की आज्ञा से तर्जित हुये उस दिशा की ओर देखते नही हैं।१२२-१२४।

पद्म भानुदलान्वितं प्रविलिखेत्तत्कर्णिकायां पुनः
स्तारं शक्तिबींजसाध्यसहितं तत्केसरेषु क्रमात्।
मर्द्दिन्या मनुसंभवान् युगलशोवर्णाविर्णान्पुनः पत्रगा।
न्मंत्रार्णा गुणशो विभाग विलेखेदन्त्ये दले।१२५
मातृकावर्णसवीत भूपुरद्वयमध्यगम्।
यंत्र वि ध्यनिवासिन्याः प्रोक्तं सर्वं समृद्धिदम्।१२६
रक्षाकरं विवेषेण क्षुद्रभूतादिनाशकम्।
राज्यदं भ्रष्टराज्यानां वश्यदं वस्यमिच्चताम्।१२७
सुतार्थिनां सुतद रोगिणां रोगशान्तिदम्।
वहुनां किमिहोक्तेन यंत्तं तत्कामदीमणिः।१२८

वारह दलों से समन्वित एक पद्म लिखकर उसकी कर्णिका में माया वीज में गन्तुक सनिसर्ग दोर्ग बीज दल रखकर उसमें साध्य के सहित प्रणव लिखे। महिषमर्दिनी के उसके केसरों में युगल शवर्णो को फिर लिखे। इस तरह से मूल मन्त्र के वर्णों की तीन आवृत्ति करे। अन्तिभ एक अक्षर को अन्तिम दल में लिखे मातृका वर्णों से भूपुर मध्य में रहने वाले से संवीत करे। तह विन्ध्य निवासिनी का मन्त्र होता है जो सब समृद्धियों का प्रदाता है।१२५-१२६। यह विशेष रूप से रक्षा के करने वाला है और क्षुद्र भूतादि का विनाशक होता है। यह भ्रष्ट राज्य

वालों को राज्य के देने वाला है और जो वश्य के इच्छुक हैं उनको वश्य करने वाला है।१२७। सुत के चाहने वालों सुतप्रदाता होता है और रोगियों के रोग की शान्ति का देने वाला है। इसके विषय में बहुत कथन करने से लाभ है यही कहा जाता है कि यह मन्त्र कामना के देने वाली मणि ही है।१२८।

एकादश पटल

।। गणपति प्रकरण ।।

अथ वक्ष्ये गणपतेर्मन्त्रान्सर्वार्थसिद्धिदान् ।
याल्लब्ध्वा मानवा नित्यं साधयन्ति मनोरथान ।१
पंचान्तकः शशिधरं बीजं गणेपतेर्विदुः ।
गणकः स्यान्मुनिश्छन्दोनिचि-विघ्नोऽस्य देवता ।
षड् दीर्घभाजा बीचेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।२
सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तवद्भैर्द्धानम् ।
दन्तं पाशाङ्कुशेष्टान्युरुकरविलसद्बीजपूराभिरामम् ।३
बालेन्दुद्योतिमौलिं करिपति- दनं दानपूरार्द्र गण्ड ।
भोगीन्दावद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तावस्त्राङ्गरागम् ।४
वेदलक्षं जपेन्मत्रं दश श जुहुयात्ततः ।
मोदकैः पृथुकैर्लाजैः जक्तुभिश्चेक्ष् पर्वभिः ।५
नारिकेरैस्तिलैः शुद्धैः सुपक्कैः कदलीफलैः ।
अष्टद्रव्याणि विघ्नस्व कथित्रानि मनीषिभिः ।६
तीव्रादिशक्तिभिर्युक्ते पीठे विघ्नेश्वर यजेत् ।
तीव्राख्या ज्वालिनो नन्दा भोगदा कामरूपिणी ।७

इसके अनन्तर सब अर्थों की सिद्धियोंके देने वाले गणपति के मन्त्रों

को बतलाया जायगा जिनको प्राप्त करके मानव नित्य मनोरथों का साधन किया करते हैं ।१। पंचातक, गकार, जो शशिवर अर्थात्-विन्दु युक्त हो वही गणपति का बीज होता है, उसका मुनि गणक है-छन्द निनिद् है और इसका विघ्न देवता होता है। यह दीर्घ भाक् बीज से मन्त्र की अङ्ग क्रिया करनी चाहिए। अब ध्यान बतलाते हैं-गणपति सिन्दूर की आभा से युक्त है-तीन नेत्रों वाले हैं-इनका उदर बहुत बड़ा है—यह हस्त कमलों में दन्त, पाश, अंकुश और वरदानको धारण करने वाले हैं-उरुकर में बीजपुर से सुन्दर शोभित है, भालचन्द्र, से मस्तक द्युतिमान् है-गज के समान मुख से संयुत है तथा दान से पूर्ण और आर्द्र गण्ड स्थल वाले हैं-मोतियों से आवद्ध भूषा वाले हैं ऐसे रक्त वस्त्राँग राग वाले गणिपति का भजन करो ।२-३-४। इस मन्त्र का चार लाख जप करे और उसका दृशांश मोदक-पृथुक-लाजासक्तु और ईख के पर्वो से तथा नारियल शुद्ध तिल और पके कदलो फलों से हवन करे। ये आठ द्रव्य ही मनीषियों ने विघ्नेश्वर के कहे हैं १।६। तीव्र शक्तियों से युक्त पीठ पर विघ्नेश्वर का यजन करना चाहिए। शक्तियों के नामों का परिगणन करके उन्हें बतलाया जाता है-तीव्राज्वालिनी, नन्दा, भोगदा, कामरूपिणी ।७।

उग्रा देजोवती सत्या नवमी विघ्ननाशिनी ।
सर्वादिशक्तिकमलासनाय हृदयावधिः ।८
दीठमन्त्रोऽयनेतेन प्रदद्यादासनं विभोः ।
मूलेन मूर्ति संकल्प्य तस्यां विघ्नेश्वरं यजेत् ।९।
कर्णिकायां चतुर्दिदक्षु प्रथम पूजयेदिमान् ।
गणाधिपं गणेशानं तृतीयं गणनायकम् ।१०
गणक्रीड पीमगौररक्तनीलरुचः क्रमात् ।
सर्वान्तागेन्द्रभूषाढयान्भक्ष्यलक्षितपुष्करान् ।११
यथापूर्व ततोभ्यर्चेत्केसरेष्वङ्गदेवताः ।
पत्रमध्येषु विधिवद्वक्रतुण्डादिकान्यजेत् ।१२

वक्रतुण्डमेकदंष्ट्रं महोदरगजाननौ ।
लम्बोदराख्यं विकटं विघ्नराजमनंतरम् ।१३
धूमवर्णं दलाग्रेष ब्राह्मयाद्याः पूजयेत्ततः ।
लोकपालास्तदस्त्राणि देवमित्थं समर्चयत् ।१४

उग्रा, तेजावती, संस्था, विघ्न नाशिनी, सर्वादिशक्ति कमलासन के लिये हृदयावधि यह पीठ मन्त्र है। इससे विभु को आसन देना चाहिये। मूलमन्त्र से मूर्ति की भली-भाँति कल्पना करके उसमें भगवान् विघ्नेश्वर का यजन करे ।८-९। कर्णिका में चारों दिशाओं में सर्वं प्रथम इनका पूजन करना चाहिये। गणाधिक, गणेशान, तुरीय, गणनायक, गमक्रीड़, इनको क्रम से पीत, गौ रक्त और नील रुचि वालों का जो सभी नागेन्द्रोंके भूषणो से युक्त तथा भक्ष्य लक्षित पुष्करो वालों का पूर्व की ही भाँति केसरों में अंग देवताओं का अर्चन करे। पत्रों के मध्य में विधि के सहित वक्र तुन्ड आदि का अर्चन करना चाहिये १०-१२। वक्र तुण्ड, एकदृष्ट, महोदर, गजानन, लम्बोदर, विकट, विघ्नराज और धूम्रवर्ण का यजन करे। दलों के अग्रभाहों में फिर ब्राह्मणी आदि का पूजन करना चाहिये। फिर लोक पालों का तथा उनके अस्त्रों का यजन करके इसी रीति से देव का अभ्यर्चम करे। १३-१४।

सिद्धमंत्रः प्रकुर्वीत प्रयोगान्कलरचोदितान् ।
तर्पयेत्सलिलैः शुद्धैर्दिनशो गणनायकम् ।१५
चतुश्चत्वरिंशदाद्यं चतुः शतमतन्द्रितः ।
प्राप्नुयान् मण्डलादर्वागभीष्टमधिकं नरः ।१६
नारिकेलैः कृतोहोमश्चतुर्थ्यां श्रीप्रदो भवेत् ।
शुक्लपक्षप्रतिपदभारभ्यदिनशः सुधीः ।१७
चतुर्थ्यन्तं नारिकेलसक्तुलाजर्तिलैः क्रमात् ।
चतुः शतः प्रजुहुयाद्वश्याः स्युः सर्वजन्तवः ।१८
सतिलैस्तेण्डुलैर्होमौ लक्ष्मीवश्यप्रदो भवेत् ।

लजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमः कन्या प्रयच्छति ।१९

अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाँछितम् ।

आज्याक्तहविषा होमः साधयेदीस्पितं नृणाम् ।२०

दध्ना विलोलि (?) तैर्लोणैर्होमो निशि चतुर्दिनम् ।

संवादं कुरुते तद्वश्यं वितनुते सदा ।२१

यह सिद्ध मन्त्र है फिर कथ्य प्रेरित प्रयोगों को करे। दिनो दिन शुद्ध जलो के द्वारा गणनायक तर्पण का करना चाहिये। अतन्द्रित रहकर चारसौ चौवालीस दिन करे तो मण्डल के पूर्व ही मनुष्य अधिक अभीष्ट की प्राप्ति किया करता है।१५-१६। नारियलों के द्वारा होम किये जाने वाला पुरुष जोकि चतुर्थी में करे तो यह श्री का प्रदाता होता है। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ करके दिन में सुधी चतुर्थी के अन्त तक नारियल, सक्तु, लाजा और तिलों से क्रमश- चारसौ आहुतियाँ देवे तो सभी जन्तुगण वश्य हो जाते हैं।१७-१८। तिलों के सहित तण्डुलों के द्वारा किया होम लक्ष्मी के वश करने वाला होता है तीन मधुरों से अक्त लाजाओ से किया गया होम कन्या को दिया करता है।१९। इस विधान में कन्या अपने अभीष्ट वर को प्राप्त किया करती है। मनुष्यों के दोरिपत को आज्य से अक्त हवि से किया हुआ होम साधित कर देता है।२०। हवि से लोलित लोण से रात्रि मे चार दिन तक किया हुआ होम सम्वाद करता है उस भाँति अवश्य हा सदा विस्तार करता है।२१।

श्वेतार्कभवमूले रक्तचंदनदारुणा ।

इभभज्जेन निम्बेन दान्तिदन्तेन वा कृतम् ।२२

विघ्नेश्वर समभ्यर्च्य शीताँशुग्रहणे जपेत ।

स्पृष्ट्वा मंत्री निराहारस्त शिखायाँ समुद्वहन् ।२३

युद्धेषु व्यवहारादौ विजयश्रियमाप्नुयाव् ।

मन्त्रेधानेन सजप्ता रोचना मदसयुतां ।२४

तिलकक्रियया सर्वान्विशं नयति मानवात् ।

अनुलोमविलोमस्थबीजे नाम समालिखेत् ।२५
नवनीते समभ्यर्च्य स्पृष्ट्वा प्राणमनुञ्जपेत् ।
अष्टोत्तरशतं भूयो मूलमन्त्रं प्रजप्य तत् ।२६
भक्षयेन्मौनमास्थाय यामिन्यां सप्तवासरम् ।
स वश्यो जायते शीघ्र साधकस्य न संशयः ।२७

अथवा सफेद आक के मूल में रक्त चन्दन के काष्ठ से भज के द्वारा निम्ब से अथवा हाथी के दाँतसे होम किया जावे ।२२। विघ्नेश्वर का भली-भाँति अर्चन करके चन्द्रमा के ग्रहण में जप करना चाहिये। स्पर्श करके मन्त्र के धारण करने वाला निराहार रहकर अपनी शिखा में उद्वहन करते हुये युद्धादि में और व्यवहार आदि में विजय श्री को प्राप्त किया करता है। इस मन्त्र के द्वारा भली-भाँति जप की हुई अर्थात् अभिमन्त्रित गोचना को मद से संयुत करे उससे तिलक की क्रिया करे तो सब मनुष्यों को अपने वश में कर लिया करता है। अनुलोम और विलोम में स्थित बीज में नाम का लेखन करे और नवनीत में अभ्यर्चन करके प्राण का स्पर्श कर जप करे। फिर एक सौ आठ बार मूल मन्त्र का जाप करें। मौन व्रत में समास्थित होकर सात दिन पर्यन्त रात्रि में भक्षण करे तो साधकका लक्ष्य शीघ्र ही वश्य हो जाया करता है इसमें तनिक भी संशय नहीं है।२३-२७।

श्रीशक्तिस्मरभूविघ्नबीजानि प्रथमं वदेत् ।
ङेन्तं गणपति पश्चाद्वरान्ते वरदं पठेत् ।२८
उक्त्वा सर्वजनमन्ते वशमानय ठद्वयम् ।
अष्टाविंशत्यक्षरोऽयं ताराद्योमनुरोरितः ।२९
गणकः स्वादृषिश्छन्दो गायत्री निचृदन्विता ।
महागणपतिः प्रोक्तो देवता देववन्दिता ।३०
षड्बीजस्थस्वबीजेन दीघभावा प्रकल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य यथाविधि विधानवित् ।३१
नवरत्नमय द्वीपं स्मरेदिक्षुपसाम्बुधौ ।
तद्वीचिधौतपर्यन्तं मन्दमारुतसेवितम् ।३२

मन्दारपारिजातादिकल्पवृक्षलताकुलम् ।
उद्भूतरत्नच्छायाभिररुणाकृतभूतलम् ।३३
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम् ।
तस्य मध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत् ।३४
ऋतुभिः सेवित षड्भिरनिशं प्रीतिवर्द्धनैः ।
तस्याधस्तान्महापीठे रचिते मातृकाम्बुजे ।
षट्कोणान्तस्त्रि(णस्थात्रि)कोणस्थं महागणपति स्मरेत्। ।३५

अब महा गणपति के मन्त्र का उद्धार बतलाते हैं—श्री—शक्ति स्मर—भू और विघ्न के बीजों को सबसे प्रथम कहे—इसके पीछे चतुर्थी विभक्ति के अन्त वाले गणपति को और वरान्त में वरद पढ़े। यह कहकर सर्वजन वशमानय और दो ठकार पढ़े। इसके आदि में प्रणव होता है—ऐसे यह मन्त्र अट्ठाईस अक्षरों वाला कहा गया है ।२८-२९। इसका ऋषि गणक होता है—इसका छन्द निचृदान्वित गायत्री है। इसका देवता देवों के द्वारा वन्दित महा गणपति कहा गया है ।३०। छं बीजों में स्थित दीर्घ भाव अपने बीज से इस मन्त्र के छै अङ्गों का यथा विधि विधान के वेत्ता को कल्पित करना चाहिए ।३१। इसके रस के सागर में नौ रत्नों परिपूर्ण द्वीप का स्मरण करे। उसकी तरङ्गों से धुले हुए पर्यन्त भाग वाले—मन्द वायु से सेवित—मन्दार—पारिजात आदि पाँच कल्प वृक्ष लताओं से समाकुल उद्भूत रत्नों की कान्ति से अरुण किये हुए भूतल वाले को—उद्दीयमान सूर्य और चन्द्र से समुद्धभासित दिशाओं के अन्तर से संयुत का ध्यान करके उसके मध्य में नौ प्रकारके रत्नों से परिपूर्ण परिजात का स्मरण करना चाहिए ।३२-३४। वह प्रीति वाले धनों से युक्त छै ऋतुओं के द्वारा निरन्तर सेवित हैं। उसके नीचे रचित महापीठ पर मातृकाम्बुज में षट्कोण के अन्दर त्रिकोण में स्थित महा गणपति का स्मरण अर्थात् ध्यान करना चाहिए ।३५।

करना चाहिए ।५४। रति के करों में उत्पल है और कोदन्डे अस्त्र को धारण करने वाला कामदेव है। सौम्य दिशा में प्रियङ्गु वृक्ष के नीचे मही और पौत्री का अर्चन करे ।४५। भूमि अपने हाथों मे शुक्ल व्रीहि के अग्रभाग को धारण करने वाली है और गदा तथा चक्र को धारण करने वाला पति है। देव के आगे लक्ष्मी के सहित गोपनायक का यजन करना चाहिए ।४६। छै कोणोंमें आमोद आदिक श्री से समन्वित पूजित करने चाहिए। अग्रकोण में सिद्धि के सहित आमोदका अर्चन करे ।४७। अग्निकोण में समृद्धि से संयुत प्रमोद का अर्चन करना चाहिये। ईश कोण में कान्ति के साथ सुमुख का यजन करे ।४८। वरुण कोण में मदनावती से समन्वित दुर्मुखका अर्चन करना चाहिये। निशाचर कोण में महद्रवा के सहित विघ्न का पूजन करे ।४९।

वायव्ये विघ्नहर्त्तारं द्राविण्या सहितं यजेत् ।
पाशांकुशाभयाभीष्टधारिणोऽरुणविग्रहाः ।५०
गण्डभित्तिगलद्दानपूरधौतमुखाऽम्बुजा ।
विघ्नास्तत्प्रमदाः सर्वा मदाघूर्णितलोचनाः ।५१
एकहस्तधृताम्भोजा इतरालिङ्गितप्रियाः ।
षट्कोणपार्श्वयोः पूज्योः शंखपद्मनधी क्रमात् ।५२
निजप्रियाभ्यां सहितौ पूर्वोदोरितलक्षणौ ।
केसरेष्वङ्गपूजा स्याद्ब्राह्म्याद्याः पत्रमध्यगाः ।५३
बहिर्लोकेश्वराः पूज्या वज्रादीनि ततः परम् ।
इत्थं जपादिभिः सिद्धः प्रयोगान्स्वमनो षितान् ।५४
साधयेदष्टभिर्द्रव्यैरेन्यैर्वाकल्पचोदितै ।
पद्महोमेन भूपालांस्तपत्नीरुत्पलैः शुभैः ।५५
मन्त्रिणः कुमुदैः फुल्लैर्विप्रान् पिप्लसम्भवैः ।
समिद्वरैर्नरपतीनुदुम्बरसमुदभवैः ।५६

वायव्य कोणमें द्राविणी के साथ विघ्नहर्त्ता का यजन करे। ये सब पाश-अंकुश और अभीष्ट के धारण करने वाले हैं और इसका

षभु अरुण वर्ण वाला है। गण्ड स्थल गलते हुए मद के पूर से धोये हुए सुख कमल वाले है।५०। ऐसे विघ्नगण है और उनकी प्रमदायें सब मद से घूर्णित लोचनों वाली है।५१। ये सब अपने एक हाथों में कमल धारण करने वाली है और दूसरे करकमल से प्रिय को आलिङ्गित करने वाली है। षट् कोणों के पार्श्व भागों में क्रम से शंख और पद्म निधि का पूजन करना चाहिए।५२। ये दोनों ही अपनी-अपनी प्रियाओं के सहित होवे। इसके स्वरूप लक्षण पहिले हो बतला दिये हैं। केसरों में अङ्गों की पूजा करे और ब्राह्मणी आदि का पत्रों के मध्य में यजन करे।५३। बाहिर लोकपालों का तथा उनके बाहिर वज्र आदि उनके आयुधों का यजन करना चाहिए। इस रीति से जप आदि के द्वारा मन्त्र सिद्ध होता है। फिर अपने वाञ्छित प्रयोगोंका साधन करे। आठ द्रव्यों के द्वारा अथवा अन्यों के द्वारा जो कल्प में प्रेरित किये गये हैं होम करे। पद्मों से भूपालों को और शुभ उत्पलों से उनकी पत्नियों को वश में करे।५४-५५। विकसित कुमुदोंसे मन्त्रियों को और पीपल की श्रेष्ठ समिधाओं विप्रो को—गूलर की समिधाओं से होम के द्वारा नर-पतियों को वश में करना चाहिए।५६।

प्लक्षै वश्यान्वटोद्भूतैः शूद्रान्मत्री वशं नयेत् ।
मधुना स्वर्णलाभः स्याद्गोदुग्धेन लभेत गाः ।५७
आज्यहोमेन महतीं श्रियमाप्नोति मानवः ।
दध्ना सर्वसमृद्धिः स्यादन्नैरन्नपतिर्भवेत् ।५८
वृष्टिकामः प्रजुहुयाद्वेतसानां समिद्वरैः ।
कुसुम्भकुसुमैर्हुत्वा वासांसि लभतेऽचिरात् ।५९
प्रत्येकमादौ मूलेन चतुर्वारं प्रतर्पयेत् ।
श्रीशक्तिरनिभूलक्ष्मीः स्वबीजाद्याः प्रियान्विताः ।६०
आमोदादीन् स्वबीजाद्यान् शक्तियुक्तांश्च तर्पयेत् ।
चतुश्चतुः पृथङ् मन्त्री शंखपद्मनिधी तथा ।६१

नामादिबीजसहितौ तर्पयेत् स्वप्रियान्वितौ ।
तर्पणेनामुना स्वीयमिष्टयाप्नोति मण्डलात् ।६२

पाकड़ और वट की उत्पन्न समिधाओं के द्वारा शूद्रों को मंत्रधारी वश्य कर लेता है। मधु से होम करने पर स्वर्ण का लाभ होता है और गाय के दूध से होम करने पर गौओं का लाभ होता है ।५७। आज्य के होम से मानव बहुत बड़ी श्री की प्राप्ति किया करता है। दधि के होम से सम्पूर्ण समृद्धि होती है और अन्नों के द्वारा होम से अन्नपति होजाया करता है ।५८। जो वृष्टि की कामना वाला हो उसे वेतसों की श्रेष्ठ समिधाओं से हवन करना चाहिए। कुसुम्भ के कुसुमों से हवन करके शीघ्र ही वस्त्रों का लाभ प्राप्त करता है ।५८। आदि में मूल मन्त्र के द्वारा प्रत्येक का चार बार तर्पण करना चाहिए। श्री शक्ति, रति, भू लक्ष्मी जिनके आदि में बीज होवे और प्रिय से समन्वित होवें, अपने बीजों को आदि से रखने वाले तथा शक्ति से युक्त आमोद आदि का तर्पण करे। मन्त्रधारी पृथक्-पृथक् चार-चार बार तर्पण करे। तथा शंख निधि और पद्म निधिका अपनी प्रियाओं से सयुक्त नामादि बीज सहित का तर्पण करे। इस तर्पण के करने से मन्डल से अपने अभीष्ट को प्राप्त करता है ।६०-६२।

स्मृतिस्थं मांसमौबिन्दुयुक्तं भूबीजमीरितम् ।६३
बीजं षट्कोणमध्ये स्फुरदनलपुरे तारङ्ग दिक्षु लक्ष्मीं ।
मा-ाकन्दर्पभूमीस्तदनुरसपुटेष्वालिखेद्बीजषट्कम् ।
तत्सन्धिष्वअंगमन्त्रान्वसुदलकमले मूलमन्त्रस्थवर्णान्
शिष्टान्पत्रेषु विद्वान्विलिखतु गुणशश्चन्त्यमन्त्यो पलाशे ।६४
आवीतं लिपिभिः क्रमोत्क्रमवशान्पाशाङ्कुशाभ्यामपि
क्ष्मामेहद्वितयेन वेष्टदमिदं यन्त्रं गणाधीशितुः ।
लक्षाकुङ्कुमरोचनामृगमदैर्भूर्जेवरे हेम्नि वा
संलिख्याभिवहल्लभेत सकलैः संप्रार्थनोयां श्रियम् ।६५

उक्तं महागणपतेर्विधानं सुरपूजितम् ।
सर्वसिद्धिकर पुसां सतस्तपुरुषार्थदम् ।६६
मायाविरपदद्वंद्व ततो गणपति वदेत् ।
खड्गीशपांवको पश्चाद्वरदान्ते वदेत्पुनः ।६७
सर्वलोकं मे पदान्ते वशमानय ठद्वयम् ।
षड्विंशत्यक्षरोमन्त्रो भजतां सुरपादपः ।६८
गणकः स्याद् षश्छन्दो गायत्रं देवता मनोः ।
विरिवघ्नेश्वरः प्रोक्ता भजतां सुरपादपः ।६९
अन्तः करणवेदेषु भूतपञ्चविलोचनैः ।
एवं विभक्तैर्मन्त्राणैर्मायाद्यैररंगकल्पना ।
महागणपतेः प्रोक्ते स्थाने मन्त्री विचिन्तयेत् ।७०

मांस, लकार, स्मृतिस्थ, गकारस्थ, औरूप और विन्दु यह भू बीज कहा गया है । मन्त्र का उद्धार बतलाया जाता है–आठ दलों वाले कमल में षट्कोण के मध्य में शोभित त्रिकोण में प्रणव में स्थित गणपति के ग–इस बीज को लिखना चाहिए । त्रिकोण से बाहिर दिशाओं में षट्कोणो में बीजों के षट्कको लिखे । माया-लक्ष्मी-कन्दर्भ भूमिको लिखे । उनकी सन्धियों में अङ्ग मन्त्रों को लिखकर शिष्ट पतों में विद्वान् मूलमंत्र में स्थिति वर्णों का लेखन करे । अन्त्य वर्ण को आठवें दल में एक ही को लिखे । इसको त्रिगुणित करे । पत्रमें लिपियों से भावीत करे । क्रमोत्क्रम वर्णों से पाशाकुशों से भी भूगृह हृदय में वेष्टित यह गणाधीश का यन्त्र है । लाख, कुंकुम, रोचना और मृगमद से भोजपत्र पर अथवा हेम पर भली भाँति लिखकर अभिवहन करने से समस्तों के द्वारा सप्रार्थनीय श्री का लाभ किया करता है ।६३-६५। यह महागणपति का विधान सुरों के द्वारा पूजित कहा गया है । वह पुरुषों को सब सिद्धियों के वर देने वाला और समस्त पुरुषार्थों का प्रदाता होता है ।६६। जब विरि गणपति के मन्त्र को बतलाते हैं–दो बार मायाविरि पद को कहकर फिर गणपति कहे,

खगीश, व, पावक रेफ, हृल्लेखा, इसके बीज पीछे 'वरदान्ते' वोले सर्वं लोक में बश मानव-इसको बोलकर दो ठकार कहे। यह छब्बीस अक्षरों का मन्त्र है। इसके करने वालों के लिए यह कल्पवृक्ष ही है ।६७। ६८। गणक इसका ऋषि है गायत्र छन्द है और मन्त्र का देवता विरि विघ्नेश्वर है। यह सेवन करने वालों के मनोरथों को पूर्ण करने के लिए साक्षात् कल्पवृक्ष के ही समान होता है ।५६। अब षडङ्ग बतलाते हैं– अन्त:करण चार-वेद-चार, इषु-पांच, भूत-पाँच, लोचन-दो द्वितीय का षट् पदों से षडङ्ग है। तृतीय का महागणपति के ही समान होता है। इस प्रकार से बिभक्त मन्त्र के वर्णों से मायादि के द्वारा अङ्ग कल्पना होती है। महा-गणपति के स्थान के प्रोक्त होने पर मन्त्रधारी पुरुष विशेष चिन्तन अर्थात् ध्यान करे ।७०।

सिन्दूराभनिभाननं त्रिनयनं हस्तेषु पाशाङ्कुशौ
बिभ्राणं मधुमत्कपालमनिशं सादर्धेन्दुमौलिं भजत् ।
पुष्टयाश्लिष्टतनुं ध्वजाग्रकरया पद्मोल्लसद्धस्तया ।
तद्योन्याहितपाणिमात्तवसुमत्पात्रोल्लसत्पुष्करम् ।७१
चतुर्लक्षं जपेन्मंत्रं तद्दशांशं हुतक्रिया ।
प्राक्प्रोक्तैरष्टभिर्द्रव्यैस्त्रिमध्वक्तैः समीरिता ।७२
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे तीव्रादिनवशक्तिके ।
मूलेन मूर्तिं तसंकल्प्य तत्रावाह्यार्चयेद्विभुम् ।७३
मिथुनावृत्तिराद्या स्यादामोदाद्यैर्दिगम्बरैः ।
द्वितीयाङ्गैः तृतीया स्याच्चतुर्थी मातृभिः स्मृता ।७४
पञ्चमी लोकपालैः स्यात्षष्टी वज्रादिभिः स्मृता ।
इति सिद्धमनुमं श्री प्रफुल्लैः सरसीरुहैः ।७५
जुहुयाद्वशगाः सर्वे तण्डुलैस्तिलमिश्रितैः ।
हुत्वा श्रियमाप्नोति मोदकैराज्यलोलितैं ।७६
हुत्वा विजयमाप्नोति पार्थिवैर्युद्धभूमिषु ।
मधुत्रयेण हवनं वशं नयति पार्थिवान् ।७७

सिन्दूर के तुल्य मुख से युक्त-तीन नयनों वाले करकमलों में पाश और अंकुश को धारण किये हुए हैं—मधु से संयुक्त कपाल निरन्तर विद्यमान है-अर्ध चन्द्र को मस्तक पर धारण करने वाले पुष्टि के द्वारा आलिंगित शरीर से संयुत हैं। जो ध्वज के अग्रभाग को करमें लिए हुए हैं और हस्त में पद्म धारण किए हुए हैं जिससे यह परम शोभित है। उसकी योनि में कर को आहित कर रक्खा है और वसुयुक्त पात्र को सूंड में ग्रहण कर सुशोभित हैं।७१। इस मन्त्र का चार लाख जप करे और जप के दशांश का होम किया करे। यह होम तीनों मधुरों से अक्त पूर्व में कहे हुए आठ द्रव्यों के द्वारा करनी चाहिए। पूर्व में वर्णित पीठ पर यजन करे जिसमें तीव्रा आदि नौ शक्तियां होवे। मंत्र से मूर्ति की भली भाँति कल्पना करके उसमें आवाहान करके विभु का अभ्यर्चन करना चाहिए ।७२-७३। मिथुना वृत्ति आद्या होती है-दिगम्बर आमोदादि से द्वितीया होती है। अङ्गों से तृतीया होती है—मातृगणों से चतुर्थी होती है।७४। लोकपालों से पाँचवीं और वज्राद से छठवीं होती है। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र होता है। मंत्रधारी खिले हुये कमलों के द्वारा होम करे तो सब वश में आ जाते हैं। तिलों से मिश्रित तण्डुलों से हवनने करने से श्री की प्राप्ति किया करता है। आज्य में लोलित मोदकों से होमकरके विजय पाता है। जो पार्थिव युद्ध भूमिमें गया हुआ होवे, वह मधुरों से किया हुआ हवन पार्थिवों को वश में कर लेता है ।७५-७७।

भक्ष्यभोज्यादिकं सर्वं हुत्वा भीष्टानि साधयेत् ।
शक्तिरुद्धं निजं बीजं महागणपतिं वदेत् ।७८
ङेऽन्तमग्निवधूः प्रोक्तो मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
गणकः स्यादृषिश्छन्दो गायत्री निचृदादिका ।७९
उदिता देवता तन्त्रे नाम्ना शक्तिगणाधिपः।
व्यस्तैः समस्तैर्मन्त्रस्य पदैरङ्गानि कल्पयेत् ।८०
मुक्तागौरं मदगजमुखं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं ।

अङ्कस्थायाः सरसिजरुचेः स्वध्वजालम्बिपाणे-
र्देव्यायोनौ विनिहितरं रत्नमौलिभजामः ।८१
लक्षमेकं संख्यं जपेन्मन्त्रं मधुकैस्तदद्‌शांशतः ।
जुहुयादर्चिते वह्नौ दिनशोदेवमर्चयेत् ।८२
प्रोक्ते पूजयेत्पीठे प्रागुक्तेनैव वर्त्मना ।
हुत्वेक्षुखन्डैर्मतिमान् राज्यश्रियमवाप्नुयात् ।८३
नालिकेरफलैस्तद्वद्रम्भापक्वफलैस्तुतः ।
वशयत्यखिलं लोकं पृदुकैः शर्करान्वितैः ।८४
वशं नयति राजानं सक्तुभिर्ब्राह्मणान् शुभैः ।
घृतहोमेन धनवान् जायते नात्र संशयः ।८५

भक्ष्य-भोज्वादिक सबका हवन करके पुरुष अभीष्टों का साधन किया करता है। भक्ष्य लड्डू आदि है और भोज्य अन्न आदिहै। शक्ति से रुद्ध निज बीज, फिर महागणपति, यह कहे जिसके अन्त में चतुर्थी विभक्ति होवे— फिर, स्वाहा कहे–यह बारह अक्षरों वाला मन्त्र कहा है। इसका ऋषि गणक, छन्द गायत्री निचृदादिक है। तन्त्र में शक्ति गणाधिप देवता कहा गया है। मन्त्रके व्यस्त और समस्त पदों से अङ्गों की कल्पना करनी चाहिए ।७८-८०। अब ध्यान बताया जाता है— आपका वर्ण मुक्ताके तुल्य एकदम गौर है—पद से संयुत गज के समान मुख है–चूड़ा में चन्द्र को धारण करने वाले तथा तीन नेत्रों से युक्त से—अपने कर कमलों में अरविन्द-अंकुश-रत्न कुम्भ को धारण करने वाले हैं और अपनी गोद में विराजमाना कमल की क्रान्ति वाली और अपने ध्वज पर समालम्बित कर वाली देवी की योनि में कर को निहत किए हुए—मस्तक में रत्न को धारण करने वाले देव का हम भजन करते हैं ।८१। इस मन्त्र को एक लाख जप और का दशांश मधू को से होम करना चाहिए। जो समर्चित वह्नि में करे और प्रति दिन देव का अर्चन करे ।८२। पूर्व में कहे हुए पीठ पर पूर्वोक्त मार्ग से ही यजन करना चाहिए। गतिमान् ईख के खण्डो से होम करके राज्य श्री को

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ पुस्तकालय 1315

प्राप्त किया करता है।८२। नारियल के फलों से तथा कदली के पके हुये फलों से होम करके सम्पूर्ण लोक को अपने वश में ले आता है। शर्करा से समन्वित पृथकों से होम करके राजा को और शुभ सक्तुओंसे होम करके ब्राह्मणों को वश में कर लेता है। तथा घृत के द्वारा होम करने से धनवान् होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।८५।

शक्तया रुद्धं निज बीजं वशमानयठद्वयम्।
तारोद्योमनुराख्यातो रुद्रसंख्याक्षरान्वितः।८६
ऋष्याद्याः पर्वमुक्ताः स्युरङ्गमन्त्रपदैर्भवेत्।
एकेनादौ त्रिभिर्द्वाभ्यां त्रिभिर्द्वाभ्यामनन्तरम्।
समस्तेनास्त्रमाख्यातगंक्लृप्तिरियं मता।८७
हस्तैर्बिभ्रतमिक्षुदण्डवररौ पाशाङ्कुशौ पुष्कर
स्पृष्टस्वप्रमदावरांगमनयाऽऽश्लिष्टं ध्वजाग्रस्पृशा।
श्यामांगया विधृताब्जया त्रिनयनं चन्द्रार्द्धचूडंब्जपा-
रक्तं हस्तिमुखं स्मरामि सततं भोगातिलोलं विभुम्।८८
लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रमिक्षुखन्डैर्दशांशतः।
अपूपैराज्ययुक्तैर्वा जुहुयान्मन्त्रसिद्धये।८९
स्वगुरुं धनधान्याद्यैः प्रीणयेत्प्रीतमानसः।
पूजा पूर्ववदादिष्टा ततः काम्यानि साधयेत्।९०
हत्वापूपैस्त्रिमध्वक्तैर्वशयेद्भुवि पार्थिवान्।
चतुर्थ्यां नालिकेरेण महतीं श्रियमश्नुते।९१

शक्ति (स्वाह) से रुद्ध निज बीज (ग) होवे और वश मानय-यह पद मता दो ठकार होवें, आदि में प्रणव होवे, यहमन्त्र एकादश अक्षरों वाला कहा गया है।८६। इसके ऋषि आदिक पूर्व में कह दिये गये हैं। अङ्ग मन्त्र पदों से होते हैं। आदि में एक से, दो से, तीन से और अनन्तर में दो और तीन से तथा समस्त से अस्त्र कहा गया है। यही अङ्ग क्लृप्ति मानी गयी है।८७। अब ध्यान बतलाया जाता है—करों के द्वारा इक्षु दण्ड और वरदान धारण किये हुए हैं तथा पाश और

अंकुश धारण करने वाले हैं–अपने पुष्कर (सूँड) से अपनी प्रमदा के श्रेष्ठ अङ्ग का स्पर्श कर रहे हैं। ध्वज के अग्र भाग को स्पर्श करने वाली तथा कमल धारिणी इस श्यामाँगी के द्वारा समालिंगित है-तीन नेत्रों से युक्त अर्ध चन्द्र को मस्तक में धारण करने वाले, भोग में अतीव चंचल, गज के समान मुख वाले, जपा के पुष्प के तुल्य रक्तवर्ण से युक्त विभु का निरन्तर स्मरण करता हूँ।८८। इस मन्त्र का तीन लाख जप करना चाहिए तथा ईश के दन्डों से दशांश होम करे अथवा मन्त्र की सिद्धि के लिए आज्य से समन्वित पूओं से हवन करना चाहिए ।८९। प्रसन्न मन वाले व्यक्ति को अपने गुरुदेव को धन-ान्यादि के द्वारा प्रीणित करना चाहिए । पूजा पूर्व की ही भाँति ग्भीष्ट होती है। इसके अनन्तर काम्य प्रयोगों का साधन करे ।९०। ीन मधुरों से अक्त पूओं के द्वारा होम करके भूमण्डल में पार्थिवों की ाश में ले आया करता है। चतुर्थी में नारियलों से हवन करके महती श्री को प्राप्त करता है।

लवणैर्मधुसंयुक्तैर्वशयेद्वनिताजनम् ।
संवर्त्तकोनेत्रयुतः पार्श्वोह्यासनस्थितः ।९२
प्रसादनाथ ह्रन्मत्रः स्वबीजद्यो दशाक्षरः ।
गणको मुनिरस्य स्याद्विराट्छद उदाहृतम् ।९३
क्षिप्रप्रसादिनो विघ्नो देवतास्य समीरिता ।
दीर्घयुक्तेन बोजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ।९४
पाशाङ्कुशौ कल्पलतां विषाणं दधत्स्वशुण्डाहितबीजपूरः ।
रक्तास्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलोहस्तिमुखोऽवताद्वः ।९५
लक्षंजपेज्जपस्यान्ते जहुयादयुतं तिलैः ।
समधु (मधुर) त्रितयैर्द्रव्यैरथवाष्टाभिरीरितैः ।९६
एकाक्षसेदिते पीठे वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैर्धूपदीपैर्गजाननम् ।९७
अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य विघ्नानष्टौ यजेत्ततः ।
विघ्नं विनायकं शूरवीरं वरसंज्ञकम् ।९८

इभवक्त्रं चैकदन्तं लम्बोदरमनंतरम् ।
पत्राग्रेष्वर्चयेत्पश्चदब्राह्मयाद्यास्तदनन्तरम् ।९९

मधु से युक्त लवणों से हवन करके वनिता जनों को वश में कर लिया करता है । अब क्षिप्रप्रसादक के मन्त्र से बतलाया जाता है । सम्बर्तक–क्षकार, नेत्र–इकार से युत, पार्श्व–पकार, वह्नयासन—रेफसम, स्वबीजाद्य – गं । इस बीज के आदि वाला प्रसादन के लिये हृन्मन्त्र दश अक्षरों वाला होता है । इसका ऋषि गणक है–विराट् छन्द है और क्षिप्रप्रसादन है विघ्न इसका देवता बताया गया है । दीर्घ युक्त बीज के द्वारा षट् अङ्गों की कल्पना करनी चाहिये ।९२-९४। अब ध्यान बताया जाता है—पाश – अंकुश—कल्पलता–विषाण को धारण करते हुए अपनी सूँड से बीजपुर को आहित करने वाले–रक्त वर्ण से युक्त–तीन नेत्रों से समन्वित–तरुण चन्द्र को मस्तक में धारण करने वाले–हार से समुज्ज्वल–हाथी के समान मुख वाले आपकी रक्षा करे ।९४। इन मन्त्र का एक लाख जप करे और जप का दशांश भाग दश हजार तिलों से हवन करना चाहिये । त्रिमधुर द्रव्यों से अथवा कथित आठ द्रव्यों से होम करे ।९५-९६। एकाक्षरोहित पीठपर वक्ष्यमाण मार्ग के द्वारा गन्ध पुष्पादि से और धूप-दीपों से गजानन प्रभु का यजन करना चाहिए ।९७। पूर्व में अङ्गों का पूजन करके फिर आठ विघ्नों का अभ्यर्चन करे । उन आठों के नामों का परिगणन किया जाता है–विघ्न, विनायक, शूर, वीर, वरद, इभवक्त्र, एकदन्त, लम्बोदर ये आठ हैं । पीछे पत्रों के अग्र भागों में ब्रह्माणी आदिक का अर्चन करना चाहिए ।९९।

लोकपालास्तदस्त्राणि विघ्नपूजासमीरिता ।
आज्यान्नैजुहुयान्नित्यमन्तवान्वत्सरादभवेत् ।१००
पायसान्नेन महती श्रियमाप्नोति मानवः ।
आज्यहोमेन वशयेत्प्राणिनः सकलान्सुधीः ।१०१

नारिकेलफलं पक्वं लोष्ठचर्मसमन्वितम् ।
जुहुयात्प्रत्यं न्त्री मण्डलात्सिद्धिमाप्नुयात् ।१०२
जुहुयादष्टाभिर्द्रव्यैर्मधुरत्रयसंयुतैः ।
वशेयेत्पार्थिवान्सर्वान् तत्पत्नीविधिनागुना ।१०३
दिनादिषु चतुश्चत्वारिंशद्वारैः शुभोदकैः ।
तर्पयेद्विघ्नराजस्य मस्तके श्रीप्रसिद्धये ।१०४
पाशांकुशौ कल्पलतां स्वदन्त करैर्वहन्त करनकाद्रिकान्तम्।
सोपानपङ्क्त्या दिनानाथविम्बादायान्तमम्भोजगतं विचिंत्य।१०५

इसके अनन्तर लोकपालों का तथा उनके आयुधों का यजन करना चाहिए । इस रीति से भगवान् विघ्नेश्वर की पूजा कही गयी है । आज्य और अन्न से नित्य होम करे तो एक बर्ष में अन्नवान हो जाया करता है ।१००। पायस और अन्न से हवन करने से मानव बहुत बड़ी श्री की प्राप्ति किया करता है । सुधी पुरुष आज्य के द्वारा हवन करके समस्त प्राणियों को अपने वश में कर लिया करता है ।१०१। परिपक्व नारियल का फल जो लोष्ठ चर्म से संयुत होवे—मन्त्रधारी प्रतिदिन इससे होम करे तो एक मन्डल से सिद्धि को प्राप्त किया करता है । (यहाँ लोष्ठ शब्दमें अन्तवर्त्ती नारियल का ऊपर का भाग है और उसके ऊपर का भाग त्वचा है जिसको चम शब्द से कहा गया है) । मधुरत्रय से सणन्वित आठ द्रव्यों से होम करे तो इस विधि से समस्त पार्थिवों को और उनकी पत्नियों को अपने वश में कर लेता है।१०२। १०३। दिन के आदि काल में शुभ जल से चौवालीस बार तर्पण करना चाहिए । श्री को प्रसिद्धि के लिए विघ्नराज के मस्तक में तर्पण करना चाहिए । श्री की प्रसिद्धि के लिए विघ्नराज के मस्तक में तर्पण करे ।१०४। अब तर्पण करने से समय में विशेष ध्यान बतलाया जाता है- अपने करों से पाश-अंकुश—कल्पलता—अपना दाँत धारण करते हुए हैं और कनकाद्रिकान्त को वहन करने वाले है । सोपानों की पंक्ति के द्वारा दिननाथ के विम्ब से आगमन करते हुए हैं । और अम्भोज से स्थित हैं—ऐसा ही ध्यान करना चाहिए ।१०५।

प्रागुक्तमन्त्रसम्प्रोक्तान्प्रयोगाःमनुनाऽमुना ।
तैरस्तिन्नथवा प्रोक्तात् कुर्यान्मन्त्री विधानवित् ।१०६
पञ्चांतको विदुयुतो यामकर्णविभूषितः ।
तारादिहृदयांतोऽयं हेरम्बमनुरींरितः ।१०७
चतुर्वर्णात्मको नृणां चतुर्वर्गफलप्रदः ।
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडंगानि ममाचरेत् ।१०८
मुक्ताकाञ्चननीलकुन्दघुसृणच्छायैस्त्रिनेत्रान्वितै-
र्नानास्यैर्हरिवाहन शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम् ।
दृप्तं दानमभीतिमोदकदर टङ्कं शिरोक्षात्मिकां
मालां मदनमङ्कुशं त्रिधिखकदोभिर्दधान भजे ।१०९
लक्षात्रय जपेन्मन्त्र दशांशं जुहुयात्तिलैः ।
तीव्रादिपूजिते पीठे देवं हेरम्बमर्चयेत ।११०
प्रणवः कवचद्वन्द्वं महासिंहाय ग ततः ।
हेरम्बेति पद पश्चादासनाय हृदन्वितः ।१११
अयमासनमत्रः स्यात्प्रदंद्यादमुनाऽऽसनम् ।
तारादिविघ्नबीजेन मूर्ति तस्य प्रकल्पयेत ।११२

विधान का ज्ञाता मन्त्रधारी पुरुष इस मन्त्र के द्वारा पूर्व में कहे हुये प्रयोगों को अथवा इसमें कहे हुओं को उसके द्वारा करे ।१०६। पञ्चान्तक-गकार, नाम नेत्र, ऊकार, जो बिन्दु से युत हो, प्रणव आदि में हो और हृदय अन्त में—ऐसा हेरम्ब का मन्त्र कहा गया है ।१०७। यह चार वर्णोंके स्वरूप वाला मन्त्र है जो चतुर्वगके फल को देने वाला होता है। षट् दीर्घक् बीज के द्वारा छं अङ्गों का समाचरण करना चाहिए ।१०८। ध्यान—मुक्ता, काञ्चन नील कुन्द घुसृण—कुंकुम के सदृश कान्ति वाले नाग के मुखों से युक्त-तीन नेत्रों से समन्वित-हरि के वाहन वाले—चन्द्र के धारी—सूर्य की प्रभा से मुक्त—दृप्त, दान-अभय-मोद करोंमें धारण करने वाले-अक्षमाला, मदन-अकुज और त्रिलिश को धारण करने वाले हेरम्बका मैं भजन करता हूँ ।१०९।

इस मन्त्र का तीन लाख जप करे और जप को दशाँश तिलों से होम करना चाहिये। तीव्रा आदि से पूजित पीठकर हेरम्ब देव का अर्चन करे ।११०। प्रणव–कवच द्वन्द्व अर्थात् हुँ-हुँ और फिर ग, इसके पीछे हेरम्ब-यह पद आसन के लिये हृदन्वित होवे ।१११। यह आसन का मन्त्र होता है। इस मन्त्र से आसन अर्पित करना चाहिये। जिसके प्रणव कादि में होवे ऐसे विघ्न के वीज के द्वारा उनकी मूर्ति को प्रकल्पित करे ।११२।

आवाह्य पूजयेत्तस्यामङ्गावरणसंयुतम् ।
वाह्ये लोकेश्वरा पूज्या वज्रादीनि ततः परम् ।११३
एवमभ्यर्चयेन्नित्यं साधयत्स्वमभीप्सितेम् ।
मोदकैर्जुहुयात्षष्ठ्यामष्टम्यां कृशरैस्तथा ।११४
चतुर्दशीदिनेऽपूयैर्जुहुयाद्वाञ्छिताप्राप्तये ।
एभिर्द्रव्यैः प्रजुहुयान्मंत्री पूर्वदिनेष्वपि ।
साधयेत्सकलान्कामानयत्नेनेव साधकः ।११५
अम्भोजं प्रथमं लिखेद्वसुदल मध्ये स्वबीजान्तरे ।
साध्याख्याम्बहिरङ्गमंत्रविलसत्किञ्जल्कसंशोभितम् ।
यत्राणामुदरे विभज्य मुनिशो मालामुनुंशेषिता-
षड्वर्णाश्चरमे दले परिवृत शक्त्या शकारेण च ।११६
रोचनामदकाश्मीरैर्भूर्जपत्रे विलिख्य तत् ।
वेष्टित श्वेतसूत्रेण लोहैस्त्रिभिरपि क्रमात् ।११७
धारयेद्बाहुना यंत्र सर्वान्कामानवाप्नुयात ।
शक्त्यङ्कुशोध्रुवान्ते स्यात्स्वबीजं हृदयं ततः ।११८
जर्वविघ्नाधिपायान्ते ङेऽन्तं सर्वार्थसिद्धिदम् ।
प्रवदेत्सर्वदुःखप्रशमनाय पदं ततः ।११९

उस मूर्ति में आवाहन करके अङ्गावरण से समन्वित का अर्चन करना चाहिए। बाहिर में लोकेश्वरों का अर्चन करे और उनके बाहिर वज्रादि उनके आयुधों का यजन करे ।११३। इसी रीतिमें नित्य अर्चन

करे और अपना अभीप्सित का साधन करना चाहिए। षष्ठी तिथि में मोदकों के द्वारा होम करे तथा अष्ठमी में कृशरों से हवन करना चाहिए ।११४। चतुर्दशी तिथि में पूओं से वाँछितों की प्राप्ति के लिये होम करना चाहिये। इस मन्त्र सहित द्रव्यों के द्वारा मन्त्रधारी पूर्व दिनों में भी आहुतियाँ देवे। साधक विना ही पत्रों के सब कामों का साधन करे ।११५। सर्व प्रथम कमल का लेखन करे जिसमें आठ दल होवे। मध्य में अपने बीज के अन्तर में साध्व का नाम लिखे। जो अंक मन्त्रों से भूषित किंजल्क से संशोभित होवे। साध्य के साथ साधक और उसके कार्य को लिखना चाहिए। पत्रों के उदर में सात प्रकार से विभाग करके माला मन्त्र को शेषित वर्णों को अन्तिम दल में लिखे और शक्ति और प्रकार से परिवृत करे। रोचना मद और काश्मीर से भोज पत्र में उसे लिखे। फिर क्रम से सूत्र से और तीन लोहों से वेष्टित करे। इस मन्त्र बाँधी 'बाह मे' धारण करे तो साधक सभी कामनाओं को प्राप्त कर लिया करता है। शक्ति-अंकुश को ध्रुव के अन्त में लिखे फिर अपना बीज और हृदय लिखे, अन्त में चतुर्थी विभक्ति के अन्त वाले सर्व विघ्नाधिपाय लिखे तो यह सब अर्थों की सिद्धि का देने वाला होता है। इसके पश्चात् सर्वा दुःख प्रशमनाय—यह पद कहे ।११६-११९।

एह्येहि भगवन्सर्व खादय स्तम्भय द्वयम् ।
भुवनेशी स्वबीजजाङ्कः नतिः पावकवल्लभाः ।१२०
पुनरङ्कुशमायान्तं पञ्चपञ्चाशदक्षरः ।
मालामन्त्रेण मनुना प्रयोगान् साधयेत्सुधाः ।१२१
तारं खड्गीश्वरः कूर्मो निःस्वरेणान्तईरित ।
भुवे नतिः सप्तवर्णः सुब्रह्मण्यात्मकोमनुः ।
वह्निबीजेन षड्दीर्घयुक्तेनाङ्गक्रिया मता ।१२२
सिन्दूरारुणकान्तिमिन्दुवदनं केयूरहारादिभि-
र्दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं स्वर्गस्य सौख्यप्रदम् ।

अम्भोजाभयशक्तिकुक्कुटधरं रक्ताङ्गरागांशुकम् ।
सुब्रह्माण्यमुपास्महे प्रणमतां भीतिप्रणाशोद्यतम् ।१२३
लक्षमेक जपेन्मन्त्रं साज्येन हविषा ततः ।
दशांशं जुहुयादन्ते ब्राह्मणानापि भोजयेत् ।१२४
धर्म्मादिकल्पिते पीठे वह्निमण्डलपश्चिमे ।
पूजयेद्विधिना देवमुपचारैर्यथोदितैः ।१२५
केसरेष्वङ्गपूजा स्यात्पत्रमध्यगतानिमान् ।
जयन्ताख्यमग्निवेश्यं कृत्तिकापुत्रसंज्ञकम् ।१२६

इसके अनन्तर ऐहि एहि भगवान् सर्व खाद्य और स्तम्भय–इन को दो-दो बार कहे। भुवनेशी का अपना बीज–ह्रीं गं–नतिः पावक वल्लभा अर्थात् स्वाहा कहे। फिर आमान्त अंकुश कहे–यह माला मन्त्र पचपन अक्षरों वाला होता है। इस माला मन्त्र के द्वारा साधक सुधी अपने प्रयोगों का साधन करे।१२०-१२१। अब सुब्रह्मण्य मन्त्र को बतलाते हैं–प्रणव–खगीश–वः, कूर्म्म–चकार, निःस्वर–स्वर से हीन, णान्तः–तकार, भुवे यह स्वरूप हैं। फिर नति नमः–यह पद कहे–यह सुब्रह्मण्य के स्वरूप वाला मन्त्र सात वर्णो वाला होता है। षट् दीर्घ से युक्त वह्नि बीज से हङ्क्रिया मानी गयी है ।१२२। अब ध्यान बतलाया जाता है–सिन्दूर के समान कान्ति से युक्त चन्द्र के समान मुख वाले–केयूर और हार आदि परम दिव्य भूषणों से विभूषित शरीर से समन्वित–स्वर्ग के सौख्य के प्रदान करने वाले -- करों से कमल, अभयदान-शक्ति और कुक्कुटको धारण करने वाले-रक्त अङ्गराग से युक्त वस्त्र वाले– प्रीति और प्रमाण को उद्यत रहते हैं जो प्रणाण करने वाले हैं ऐसे सुब्रह्मण्य देवकी हम उपासना करते हैं।१२३। इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिये। और घृत के सहित हविसे जप का दशांश होम करे और अन्त में ब्राह्मणोंको भोजन करना चाहिये ।१२४। वह्नि मन्डल के पश्चिम में धर्म्मादि से कल्पित पीठ पर यथोचित उपचारों के द्वारा विधि के साथ देवता का पूजन करना चाहिए। केसरों से अङ्ग पूजा करे तो ये पत्रों के मध्य संस्थित है।१२५-१२६।

अनन्तर भूतपति सेनान्यं गुहसंज्ञकम् ।
हेमशूल विशालाक्षं शक्तिशूलकरान् यजेत् ।१२७
दिग्दलाग्रेषु पूर्वादि देवसेनापतिं पुनः ।
विद्यां मेधां ततो वज्रं कोणस्थान् शक्तिकुक्कुटौ ।१२८
मयूरं द्वीपमध्यचेंद्वाह्ये लोकेश्वरान्पुनः ।
अस्त्राणि तेषामते स्युः सुब्रह्मण्यार्चनेरिता ।१२९
स्वादुभिभक्ष्यभोज्याद्यैः षष्ठ्यां संप्रीणयेद्विभुम् ।
पूजयेद्देवताबुद्धया कुमारब्रह्मचारिणः ।१३०
सतानं विजयं वीर्यरक्षामायुः श्रियं यशः ।
प्रदद्यात्साधकस्याशु सुब्रह्मण्यः सुरार्चितः ।१३१।
जपतर्पणपूजादौ विघ्नेश सर्वसिद्धिदम् ।
प्रीणयेदनया स्तुत्या प्राप्तये सवसम्पदाम् ।१३२
ऊकमामाद्य प्रवदन्ति सन्तोत्राचः श्रुतो मामानि यं गृणन्ति ।
गजाननं देवगणानताङ्घ्रि भजेऽहपद्धेन्दुकृतावतसम् ।१३३

जयन्त—अग्नि देश्य—कृत्तिका पुत्र—भूतपति—सेनान्य—गुह—हेम शूल—विशालाक्ष और शक्ति तथा त्रिशूल करों में रखने वालों का यजन करना चाहिये ।१२७। दिग्दलों के पूर्व अग्र भागों में पूर्वादि देव सेनापति का यजन करे - विद्या-मेधा—वज्र और कोणों में स्थितों का—शक्ति और कुक्कुटों का, मयूर, द्वीप का अर्चन करना चाहिये फिर बाहिर में लोकेश्वरों का तथा उनके अन्त में अस्त्रों का अर्चन सुब्रह्मण्य के यजन में कहा गया है ।१२८-१२९। परम स्वादु भक्ष्य भोज्यों के द्वारा षष्ठी में विभु को प्रीणित करना चाहिए । देवता की बुद्धि से कुमार ब्रह्मचारियों का पूजन करना चाहिये ।१३०। सुरों के द्वारा समार्चन किये हुये सुब्रह्मण्य देव साधना करने वाले व्यक्तियों को शीघ्र ही सन्तति—विजय—दीर्घ – रक्षा—आयु—श्री—यश को देते हैं ।१३१। जप, तर्पण और पूजा आदि में समस्त सिद्धियों के प्रदाता विघ्नेश को प्रीणित करे । इस स्तुति के द्वारा उनको प्रसन्न करे

जिससे सब सम्पदाओं की प्राप्ति होती है ।१३२।अब ध्यान कहा जाता हैं—सत्पुरुष आदि में होने वाले ॐ को क्रम से कहते हैं जिसका श्रुतियों की वाणियाँ भी ग्रहण किया करती हैं। देवगणोंके द्वारा जिसके चरणों में नमस्कार किया गया है और जो अर्ध चन्द्र के द्वारा भूषित हैं, उन गजानन प्रभु का भजन करता हूं ।१३३।

पादारविन्दार्च्चनतत्पराणां संसारदावानलभङ्गदक्षम् ।
निरन्तरं निगतदानतोयैस्तं नौमि विघ्नेश्वरमम्बुदाभम् ।१३४
कृताङ्गरागं नवकुङ्कुमेन मत्तालिमालां मदपङ्कलग्नाम् ।
निवारयंतं निजकर्णतालैः कोविस्मरेत्पुत्रमनङ्गशत्रो. ।१३५
शंभोजटाजूटनिवासिगङ्गाजलं समादाय कराम्बुजेन ।
लीलाभिराराच्चिवमचर्यन्तं गजाननं भक्तियुता भजन्ति ।१३६
कुमारभक्तौ पुनरात्महेतोः पयोधरौ पर्वतराजपुत्र्याः ।
प्रक्षालयन्त करसीकरेण मौग्ध्येन तं नागमुख भजामि ।१३७
त्वया समुद्धत्य गजास्य हस्तं ये सोकराः पुष्कररन्ध्रमुक्ताः ।
व्योमाङ्गणे ते विचरन्ति ताराः
　　　　कालात्मना मौक्तिकतुल्यमासः ।१३८
क्रीडारते वारिनिधौ गजास्ये वेलामतिक्रामति वारिपूरे ।
कल्पावसानं प्रविचिन्त्य देवाः
　　　　कैलासनाथ स्तुतिभिः स्तुवन्ति ।१३९
नागानने नागकृतोत्तरीये क्रीडारते देवकुमार सन्धैः ।
त्वयि क्षणं कालगति विहाय तौ प्रापतुः कन्दुकतामिनेन्द ।१४०

चरणार विन्दों के अभ्यर्चन न परायण भक्तों के संसार दावानलके भङ्ग करने में दक्ष है, जो मेघ की आभा वाले हैं और निरन्तर निकलने हुये मद के जलके समूह से समन्वित है उन भगवान् विघ्नेश्वर के लिएमैं प्रणाम करता हूँ ।१३४। नूतन कुंकुम के द्वारा अङ्गराग की करने वाले, मद के कर्दम में लगे हुये मद मस्त भ्रमरों की पक्तियों को अपने कानों के तालों के द्वारा निवारण करने वाले अनङ्ग के शत्रु भगवान् शिव के

पुत्र का कौन विस्मरण किया करता है, अर्थात् कोई भी उसको भूल नहीं सकता है।१३५। भगवान् शम्भु के जटाओं में निवास करने वाले गङ्गा के जल को अपने कर कमलों के द्वारा आदान करके लीला से समीपमें शिव का अर्चन करते हुए गजानन का भक्तिसे युक्त भक्तिगण भजन किया करते हैं।१३६। कुमार अर्थात् स्वामि कार्त्तिकेय के द्वारा पर्वतराज की पुत्रों के मुक्त पयोधरों को अपने लिये करों के सीकरोंके द्वारा मुग्धता से प्रक्षालन करते हुए उन गज के समान मुख वालों का मैं भजन करता हूँ।१३७। हे गजास्य ! काल स्वरूप आपके द्वारा हस्त सूँड) को समृद्धृत करके पुष्कर (हाथी के सूँड का अग्रभाग) के रन्ध्र से मुक्त किये हुये सीकर हैं वे व्योम के आँगन में मोतियों के समान कान्ति वाले तारागण विचरण किया करते हैं।१३८। गजास्य अर्थात् श्री गणेश के सागर में क्रीड़ारत होने पर जल समूह के वेत्ता के अतिक्रमण करने पर देवगण कल्प का अवसान विचार करके कैलाश के स्वामी की स्तुतियों के द्वारा स्तवन किया करते हैं।१३९। नागानन (गणेश) के नाग (गज) का उत्तरीय वस्त्र करने पर क्रीड़ा में रत हो जाने से देव कुमारों के संघों के द्वारा तुम्हारे क्षण पर्यन्त कालगति का त्याग करके वे दोनो सूर्यचन्द्र कन्दुकला को प्राप्त हुए थे।१४०।

मदोल्लसत्पञ्चमुखैरजस्त्रमध्यापयेन्तं सकलागमार्थान् ।
देवानृषीन् भक्तजनैकमित्रं हेरम्बमरुणमाश्रयामि ।१४१
पादाम्बुजाभ्यामतिवामनाभ्यां कृतार्थयन्तं कृपया धरित्रीम् ।
अकारणं कारणमोप्तवाचां तं नागवक्त्रं न जहाति चेतः ।१४२
येनार्पितं सत्यवतीसुताय पुराणमालिख्य विषाणकोठया ।
तंचन्द्रमौलेस्तनयं तपोभिरवाप्यमानन्दघनं भजामि ।१४३
पदं स्तुतीनामपदं श्रुतीनां लीलावतारं परमेष्ठमूर्त्तेः ।
नागात्मको वा पुरुषात्मकोवेत्यभेद्यमाद्यं भज विघ्नराजम् ।१४४
पाशाङ्कुशौ भग्नरदं त्वभीष्टं करैर्दधानं कररन्ध्रमुक्तैः ।
मुक्ताफलाभैः पृथुसीकरौघैः सिंचतमंग्रं शिवयोर्भजामि ।१४५

अनेकमेकं गजमेकदन्तं चैतन्यरूपं जगदादिबीजम् ।
ब्रह्मेति यं ब्रह्मविदोवदन्ति तं शम्भुसूनं शरणं भजामि ।१४६
स्वाङ्कस्थितायाः निजवल्लभाया मुखाम्बुजालोकनलोलनेत्रम् ।
स्मेराननास्यं मदवैभवेन रुद्धं भजे विश्वविमोहनं तम् ।१४७

मद से समुल्लसित पांच मुखों के द्वारा निरन्तर समस्त आगमों के अर्थ को देवों और ऋषियों को पढ़ाते हुए भक्तजनों के एक मित्र परम दयालु हेरम्ब की मैं शरण में जाता हूँ ।१४१। अपने अतीव गमन चरण कमलों के द्वारा कृपा करके धरित्री को कृतार्थ करते हुये आप्तवचनों के अकारण कारण स्वरूप उन गजमुख प्रभु को चित्त कभी त्याग नहीं करता है ।१४२। जिसने सत्यवती के पुत्र व्यासदेव को अपनी विषाण की कोटि से पुराण का लेखन करके अर्पितकर दिया था उन चन्द्रमौलि शिव के पुत्र का जो तपोंके द्वारा अवाप्य हैं और आनन्दघन हैं मैं भजन करता हूँ ।१४२। स्तुतियों का अपद अर्थात् अस्थान और श्रुतियों का अपद अर्थात् जो श्रुतियों का भी स्थान नहीं है, अष्ट मूर्ति का परम लीलावततार हैं । वह नाग स्वरूप से युक्त हैं अथवा पुरुष स्वरूप वाले हैं ऐसे भेद के अयोग्य आद्य विघ्नराज का भजन करो ।१४४। पाश-अंकुश भग्न दन्त और अभीष्ट को कर कमलोंके द्वारा धारण करने वाले करों के रन्ध्रों (छिद्रों) से मुक्त—मुक्ताफल की आभा वाले पृथु सीकरों के समुदायों से शिवा और शिवके अङ्गों का सेवन करते हुए गणेश का मैं भजन करता हूँ ।१४५। अनेक एक दन्त—चैतन्य स्वरूप—जगत् के आदि बीज गज को अर्थात् गणेश को जिसको ब्रह्म के ज्ञाता जन ब्रह्म कहते हैं उन भगवान् शम्भु के पुत्र की मैं शरणागति में जाता हूँ अवलोकन करने में चंचल नेत्रों वाले-मदके वैभव से रुद्ध-स्मेर (मन्दहास्य) से संयुत आनन वाले, विश्व को विमोहित करने वाले उन गणेश का में भजन करता हूँ ।१४७।

ये पूर्वमाराध्य गजानन त्वां
शास्त्राणि सर्वाणि पठन्ति ऐषाम् ।

स्वत्तोन चान्यत्प्रतिपाद्यमेतैस्तदस्ति
चेत्सर्वमसत्यकल्पम् ।१४८
हिरण्यगर्भं जगदीशितारमृषिं पुराणं रविमण्डलस्थम् ।
गजानन यं प्रविशन्ति संतस्तत्कालयोगैस्यमहं प्रपद्ये ।१४६
वेदान्तगीतम पुरुषं भजेऽहमात्मानन्दघनं हृदिस्थम् ।
गजाननं यन्महसा जनानां मद्वान्धकारोविलयं प्रयाति ।१५०
शम्भोः समालोक्य जटाकलाप शशाङ्कखण्डं निजपुष्करेण ।
स्वभग्नदन्त प्रविचिन्त्य मोग्ध्यांदाक्रष्टु कृतमः श्रियमातनोतु ।१५१
विघ्नार्गलानां विनिपातनार्थयं नारिकेलैः कदलीफलाद्यैः ।
प्रभाव (साद) यन्नोमदवारणास्यम्प्रापुर्नरोऽभीष्टमहं भजेतम् ।१५२
यज्ञै रनेकैर्बहुभिस्तपोभिराराध्यमाद्यं गजराजचक्रं ।
स्तुत्याऽनता ये विधिना स्तुवन्ति ते सर्वलक्ष्मीनिधयोभवंति ।१५३

जो पूर्व में गजानन आपकी आराधना करके उनके समस्त शास्त्रों को पढ़ते हैं, वेआपसे अन्य प्रतिपादन करनेके योग्य नहीं है। यदि ऐसा हो तो वह सब असत्य कल्पना ही है ।१४८। हिरण्यगर्भ-जगत् के ईश-ऋृषि-पुराण और रविमंडल में संस्थित जिस गजानन के अन्दर काल के योगों द्वारा प्रवेश करता है, उनकी शरणागति में गमन करता हूँ ।१४६। वेदान्त में गान किये गये-आनन्द घन अर्थात् घनी-भूत आनन्द स्वरूप हृदय में स्थित आत्म गजानन का में सेवन करता हूँ। जिसके तेज से जनों का महान् अन्धकार विलीनता को प्राप्त हो जाया करता है ।१५०। भगवान् शम्भु के जटाजूटमें चन्द्रमा के खन्ड को समालोकित करके अपना भग्न हुआ दाँत समझकर अपनी सूँड के अग्रभाग से मुग्धता से उसे खींच लेने की इच्छा वाले होते हैं। ऐसे श्री गणेशजी हमारी श्री का विस्तार करें ।१५१। विघ्नों की अर्गला के विनिपालन करने के लिये जिसको नारियलों से तथा कधली के फलादि के द्वारा प्रसन्न करते हुए मद वारणस्य को प्राप्त हुए नरों से अभीष्ट उन गणेश का भजन करता हूँ ।१५२। अनेक यज्ञों के द्वारा वहुत से

तपों से आराधना के योग्य—आद्य गजराज मुख (गणेश) का इस स्तुति के द्वारा विधि के साथ स्तवन जो लोग किया करते हैं वे सम्पूर्ण सम्पति और निधियों वाले हो जाया करते हैं ।१५३।

द्वादश पटल

॥ चन्द्र प्रकरण ॥

अथोच्यते चन्द्रमसोमनुःसर्वसमृद्धिदः ।
खड्गीशस्थो भृगुविन्दुसनुस्वरसमन्वितः ।१
सोमाय हृदयान्तोऽयं मन्त्रः प्रोक्तः षडक्षरः ।
ऋषिरुक्तो भृगु छन्दः पंक्तिः सोमोऽस्य देवता ।
दीर्घभाजा स्वबीजेन मनोरङ्गक्रिया मता ।२
कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पूर्णेन्दुविम्बाननम ।
मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः ।
हस्ताभ्यां कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितम् ।
स्वास्याङ्कस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धि भजे ।३
रसलक्षं जपेन्मत्रं साधको विजितेन्द्रियः ।
षट्सहस्रं प्रजहुयात्पायसेन ससर्पिषा ।४
सौमान्तं पूजिये पीठे पूजयेद्रोहिणीपतिम् ।
अङ्गानि केसरेषु स्युस्तद्देव्यः पत्रमध्यगाः ।५
रोहिणी कृत्तिका भ्योरेवती भरणी पुनः ।
रात्रिरार्द्रा तनो ज्योतिः कला हारसमप्रभाः ।६
सितमाल्याम्बरधरा मुक्ताहारविभूषणाः ।
पयोधरभराक्रान्ता रचिताञ्जलयः शुभा ।७

इसके अनन्तर समस्त समृद्धियों के प्रदान करने वाले चन्द्रमा के मन्त्र को बतलाया है—सौभाग्य और हृदयान्त अर्थात् जिनके अन्त में हृदय है—यह छँ अक्षरों वाला मन्त्र होता है। मन्त्र का उद्धार यह होता है-खङ्गीश—त्र: उसमें स्थित भृगु—सः। वह बिन्दु अनुस्वार से समुन्वित है। भृगु इसका ऋषि है छन्दपंक्ति है और इसका देवता सोम है। दीर्घ का सेवन वाले अपने ही बीज के द्वारा इस मन्त्र की अङ्ग क्रिया करनी चाहिए।१०। कर्पूर और स्फटिक के समान अवदात अर्थात् श्वेत और निरन्तर पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखबिम्ब वाले— मोतियों की माला से विभूषित वपु से अन्धकारका निर्मूलन करने वाले तथा हाथों से कुमुद ओर वर को धारण करने वाले—नीले अलकों से उद्भासित-अपने अंक में स्थित मृग चिह्न से उदित आश्चर्य गुण वाले सुधा के सागर सोमका ही मैं भजन करता है।३। साधना करने वालेको अपनी इन्द्रियों को जीतकर छः लाख मन्त्र जप करना चाहिये। छँ सहस्र का होम करना चाहिये। पायस और घृत से ही हवन करे।४। पूजित पीठ पर सोमान्त रोहिणी के पतिका पूजन करे। केसरों में अङ्गों का यजन करना चाहिए। उसकी देवियों का पत्रों के मध्य में पूजन करे।५। रोहिणी कृत्तिका रेवती, भरणी, रात्रि, आर्द्रा, ज्योति, कला,ये सब हार के समान प्रभा वाली है।६। ये श्वेत माल्यों को धारण करने वाली है और मुक्ताओं के हारों से विभूषित हैं। पयोधरों के भार से समाक्रान्त है और शुभा तथा हाथों की अंजलियाँ बांधे हुई हैं।७।

वल्लभामक्तमनसी मदविभ्रममन्थराः।
समभ्यर्च्याः सरोजाक्ष्यश्चन्द्रविम्बनिभाननाः।८
आदित्यमङ्गलबुधमन्दवाक्पतिराहवाः।
शुक्रकेतुयुताः पूज्या दलाग्रेषु ग्रहा इमे।९
स्वस्वर्णाज्त्ररोपेताः स्वनामद्यर्णबीजकाः।
रक्तारुणश्वेतनीलपीतधूम्रसितासिताः।१०

वामोरुन्यस्ततद्धस्ततद्धस्ता दक्षिणेन धृताऽभयाः ।
अम्बुजाडयकरोभानुर्द्रंष्ट्राभीममुख शनिः ।११
राहुविक्रतवक्रः स्यात्केतुः स्याद्विहिताञ्जलिः ।
लोकपालास्ततः पूज्या वज्राद्यस्त्रैः सह क्रमात् ।१२
एवं सिद्धमनुर्मंत्री सम्पदां वसतिर्भवेत् ।
हृत्पुण्डरीकमध्यस्थं तारविभूषितम् ।१३
तारापतिं स्मरन्मंत्री त्रिसहस्रं मनु जपेत् ।
राज्यैश्वर्यं दरिद्रोऽपि प्राप्नुयाद्वत्सरान्तरे ।१४
पूर्वोक्तसंख्यं प्रजपेत् शशिनं मूर्ध्नि चिन्तयन् ।
रोगापमृत्युदुःखानि जित्वा वर्षशतं वसेत् ।१५
ब्रह्मचर्यरतः शुद्धश्चतुर्लक्षमिमं जपेत् ।
निधानंभुगतं सद्यः प्राप्नुयाद्यत्नवर्जित ।१६

अपने प्रियतम में समासक्त मन वाली और मदके विभ्रमों से मन्थर जरोजाक्षी और चन्द्र बिम्ब के समान मुखों वालियों का भली भाँति अभ्यर्चन करना चाहिए ।८। रवि, मङ्गल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र, केतु ये ग्रह दलों के अग्र भागों में पूजने चाहिए ।९। ये स्वणंवर्णों वाले वस्त्रों से संजित हैं और अपने नाम के आद्य वर्ण के बीजों वाले हैं। इनका वर्ण रक्त, पीत, अरुण, श्वेत, नील, धूम्र, सित और असित है ।१०। ये अपने वाम हस्त को वामोरु पर रक्खे हुए हैं और दाहिने हाथ में अभय दान धारण करने वाले हैं। भानु के करमें अम्बुज है-दाढ़ों से भयानक मुख वाला शनि है। विकृत मुख वाला राहु होता है। केतु अन्जलिको विहित करने वाला है-इसके अनन्तर क्रम से वज्र आदि अस्त्रों के सहित पूजने चाहिए ।११२। इस रीति से मन्त्र सिद्ध करने वाला मन्त्रधारी सम्पदाओं का निवास स्थान हो जाता है। हृदय कमल के मध्य में स्थित, मुक्तहार से अलंकृत तारापति का स्मरण करता हुआ दो हजार मन्त्र का जप करे। तो दरिद्र पुरुष भी एक ही वर्ष के बीच में राज्य और ऐश्वर्य को प्राप्त कर लियाँ करता है ।१३।

।१४। मस्तक में चन्द्र का चिन्तन करते हुए पूर्व कथित संख्या में जप करे तो वह रोग—अपमृत्यु और दुःखों को जीतकर सौ वर्ष तक स्थित रहा करता है ।१५। ब्रह्मचर्य से रत होकर शुद्ध होवे और इसका चार लाख जप करे तो यत्न रहित होते हुए भी भूमि में रहने वाले निधान को तुरन्त ही प्राप्त कर लेता है ।१६।

जितेन्द्रियो जयेन्मंत्रं पौर्णमास्यां विशेषतः ।
भवेत्सौभाग्यविलयः सम्पदामपरोनिधि ।१७
घोरान् ज्वरान् शिरोरोगानभिचारानुपद्रवान् ।
विषाणमपि संघातं नशियेन्मनुनाऽमुना ।१८
पूर्णमास्या निराहारो दद्यादर्घं विदूदये ।
प्राक्प्रत्यगायतं कुर्याद्भूतले मण्डलत्रयम् ।१९
निषण्णः पश्चिमे मन्त्री मन्डले विहितासने ।
मध्यस्थे स्थापयेत्पश्चात् पूजाद्रव्याण्यशेषतः ।२०
अन्यस्मिन्मण्डले सोममर्चयित्वाम्बुलान्विते ।
राजतं चषकं तत्र स्थापयेत् पुरतः सुधीः ।२१
गोदुग्धेन समापूर्य स्पृष्ट वा तं प्रजपेन्मनुम् ।
अष्टोत्तरशतं पश्चाद्विद्यामन्त्रेण देशिकः ।२२
दद्यादर्घं शशाङ्काल सर्वकायार्थसिद्धये ।
अनेन विधिना कुर्यात्प्रतिमामहतन्द्रितः ।२३

मन्त्र का जप जितेन्द्रिय होकर करे और विशेष रूप से पौर्णमासी में करे तो वह सौभाग्यका स्थान हो जाता है और सम्पदाओं का दूसरा निधि ही बन जाया करता है ।१७। इस मन्त्र के द्वारा घोर ज्वर-शिरो रोग-अभिचार-उपद्रव विषों के संधानों का विनाश कर दिया करता है ।१८। पौर्णमासी में निराहार रहकर चन्द्रोदय के समय में चन्द्रमाको अर्घ्य देवे । पूर्व और पश्चिममें भूतलआयत तीनमन्डल बनावे ।१९। मन्त्रधारी मन्डल में विहित आसन पर पश्चिम में स्थित होवे । पीछे मध्य में सम्पूर्ण पूजा ने द्रव्यों को स्थापित करे ।२०। अम्बुजान्वित

अन्य मन्डल में सोम का अर्चन करके सुधी को चाँदी से निर्मित्त चषक से वहांपर आगे स्थापित करना चाहिये ।२१। गायके दूध से समापूरित करके उसका स्पर्श करे और इस मन्त्र का जप करे। पीछे एक सौ आठ विद्या तन्त्र के द्वारा आचार्य चन्द्रमा के लिए सब कार्यों की विधि के लिये अर्ध्य देवे। इसी विधिसे प्रत्येक मासमें अतन्द्रित रहकर करना चाहिये ।२२-२३।

षण्मासाभ्यन्तरे सिद्धि साधकेन्द्रः समश्नुते ।
प्रियमत्पूर्जितान् पुत्रान् सौभाग्य पुष्कलं यशः ।२४
कन्याभिष्टामवत्प्नोति कन्यापि वरमाप्नुयात् ।
वक्षना किमिहोक्तेन सव दद्याग्निशापतिः ।२५
विद्ये विद्यामालिननि स्याच्चन्द्रिण्यन्ते ततो भवेत् ।
पुनश्चन्द्रमुखिस्वाहा विद्यामन्त्र उदाहृतः ‍ ६
ततोघृणिर्भृगः पश्चाद्वामकर्णविभूषितः ।
वह्नयासनोमरुच्छेषेः ससुत्रोत्रिस्त्यपश्चिमः ।२७
अष्टाक्षरोमनुःप्रोक्तोभानोरभिमतप्रदः ।
देवनागोमुनिः प्राक्तोगायत्री छन्द ईरितम् ।२८
आदित्यो देवता प्रोक्तोद्दष्टाद्दष्टफलप्रदः ।
सत्याय हृदयं प्रोक्तं व्रह्मणे शिर ईरितम् ।२९

इससे छँ मास के अन्दर ही साधक सिद्धियों प्राप्तकर लिया करता है। श्री-अत्यन्त ऊर्जित पुत्र-सौभाग्य—पुष्कल यश-अभीष्ट कन्या और कन्या भी अभीष्ट वर की प्राप्ति करती है। बहुत अधिक कथन से क्या लाभ है यही पर्याप्त है कि चन्द्रदेव सभी कुछ दे दिया करते हैं। ।२४-२५। मन्त्रका उद्धार बताया जाता है-विद्ये विद्यामालिनि-चन्द्रिणि चन्द्रमुखि स्वाहा-यह विद्या मन्त्र वताया गया है ।२६। अब-सूर्य का मन्त्र बताया जाता है-घृणि—वह स्वरूप है, भृगु—सः नाम वर्ण—ऊ—इससे भूषित अर्थात् 'सू'—मरुन —यकार, वह्नि-रेफ के आसन वाला अर्थात् जिस पर रकार हो, शेष-आ, सेमेघ इकार युक्त

अ.न्द, स्य अन्तिम होता है। यह भानुदेय का अभिमत का प्रदाता आठ अक्षरों वाला मन्त्र वताया गया है। कल्याण हृदय कहा है और ब्रह्मणे शिर कहा गया है।२७-२६।

विष्णवे स्याच्छिखा वर्म रुद्राय परिकीर्तितम् ।
अग्नयेनेत्रमाख्यातं शर्वाययास्त्रमुदीरितम् ।३०
तेजोज्वालामणिहुंफटद्विठान्ताः पृथगीरिताः ।
अंगमन्त्रान्पुनर्न्यस्येत्पञ्च मूर्त्तीर्यथाक्रमम् ।३१
आदित्यं विन्यसेन्मूर्ध्नि रविं मुखगतं न्यसत् ।
हृदये भानुनामनं भास्करं गुह्यदेशतः ।३२
सूर्यं चरणन्योर्यस्येद्व्यस्वैः सद्यादिपञ्चभिः ।
प्रधानमूर्तिप्रतिमाःसर्वाभरभूषिताः ।३३
मूर्द्धास्यकन्ठहृदयकुक्षिनाभिध्वजाङ्घ्रिषु ।
मन्त्रवर्णान् न्यसेक्यो प्रत्येकं प्रणवादिकान् ।३४

विष्णवे— यह शिखा है, रुद्राय—वह वर्म कीर्तित किया गया है। अग्नेये नेत्र कहा है और शर्वाय अस्त्र होता है। दो ठकार और स्वाहा है, तेजो ज्वाला मणिहूँ फट्—यह होता है। फिर अङ्ग मन्त्रोंका न्यास करना चाहिये और यथा क्रम पाँच मूर्तियों का करे ।३०-३१। आदित्य का मूर्धा में विन्यास करे और रवि का मुख में न्यास करे। हृदम में भानु का और भास्कर का गुह्य देश में न्यास करना चाहिये ।३२। सूर्य, का चरणों में सद्यादि पाच व्याहृतियोंहैके साथ न्यास करे। प्रधान मूर्त्ति की प्रतिमायें सग आभरणों से भूषित हों।३३। मूर्धा, मुख, कन्ठ हृदय, कुक्षि, नाभि, ध्वज और चरणोंमें प्रणव जिसके आदिमें होवे ऐसे प्रत्येक मन्त्र के वर्णों का न्यास करना चाहिए।३३-३४।

एवं न्यस्यशरीरोऽसी चिन्तयेत्तेजसांनिधिम् ।३५
रक्ताब्जयुग्माऽभयदानहस्तं केयूरहारांगदभूषणाढयम् ।
मणिक्यमौलिं दिननाथमोडे वन्धूककान्ति विलसस्त्रिनेत्रम् ।३६

वसुलक्षं जपेन्मंत्र समिद्भिः क्षीरशाखिनाम् ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् क्षीराक्ताभिर्जितेन्द्रियः ।३७
पीठस्य क्लृ तेः प्रथमं दिक्षु मध्ये च संयजेत् ।
प्रभूत विमलं सारं समाराध्यमनन्तरम् ।३८
परमादिसुखं पीठं स्वम्बिान्त प्रकल्पयेत् ।
दीप्तः सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला पुनः ।.९।
अमोघा विद्युता सवैतोमुखी पीठशक्तयः ।
दीप्तदीपशिखाकारा बीजान्यासां विदुः क्रमात् ।४०

इस तरह से शरीर में न्यास किया हुआ साधक तेजों के निधि का चिंतन करे ।३५। ध्यान-हाथों में रक्त कमलो का जोड़ा और अभय-दान धारण करने वाले केयूर–अङ्गद हार आदि भूषणों से अन्वित–मस्तक में माणिक्य धारी–वन्धूक पुष्प के समान कांति वाले–तीन नेत्रों से भूषित दिन नाथ का मैं स्तवन करता हूँ ।३६। दूधवाले वृक्षोंकी समिधाओं से आठ लाख मन्त्र का जप करके एक सहस्र का होम करे। क्षीर से अवत समिधाओं से तन्द्रा रहित होकर हवन करना चाहिये ।३९। क्लृप्त पीठ के प्रथम दिशाओं में और पीछे मध्य में यजन करे। अनन्तर में प्रभूत, विमल और सार का समाराधन करके अपने विम्बके अन्त में परमादि सुख पोठ की कल्पना करनी चाहिए। पीठ शक्तियोंके नामों का परिगणन किया जाता है–दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, मुद्रा, विभूति, विमला, अमोघा, विद्युता, और सर्वतोमुखी–ये पीठ शक्तियाँ होती हैं। क्रम से बीजान्यास दीप्त दीप की शिखा के आकार वाली का जानना चाहिए ।३८-४०।

अक्लीबह्लस्वत्रितस्वरान् बिन्द्वग्निसंयुतान् ।
वदेत्पदं चतुर्थ्यन्तं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।४१
सौराय योगपीठाय नमः पदमनंतरम् ।
पीठमंत्रोऽयमाख्यातो दिनेशस्य जगत्पतेः ।४२

तारादि खं खखोल्काय मनुना मूर्तिकल्पना ।
साक्षिणः सर्वलोकानां तस्यामावाह्य पूजयेत् ।४३
अङ्गानि पूजयेदादौ दिक्पत्रेष्वर्कमूर्त्तयः ।
आदित्याद्याश्चतस्रोऽर्च्याः शक्तयः कोणपत्रगाः ।४४
स्वस्वनामादिवर्णाः स्युस्तासां बीजान्यनुक्रमात् ।
उषा प्रज्ञा संध्या शक्तयः परिकीर्तिताः ।४६
पत्राग्रसंस्था ब्राह्मण्याद्याः पुरुयोऽरुणमर्चयेत् ।
चंद्रादानर्चयेत्पश्चाद्ग्रहानष्टौ ततो वहिः ।४७
इन्द्रादींश्च तदीस्त्राणि यथा पूर्वं समर्चयेत् ।
एवं संपूज्य विधिवद्भास्करं भक्तवत्सलम् ।४८
दद्यादर्घं प्रतिदिनं वारे वा तस्य चोदिते ।
प्रभाते मन्डलं कृत्वा पूर्वत्पीठमर्चयेत् ।४९
पात्रं ताम्रमयं प्रस्थतोयग्राहि मनोहरम् ।
निधाय तत्र मनुना पूरयेत्तच्छुभोदकैः ।५०

ह्रस्व त्रियत-अ,इ,उ इन स्वरोंको जो बिन्दु और अग्नि अर्थात् रेफ से संयुत होवे । ब्रह्मा-विष्णु और शिवके स्वरूपवाले पदको चतुर्थीकेअंत वालाबोले । इसके अनन्तर-सौराय योगपीठाय नमः यहबोलना चाहिए। यह जगतपति दिनेश्वर का पीठ मन्त्र बताया गया है।४१-४२। खखो-ल्याययह स्वरूप है-जिसमें प्रणव आदिमें हो ऐसा खं यह मंत्र है । इससे मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए । उसमें सब लोकोंके साक्षी का आवा-हन करके पूजन करना चाहिए ।४३। आदि में अङ्गों का पूजन करे और दिशाओं के पत्रों में अर्क देव की मूर्तियों का यजन करना चाहिए । आदित्य आदि कोणों के पत्रोंमें स्थित चारों का अर्चन करना चाहिये । ।४४। उन मूर्त्तियों के बीज अनुक्रम से अपने-अपने नामों के आदि वर्ण होते हैं । तथा प्रज्ञा,प्रभा-संध्या, ये शक्तियाँ बतलायी गयीहै ।४६। पत्रों के अग्र भागों में विराजमान ब्राह्मणों आदि हैं । आगे अरुण का अर्चन करे । पीछे चन्द्रादि आठ ग्रहों को बाहिर समन्वित करनी चाहिए ।४७।

वसुलक्षं जपेन्मंत्र समिद्भिः क्षीरशाखिनाम् ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् क्षीराक्ताभिर्जितेन्द्रियः ।३७
पीठस्य क्लृ तेः प्रथमं दिक्षु मध्ये च संयजेत् ।
प्रभूत विमलं सारं समाराध्यमनन्तरम् ।३८
परमादिसुखं पीठं स्वम्बिान्त प्रकल्पयेत् ।
दीप्तः सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला पुनः ।.९।
अमोघा विद्युता सर्वतोमूखी पीठशक्तयः ।
दीप्तदीपशिखाकारा बीजान्यासां विदुः क्रमात् ।४०

इस तरह से शरीर में न्यास किया हुआ साधक तेजों के निधि का चिंतन करे ।३५। ध्यान-हाथों में रक्त कमलो का जोड़ा और अभय-दान धारण करने वाले केयूर–अङ्गद हार आदि भूषणों से अन्वित–मस्तक में माणिक्य धारी–वन्धूक पुष्प के समान कांति वाले–तीन नेत्रों से भूषित दिन नाथ का मैं स्तवन करता हूँ ।३६। दूधवाले वृक्षोंकी समिधाओं से आठ लाख मन्त्र का जप करके एक सहस्र का होम करे। क्षीर से अक्त समिधाओं से तन्द्रा रहित होकर हवन करना चाहिये ।३७। क्लृप्त पीठ के प्रथम दिशाओं में और पीछे मध्य में यजन करे। अनन्तर में प्रभूत, विमल और सार का समाराधन करके अपने बिम्बके अन्त में परमादि सुख पीठ की कल्पना करनी चाहिए। पीठ शक्तियोंके नामों का परिगणन किया जाता है–दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, मुद्रा, विभूति, विमला, अमोघा, विद्युता, और सर्वतोमुखी–ये पीठ शक्तियाँ होती हैं। क्रम से बीजान्यास दीप्त दीप की शिखा के आकार वाली का जानना चाहिए ।३८-४०।

अक्लीबह्लस्वत्रितस्वरान् बिन्द्वग्निसंयुतान् ।
वदेत्पदं चतुर्थ्यन्तं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।४१
सौराय योगपीठाय तमः पदमनंतरम् ।
पीठमंत्रोऽयमाख्यातो दिनेशस्य जगत्पतेः ।४२

तारादि खं खखोल्काय मनुना मूर्तिकल्पना ।
साक्षिणं सर्वलोकानां तस्यामावाह्य पूजयेत् ।४३
अङ्गानि पूजयेदादौ दिक्पत्रेष्वर्कमूर्त्तयः ।
आदित्याद्याश्चतस्रोऽर्च्याः शक्तयः कोणपत्रगाः ।४४
स्वस्वनामादिवर्णाः स्युस्तासां बीजान्यनुक्रमात् ।
उषा प्रज्ञा संध्या शक्तयः परिकीर्तिताः ।४६
पत्राग्रसस्था ब्राह्मणिद्याः पुरुयोऽरुणमर्चयेत् ।
चंद्रादानर्चयेत्पश्चाद्ग्रहानष्टौ ततो बहिः ।४७
इन्द्रादींश्च तदीस्त्राणि यथा पूर्व समर्चयेत् ।
एव संपूज्य विधिवद्भास्करं भक्तवत्सलम् ।४८
दद्यादर्घं प्रतिदिनं वारे वा तस्य चोदिते ।
प्रभाते मन्डलं कृत्वा पूर्वत्पीठमर्चयेत् ।४९
पात्रं ताम्रमयं प्रस्थतोयग्राहि मनोहरम् ।
निधाय तत्र मनुना पूरयेत्तच्छुभोदकैः ।५०

ह्रस्व त्रियत-अ,इ,उ इन स्वरोंको जो बिन्दु और अग्नि अर्थात् रेफ से संयुत होवे । ब्रह्मा-विष्णु और शिवके स्वरूपवाले पदको चतुर्थीकेअंत वालाबोले । इसके अनन्तर-सौराय योगपीठाय नमः यहबोलना चाहिए। यह जगतपति दिनेश्वर का पीठ मन्त्र बताया गया है।४१-४२। खखो-ल्याययह स्वरूप है-जिसमें प्रणव आदिमें हो ऐसा खं यह मंत्र है । इससे मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए । उसमें सब लोकोंके साक्षी का आवा-हन करके पूजन करना चाहिए ।४३। आदि में अङ्गों का पूजन करे और दिशाओं के पत्रों में अर्क देव की मूर्तियों का यजन करना चाहिए । आदित्य आदि कोणों के पत्रोंमें स्थित चारों का अर्चन करना चाहिये । ।४४। उन मूर्त्तियों के बीज अनुक्रम से अपने-अपने नामों के आदि वर्ण होते हैं । तथा प्रज्ञा,प्रभा-संध्या, ये शक्तियाँ बतलायी गयीहै ।४६। पत्रों के अग्र भागों में विराजमान ब्राह्मणों आदि हैं । आगे अरुण का अर्चन करे । पीछे चन्द्रादि आठ ग्रहों को बाहिर समन्वित करनी चाहिए ।४७।

इन्द्र आदि ओर उनके अस्त्रों का पूर्व की तरह से समर्चन करे। उस प्रकार से भक्तों पर दया करने वाले भास्कर देव का विधि के साथ पूजन करके प्रतिदिन अर्घ्यदेवे अथवा उनके प्रेरित वार (दिन)में देवे। प्रभात से मन्डल की रचना करके पूर्व की तरह ही पीठ का अर्चन करना चाहिये।४८-४९। ताम्रगण प्रस्थ से जल का ग्रहण करने वाले-मनोहर पात्र को वहाँ पर रखकर उसे मन्त्र द्वारा गभ जल से भर देवे।५०।

कुंकुमं रोचना राजी रक्तचन्दनवैणवान्।
करवीरजपांशालिकुशश्यामाकतण्डुलान् ।५१
निःक्षिपेत्सलिले तस्मिन्नेक्यं सञ्चिन्त्य भानुया।
सांगमभ्यर्चयेत्तस्मिन् भास्करं प्रोक्तलक्षणम् ।५२
गन्धपुष्पादिनैद्यैर्यथाविधि विधानवित्।
तत्पिधाय जपेन्मन्त्रं सम्यगष्टोत्तर शतम् ।५३
पुनः संपूज्य गन्धाद्यैर्जानुभ्यामवनि गतः।
आमस्तकं तदुद्धृत्य व्योम्नि सावरणं रवौ।५४
दृष्टि निधाय स्वैक्येन मूलमन्त्रं धिया जपन्।
दद्यादर्घं दिनेशाय प्रसन्नेनान्तरात्मना।५५
कृत्वा पुष्पाञ्जलि भूयोजपेदष्टोत्तरं शतम्।
यावदर्घ्यामृतं भानुः समादत्ते निजैः करैः।५६

उनमें कुंकुम, रोचना,राजी, रक्त, चन्दन, वैणव, करवीर, जपा, शाली, कुश, श्यामा तन्डुलों का निक्षेप कर देवे। उस जल में भानु के साथ एकता का चिन्तन करना चाहिये। उसमें कहे हुये लक्षणों वाले भास्कर का अङ्गों के सहित अर्चन करना चाहिये।५१-५२। विधान का ज्ञाता तथा गन्ध-पुष्प और नैवेद्य आदि से अर्चन करे। उसको ढककर भली भाँति एक सौ आठ बार मन्त्र जप करना चाहिए।५.। फिर गन्धादिके द्वारा पूजनकरके घुटनोंसे पृथ्वीपर स्थित होवे। मस्तक तक उसका उद्धार करके व्योम में सावरण दृष्टि रखकर

मूल मन्त्र का आन्तरिक एकता से जप करे। फिर दिनेश्वर के लिये अर्घ्य देवे और अन्तरात्मा में परम प्रसन्न होकर ही देवे।५४-५५ फिर पुष्पाञ्जलि देकर पुनः अष्ठोत्तर शत मन्त्र का जप करना चाहिए जब तक सूर्य अपने करों से अर्घ्य के अमृत का समाधान करें तब तक करे।५६।

तेन तृप्तो दिनमणिर्दद्यादस्मै मनोरथान्।
अर्घदानमिदं पुंसामायुरारोग्यवर्द्धनम्।५७
धनधान्यपशुक्षेत्रपुत्रमित्रकलत्ररम्।
तेजोवीर्ययशः कान्तिविद्याविभवभाग्यदम्।५८
आकाशमग्निदीर्घेन्दुसंयुक्तं भुवनेश्वरी।
सर्गान्वितोभृगुर्भानोस्त्रयक्षरो मनुरोरितः।५९
आधारादिपदाग्रान्तं कण्ठाधारकावधि।
मूर्द्धादिकण्ठपर्यन्त क्रमाद्बीजत्रयं न्यसेत्।
षड् दीर्घवरयुक्तेन मध्ययेनाङ्गक्रिया मता।६०
रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं
समस्तजगतामधिपं भजामि।
हृद्मद्वयाभयवरान् दधतं
कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम्।६१

उससे सन्तृप्त होकर दिनमणि इस लिये मनोरथों को दिया करते हैं। यह अर्घ्यदान पुरुषों को आयु और आरोग्य के बढ़ाने वाला होता है।५७। इससे धन-धान्य, पशु, क्षेत्र, पुत्र, मित्र, कलत्र की प्राप्ति हुआ करती है और यह तेज, वीर्य, यश, क्रान्ति, विद्या, विभव और भाग्य का देनेवाला होता है।५८। अब प्रयोजन तिलक मन्त्र बताया जाताहै— आकाश,हकार, अग्नि, रेफ, दीर्घ बिन्दुके सहित था, भुवनेश्वरी-विसर्गों से समन्वित भृगु-सः, यह भानु का तीन अक्षरों वाला मन्त्र है ऐसा कहा गया है।५९। आधार से आदि लेकर पादोंके अग्रभाग के अन्त तक तथा कन्ठ से आधार की अवधि पर्यन्त-मूर्धा से आदि लेकर कन्ठ पर्यन्त

क्रम से तीनों बीजों का न्यास करना चाहिये। षट् दीर्घस्वर संयुक्त मध्य से अङ्ग क्रिया मानी गयी है ।६०। अब ध्यान कहा जाता है—रक्त अम्बुज के आसन वाले, सम्पूर्ण गुणों का एक महासागर, समस्त जगतों का स्वामी, करकमलों में दो पद्म, वर और अभयदान को धारण करती हुई, मस्तक में माणिक्य रखने वाले, अरुण अङ्ग रुचि से समन्वित, तीन नेत्रों के धारण करने वाले भानुदेव का मैं भजन करता हूँ अर्थात् यजन करता हूँ ।६१।

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रमन्त्राज्येन दशांशतः।
तिलैर्वा मधुरासिक्तै र्जुहुयाद्विजितेन्द्रियः ।६२
पूर्वोक्ते पूजयेत्पीठे विधानेनामुना रविम् ।
प्रथमावृत्तिरङ्गैः स्यात् परा चन्द्रादिभिर्ग्रहैः ।६३
तृतीया लोकपालैः स्याच्चतुर्थी स्यात्तदायुधैः ।
इति संपूज्य निर्माल्यं तेजश्चन्द्राय दीयताम् ।६४
अर्घं प्रागीरितं दद्याद्भानवे संयतेन्द्रियः ।
सोऽपि रत्नं धनं धान्यं पुत्रपौत्रान्पशूंस्तथा ।६५
वस्त्राणि भूषणादीनि दद्यादस्मै न संशयः ।
आकाशमग्निपवनसद्यान्तोऽर्घीशबिन्दुमत् ।६६
मार्त्तण्डभैरवं नाम बीजमेतदुदाहृतम् ।
पुटितं विम्बबीजेन सर्वकामफलप्रदम् ।६७
ठान्तं दहननेत्रेन्दुसहित तदुदीरितम् ।
पञ्चह्रस्वाद्यबीजेन पञ्चमूर्त्ति प्रविन्यसेत् ।६८

बारह लाख मन्त्र का जप करे। इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने वाला जप का दशांश घृत से अथवा मधुर से अक्त तिलों से होम करना चाहिए। इसी विधान से पूर्वमें कथित पीठ में रवि का अभ्यर्चन करे। प्रथम आवृत्ति अंगों से होती है और परा आवृत्ति चन्द्र प्रभृति ग्रहों से होती है ।६२-६३। तीसरी आवृत्ति लोक पालों से की जाती है तथा चौथी आयुत्ति उन लोक पालो के आयुधों से होती है। इस रीति से भली भाँति पूजन करके निर्माल्य और तेज चन्द्र के लिये देवे ।६४।

संयत इन्द्रियों वाला होकर भानु देव के लिये पूर्व में वर्णित अर्घ देना चाहिये । वह भी रत्न, धान्य, पुत्र, पौत्र तथा पशुओं को और वस्त्र और भूषण आदि इसके लिये दे दिया करते हैं—इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है । अब मार्त्तण्ड भैरवी बीज बतलाया जाता है—आकाश-ह:, अग्नि-रेफ, पवन-य:, सद्यान्त-ओ, अधीश-ऊ: जो बिन्दु से संयुत होता है—यह मार्त्तण्ड भैरव नामक बीज कहा गया है। यह बिम्ब वीज के साथ सम्पुटित किये जाने पर सब मनोरथों के फल का प्रदान करने वाला हुआ करता है ।६७। टान्त-ठ:, दहन-रेफ, नेत्र-इ, बिन्दु से सहित होवे अर्थात् अनुस्वार से समन्वित होवे ऐसा यह कहा गया है। पाँच ह्रस्वाद्य बीज से पंच मूर्ति का विन्यास करना चाहिए ।६८।

मध्यमादिकनिष्ठान्तमङ्गुलीषु क्रमादिका: ।
सूर्याख्यो भास्करो भानुस्तता रविदिवाकरौ ।६९
शिरोवदनहृद्गुह्यपाददेशे तु ता: पुन: ।
दीर्घ युक्तेन बीजेन नेत्रान्ताङ्गानि विन्यसेत् ।
व्यापकं मूलबीजेन कुर्वीत तदनन्तरम् ।७०
हेमाम्भोजप्रवालप्रतिमनिजरुचि चारुखट्वाङ्गपद्मे ।
चक्रं शक्ति च पाशं सृणिमतिरुचिरामक्षमालां कपालम् ।
हस्ताम्भोखैर्दधानं त्रिनयनविलसद्वेदवक्त्राभिरामम् ।
मार्त्तण्डं वल्लभार्द्धं फणिमयमुकुट हारदीप्तं भजाम: ।७१
लक्षत्रयं जपुन्मत्री बोजं बिम्बुपुटीकृतम् ।
दशांशं कमलै: फुल्लैर्जुहुयान्मधुरीक्षितै: ।७२
पीठे दीप्तादिभिर्युक्तै:कर्णिकायामुषादिका। ।
पूर्वादिदिक्षु संपूज्य मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।७३

मध्यमा से आदि लेकर कनिष्ठिका के अन्त तक अंगुलियों में क्रम से विन्यास करे । सूर्य्य भास्कर, भानु, रवि, दिवाकर फिरउनको शिर-मुख, हृदय, गुह्य और पादों के देश में दीर्घ युक्त वीज से नेत्रान्त अंगो का विन्यास करे । उसके अनन्तर मूल बीज से व्यापक न्यास करना चाहिए ।६९-७०। अब ध्यान बतलाते हैं—हेम, अम्भोज, प्रवाल के

सदृश अपनी कान्ति वाले—कर कमलों के द्वारा चारु खटाङ्ग, दो पद्म, चक्र, शक्ति पाश, सृणि, अतीव रुचिर अक्षोंकी माला-कपाल को धारण करते हुए तीन नेत्रों से शोभित चार मुखों से अभिराम—वल्लभार्ध फणि मयमुकुट से अन्वित तथा हार से देदीप्यमान भानु का हम भजन करते हैं ।७१। मंत्र को धारण करने वाला पुरुष इस बिम्बपुटीकृत बीज का तीन लाख जप करे । मधुर में उक्षित विकसित कमलों के द्वारा जप का दशांश होम करे । दीप्ता आदि सं से युक्त पीठ में कर्णिका में उषादि का पूर्व आदि दिशाओं में भली भाँति अर्चन करके मूल मंत्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए ।७२-७३।

आवाह्य पूजयेद्देवं वक्ष्यमाणविधानतः ।
सूर्य्यादींश्चतुरोदिक्षु विदिक्ष्वन्यं समर्चयेत् ।७४
अङ्गपूजा यथापूर्वं नेत्रमीशानदिग्गतम् ।
ग्रहानष्टौ ततो बाह्ये लोकपालांस्ततः परम् ।७५
अर्घप्रधानं प्रजपेन्मंत्री मार्त्तण्डभैरवम् ।
इतिसिद्धमनुर्मन्त्री साधयेदिष्टमात्मनः ।७६
शाल्याज्यतिलबिल्वानां लक्षहोमाद्भवेन्निधिः ।
राजवृक्षसमुद्भूतेः पुष्पैर्होमोरमाकरः ।७७
जपाकुसुमहोमेन वशयत्यचिरान्नृपान् ।
मातुलिङ्गफलैर्हुत्वा धनमिष्टं लभेत सः ।७८

आवाहान करके आगे कहे गये विधानसे देव का यजन करे । चारों दिशाओंमें सूर्यादिक का तथा विदिशाओंमें अन्य का समर्चन करे ।७४। पूर्व की तरह अङ्गार्चन करे और ईशान दिशा में स्थित नेत्र का फिर बाह्य में आठ ग्रहों का और उनके आगे लोक पालों का पूजन करे । मंत्रधारी अर्धप्रधान मार्त्तण्ड भैरव का जप करे । इज प्रकार से मंत्र की सिद्धि करनेवाला मंत्रधारी अपने अभीप्सितका साधनकरे ।७५-७६। शाली-आज्य (घृत) तिलों की तथा विल्वों की एक लाख आहुतियों के देने से निधि हो जाया करती है । राज वृक्ष के समुद्भुत पुष्पों से किया

हुआ होम रमाके करने वाला है।७७। जपा के पुष्पों से किया हुआ होम स्वरूप समय में ही मानवों को वश में कर दिया करता है। मातुलिङ्ग के फलों के द्वारा होम करके यह अभीष्ट धन का लाभ किया करता है।७८।

इमं मन्त्रं जपन्मर्त्यः कान्ति पुत्रान्बलं द्युतिम्।
वित्तर्द्धिममितां लक्ष्मीं सौभाग्यमपि साधयेत्।७६
वियदर्द्धेन्दुसहितं तदादिः सर्गसंयुतः।
अजपाख्यो मनुः प्रोक्तोद्वयक्षरः सुरपादपः।८०
ऋषिर्ब्रह्मा स्मृतो देवी गायत्रीच्छन्दं ईरितम्।
देवता जगतामादिः संप्रोक्तो गिरिजारतिः।८१
हंसा षड्दीर्घयुक्तेन कर्यादङ्गक्रियां मनोः।८२
उद्यद्भानुस्फुरियतडिदाकण्रमर्द्धाम्बिकेशम्।
पाशाभीती वरदपरशु सन्दधानं कराग्रैः।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः शोभितं विश्वमूलं।
सौम्याग्नेयं वपुरवतु वश्चन्द्रचूडं त्रिनेम्।८३

इस मंत्र का जप करता हुआ मनुष्य कान्ति, पुत्रों, बल, द्युति, अमित वित्तकी ऋद्धि-लक्ष्मी और सौभाग्य का भी साधन किया करता है।७६। अब आज्या मंत्र बतलाया जाता है–वियत्-हः, रर्धेन्दु-बिन्दु, तदादि-सः सर्ग अर्थात् विसर्गों से संयुत है–यह अजपा नाम वाला मंत्र कहा गया है जो दो अक्षरों का है और कल्प वृक्ष है अर्थात् मनोवाञ्छितों का प्रदाता होता है।८०। इसका ऋषि ब्रह्मा, आदि स्मृति, गायत्री छन्द कहा गया है। उसका देवता जगतों का आदि गिरिजापति कहा गया है।८१। षड् दीर्घ युक्त उससे मंत्र की अङ्ग क्रिया करनी चाहिए।८२। अब ध्यान बतलाया जाता है–उदीयमान भानु कौर स्फुरण करती हुई विद्युल्लता के आकार से संयुत-अर्धाम्बिका के ईश-करों के अग्रभागों के द्वारा पाश, अभय वरदान और परशु को धारण

करते हुए माणिमय दिव्य कल्पों से शोभित, विश्व के मूल, सौम्याग्नेय, तीन नेत्रों से सयुत चन्द्रचूड का वपु आपकी रक्षा करे ।८३।

भानुलक्षं जपेन्मत्रं पायसेन ससर्पिषा ।
दशांश जुहुयात्सम्यक् ततः सिद्धो भवेन्मनुः ।८४
दीप्तादिपूजिते पीठे प्रागुक्ते पूजयेद्विभुम ।
मूर्त्ति मूलेन सङ्कल्प्य यजेदङ्गादिभिः सह ।८५
क्रतुं वसुं नरवरौ दिग्दलेषु विदिक्ष्वथ ।
अर्चयेदृतजां गोजामब्जाख्यामद्रिजां पुनः ।८६
लोकेश्वरांस्तदस्त्राणि पूजयेदेवमन्वहम् ।
अर्घं च विधिवद्द्यात्प्राक् प्रोक्तेनैव वर्त्मना ।८७
मन्त्राद्यमातृकाद्यपूर्णकुम्भं निधाय तम् ।
पिधाय वामहस्तेन न्यस्तमन्त्रेण संयतः ।८८

इस मन्त्र का बारह लाख जप करना चाहिए घृत से संयुत पायस से जप का दशांश होम करे फिर यह मन्त्र सिद्ध होजाया करता है ।८४ पूर्व में कथित दीप्त आदि से पूजित पीठ में विभु का अर्चन करे । मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करके फिर अंगादि के साथ यजन करना चाहिए।८५। कृतु वसु और नरवरों का यजन करे । दिशाओं के दलों में और विदिशाओं में ऋतजा-गोजा-अब्जा और अद्रिजा का यजन करना चाहिये ।८६। प्रति दिन लोकेशों का तथा उसके आयुधोंका इसी भाँति पूजन करे । पूर्व में वर्णित विधान से ही विधि के साथ अर्थ देना चाहिए ।८७। मन्त्राद्य मातृका पद्म सम्पूर्ण उस कुम्भ को रखकर वाम कर से ढककर न्यास किये हुए मन्त्र द्वारा संयत होकर करे ।८८।

अष्टोत्तरशतं मन्त्रं जपेत्तोयं सुधामयम् ।
स्मृत्वा तेनाभिषिञ्चेद्यं स भवेद्विगतामयः ।८९
आयुरारोग्यविकवानमिताल्लभते नरः ।
अनेनैव विधानेन विषार्त्तोनिर्विषो भवेत् ।९०

इन्दुभ्यां बिगलत्सुधापरिचित मन्त्रान्त्यबीज ततः ।
प्राच्ये तत्परमामृतार्द्रशशिना ससिक्तमाद्यं स्मरन् ।
मन्त्री मन्त्रमिमं जपेद्विषगदोन्मादापमृत्पुज्वरान् ।
जित्वा वर्षशतं विशिष्टविभवोजीगेत्सुखं बन्धुभिः ।६१
व्याहृतित्रयमग्निः स्ताञ्जातवेद इहावह ।
सर्वकर्माणि शंभाष्य साधयाग्निप्रियां ततः ।६२
ताराद्योय मनुः प्रोक्तः पञ्चविंशतिवर्णवान् ।
ऋषिर्भृगुर्भवेच्छन्दो गायत्रं देवताऽनलः ।६३

एक सौ आठ बार मन्त्र का जाप करे और उस जल को सुधा से परिपूर्ण स्मरण करके जिसका उससे अभिषिंचन करे वह विगत आमय (रोग) वाला हो जाया करता है।८६। मनुष्य आयु-आरोग्य और अमित विभवों को लाभ किया करता है। इसी विधान के करने से विष से आर्त्त मानव निर्विष हो जाया करता है।६०। इन्दुओं से गल कर गिरने वाली सुधा से परिचित फिर मन्त्र का अन्तिम बीज-प्राच्य में उस पर अमृत में अर्द्ध चन्द्र से संसिक्त आद्य का स्मरण करता हुआ मन्त्रधारी इस मन्त्र का जप करे तो विषगद-उन्माद-अपा मृत्यु-ज्वरों को जीतकर विशिष्ट वैभव वाला होते हुए बन्धुओं के साथ सुख पूर्वक सौ वर्ष तक जीवित रहा करता है।६१। व्याहृतियों का जप और अग्नि फिर जात-वेद इहावहा। इसके पीछे 'सर्व कर्माणि' यह कहे। फिर 'साधय,—यह पद कहकर स्वाहा' कहे। इसके आदि में प्रणव होता है–यह ऐसा मन्त्र कहा गया है जिसमें पच्चीस वर्ण होते हैं। इसका ऋषि भृगु—छन्द गायत्र और इसका देवता अनल कहा गया है।६२-६३।

विभक्तैः पञ्चभिः षड्भिश्चतुर्भिः पञ्चभिस्त्रिभिः ।
द्वाभ्यामङ्गक्रिया प्रोक्ता वर्णैर्मूलमनोः क्रमात् ।६४
अंसामक्तसुवर्णमाल्यमरुणस्रक्चन्दनालङ्कृतं ।
ज्वालापुञ्जजटाकलापविलसन्मौलि सुशुक्लांशुकम् ।

शक्तिस्वस्तिकदर्भमुष्टिकजपस्रक्स्रुवाभीवरान्
दोर्भिर्विभ्रतमञ्चितत्रिनयन रक्ताभमग्नि भजे ।९५
गुरोर्लब्धमनुर्मन्त्री चतुर्दश्यामुपोषितः ।
जपेद्भानुसहस्राणि शुद्धाचारोजितेन्द्रियः ।९६
अमावास्यादिने विप्राम् भोजतेन्मधुरोत्तरैः ।
भक्ष्यभोज्यैर्यथाशक्ति दद्यात्तैभ्योऽथदक्षिणाम् ।९७
भुक्त्वास्वयं समानीय होमद्रव्याणि शोधयेत् ।
अपरं दिनमारभ्यहोमं कुर्यादतन्द्रितः ।९८

मूल मंत्र के क्रम से विभक्त पाँच–छँ–चार–पाँच–तीन–दो से अङ्ग क्रिया कही गयी है ।९४। अब ध्यान का क्रम कहा जाता है–अंसामक्त सुवर्णमाल्य से संयुत—अरुण सृक् और चन्दन से समलकृत ज्वाला के पुंज के सदृश जटाकलाप से शोभित मस्तक वाले शुक्ल वस्त्रधारी, करों, में शक्ति, स्वस्तिक, दर्भ मुष्टि, जप, माला-स्रुक्, स्रुव्, अभय और वरदानों को धारण किये हुए, तीन नेत्रों से आंचित-रक्त आभा वाले अग्नि देव का सेवन करता हूँ ।९५। मंत्र के धारण करने वाला पुरुष गुरुदेव से मंत्र का लाभ करके चतुर्दशी में उपवास करे और शुद्ध आचार वाला तथा इन्द्रियों को जीतने वाला बारह सहस्र मंत्र का जप करे ।९६। अमावस्या के दिन में मधुरोत्तर भक्ष्यों तथा भोज्यों से विप्रों को भोजन करावे और अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा देनी चाहिए ।९७। स्वयं भोजन करके होम द्रव्यों को लाकर शोधन करे । दूसरे दिन में अशन करके अतन्द्रित होकर होम करना चाहिये ।९८।

क्रमाद्वटससिद्व्रीहितिलराजीहविर्घृतैः ।
प्रत्येकमष्टोत्तरशतं जुहुयाहिनशा सुधीः ।९९
दशाहमेवं निर्वर्त्य विधानेन विधानविन् ।
दत्त्वा पूर्णाहुतिं सम्यगेकादश्या द्विजोत्तमान् ।१००

सम्पूज्य तर्पयेद्द्विजैर्यथा विभवमादरात् ।
गुरवे दक्षिणां दद्यादरुणां गां पयस्विनीम् ।१०१
वासांसि धरधान्यानि दत्वा सम्प्रीणयेत्पुनः ।
स्वमन्डलान्तं प्रजयेत्पीठं सनवशक्तिकम् ।१०२
पीता श्वेताऽरुणा कृष्णा धूम्रा तीव्रा स्फुलिङ्गिनी ।
रुचिरज्वालिनी प्रोक्ता कृशानोर्नव शक्तयः ।१०३

सुधी पुरुष क्रम से वट की समिधा, व्रीहि, तिल, राजी, हवि, धृत से दिन में ही प्रत्येक का अष्टोत्तर शत होम करे ।९९। विधान के ज्ञाता को चाहिये कि विधि—विधान से दश दिन पर्यन्त इसको करके एकादशी में भलीभाँति पूर्णाहुति देकर द्विजोत्तमो का पूजन करके श्रेष्ठ विप्रों को आदर से विभव के अनुसार तृप्त करना चाहिए ।१००। फिर अपने श्री गुरुदेव के लिए दक्षिणा तथा अरुण वर्ण वाली पयस्विनी गौ, वस्त्र, धनधान्य देकर उनकी प्रीणित करे । अपने मन्डल के अन्दर नौशक्तियों से समन्वित पीठ का अर्चन करना चाहिए ।१०१-१०२। अब उन नौ शक्तियों के कर्मोंका परिगणन किया जाता हैं—पीता, श्वेता, अरुणा, कृष्णों, धूम्रा, तीवा, स्फुलिङ्गिनी, रुचिर ज्वालिनी और कृशालु—ये नौ शक्तियाँ होती है ।१०३।

स्वबीजेनासनं दद्यान्मूर्तिमूलेन कल्पयेत् ।
तत्र सम्पूजयेंद्वह्नि विधिना प्रोक्तलक्षणम् ।१०४
अङ्गपूजां पुरा कृत्वा मूर्त्तीरष्टौ दलष्विमाः ।
जातवेदा सप्तजिह्वाहव्यवाहनसंज्ञकः ।१०५
अश्वोदरजसंज्ञोन्यः पुनर्वैश्वानराह्वयः ।
कौमारतेजाः स्याद्विश्वमुखोदेवमुखः परः ।१०६
अच्यर्ात्स्वस्तिकशक्तिभ्यां विराजितकराम्वुजाः ।
लोकेशानर्चयेद्बाह्ये वज्राद्यायुधसंयुतान् ।१०७
इतिसम्पूज्येग्नित्यं जपेत्माग्रं सहस्रकम् ।
जायते वत्सरादर्वाग्धनधान्यसमृद्धिमान् ।१०८

साज्यमन्न प्रजुहुयाद्वत्सराल्लभते श्रियम् ।
कुसुमैर्ब्रह्मवृक्षस्य दधिक्षौघ्.तप्लुतैः ।१०६
करवीरप्रसूनैर्वा मण्डलात्स्यात्समृद्धिमान् ।
षण्मासं कपिलाज्येन जुहुयाद्वत्सरान्तरे ।११०
तस्य संजायते लक्ष्मीः कीर्तिस्त्रैलोक्यवन्दिता ।
शालिभिर्जुहुयान्नित्यं विधिनाष्टोत्तरशतम् ।१११

अपने बीज के द्वारा आसन समर्पित करे और मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए। इसके अनन्तर कहे हुए लक्षण वाले वह्नि का विधि के साथ पूजन करना चाहिये ।१०४। पहिले अङ्ग पूजा करके दलों में इस अष्ट भूर्तियों का यजन करे। जात वेदा–सप्तजिह्वा—हव्य वाहन— यश्वोदरज–वैश्वानर–कौमार तेजा—विश्य मुख—देव मुख स्वस्तिक और शक्ति के सहित करों में अम्बुज रक्खे हुए अर्चन करना चाहिए । बाहिर में लोकेशों का जो वज्रायुधों के संयुत होवें अर्चन करे। इस प्रकार से नित्य ही एक सहस्र आठ बार पूजन करना चाहिए इसका यह प्रभाव है कि एक वर्ण के पहिले ही धन-धान्य की समृद्धि वाला हो जाता है ।१०५-१०८। आज्य के सहित अन्न का हवन करना चाहिए। इसमें एक वर्ण में श्री को लाभ क्रिया करता है। ब्रह्म वृक्ष के पुष्पों से जो दही और शहद और घृतसे आलपुत करके होम करे अथवा करवीर के पुष्पों से होम करे तो मन्डल में समद्धिमान् हो जाता है। छै मास तक कपिला गौ के घृत से होम करे तो वर्णके अन्दर ही उसको लक्ष्मी और त्रैलोक्य से वन्दित कीर्त्ति हो जाया करती है। शाली से नित्य विधि से एक सौ आठ बार हवन करना चाहिए ।१०९-१११।

व्रीहिगोमहिषान्गाद्यैर्भवनं तस्य पूर्यते ।
तिलहोमेन महतीं लक्ष्मीमाप्नोति मानवः ११२
पलाशविल्वखदिरशमीदुग्धमहीरुहाम् ।
विकंकताकारावधयोः समिद्भिः करवीरजैः ।११३

प्रसूनैः कुमुदैः पद्मैः कह्लारैररुणोत्पलैः ।
जातीप्रसूनैर्दूर्वाभिर्नित्यमष्टोत्तरं शतम् ।११४
एकेन जुहुयान्मन्त्री प्रतिपत्स्वथ वा सुधीः ।
साधयेदखिलान्कामान् षण्मासान्नत्र संशयः ।११५
उत्तिष्ठ पुरुष श्र्याद्धरिपिङ्गलतत्परम् ।
लोहिताक्षारपदं देहि मेददापयठद्वयम् ।११६
चतुर्विंशत्यक्षरात्मा समृद्धिमनुरीरितः ।
ऋष्यादयः पुरा प्रोक्ताः षड्भूतकरणैस्त्रिभिः ।११७
चतुर्भिर्युगलेनार्णैर्मूलमन्त्रसमुद्भवैः ।
विदधीत षडङ्गानि जातियुक्तानि मन्त्रवित् ।११८

उसका भवन व्रीहि गो—महिषी अन्य आदि से भर जाया करता है । तिलों से होम करने से बहुत बड़ी लक्ष्मीको मानव प्राप्तकर लिया करता है ।११२। पलाश—खादिर—शमी और दूध वाले वृक्ष—विकंकतक, अराबध को तथा करवीर की समिधाओं से कुमुद पद्म-कल्हार—अरुणोत्पल—जाती पुष्प और दूर्वा से तथा नित्य ही एक सौ आठ हवन करे ।११३-११४। मन्त्रधारी से हवन करे अथवा सुधी प्रतिपदा से होम करे । इससे होता सम्पूर्ण मनोरथों का साधन कर लेता है और छँ मासों के अन्दर ही सब साधन बन जाता है । इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।११५। अब तुरगगग्निमन्त्रको बताया जाता है—उतिष्ठ पुरुष-बोले और इसके पीछे हरि पिङ्गल—यह कहे लोहिताक्षर पद कहकर 'देहि में ददापय और दोठकार कहे । यह चौवीस अक्षरों वाला समृद्धि मन्त्र कहा गया है । इसके ऋषि पहिले हीं कह दिये गये हैं । तीन षड्भूत करणों से—चारों से-युगल अर्णो से तथा मूल मन्त्र समुद्भूतों से छँ अङ्गों को मन्त्र वेत्ता जाति युक्त करें । ।११६–११८।

स्वर्णश्वत्थविनिगतं हुतवहं सिन्दूरपुञ्जप्रभं ।
ज्वालाभिर्निचितांबरोमनिचय कन्त्या जगन्मोहनम् ।

अश्वाकारमनर्घरत्नविलसद्भूषालसत्कन्धरं
रत्नैरिन्द्रियनिर्गतैर्वसुमतीमाच्छादयन्तं स्मरेत् ।११९
लक्षं मन्तं जपेदेनं पयोऽन्नेन ससर्पिषा ।
दशांशं जुहुयाद्वह्नौ तुरगाग्निमनस्मरन् ।१२०
पीठं प्रागीपितेऽभ्यर्च्य दङ्गैस्तन्मूर्त्तिभिः सह ।
आशापालैस्तदीयास्त्रैरर्चयैद्धव्यवाहनम् ।१२१
प्रातः स्नानरतो मन्त्री सहस्रं योजपेन्मनुम् ।
जित्वा रोगान्सुखं जीवेत् श्रिया वर्षशतं नरः ।१२२
हृत्प्रमाणे जले स्थित्वा भानमालोक्य संयतः ।
चतुः सहस्रं प्रजपेन्नित्यं संवत्सरावधि ।१२३

अब ध्यान कहते हैं—सुवर्ण अश्वत्थ से निकले हुये सिन्दूर के पुंज के समान प्रभा से युक्त, ज्वालाओं से अङ्ग रोगो के निश्चित होने वाले कान्ति के द्वारा जगत को मोहने वाले, अश्व के आकार से अन्वित, बहुमूल्य रत्नों से शोभित कन्धरा वाले, इन्द्रियों से निर्गत रत्नों से वसु, मती को उदित करते हुए हुतवह का स्मरण करना चाहिये ।११९। इस मंत्र का एक लाख जप करे। घृत के सहित पद अन्न से जप का दशांश वह्नि में होम करे और तुरगाग्नि का स्मरण करता रहे ।१२०। पूर्व मे कहे हुए पीठ पर अङ्गों और मूर्त्तियों के सहित अर्चन करना चाहिए। दिक्पालों और उनके आयुधों के साथ हव्य वाहन का अर्चन करे ।१२१। जो मंत्रधारी स्नानरत होकर प्रातःकाल में इस मन्त्र को एक सहस्र जप करे वह मानव रोगों पर विजय पाकर सुख पूर्वक श्री के साथ सौ वर्ष तक जीवित रहा करती है ।१२२। हृदय तक प्रमाण वाले जल में स्थित होकर भानुदेव का दर्शन करके संयत रहे और एक वर्ष तक नित्य चार हजार जप करे ।१२३।

अपमृत्युभयं रोगं कृत्यादारिद्र्यसम्भवान् ।
क्लेशान्निर्ज्जित्य तेजस्वी जीवेद्वर्षशतं पुनः ।१२४

कृत्तिकायां प्रतिपदि शालिहोमो धनप्रदः ।
दध्ना शमोसद्भिर्वा प्रतिपत्सु भवेद्धनम् ।१२५
इष्टावाप्तिर्भवेदाज्यैः पद्मैर्ग्राममवाप्नुयात् ।
तिलैर्ज्योतिष्मतीभूतैरिपुराज्यं जयेन्नृपः ।१२६
अश्वत्थसमिधोमेषीघृताक्ता जुहुयान्नरः ।
कन्यामिष्टामवाप्नोति सापि तं वरममाप्नुयात् ।१२७
शुद्धाज्येन कृतो होमो ज्वरनाशकरः स्मृतः ।
सप्ताहं जुहुयान्मन्त्री बन्धूककुसुमैः शुभैः ।१२८
साग्रं सहस्रमचिरान्महतो श्रियमाप्नुयात् (मश्नुते) ।
मासं क्षीरेण गव्येन क्षीराहारी जितेन्द्रियः ।१२९
सहस्रं डुहुयान्मत्री सम्पदामाश्रयोभवेत् ।१३०

वह मनुष्य अपमृत्यु का भय-रोग-कृत्या दारिद्रय से होने वाले कष्टों को जीतकर तेजस्वी सौ वर्ष तक जीवित रहा करता है।१२४। कृत्तिका में प्रतिपदा में शाक्तियों के होम जल के प्रदान करने वाला होता है। दधि से अथवा शमी की समिधाओं से प्रतिपदाओं में धन होता है।१२३। आज्य से हवन करके अभोष्ट को प्राप्ति किया करता है और पद्मों से होम करके ग्राम को प्राप्त किया करता है। नित्य तिलों से और ज्योतिष्मती से हवन करने से शत्रु के राज्य को जीत लेता है।१२६। मनुष्य अश्वत्थ की समिधाओं से भेड़ के घृत में अक्त करके होम करे। इससे अभीष्ट कन्या को पाता है और कन्या भी अभीप्सित वरको प्राप्त कर लिया करती है।१२७। शुद्धघृत से किया हुआ ज्वर का नाश करने वाला कहा गया है। मन्त्रधारी शुभ बन्धूक के पुष्पों से एक सप्ताह तक होम करे।१२८। एक सहस्र आठ बार हवन करे तो महती (बहुत बड़ी) श्री को प्राप्त कर लेता है। एक मास तक गव्यक्षीर से क्षीर के आहार वाला जितेन्द्रिय रहे और मन्त्रधारी एक सहस्र का होम करे तो वह सम्पदाओं का आश्रय होता है।१२९।१३०।

आज्याक्तदूर्वाहोमेन जीवेद्वर्षशतं नरः ।
अष्टोत्तरशतं नित्यं हविषा मृगमुद्रया ।१३१
जुह्वञ्जीजायते लक्ष्मीर्धनधान्यसमृद्धिदा ।
प्रतिमासं प्रतिपदि जुहुयादयुतं घृतैः ।१३२
श्रीभवेत्महती तत्र षण्मासादनपायिनी ।
दरुणैरुत्पलैः फुल्लेर्मधुरत्रयसंयुतैः ।१३३
जुहुयाद्वत्सरार्द्धं यः स भवेदिन्दिरापतिः ।
अरुणाब्जैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयादन्वहं सुधीः ।१३४
सहस्रं वत्सरार्द्धेन भवेद्भूमिपुरन्दरः ।
वत्सर जुह्वतस्तु स्याल्लक्ष्मीरिन्द्रेण वाञ्छिता ।१३५
जुहुयादमृताखण्डैः पयोक्तैः सप्तवासरम् ।
त्रिसहस्रं प्रतिदिनं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।१३६
कृत्याद्रोहज्वरोन्मादरोगान् जित्वा निरन्तरम् ।
जीवेद्वर्षशतं भूत्वा तेजसा भास्करोपमः ।१३७
करवीर जपाबिल्वपलाशनृपभूरुहाम् ।
प्रसूनैः कुमुदैः फुल्लैः कुरण्टैर्जातिसम्भवैः ।१३८
पुष्पैर्हुत्वा त्रिमध्वक्तैर्मन्त्री प्रतिपद प्रति ।
आप्नुयान्महतीं लक्ष्मीं वत्सराद्वाञ्छिताधिकाम् ।१३९

मानव आज्य से अक्त दूर्वा के होम से सौ वर्ष तक जीवित रहा करता है। मृगमुद्रा से हवि के द्वारा नित्य ही एक सौ आठ आहुतियाँ देवे तो धन धान्य की समृद्धि देने वाली लक्ष्मी हो जाती। प्रतिमास में प्रतिपदा में घृत से दश हजार आहुतियाँ देवे ।१३१-१३२। इससे छै मासों में बहुत बड़ी अनपायिनी श्री होती है। अरुण विकसित उत्पलों से तीनों मधुरों में प्लुत करके जो होम करें तो उससे वह आधे वर्ष में ही इन्दिरा का पति हो जाया करता है। तीन मधुरों में अक्त अरुण उत्पलों से सुधी प्रतिदिन होम करे और एक सहस्र आहुतियाँ देवे तो वह आधे वर्ष से भूमि का इन्द्र हो जाया करता है। एक

वर्ष तक होम करने वाले के पाप इन्द्र के द्वारा वाञ्छित लक्ष्मी आती है ।१३०-१३५। पय में अक्त अमृता के खन्डों से सात वार में हवन करे और मन्त्र का ज्ञाता पुरुष जितेन्द्रिय रहकर तीन सहस्र प्रतिदिन आहुतियाँ देवें तो वह पुरुष कृत्या के द्रोह-ज्वर-उन्माद रोगों पर विजय पाकर तेज से भास्कर के समान होकर निरन्तर सौ वर्ष तक जीता है । ।१३६-१३७। करवीर-जपा-विल्व-पलाश और राजवृक्षों के प्रसूनों से तीन मधुरों में अक्त करके मन्त्रधारी प्रतिपद के प्रति होम करे तो एक वर्ष में अभीप्सित से भी अधिक बड़ी लक्ष्मी को प्राप्त किया करता है । १३८-१३९।

आदाय तण्डुलं प्रस्थं निर्मलं साधुशोधितम् ।
गोदुग्धेन हविः कृत्वा केवलं तेन कल्पयेत् ।१४०
आज्याक्तं तत्समादाय पूजिते हव्यवाहने ।
गन्धपुष्पादिभिः सम्यग्जपित्वाष्टोत्तरं शतम् ।१४१
जुहुयात्प्रतिपत्स्वग्नि ध्यात्वा तुरगविग्रहम् ।
जायते वत्सरादर्वाग्लक्ष्मीस्त्रैलोक्यमोहिनी ।१४२
मन्त्रेणानेन सञ्जप्तां वचां खादेद्दिनागमे ।
भारती निवसेत्तस्य मुखाम्भोजेऽतिनिश्चला ।१४३
अष्टोत्तारशतं जप्तं जल प्रातः पिबेन्नरः ।
जठराग्निर्ज्वलेत्तस्य घृतेनेव हुताशनः ।१४४

भली-भाँति शोभित निर्मल तन्डुल प्रस्थ का समादान करके गायके दूध से केवल हवि बनाकर के उससे कल्पित करे आज्य को लाकर गन्ध पुष्पादि के द्वारा पूजित हव्य वाहन में भली-भाँति एक सौ आठ वार जप करके प्रतिपदाओं में तुरग (अश्व) के विग्रह वाले अग्नि का ध्यान करके होम करे तो उसके समीप में एक वर्ष के पहले ही तीनों लोकों को मोहन करने वाली लक्ष्मी हो जाया करती है ।१४०-१४२। इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित वच को दिन के आगम में अर्थात् प्रातः काल में भक्षण करे तो उसके मुख में अतीव निश्चला होकर भारती

निवास किया करती ।१४३। एक सौ आठ वार जप किये हुए जल को प्रात: काल में पीवे तो धृत ले अग्नि की ही भाँति उसकी जठराग्नि जला करती है ।१४४।

कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलं प्रागुदीरितम् ।
कलशान्नव कल्याणान्स्थापयेत्प्रोक्तवर्त्मना ।१४५
क्षीरवृक्षत्वगुद्भूतैः क्वाथैस्तान्परयेत्क्रमात् ।
वस्त्रादिभिरलङ्कृत्य नवरत्नानि निः क्षिपेत् ।१४६
मध्ये सम्पूज्येदग्निं मूर्तीरष्टौदिशं क्रमात् ।
कुम्भेषु गन्धपुष्पाद्यैर्धूपदीपर्मनोरमैः ।१४७
स्पृष्ट्वाः जपेत्ततःकुम्भान् मंत्रमष्टोत्तरं शतम् ।
अभिषिञ्चेत्ततः साध्यं विनीत दत्तदक्षिणम् ।१४८
ज्वरग्रह महारोगदारिद्रयादीन्विजित्य सः ।
जावेद्वर्षशतं सम्यगभिषिक्तः श्रिया सह् ।१४९

पूर्व में वर्णित नव पदों के स्वरूप वाले मण्डल की रचना करके वहाँ पर नौ मङ्गल कलशों को कथित मार्ग के द्वारा स्थापित करना चाहिये ।१४५। फिर दूध वाले वृक्षों के वल्कल से बनाये हुये क्वाथ से क्रम से उनको भर देवे । फिर वस्त्र आदि से उनको भूषित करके उनमें नौ रत्नों का नि:क्षेप करना चाहिये ।१४६। मध्य में अग्नि का पूजन करे और क्रम से आठों दिशाओं में आठ मूर्त्तियों का गन्ध पुष्पादि के द्वारा कुम्भों में मनोरम धूप-दीपों के द्वारा पूजन करे । इसके अनन्तर उन कुम्भों का स्पर्श करके अष्टोत्तर शत मन्त्र का जप करना चाहिये । फिर परम विनीत दक्षिणा देने वाले साध्य का अभिषिंचन करे ।१४७। ।१४८। वह पुरुष ज्वर—ग्रह–महारोग और दरिद्रता आदि पर विजय प्राप्त करके श्री के सहित अभिषिक्त हुआ भली-भांति एक सौ वर्ष तक जीवित रहा करता है ।१४९।

———

त्रयोदश पटल

।। विष्णु प्रकरण ।।

अथ वक्ष्ये महामन्त्रान्विष्णोः सर्वार्थसाधकान् ।
यस्य संस्मरणात् सन्तो भवाब्धेः पारमाश्रितः ।१
तारं नमः पदं ब्र्यान्तरौ दीर्घसमन्वितौ ।
पावनोणाय मन्त्रो यं प्रोक्तो वस्वक्षरान्वितः ।२
साध्यनारायणः प्रोक्तो मुनिश्छन्दउदाहृतम् ।
मन्त्रस्ये देवी गायत्री देवता विष्णुरव्ययः ।३
क्रुद्धोल्काय हृदाख्यातं महोल्काय शिरः स्मृतम् ।
बीरोल्काय शिखा प्रोक्ता द्युल्काय कवचं स्मृतम् ।४
सहस्रोल्कायास्त्रमुक्तमङ्गक्लृप्तिरियं सता ।
भूयोवर्णैर्मनोःषड्भिः षडङ्गानि समाचरेत् ५

अब क्रम से प्राप्त हुए विष्णु देव के मन्त्रों को बतलाया जाता है- इसके अनन्तर सभी अर्थों के साधक भगवान् विष्णु के मन्त्रों को बतलाया जायेगा, जिन भगवान् विष्णु के केवल संस्मरण करने ही से सन्त गण इस संसार महासागर से पार हो गये थे ।१। मन्त्र का उद्धार कहा जाता है –तार–ओंकार, दीर्घ आकार से समन्वित नकार और रेफ- नमः—यह पद और यवनः—यकार—इस रीति से यह आठ अक्षरों वाला मन्त्र कहा गया है ।२। इसका साध्य नारायण और छन्द मुनि कहा गया है । इस यन्त्र की देवी गायत्री है और इसका देवता अव्यय भगवान् विष्णु है ।३। इसका क्रुद्धोल्काय हृदय कहा गया है तथा महोल्काय शिर बताया गया है । वीरोल्काय शिखा है और उल्काय कवच कहा है ।४। सहस्रोल्काय अस्त्र कहा गया है यह अङ्गक्लृप्ति

मानी गयी है। फिर मंत्र के छः वर्णों से छः अङ्गों का समाचरण करना चाहिये ।५।

अवशिष्टौ पुनर्वर्णौ विन्यसेत्कुक्षिपृष्ठयोः ।
वद्धदिक चक्रमन्त्रेण मन्त्रवर्णास्विनौ न्यसेत् ।६।
आधारे हृदये वक्त्रो दोःपादमूलेसु नासिके ।
कण्ठे नाभौ हृदि कुचे पार्श्वपृष्ठेषु तत्परम् ।७
मूर्द्धास्य नेत्रश्रवणघ्राणेषु तदनन्तरम् ।
दोःपादसन्ध्यंगुलिषु धातुप्राणेषु हृत्स्थले ।८
मूर्द्धेक्षणास्यहृत्कुक्षिसोरुजंङघापदद्वये ।
एकैकशोन्यरेद्वर्णान् गण्डांसोरुपदेषु च ।९
चक्रशङ्खगदाम्भोजपदेष्ववहितो न्यसेत् ।१०

अवशिष्ट वर्णों को फिर कुक्षि और पृष्ठों में विन्यस्त करे। बद्धदिक् चक्र मन्त्र के द्वारा मन्त्र के वर्णों का स्तनों में न्यास करे ।६। इसके पीछे आधार, हृदय, मुख, बाहु और पदों के मूल, नासिका, कन्ठ, नाभि, हृदय, कुच, पार्श्व पृष्ट में न्यास करना चाहिये। इसके अनन्तर मूर्धा, मुख, नेत्र, श्रवण, घ्राण में न्यास करना चाहिये। बाहु, पाद, सन्धि, अंगुलियों में, धातु प्राणों में, हृदय स्थल में, मूर्धा, ईक्षण, मुख, हृदय, कुक्षि, ऊरु दोनों जाँघो में और पादों में एक-एक वर्णों का गन्ड--अंस और पदों में न्यास करना चाहिए ।७-८-९। शंख, चक्र, गदा, और अम्भोज पदों में अवहित होकर न्यास करे ।१०।

अष्टार्णोष्टप्रकृत्यात्या ज्ञेयोऽसौ चतुरात्मनाम् ।
संयोगाध्सूरिभिः प्रोक्तो विशिष्टो द्वादशाक्षरः ।
अतस्तन्मन्त्रवर्णाद्या द्वादशस्वरसंयुताः ।११
द्वादशादित्यसहिता मूर्त्तीर्द्वादश विन्यसेत् ।
केशवाद्यःक्रमादुदेहे वक्ष्यमाणविधानतः ।१२

ललाटे केशवं धात्रा कुक्षौ नारायणं पुनः
अर्यम्णाहृदि मन्त्रेण माधवं कण्ठदेशतः ।१३
वरुणेन च गोविन्द पुनर्दक्षिणपार्श्व कं ।
अंशुना विष्णुमंसस्थ भगेन मधुसूदनम् ।१४
गल विवस्वता युक्तं त्रिविक्रममनन्तरम् ।
वामपार्श्वस्थमिन्द्रेण वामनाख्यमथांसके ।१५
पुष्टया श्रीधरनामानं गले पर्जन्यसंयुतम् ।
हृषीकेशाह्वय पृष्ठे पद्मनाभं ततः परम् ।१६
त्वष्ट्रा दामोदरं पश्चाद्विष्णुना ककुदि न्यसेत् ।
द्वादशार्णं महामन्त्रं ततो मूर्द्ध्नि प्रविन्यसेत् ।१७

आठ वर्णों वाले स्वरूप से समन्वित आठ प्रकृतियों के स्वरूप वाला यह जानना चाहिये । चतुरात्माओं के संयोग से यह सूरियों के द्वारा विशिष्ट बारह अक्षरों वाला कहा गया है । अतएव उन मंत्र के वर्ण आदि द्वादश स्वरों से संयुत होते हैं ।११। बारह आदित्यों के सहित द्वादश मूर्त्तियों का विन्यास करना चाहिये । वे केशव आदि क्रम से हैं उनको क्रम से देह में आगे कहे जाने वाले विधान से ही करना चाहिये ।१२। धाता के सहित केशव का ललाट में विन्यास करे । यथा—ॐ केशव धातृभ्यां नमः—इति ललाटे । फिर कुक्षि में अर्यमा के साथ नारायण का करे । मंत्र के द्वारा हृदय में कण्ठ देश से माधव का विन्यास करना चाहिये ।१३। पुनः वरुण से युक्त गोविन्द का दक्षिण पार्श्व में करे । अंशु से अंस में विराजमान विष्णु का तथा भग से युक्त मधुसूदन का विन्यास करे ।१४। गलेमें विवस्थान्‌से युक्त त्रिविक्रम का करे । इसके अनन्तर इन्द्र के सहित वाम पार्श्व में संस्थित वामन नाम वाले का न्यास करना चाहिये । इसके उपरान्त अंस (कंधा) में पुष्टि से युक्त श्रीधर का तथा गले में पर्जन्य से समन्वित हृषीकेश का और इससे आगे पृष्ठ में पद्म नाम का न्यास करे ।१५-१६। त्वष्टा के

संयुत दामोदरका और पीछे विष्णुके सहित का ककुद् में विन्यास करना चाहिए ।१७।

पुनः किरीटमन्त्रेण व्यापकं विन्यसेत्ततः ।
ब्रूयात्किरीटकेयूरहारं मकरकुण्डजम् ।१८
शंखचक्रगदाऽम्भोजहस्तं पीताम्बरं धरम् ।
श्रीवत्साङ्कियवक्षोऽन्ते स्थलशब्दमुदीरयेत् ।१९
श्रीभूमिसहितं स्वात्मज्योतिर्द्वयमुदा हृतम् ।
पश्चाद्दीप्तिकरायेति सहस्रादित्यतेजसे ।२०
नमोऽन्तः प्रणवाद्योऽयं किरीटमनुरीरित ।
एवं न्यासन्तनौ कृत्वा ध्यायेन्नारायणं परम् ।२१
उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शंखं गदां पङ्कजं ।
चक्रं विभ्रतमिन्दिरावसुमती संशोभि पार्श्वद्वयम् ।
केयूराङ्कदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभौ ।
द्दीप्त विश्वधरं स्ववक्षसि लसत्श्रीवत्सचित्हं भजे ।२२

फिर किरीट मन्त्र के द्वारा व्यापक विन्यास करे । अब उस किरीष मन्त्र का उद्धार बतलाया जाता है—किरीट केयूर हार और मकर कुन्डल वाले—शंख चक्र, गदा, अम्भस्त और पीताम्वरं धरं—कहे । श्रीवत्साङ्कित वक्ष अन्त में स्थल शब्द को कहे । श्रीज्योति सहित और स्वात्म ज्लोतिर्द्धयं कहे । इसके पीछे दीप्ति कराया और सहस्रादिय तेजस–यह बोले । इसके आदि में प्रणव है और अन्त में 'नमः–यह पद होता–यह किरीट मन्त्र कहा गया है । इस रीति से शरीर में न्यास करने पर नारायण का न्यास करना चाहिए ।१८। ।१९-२०-२१। अब ध्यान बतलाते हैं–उदीय मान करोड़ों सूर्योकी भामा से अन्वित–निरन्तर शंख–गदा–पंकज और चक्र से शोभित–दोनों पार्श्वों में इन्दिरा और बसुमती से सुशोभित–केयूर, अङ्गद, हार और कुन्डलों के भारी–पीत वस्त्र वाले कौस्तुभ से उद्दीप्त–अपने

वक्षःस्थल में शोभित श्रीवत्स के चिन्ह वाले विश्वधर का भजन करता हूँ ।२२।

विकारलक्षं प्रजपेन्मनुमेनं समाहितः ।
तद्दशांशं सरसिजैर्जुहुयान्मधुरप्लुतैः ।२३
पीठे सम्पूजयेद्देवं विमलादिसमन्विते ।
विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रिया योगा ततः परम् ।२४
प्रह्वी सत्या तथेशानाऽनुग्रहा नवमी तथा ।
नमो भगवते ब्रूयादिष्णवे च पद वदेत् ।२५
सर्वभूतात्मने वासुदेवायेति वदेत्ततः ।
सर्वात्मयंयोगपदाद्योगदद्मपदं पुनः ।२६
पीठात्मने हृदन्तोऽयं मन्त्रस्तारादिरीरितः ।
दत्वानेनासनं मन्त्री मर्त्ति मूलेन कल्पयेत् ।२७

इस मन्त्र का सोलह लाख जप करे और परम सावधान रह कर ही जप करना चाहिए । जप का दशांश मधुरों में प्लुत कमलों से होम करना चाहिये । नौ शक्तियों के नामों का परिगणन किया जाता है— विमला–उत्कर्षिणी—ज्ञाता–क्रिया–योगा–प्रह्वी–सत्वा–ईशाना कनुग्रहा नवमी हैं । सर्व प्रथम 'नमो भगवते'-यह कहे । इसके पीछे 'विष्णवे– यह पद कहना चाहिये । इसके अनन्तर 'सर्व भूतात्मने वासु देवाय'– यह कहे । सर्वात्म संयोग पद से पीछे 'योग पद्म पद' कहे । 'पीठात्मने' कहे । यह हृत अन्त वाला प्रणव के आदि वाला मन्त्र कहा गया है । मन्त्रधारी इस मन्त्र से आसन अर्पित करके मूलमन्त्र के द्वारा मूर्ति की कल्पना करे ।२४-२७।

आवाह्य पूजयेद्देवं सुगन्धिकुसुमादिभिः ।
अङ्गान्यभ्यर्च्य मन्त्रार्णान्केसरेषु समर्चयेत् ।२८
दलेषु वासुदेवाद्या मूर्त्तीः शक्तिसमन्विताः ।
वासुदेवं संकर्षणं प्रद्युम्नमनिरुद्धकम् ।२९

हिमपीततमालेन्द्रनीलाभाः पीतवाससः ।
शङ्खचक्रगदाम्भोजधरा एते चतुर्भुजाः ।३०
शान्तिश्रियं सरस्वत्या रतिं कोणदलेष्विमाः ।
श्वेतकाञ्चनगोदुग्धदूर्वावर्णाः सुभूषिताः ।३१
हेतीनचैं द्लाग्रेषु शङ्खं चक्रं गदाम्बुजे ।
कोस्तुभ मुसलं खड्गं वनमालां यथाक्रमम् ।३२
रक्ताच्छपोतकनकश्यामकृष्णासिपाण्डरान् ।
बहिरग्रे समभ्यर्च्चेंगरुडं कुङ्कुमप्रभम् ।३३

आवाहन करके सुगन्धित कुसुम आदि उपचारों के द्वारा देव के अभ्यर्चन करना चाहिये । अङ्गोंका यजन करके मंत्रके वर्णों का केसरों में अर्चन करे ।२८। दलों में शक्ति समन्विद वसुदेव आदि की मूर्तियों अर्चन करना चाहिये । वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध—इन चारों का यजन करे । हिम, पीत, तमाल और इन्द्रनील की आभा वाले हैं—पीत वर्ण का वस्त्र धारण करने वाले–शंख, चक, गदा और पद्म के धारी और चार भुजाओं से युक्त हैं ।२९-३०। कोणों के दलोंमें शांति–श्री–सरस्वती और रति इसका यजन करे । ये चारों क्रम से श्वेत, कांचन, गोदुग्ध और दूर्वा के वर्णों वाली है तथा समलंकृत है ।३१। इनके आयुधों का दलों के अग्रभागों में अर्चन करे। वे आयुध शंख, चक्र, गदा, पद्म, कौस्तुभ, मुसल, खड्ग, वन माला क्रममस्मार हैं ।३२। रक्त, अच्छ, पोत, कनक, श्याम, कृष्ण, असित और पाण्डुर वर्णों वाले हैं । बाहिर इनके आगे कुंकुम के प्रभा से संयुत गरुड़देव का अभ्यर्चन करे ।३३।

मुक्तामणिक्यसंकाशौ तक्षिणोत्तरतो निधी ।
ध्वज वरुणदिग्भागे श्यामलं पूजयेत्ततः ।३४।
अरुणं विघ्नमाग्नेय श्याममार्यं निशाचरे ।
श्यामां दुर्गीवायुकोरो सेनान्यपीतश्वररे ।३५

इन्द्रादीन्पूजयेत्पश्चाद्वज्राद्यायुधसंयुतान् ।
इति सम्पूजतेद्विष्णुं प्रोक्ततैवरणैः सह ।३६
धर्मार्थकामान् लब्ध्वान्ते विष्णोः सायुज्यमाप्नयात् ।
प्रणवो हृन्द्भगवते वासुदेवाय कीर्त्तितः ।३७
प्रधानं वैष्णवे तन्त्रे मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्री परिकीर्त्तिता ।३८
देवताऽस्य मनोः प्रोक्ता वासुदेवो मनीषिभिः ।
तारेण हृदयं प्रोक्तं नमसा शिर ईरितम् ।३९
चतुर्वर्णैः शिखाप्रोक्ता पञ्चार्णैः कवचं मतम् ।
समस्तेन भुवेदस्त्रमङ्गकल्पनमीरितम् ।४०
मुर्द्धिन भाले द्वशोरस्यो गले दोहृदयाम्बुजे ।
कुक्षौ नाभौ ध्वजे जानुद्वये पादद्वयें तथा ।४१

दक्षिण और उत्तर में मुक्ता और मणिक्य के सदृश दोनों निधियो का अर्चन करना चाहिये। वरुण दिशामें श्यामल ध्वजका पूजन करना चाहिये ।३४। आग्नेय कोण में अरुण विघ्न का तथा निशाचर कोण में श्याम आर्य का यजन करना चाहिये । वायु कोर्ण में श्यामा दुर्गा का तथा इश्वर में पीत सेनान्य का पूजन करे ।२५। इसके पीछे आयुधों से संयुत इन्द्र आदि का पूजन करना चाहिये । इत रीति से कथित आवरणों के सहित विष्णु भगवान् का पूजन करना चाहिये ।३६। यह पूजन करने वाला पुरुष धर्म-अर्थ-काम की प्राप्ति करके अन्त में विष्णु भगवन् के सायुज्य की प्राप्ति किया करता है। अब द्वादशाक्षरों से युक्त वासुदेव का मंत्र बताया जाता है। इसका उद्धार इस तरह से है–प्रणव, हृत भगवते, नमः वासुदेवाय–यह कहा गया है। बैष्णव तंत्र में यह-प्रधान द्वादशाक्षर मंत्र है। इसका ऋषि प्रजापति है और इसका छन्द गायत्री कहा गया है ।३७-३८। मनीषियों के द्वारा इस मंत्र का देवता वासुदेव कहे गये हैं। तार से हृदय कहा गया है और नमः से शिर कहा गया है ।३९। चार वर्णों से शिखा कही गयी है और

पाँच वर्णों से कवच माना गया है। सम्पूर्णसे अस्त्र होता है। यह अङ्गों की कल्पना की गयी है ।४०। मूर्घा में-भाल-नेत्रों में-गले में-वाहुओं में, हृदयाम्बुज में, कुक्षि, नाभि-ध्वज दोनों जानु और दोनों पैरों में न्यास करना चाहिये ।४१।

विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदा।
मम्भोजं दधतं सिताब्जनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम् ।
आबद्धांदहारकुण्डलमहामौलि स्फुरत्कङ्कणं ।
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम् ।४२
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितोविजितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात्तिलैराज्यपरिप्लुतैः ।४३
पीठे प्रागीरिते मूर्ति मूलमन्त्रेण कल्पयेत् ।
पूजयेद्विधिनाऽनेन वासुदेवं विधानवित् ।४४
प्रथमावृतिरङ्गैः स्याद् वासुदेवादिभिः परा ।
शक्त्यादिशक्तिसहितैः परा द्वादशमूर्त्तिभिः ।४५
चतुर्थी सुरनाथद्यैर्वज्राद्यैः पञ्चमी मता ।
एवं सम्पूजितोविष्णुः प्रदद्यादिष्टमात्मनः ।४६

अब ध्यान बतलाया जाता है—शरद्काल में उदीयमान करोड़ों चन्द्रों के समान—शंख, चक्र, गदा और पद्म को धारण करते हुए—श्वेत कमल में निवासी, कान्ति के द्वारा जगत् को मोहन करने वाले—अङ्गद, हार, कुन्डल और मौलिमुकुट को बाँधे हुये—स्फुर्तमणि कंकणों से संयुत —श्रीवत्स के चिन्ह से युक्त, कौस्तुभारी-मुनीन्द्रोंसे स्तुति किये जाते, भगवान् विष्णु की वन्दना करता हूँ ।४२। मन्त्र में जितने वर्ण हैं उतने लाख मन्त्र का दीक्षित तथा इन्द्रियों को जीतने वाला होकर जप करे। उतने ही सहस्रका घृत में परिप्लुत तिलोंके द्वारा होम करे ।४३। पूर्व में बताये हुये पीठ में मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिये। विधान के ज्ञाता पुरुष को इसी विधान से भगवान वासुदेव का पूजन करना चाहिए ।४४। प्रथम आवृत्ति अङ्गों से होती है और

दूसरी वासुदेव आदि के द्वारा करे। शक्ति आदिके सहित द्वादश मूर्तियों से तीसरी आवृत्ति होती है। सुरनाथादि के द्वारा चौथी और वज्रादि द्वारा पाँचवीं आवृत्ति की जाती हैं ।४५। इस तरह से पूजित किया गया अपना अभीष्ट प्रदान कर दिया करते हैं ।४६।

पायसेन घृताक्तेन मन्त्रवर्णसहस्रकम् ।
जुहुयान्मनसः शुद्धयै समिद्भिः क्षीरभूरुहाम् ४७
तत्संख्यया यथोक्ताभिः सर्वपापविमुक्तये ।
हृल्लेखाबीजयुगलं रमाबीजयुगं पुनः ।४८
लक्ष्म्यन्ते वासुदेवाय हृदन्तः प्रणवादिकः ।
चतुर्दशाक्षरोमन्त्रः प्रोक्तोऽयं सुरपादपः ।४९
हृदयं शक्तिबीजाभ्यां रमाभ्यां शिर ईरितम् ।
लक्ष्म्यै प्रोक्ता शिखा वर्म वासुदेवाय कीत्तितम् ।
नमसास्त्रं समुद्दिष्टं सर्व तारादि कल्पयेत् ।५०

घृत में अक्त पायस से मन्त्रके वर्ण जितने है उतने ही सहस्र आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन मन की शुद्धि के लिए दूध वाले वृक्षों की समिधाओंसे करना चाहिये ।४७। सब पापों की विमुक्तिके लिये यथोक्त संख्या में होम करे। अब लक्ष्मी वासुदेव मन्त्र का उद्धार बताया जाता है—हृल्लेखा, भुवनेशी बीज रमा—श्री बीज ये दोनों के बीजों का युगल होना चाहिये। लक्ष्मी पद के अन्त में 'वासुदेवा' यह पद होवे अन्त में 'नमः'—यह पद और आदि में प्रणव होना चाहिए। यह चौदह अक्षरों वाला मन्त्र कल्पवृक्ष जैसा ही कहा गया है। जैसे कल्पवृक्ष सब मनोरथों को पूर्ण करता है वैसे यह भी मनोभीप्सितों को पूर्ण किया करता है ।४८-४९। शक्ति बीजों से हृदय और रमा के बीजों से शिर कहा गया है। अक्ष्म्यै शिखा और वासुदेवाय वर्म कहा गया है। नमस् से अस्त्र उद्दिष्ट किया है और तारादि से सबकी कल्पना करे ।५०।

विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः कमलजावैकुण्ठयोरेकतां ।
प्राप्तं स्नेहवशेन रत्नविलसद्भूषाभिरालङ्कृतम् ।

विद्यापङ्कजदर्पणं मणिमयं कुम्भं सरोजं गदां ।
शङ्खं चक्रममूनि बिभ्रदमितां दिश्याच्छ्रियं वः सदा ।५१
वर्णलक्षा जपेदेनं तत्सहस्रं सरोरुहैः ।
होमं कुर्याद्विकसितैर्मधुरत्रयसंयुतैः ।५२
पूजा स्याद्वैष्णवीपीठे द्वादशाक्षरवर्त्मना ।
पायसेन कृतोहोमो लक्ष्मीवंश (वश्य) प्रदायकः ।५३
मधुराक्तैस्तिलैर्हुत्वा सर्वकार्याणि साधयेत् ।
तारो हृद्विष्णवे पश्चात् ङेन्तः सुरपतिर्भवेत् ।५४
महावलाय ठद्वन्द्वं मुनरष्टादशाक्षरः ।
ऋषिरिन्दुर्विराटछन्दो देवता दधिवामनः ।५५

अब ध्यान कहा जाता है–विद्युल्लता और चन्द्र के सदृश-कमलजा (लक्ष्मी) और वैकुण्ठ नारायण की एकता को स्नेह के वश से प्राप्त हुआ-रत्नों से सुशोभित सुन्दर भूषणोंसे समलंकृत, विद्या, पंकज, दर्पण, मणियों से परिपूर्ण कुम्भ, सरोज, गदा, शंख, चक्र, इनको धारण करने वाला वपु आपकी अमित श्री को प्रदान करे ।५१। इस मंत्र का वर्ण लक्ष अर्थात् जितने भी मंत्र में वर्ण होवें उतने ही लाख जप करना चाहिये । जितने लाख जप होंवे उतनी ही सहस्र सरोरुहोंके द्वारा आहुतियाँ देकर होम करो । सरोरुह विकसित होवे औरे मधुर त्रय से अक्त होने चाहिये ।५२। द्वादशाक्षर मंत्र के ही मार्ग के द्वारा वैष्णवी पीठ पर पूजा होनी चाहिये । पायस के द्वारा किया हुआ होम लक्ष्मी के वश्य का प्रदाता होता है ।५३। मधुर त्रय में अक्त किये हुये तिलों के द्वारा होम करके सभी कार्य्यो का साधन किया करता है । अव दधि वामन मंत्र का उद्धार कहा जाता है–तार-प्रणव, हृत्-नमः, फिर विष्णव– यह पद, पीछे चतुर्थ्यन्त सुरपति पद होना चाहिये । इसके पश्चात् 'महावलाय'यहपद और दो ठकार अर्थात् ठः-ठः होना चाहिये । यह मंत्र अठारह अक्षरों वाला होता है । इसका ऋषि इन्दु है और विराट् छन्द है और इसका देवता दधि वामन होता है ।५४-५५।

हृदयेन शिरोद्वाभ्यां शिखा त्रिभिरुदीरिता ।
कवचं पञ्चभिः प्रोक्तं नेत्रं तावद्भिरक्षरैः ।५६
द्वाभ्यामस्त्रमिति प्रोक्तः प्रकारोऽङ्गस्य सूरिभिः ।
मर्द्धनि भाले दृशोर्युग्मे कर्णनासोष्ठतालषु ।५७
कन्ठे बाहुद्वये पृष्ठे हृदयोदरनाभिषु ।
गुह्योरुजानुयुग्मेषु जङ्घयोः पादयोर्न्यसेत् ।
अष्टादश मनोर्वर्णान् पश्चादेनं विचिन्तयेत् ।५८
मुक्तागौरं नवमणिलसद्भूषणं चन्द्रसंस्थम् ।
भुङ्गाकारैरलकनिकरैः शोभिवक्त्राराविन्वम् ।
हस्ताब्जाभ्यां कनककलशं शुद्धतोयाभिपूर्णम् ।
दध्यन्नाढयं कनकचषकं धारयन्त भजामः ।६०

हृदय से शिर–दो से, शिखा तीन से कही गयी है। कवच पाँच से कहा गया है। यह अङ्ग का प्रकार सूरियों के द्वारा कहा गया है। तथा नेत्र भी उतने ही अक्षरों से होता है तथा दो से अस्त्र बताया गया है। इसके न्यास का क्रम यह है कि–मूर्धा, भाल, दोनों नेत्र, कान, नासिका, ओष्ठ, तालु, कण्ठ, दोनों बाहु, पृष्ठ दोनों जाँघ, और दोनों पदों में न्यास करना चाहिये। ये मंत्र के अठारह वर्णो का न्यास है। इसके पश्चात् इनका चिन्तन करे ।५६-५९। अब ध्यान बताया जाता है—मुक्ता के समान गौर वर्ण से अन्वित नौ प्रकार की मणियों से कान्ति युक्त भूषण वाले-चन्द्र में विराजमान, भ्रमरों के आकार वाले अलकों (केशों) के समूहों से परम शोभा युक्त मुख कमल से समन्वित-दोनों करकमलों से शुद्ध जल से परियूर्ण दो कलशों को धारण किये हुये -- दधि अन्न से युक्त सुवर्ण के चषक को धारण करने वाले का हम भजन करते हैं ।६०।

गुणलक्षं जपेन्मत्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः ।
पायसान्नैः प्रजुहुयाद्दध्यन्नं वा यथाविधि ।६१

चन्द्रान्तं कल्पिते पीठे प्रागुक्ते तं समर्च्चयेत् ।
मूर्त्ति मूलेन संकल्प्य वक्ष्यमाणविधानतः ।६२
षडङ्गानि समभ्यर्च्य केसरेषु यथापुरा ।
अभ्यर्च्य वासुदेवादीन् ध्वजादीनर्चयेत्ततः ।६३
केशवाद्या दलाग्रेषु सुरेन्द्रादीननन्तरम् ।
वज्रादीनि गजानष्टौ सप्तावरणमीरितम् ।६४
विधानयेतद्देवस्य कीर्त्तितं सुरपूजितम् ।
पायसाज्येन जुहुयात्सहस्रं श्रियमाप्नुयात् ।६५
धान्यहोमेन धान्याप्तिः शतपुष्पीसमुद्भवैः ।
बीजैः सहस्रसस्यातो होमो भयविनाशनः ।६६

इस मन्त्र का तीन लाख जप करे । घृतमें प्लुत पायसान्न से उतने ही सहस्र अर्थात् जप का दशांश हवन करना चाहिये । अथवा विधि के अनुसार दधि अन्न का होम करे ।६१। पूर्व में कहे हुये चन्द्रान्त पीठ में उसका समर्चन करे । वक्ष्यमाण विधान से मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करे । पूर्व की तरह से छै अङ्गों का केसरों में यजन करना चाहिये । वासुदेव आदि का अर्चन करके फिर ध्वजादिक का अर्चन करे ।६२-६३। दलों के अग्रभागों में केशव आदि का और इसके अनन्तर सुरेन्द्र आदि का पूजन करे । वज्रादिक का और आठ दिग्गजों का अर्चन करे । यह सात आवरण कहें गये हैं ।६४। यही देव का विधान है जो सुरगणों द्वारा भी पूजित होता है । पायस और घृत से होम करे और सहस्र आहुतियों देवे तो श्री प्राप्ति किया करता है ।६५। धान्य के होम से धान्य की प्राप्ति हुआ करती है । शतपुष्पी के बीजों से एक सहस्र संख्या में किया हुआ होम भय का विनाश करने वाला है ।६६।

दध्योदनेन शुद्धेन हुत्वा मुच्येत दुर्गतेः ।६७
स्मृत्वा त्रैविक्रमं रूपं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।
मुक्तो बन्धाद्भवेत्सद्यो नात्र कार्या विचारणा ।६८

पट्टे सपाद्य देवेशं भित्तौ वा पूजयेत्सुधीः ।
सुगन्धिकुसुमैर्नित्यं महतीं श्रियमाप्नुयात् ।६९
स साध्यतारोज्ज्वलकर्णिकाब्जमष्टाक्षरैरुज्ज्वलकेशराढयम् ।
मन्त्राक्षरद्वन्द्वयुताष्टपत्रं शिष्टार्णयुग्मोल्लसितान्तपत्रम् ।७०
द्वादशाक्षरसंवीत तद्वहिर्मातृकाक्षरैः ।
विदध्याद्वैष्णवं यन्त्रं सर्वसम्पत्प्रदायकम ।७१

शुद्ध दध्योदन से होम करके मानव दुर्गतिसे मुक्त हो जाया करता है ।६७। अनन्य बुद्धि वाला होकर भगवान् के त्रैविक्रम स्वरूप क स्मरण करके मंत्र का जप करे तो बन्धन से तुरन्त ही मुक्त हो जाय करता है इसमें लेश मात्र भी संशय नहीं है ।६८। देवेश्वर को किस पट्टे पर सम्पादित करे अथवा भीत में काढ़कर सुधी उनका पूजन करे नित्य ही सुगन्धित पुष्पोंके द्वारा यजन करे तो बड़ी श्री का लाभ किया करता है ।३६। अब मन्त्र निर्माण का प्रकार बतलाया जाता है कमल की कर्णिका के साध्य और साधक के कर्म के सहित प्रणव लिखे । यह कमल नारायण में अष्टाक्षरों से समन्वित और उज्ज्वल केसर से आढय होवे । इसके आठ पत्र मातृकाक्षरों के द्वन्द से युक्त होवे और शिष्ट वर्णों के युग्मों से अन्तिम पत्र शोभित करे ।७०। इसको द्वादश अक्षरों से संवेष्टित करे और उसकेवाहिर मातृकाओंसे सम्वीत करना चाहिये । इस प्रकार से इस वैष्णव यंत्र की रचना करनी चाहिए । यह मंत्र सब प्रकार की सम्पदा का प्रदान करने वाला है ।७१।

उद्गनिरतपदमाभाष्य प्रणवोद्गनीथशब्दतः ।
सर्ववागीश्वरेत्यन्ते प्रवदेदीश्वरेत्यथ ।७२
सर्ववेदमयाचिन्त्यदान्ते सर्वमुच्चरेत् ।
बोधयद्वितयान्तोऽयं मन्त्रास्तारादिरीदितः ।७३
ऋषिर्ब्रह्मास्य सन्दिष्टश्छन्दोऽनुष्टुवुदाहृतम् ।
देवता स्याद्धयग्रीवो वागैश्वर्यप्रदोद्विभुः ।
तारेण पादैर्मन्त्रस्य पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ।७४

शरच्चशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैरुपेतम् ।
रथांगषङ्गाङ्कितबाहुयुग्मञ्जानुद्वयन्यस्तकरम्भजानः ।७५
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं कुन्दपुष्पैर्मधुप्लुतैः ।
दशाँश वैष्णवे वह्नौ जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ।७६

अब हयग्रीव मंत्र को बतलाया जाता है—उद्गिरत्—इस पद को बोलकर प्रणवोद्तोत शब्द कहे । अन्त में, सर्व वागीश्वर और इसके अनन्तर ईश्वर–यह कहे । सर्व बेद मयाचिन्त्य पद के अन्त में सर्व का उच्चारण करे । बोधय-बोधय-यह अन्त में कहे । इसके आदि में प्रणव है–ऐसा यह मंत्र बताया गया ।७२-७३। इसका ऋषि ब्रह्मा है–और और छन्द अनुष्टुप कहा गया है । इसका देवता हयग्रीव है जो विभु-वाक् और ऐश्वर्य का प्रदाता है । तार अर्थात् प्रणव के सहित मंत्र के पादो से पाँच अङ्गों की कल्पना करनी चाहिये ।७४ ।अब ध्यान कहा जाता है–शरत्काल के चन्द्रमा के समान प्रभा से युक्त आभा के सदृश मुख वाले-मुक्ताओं से परिपूर्ण आभूषणों से समुपेत, चक्र और शंख से अंकित बाहुओं वाले दोनों जाधुओं पर कर को न्यस्त रखने वाले का हम भजन करते हैं ।७४-७५। मंत्र के वर्णो के अनुसार उतने ही लाख मंत्र का पप करे और मधुर प्लुत कुन्द के पुष्पों से होम करे । होम वैष्णव अग्नि में ही मंत्र की सिद्धि के लिये करना चाहिये ।७६।

अष्टाक्षरोदिते पीठे हयग्रीव प्रपूजयेत् ।
बीजेन मूर्त्तिसङ्कल्प्य वीजमुदध्रियते यथा ।७७
वियद्भृगुस्थमर्घीशबिन्दुमद्वीजमीरितम् ।
केसरेषु चतुर्वेदांश्चतुर्द्दिक्षु समर्चयेत् ।७८
विदिक्ष्वङ्गस्मृतिन्यायिसर्वशास्त्राणि पूजयेत् ।
अर्चयेत्पत्रमध्येषु विधानेनाङ्गदेवताः ।७९
बाह्ये लोकेश्वरास्तेषां वज्राद्यस्त्राणि संयजेत् ।
एवं योभजते देवं साक्षाद्वागीश्वरोभवेत् ।८०

बैल्वैः फलैः कृतोहोम श्रीकरः परिगीयते ।
कुन्दुपुष्पाणि जुहुयादिच्छन् वाकछ्रियमव्ययाम् ।८१

अष्टाक्षरोदित पीठ पर हयग्रीव भगवान् का पूजन करना चाहिये। बीज के द्वारा मूर्ति की कल्पना करे बीज का इस तरह से उद्धार किया जाता है—वियत्-हः भृगु-सकार, उसमें स्थित अर्धीश-ऊदार, और विन्दु-अनुस्वार, यह बीज कहा गया है। केसरों में चार बीजों को चार दिशाओंमें समर्चित करना चाहिये ।७७-७८। विदिशाओं में अङ्ग स्मृति, न्यास और सब शास्त्रों का पूजन करना चाहिये। पत्रों के मध्यों में विधान से अङ्ग देवताओं को अर्चित करे ।७९। बाहिरमें लोकेश्वर और उनके व्रज्रादि अस्त्रों का अर्चन करे। इस तरह से जो मानव देव का यजन किया करता है वह साक्षात् वागीश्वर ही हो जाया करता है।८०। बिल्व के फलों के द्वारा होम करने वाला श्री के करने वाला परिगीत किया जाता है। अव्यय। वाक् श्री की इच्छा करता हुआ कन्दके पुष्पों का हवन करे ।८१।

मानुनानेन सञ्जप्तं घृतं ब्राह्मी रसैः श्रृतम् ।
कबितामावहेत्पु सामनर्गलविजृम्भणाम् ।८२
वचाम नसञ्जाप्तां भक्षयेत्प्रातरन्वहम् ।
सर्ववेदागमादीनां व्याख्याता जायतेऽचिरात् ।८३
मनोरस्य समोनास्ति ज्ञानैश्वर्य्य प्रदोऽसरः ।
अनन्तोऽग्न्यासना सेन्दु बीज राताय हृन्मनुः ।८४
षडरोऽयमादिष्टोभजतां कामदामणिः ।
ब्रह्मा प्रोक्तो मुनिश्छन्दो गायत्र देवता मनो ।८५
देशिकेन्द्रैः समाख्यातो रामोराक्षसमद्दर्दनः ।
दीर्घभाजा स्वबीजेन कुर्यादङ्गानि षट्क्रमात् ।८६

ब्राह्मी के रस से श्रृत को इस मंत्र के द्वारा अभिमन्त्रित करे तो इसके पास से पुरुष अनर्मल विजृम्भण वाली कविता का आवाहन कर लेता है।८२। इस मन्त्र से भली भाँति जपी हुई वच को प्राप्त

काल में प्रतिदिन भक्षण करे तो सब वेदों और आगमों आदि का शीघ्र व्याख्या करने वाला हो जाया करता है ।८३। इस मंत्र के समान ज्ञान और ऐश्वर्य के प्रदान करने वाला दूसरा कोई भी मंत्र नहीं है । अब राम मंत्र भी बतलाया जाता है--अनन्त, आकार, अग्न्या सन-रेफ के आसन वाॅला, सेन्दु-अनुस्वार से युक्त बीज है--'रामायहृत--नम । यह मत्र छः अक्षरों वाला कहा गया है । इसके सेवन करने वालों को यह कामनाओं की देने वाली मणि है अर्थात् चिन्तामणि के समान है । इसका मुनि ब्रह्मा कहा गया है, मन्त्र का छन्द गायत्र है, इसका देवता आचार्यों के द्वारा राक्षसों के मर्दन करने वाले राम कहे गये है । दीर्घ के सेवन करने वाले अपने ही बीज के क्रम से छः अङ्गों को करना चाहिए ।८६।

ब्रह्मरन्ध्रे दभ्रुवोर्मध्ये हृन्नाभ्यन्धुषु पादयोः ।
षड्क्षराणि विन्यस्येन्मन्त्रस्य मनुवित्तमः ।८७
कायाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासितम् ।
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपहं हस्ताम्बुजं जानुनि ।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरा विद्युन्निभां राघवम् ।
पश्यन्तं मुकुटांदादिविविधाऽऽकल्पोज्वलांगम्भजे ।८८
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं सरोरुहैः ।
जुहुयादर्चिते बह्नौ ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।८९
पूजयेद्वैष्णवे पीठें मूर्त्ति मूलेन कल्पयेत् ।
श्रीसीतायै द्विठान्तेन सीतां पार्श्वगतां यजेत् ।९०
अग्रे पार्श्वद्वये शांर्गशरानगानि तद्बहिः ।
हनुमन्तं ससुग्रीवं भरतं सविभीषणम् ।९१
लक्ष्मणांगदशत्रुघ्नाञ्जाम्बवन्तं दलेष्विमान् ।
वाचयन्तं हनूमन्तमग्रतो धृतपुस्तकम् ।९२
यजेद्भरतशत्रुघ्नौ पार्श्वयोद्धृतचामरौ ।
धृतातपत्रं हस्ताभ्यां लक्ष्मणं पश्चिमे यजेत् ।९३

ब्रह्म रन्ध्र में, भौंहों के मध्य में हृदय, नाभि अन्धु और पादों से मन्त्र के ज्ञाता को मन्त्र के छ अक्षरों का विन्यास करना चाहिये ।८७। अब ध्यान बतलाया जाता है–कृष्ण मेघ के समान कान्ति से परम रम्य–निरन्तर वीरासन पर आध्यासित—ज्ञानमयी मुद्रा को धारण करने वाले दूसरे हस्त कमल को अपने जानु पर रखते हुए—पार्श्व में संस्थिता–कमलों के समान करों वाली, विद्युल्लता के तुल्या सीता को देखते हुये–ज्ञानमयी मुद्रा को धारण करने वाले–मुकुट और अङ्गद आदि अनेक आभरणों से उज्ज्वल अङ्गों वाले श्रीराघव का मैं यजन करता हूँ ।८८। मन्त्र में जितने वर्ण है उतने ही लाख मन्त्र का जप करे और जप का दशांश भाग का अर्चित् अग्नि में कमलों के द्वारा होम करे। इसके अनन्तर ब्राह्मणों को भोजन करावे ।८९। वैष्णव पीठ पर पूजन करे और मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करनी चाहिये। श्री सीतायै और दो ठकार अन्त में होवे, इस मन्त्र से पार्श्व में संस्थिता श्री सीता का यजन करना चाहिये ।९०। आगे दोनों पार्श्वों में शार्ङ्गशरों को और उनके बाहिर अङ्गों का यजन करे। हनुमान, सुग्रीव, भरत, विभीषण, लक्ष्मण, अङ्गद, शत्रुघ्न, जामवन्त, इनको दलों में पूजित करना चाहिये। हनुमानजी को जो धरी हुई पुस्तक को बाँच रहे हैं पूजित करना चाहिये। दोनों पार्श्व भागों में चमर धारण करते हुये भरत और शत्रुघ्न का अर्चन करे। पश्चिम में अपने दोनों हाथों से आत पत्र (छत्र) धारण करने वाले लक्ष्मण का यजन करना चाहिये ।९१-९३।

घृष्टं जयन्तं विजयं सुराष्ट्रं राष्ट्रवर्द्धनम् ।
अकोप धर्मपालाख्यं सुमन्तं च दलाग्रतः ।९४
सर्वाभरणसंपन्नाल्लोकेशानर्चयेत्ततः ।
तदस्त्राणि ततो वाह्ये वज्रादीनि प्रपूजयेत् ।९५
एवं पूजादिभिः सिद्धे मनौ कर्म्माणि साधयेत् ।
जातीप्रसूनैर्जुहुयाच्चन्दनाम्भः समुक्षितैः ।९६

राजवश्याय कमलैर्घनधान्यादिरम्पदे ।
नीलोत्पलानां होमेन वशयेदखिलं जगत् ।९७
बिल्वप्रसूनैर्जुहुयादिन्दिराऽऽवाप्यते नरः ।
दूर्वाहोमेन दीर्घायुर्भवेन्मन्त्री निरामयः ।९८
रक्तोत्पलहुतामन्त्री धनमाप्नोति वांछितम् ।
मेधाकामन होतव्यं पलाशकुसुमैर्नवैः ।९९
तज्जप्तमम्भः प्रपिबेत्कविर्भवति वत्सरात् ।
तन्मन्त्रितान्नं भुञ्जीत महदारोग्यमाप्नुयात् ।१००

दलों के अग्रभाग में धृष्ट—जयन्त—विजय—सुराष्ट्र—राष्ट्र-वर्धन—अकोप—धर्मपाल और सुनन्तका यजनकरे ।९०। इसके उपरान्त सभी आभरणों से सुसम्पन्न लोकपालों का अर्चन करना चाहिये । उनके बाहिर में उनके आयुधों का, वज्रादिक का पूजन करे ।९५। इस तरह से अर्चन आदि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर अभीष्ट कर्मों का साधन करना चाहिए । चन्दन के जल में समुक्षित करके जाती के कुसुमों के द्वारा होम करें ।९६। राजा को वश्य करने के लिए कमलों से होम करे तथा धनधान्य आदि सम्पदा को प्राप्त करने के लिये भी कमलों के द्वारा होम करे । नीलोत्पलों के द्वारा किये हुए होम से सम्पूर्ण जगत को वश में कर लिया करता है ।९७। इन्दिरा की प्राप्ति करने के लिए विल्व वृक्ष के पुष्पों से हवन करे । दूर्वा के होम से मंत्र-धारी पुरुष दीर्घ आयु वाला और नीरोग होता है ।९८। रक्तोत्पलों के होम से मंत्र को धारण करने वाला अपना वाछित धन प्राप्त किया करता है । मेधा की कामना वाले को नवीन पलाश के पुष्पों से होम करना चाहिए ।९९। इस मंत्र से अभिमंत्रित जल का पान करे तो एक वर्ष में मनुष्य कवि हो जाता है । उस मंत्र से मंत्रित अन्न को खावें तो महान् आरोग्य को प्राप्त किया करता है ।१००।

तारं मध्ये विलिखतु मनुं षट्सु कोणेषु सन्धि-
ष्वङ्गं मायां स्मरमपि लिखेत्कोणगण्डेषु पश्चात् ।

किञ्जल्केषु स्वरगणमथो यन्त्र मध्येषु मालामन्त्रो-
त्थार्णान् गुहमुखमितनष्टमे पञ्चवर्णान् ।१०१
दशाक्षरेण संवेष्ट्य कादिवर्णैश्च भूपुरे ।
दिग्विदिक्षु लिखेद्बीजे नरसिंहवराहयोः ।१०२
नमो भगवते ब्रूयाच्चतुर्थ्या रघुनन्दनम् ।
रक्षोघ्नविषदायान्ते मधुरादि समीरयेत् ।१०३
प्रसन्नवदनायेति पश्चादमिततेजसे ।
बलाय पश्चाद्रामाय विष्णवे तदनन्तरम् ।
प्रणवादि नमोन्तोऽय मालामनुरुदीरितः ।१०४
जानकीवल्लभायाथ भवेत्पावकवल्लभा ।
हुमादिरेषः कथितो राममन्त्रो दशाक्षरः ।१०५
जपादिसाधितं यन्त्रं स्वर्णपट्टादिकल्पितम् ।
बाहुना विधृत दद्याद्विजयश्रीपराक्रमान् ।१०६

अब धारण यन्त्र बतलाया जाता है मध्य में प्रणव लिखे, छः कोणों में मन्त्र लिखे, सन्धियों में अङ्गलिखे, पीछे कोण गण्डों में क्रम से माया और स्वर का भी लेखन करे। यन्त्र के मध्य किजल्कों में स्वर गण को लिखना चाहिये । मालामन्त्रोत्थ गुह मुखसित पाँच वर्णों को अष्टम में लिखे। दशाक्षर और कादि वर्णों से भूपुर में संवेष्टित करना चाहिए। दिशा और विदिशाओं में नरसिंह और वराह के बीजों को लिखे।१०१-१०२। अब माला मन्त्र को बतलाया जाता है—आदि में 'नमो भगवते' यह बोले। फिर चतुर्थी अन्त वाले 'रघुनन्दन' इस पद को कहे अर्थात् 'रघुनन्दनाय' यह कहे। फिर ,रक्षोघ्न विषदाय, यह कहे और अन्त में मधुरादि कहना चाहिये। फिर 'प्रसन्न वदनाय' यह और पीछे 'अमिततेजसे' यह बोले। 'बलाय' पीछे 'रामाय' और इवके अनन्तर विष्णवे, यह कहें। इसके आदि में प्रणव और अन्त में 'नमः' यह पद होता है । यह माला मन्त्र कहा गया है।१०३-१०४। 'जानकी वल्लभाय' । फिर पावक वल्लभा अर्थात् 'स्वाहा' कहे। यह

हुम् आदि वाला है और दश अक्षरों का राम मन्त्र होता है ।१०५। जप आदि से साधित किये हुये यन्त्र को स्वर्णपट्ट आदि पर कल्पित करे । इसको वाहु पर विधृत करे तो वह विजय श्री और पराक्रम देता है ।१०६।

गदितं राममन्त्रस्य विधयनं सुरपूजितम् ।
तारं नमो भगवते वराहपदमीरयेत् ।१००
रूपाय भूर्भुवः स्वः स्यात् पतये तदनन्तम् ।
स्यात् भूपतित्वं मे पदान्ते देह्यन्ते च ददापय ।१०८
वह्निजायावधिर्मन्त्रः स्यात्त्रयस्त्रिंशदक्षरः ।
भार्गवो मुनिराख्यात श्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।१०९
देवतादिवराहोऽस्य मन्त्रस्य कथितो बुधैः ।
एकदंष्ट्राय हृदयं व्योम्नोल्काय शिरःस्मृतम् ।११०
शिखा तेजोऽधिपतये विश्वरूपाय वर्म च ।
महावराहायास्त्रं स्यात्पञ्चाङ्गमिति कल्पयेत् ।१११

यह राम मन्त्र का सुरों द्वारा पुजित विधान कहा गया है । आदि में प्रणव–फिर 'नमो भगवते' यह पद–इसके बाद 'वराह पद' को कहे । फिर 'रूपाय भूर्भवः, स्वः' कहे । इसके अनन्तर 'पतये'— यह पद बोले । फिर 'भूपति त्व ये'—इस पद के अन्त में 'देहि' और अन्त में 'ददापय' कहे । अन्त में 'स्वाहा' कहे । यह मन्त्र तैंतीस अक्षरों का होता है । इसका मुनि भार्गव और छन्द अनुष्टुप् कहा गया है ।१०७-१०९। इस मन्त्र का देवता आदि वराह है–ऐसा बुधगणों ने कहा है । एह दंष्ट्राय–इसका हृदय है । व्योम्नोल्काय-शिर कहा गया है । तेजोऽधिपतये–इसकी शिखा है और विश्वरूपाय–इसका वर्म होता है । महावराहाय–अस्त्र है इस तरह से पञ्चाङ्ग की कल्पना करनी चाहिये ।११०-१११।

आपादञ्जानुदेशाद्वरकनकनिभं नाभिदेशादधस्ता ।
न्मुक्ताभं कन्ठदेशात्तरुणरविनिभं मस्तकान्नीलभासम् ।

ईडे हस्तैर्दधानं रथचरणदरौ खड्गखेटौ गदाख्यां ।
शक्ति दानाभये च क्षितिधरणलसद्दंष्ट्रमाद्यं वराहम् ।११२
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं मधुराक्तैः सरोरुहैः ।
जुहुयात्तद्दशांशेन पीठे विष्णोःप्रपूजयेत् ।११३
मूर्त्ति मूलेन संकल्प्य वक्ष्यमाणविधानतः ।
पूर्वादिषु चतुर्द्दिक्षु हृदाद्यङ्गानि पूजयेत् ।११४
अस्त्रं कोणेष्वधश्चोर्द्ध्वं चक्राद्यस्त्राणि तद्बहिः ।
चक्रं शङ्खमसिं खेटं गदा शक्ति वराप्रये ।११५
संपूज्या बाह्यलोकेशान् वहिरस्त्राणि संयजेत् ।
ध्यानादेवो धनं दद्याज्जपद्दाहद्यात् वसुन्धराम् ।११६

अब ध्यान कहा जाता है—चरणों से लेकर जानु देश तक श्रेष्ठ कनक के समान प्रभा से आन्वित है नाभि देव से नीचे मुक्ता की आभा से युक्त हैं। कण्ठ देश से तरुण सूर्य के सदृश हैं। मस्तक से नील आभा सम्पन्न हैं। कर कमलों के द्वारा रथ चरण दरों—खङ्ग खेट, गदा—शक्ति दान-अभय धारण करने वाले और भूमि को धारण करने में शोभित दाढ़ वाले आद्य वराह का स्तवन करता हूँ ।११२। मधुर त्रय में अक्त सरोरुहों से ,होम करे और एक लाख मन्त्र का जप करना चाहिये। जप का दशांश का हवन करना चाहिये। भगवान् विष्णु को पीठ पर अर्चन करे।११३। मूल मन्त्र के द्वारा मूर्ति की कल्पनाकरे जिसका विधान आगे बताया जायगा। पूर्वादि चारदिशाओं में हृदादि अंगों का पूजन करे।११४। नीचे और ऊपर कोणों में अस्त्र का तथा उसके बाहिर चक्रादि आयूधों का अर्चन करना चाहिये। आयुधों के नामों का परिगणन किया जाता है—चक्र, शंख, असि, खेट, गदा, शक्ति, वरदान, अभयदान है। बाहिर लोकेशों का तथा उनके बाहिर उनके अस्त्रो का यजन करना चाहिये । देव ध्यान से धन दिया करते हैं और जप करने से वसुन्धरा को देते हैं ।११५-११६।

प्रयच्छेज्जपपूजाद्यैर्धनधान्यमहीश्रियः ।
रवौ सिंहगतेऽष्टम्यां शुक्लपक्षे सितां शिलाम् ।११७
पञ्चगव्येषु निःक्षिप्य स्पृष्टा तमयत जपेत् ।
उत्तराभिमुखोभूत्वा तां शिलां निखनेद्भुवि ।११८
शत्रुचोरमहाभूतैः कृतां बाधां प्रणाशयेत् ।
भानूदये भौमवारे साध्यक्षेत्रात्समाहरेत् ।११६
मृत्तिकां सञ्जपमंत्री ताम्पुनर्विभजेत्त्रिधा ।
चुल्ल्यामेकां समालिख्य पाकपात्रे तथापराम् :१२०
गोदुग्धे परमालोड्य शोधितांस्तण्डुलान् क्षिपेत् ।१२१

जप और पूजादि से धन धान्य-नहीं और भी दिया करते हैं। सिंह गत रवि के हो जाने पर अष्टमी में शुक्ल पक्ष में सित शिला को पंचगव्य में निःक्षिप्त करके उसका स्पर्श करके दश सहस्र जप करे। उत्तर की ओर अभिमुख होकर उस शिला को भूमिमें गाड़ देवे ।११७-११८। इसका यह प्रभाव होता है कि यह शत्रु चोर महाभूतों के द्वारा की हुई बाधा का विनाश कर दिया करता है। सूर्योदय के समय भौम बार में साध्य क्षेत्र से मृतिका समाहरण करे ।११६। मन्त्रधारी उस को जप करता हुआ उसको फिर तीन भागों में विभक्त करे। एक को चूल्हे में लिखे और दूसरो को पाक पात्र में तीसरे को गोदुग्धमें आलोड़ित करके शोधित तन्डुलों क्षिप्त कर देवे ।१२०-१२१।

संस्कृतेऽग्नौ पचेत्सम्यक् चरुं मन्त्रो जपन्मनुम् ।
अवतार्य चरुं पश्चादग्नौ देवं यथाविधि ।१२२
धूपदीपादिकैरिष्ट्वा पुनराज्यप्लुप्तं चरुम् ।
जुहुयादेधिते वह्नौ यावदष्टोत्तरं शतम् ।१२३
एवं सप्तारवारेष जहयात् क्षेत्रसिद्धये ।
प्रातःकाले भृगोर्वारे मृदं साध्यमहीतलात् ।१२४
आदाय हविरापाद्य पूर्ववज्जुहुयात् सुधीः ।
विरोधोनपश्यति क्षेत्रे सहचरौराद्यु पक्रमैः ।१२५

राजवृक्षसमुत्थाभिः समिद्‌भिर्नर्नुनाऽमुना ।
त्रिसहस्रं प्रजुहुयात्तस्य स्युः सर्वसम्पदः ।१२६
शालिभिर्जुहुयान्मन्त्री नित्यमष्टोत्तरं शतम् ।
समृद्धैर्द्धान्यसङ्घातैः शोभते तस्य मन्दिरम् ।१२७
तावदाज्जेन जुहुयान्मण्डलात्स्वर्णमाप्नुयात् ।
लाजै कन्यामवाप्नोति मध्वक्तैर्निजवाञ्छितम् ।१२८

संस्कार किए हुये अग्नि में भली-भाँति पाचन करे। मंत्रधारी मंत्र का जप करते हुये ही चरु का पाक करे। पीछे चरु को उतार लेना चाहिए। अग्नि में विधि के साथ देव का धूप दीप आदि के द्वारा यजन करके पुनः आज्य में प्लुत चरु संज्वलित वह्नि में अष्टोत्तर शत आहुतियाँ देनी चाहिए ।१२२-१२३। इस रीति से सप्तारवारों में क्षेत्र की सिद्धि के लिये हवन करे भृगुवार में प्रातःकाल के समय में साध्य महा तल से मृत्तिका लाकर हवि सम्पादित कर सुधी पूर्व की ही भाँति होम करे। इससे चौरादि उपक्रमों के साथ क्षेत्र में विरोध होता है वह नष्ट हो जाता है। राजवृक्ष से समुद्‌भूते समिधाओं के द्वारा इस मन्त्र से तीन सहस्र आहुतियाँ देवें तो उसके पास सभी सम्पदायें हो जाया करती हैं ।१२४-१२६। मन्त्रधारी शालियों के द्वारा नित्य ही एक सौ आठ बार होम करे तो उसका मन्दिर धान्य के संधातोंसे और समृद्धियों से शोभित हो जाता है ।१२७। तव तक घृतसे होम करे जब तक मण्डल से स्वर्ण को प्राप्त करे। मधु से अक्त लाखाओं से होम करने से कन्या अपना वाञ्छित वर प्राप्त कर लिया करती है ।१२८।

मधुरत्रयसंयुक्तै जुहुयादुत्पलैर्न्नवैः ।
महतीं श्रियमाप्नोति मण्डलात्पूर्वसंख्यया ।१२९
मध्ये बीजं सतारं दहनपुरयुगे चक्रवर्णान् षडस्त्रि—
ष्वालिख्याङ्गिं सन्धिष्वथ करणदलैरम्बुज केसरेषु ।
अष्टार्णान्दत्रमध्ये लिखतु वसुमितान्मन्त्रवर्णाश्चतुर्थे ।
शिष्टान्पत्रे पुरस्ताद्वपुदलकमले केसरस्थस्वराद्ये ।१३०

मन्त्रार्णान् वेदसंख्यान् दलमनुविलिखेदन्त्यमन्त्येऽथ बाह्यं ।
किञ्जल्कैः कादिवर्णैर्विकसितकमले षोडशारे यथावत् ।
मन्त्रार्णान्युग्मशस्तच्चरपमदलगतं शिष्टवर्णं लिखित्वा ।
तारक्ष्माकोलबीजैस्तदनुपरिवृतं साध्यनामार्णमध्यैः ।१३१
दर्भितैः साध्यनामार्णैर्म्मन्त्रवर्णैर्वृतम्बहिः ।
भूविम्बेनास्य कोणेषु भूबीजं साध्यसंयुतम् ।१३२
अष्टशूलेषु वाराह भबोज सहितं लिखेत् ।
सार्घीशबिन्दुगगनं बीजं वाराहमीरितम् ।१३३

तीनों मधुरों से संयुत नवीन उत्पलों से होम करे तो मण्डल से पूर्व संख्या में करने से बहुत बड़ी श्री की प्राप्ति किया करता है ।१२६। अब मन्त्र बतलाते हैं दहनपुर युग में परस्पर व्यति भिन्न षट्कोण के मध्य में प्रणव के सहित बीज अर्थात् साध्य-साधक के कर्म के सहित बीज को लिखे। और षट्कोण में अङ्गों को लिखकर सन्धियों में करण दलों से तथा केसरों में अम्बुज को लिखे। आठ वर्णों को पत्र मध्य में लिखे तथा वसुमती अर्थात् आठ परिमाण में मन्त्र के वर्णों को चतुर्थ लिखे। केसरों में स्थित स्वरों से आठ दलों वाले कमल में आने पत्र में लिखे ।१३०। चार सख्या वाले मन्त्रके वर्णों को दलानुसार लिखे और अन्त्य को अन्त्य में लिखे। फिर इसके अनन्तर वाह्य में कादिवर्ण वाले किजल्कों से षोड़शार विकसित कमल में यथा रीति मन्त्र के वर्णों को युग्म से तच्चर पम दलगत वर्ण को लिखकर प्रणव–क्ष्मा—कील बीजों से उसके अनुसार परिवृत करे। बाहिर साध्य के नाम के वर्णों के मध्य ताले दर्भित साध्य वर्णों से वृत करे। इसके कोणों में भूनिम्ब से साध्य से संयुत भूबीज को लिखे और अष्ट दलों में भूबीज से सहित वाराह को लिखना चाहिए । अब वाराही बीज को बतलाया जाता है। अधीश–आकार, गमन–हवार, बिन्दु–अनुसार—यही वाराह बीज कहा गया है ।१३१-१३३।

रोचना गुरुकर्पूरलाक्षाकुङ्कुमचन्दनैः ।
गोमयाम्भसि सम्पिष्टैर्लिखेद्यन्त्रं शुभे दिने ।१३४
लेखिन्या हेममय्याच सर्वकामप्रसिद्धये ।
स्वर्णपट्टे लिखेद्यन्त्रं राज्यश्रीसमवाप्तये ।१३५
ग्रामसिध्यैं रजतजे ताम्रपट्टे धनाप्तये ।
भूर्जपत्रे निजेष्टाप्तौ क्षौमे भूमिद्धिये लिखेत् ।१३६
जपपूजादिभिः सिद्धं यन्त्रं कुर्यान्निजेप्सितम् ।
ग्रामपत्तनराष्ट्रेषु मन्त्रमेतत्सुसाधितम् ।१३७
निखनेच्छुभवारौ साङ्गन्दिक्षु समर्चयेत् ।
क्षुद्रापमृत्युचोरादिभूतव्यालमहाभयैः ।१३८
नशक्यते परन्द्रष्टु तं वंश देवता वलात् ।
धरण्यन्ते धरेद्वन्द्वं द्विठान्तोऽयं ध्रुवादिकः ।
एकोनविंश यर्णाढ्यं धराहृदयमीरितम् ।१४०
वराहोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दोनिचदुदाहृतम् ।
देवता सर्वभूतानां प्रकृतिर्मसुधामता ।१४१

रोचना—अगुरु—कर्पूर—लाक्षा–कुंकुम–चन्दन को गोमय के जल में पिष्ठ करके किसी शुभ दिन मैं यन्त्र को यिखना चाहिये । ।१३४। लेखनी हेममयी हो तो उससे लिखे तो सव कामनाओं की सिद्दि होती है । राज्य श्री की सम्पत्ति की प्राप्ति के लिखेसुवर्ण के पट्ट पर मन्त्र को लिखना चाहिये ।१३५। ग्राम की सिद्धि के लिये चाँदी के पट्ट पर लिखे और धन की प्राप्ति के लिये ताम्र के पटूठ पर लिये । अपने अभीष्ट की प्राप्ति में भोजपत्र पर तथा भूकी सिद्धि के लिये क्षौम पर लिखना चाहिये ।१३६। जप और पूजा आदि के द्वारा सिद्ध किया हुआ मन्त्र अपना ईप्सित को करे । ग्राम—पत्तन और राष्ट्र में यह मन्त्र सुसाधित होता है । शुभ वार आदि में गाड़ देवे और अग सहित दिशाओं में समर्चन करना चाहिये । इसके प्रभाव से क्षुद्र–अपमृब्यु चोर आदि—भूत व्यास और महान रोगों के द्वारा ऊसके वश को

कष्ट नहीं हो सकता। धरणि के अन्त में धरे दो बार दो ठकार अन्त में है और आदि में ध्रुव है-यह इक्कीस-वर्णोंमें आढ्य मन्त्रहोता है। इसका हृदय धराकहा गया है। इसका ऋषि वराहहै और निचृद छन्द होताहै। इसका देवता समस्त प्राणियोंकी प्रकृति धरामानी गयी है।१३७-१४१।

हृदयं त्रिभिसाख्यातं चतुर्भिः शिर ईरितम्।
त्रिभिः शिखा समुद्दिष्टा कवचं पञ्चभिमतम्।१४२
द्वाभ्यां नेत्रं समाख्यातं द्वाभ्यांमस्त्रं पुनर्भवेत्।
मन्त्रवर्णैः षडङ्गानि कुर्यादेवं विधानवित्।१४३
श्यामां विचित्रांऽशुकरत्नभूषणां पद्मासनां तुङ्गपयोधरोन्नताम्।
इन्दीवरे द्वे नवशालिमञ्जरीं शुकं दधानां वसुधांभजामहे।१४४
लक्षमेकं जपेन्मत्रं धराहृदयमादरात्।
स सर्पिषा पायसेन जुहुयात्तद्दशांशतः।१४५
तां विष्णोः पूजयेत्पीठे वक्ष्यमाणविधानतः।
अङ्गानि पूजयेदादौ भूवह्निजलमारुतान्।१४६
दिक्पत्रेषु गमभ्यर्च्य कोणपत्रेषु तत्कलाः।
आशापालाः पुनः पूज्या वज्राद्यसमन्विताः।१४७

तीन से हृदय कहा गया है और चार से शिर होता है। तीन से शिखा समुद्दिष्ट की गयी है और कवच पाँच से बताया है।१४२। दो से नेत्र और पुनः दो से अस्त्र होता है। विधान का ज्ञान रखने वाला पुरुष इस प्रकार से मन्त्र के वर्णों के द्वारा षट् अङ्गों को करे।१४३। अब ध्यान हैं—श्याम वर्ण से युक्त-अद्भुत वस्त्रों और रत्नोंके आभूषणोंसे भूषित—पद्म के आसन पर विराजमान—तुङ्गपयोधरों से समुन्मत हो इन्दीवर—नवीन शाली की मंजरी और शुक्र को धारण करने वाली वसुधा का भजन करते हैं।१४४। बड़े आदर के साथ इस धरा हृदय मन्त्र का एक लाख जप करे। जपका दशांश घृतसे संयुत पायस से होम करना चाहिये।१४५। उस का भगवान् विष्णु के पीठ पर वक्ष्यमान (आगे कहे जाने वाले) विधान से पूजन करे। आदिमें अङ्गों का यजन

करना चाहिये । भू वह्नि–जल—मारुत का दिक् पत्रों में भली-भाँति अर्चन करके कोण पत्रों में उनकी कलाओं का यजन करे। फिर दिक्पालों का वज्र आदि अस्त्रों से समन्वितों का पूजन करना चाहिए ।१४६–१४७।

एव सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेत् स्वमनोरथान् ।
मधुरत्रयसंयुक्तं जुहुयादरुणोत्पलैः ।१४८
सहस्र भूसमृद्धिः स्यात्तथा नीलोत्पलै शुभैः ।
प्रियङ्गपुष्पैर्मध्वक्तैर्धनधान्यमहोश्रियः ।१४९
मञ्जरीं शालिसम्भूतां मधुरत्रयलोलिताम् ।
जुहुयात्साधियते वह्नौ मन्डलात् स्याद्धरापतिः ।१५०
शुक्रवारे दिनमुख गृहीत्वा साध्यभूमृदम् ।
तामम्भसि विनिः क्षिप्य शोधितेऽत्र चरुं पचेत् ।१५१
पयोघृताभ्यां सहितं जुहुयात्तं हुताशने ।
षण्मासं शुक्रवारेषु हुत्वैवं प्राप्नुयान्महीम् ।१५२
धरामेवं पपेन्मन्त्री पशुरत्नधनादिभिः ।
धरायाः वल्लभः स स्यान्नात्र कार्या विचारणा ।१५३

इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध कर लेने वाला मन्त्रधारी अपने मनोरथों को साधित किया करता है। तीनों मधुरोंसे संयुत अरुणोत्पलों के द्वारा हवन करना चाहिए ।१४८। एक सहस्र आहुतियों के देने से भूमि की समृद्धि होती है । शुभ नीलोत्पलों–प्रियंगु–पुष्पों को मधु में अक्त करके उनसे होम करे तो धन-धान्य–भूमि और श्री की वृद्धि होती है। शाली की मन्जरी को तीनों मधुरों में लोलित करके साधित वह्नि में होम करे तो मण्डल से धरापति हो जाया करता है।१४९-१५०। शुक्रवार में प्रात:काल में साध्य की भूमि की मृत्तिका को ग्रहण करके उसको शोधित जल में डालकर इसमें चरुका पाचन करना चाहिये ।१५१। उसका पय और घृत में सहित रखकर अग्नि में होम करना चाहिए। छॅ मास तक शुक्रवारों में इसी प्रकार से होम करके मही की

प्राप्त किया करता है।१५२। मंत्रधारी इस प्रकार से धरा का जप करे तो पशु–रत्न–धन आदि के साथ वह धरा का स्वामी होता है इसमें कुछ भी विचारणा नहीं करनी चाहिए।१५३।

——

चतुर्दश पटल

।। नारसिंह प्रकरण ।।

अथाभिधास्ये विधिवन्नारसिंह महामनुम् ।
उग्रं वीरं वदेत्पूर्व महाविष्णुमनन्तरम् ।१
ज्वलन्तं पदमाभाष्य सर्वतोमुखमीरयेत् ।
नृसिंह भीषणं भद्रं मृत्युमृत्यु वदेत्ततः ।२
नमाम्यहमयं प्रोक्तो मन्त्रराजः सुरद्रुमः ।
ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टश्छन्दोऽनुष्टुब्रदाहृतम् ।
देवता नरसिंहः स्यात्सुरासुरनमस्कृतः ।३
चतुर्भिर्हृदयं वर्णैः शिरस्तावद्भिरीरितम् ।
शिखाऽष्टाभिः समुद्दिष्टा षड्भिः कवचमीरितम् ।४
ताव‌द्भिर्नयनं प्रोक्तमस्त्रं स्यात्करणाक्षरैः ।
शिरोललाटनेत्रेषु मुखबाह्वङ्घ्रिसन्धिषु ।५
साग्रेषु कुक्षौ हृदये गले पार्श्वद्वये पुनः ।
अपरांगे ककुदि च न्यसेद्वर्णान्यथाक्रमात् ।६

इसके अनन्तर विधि के साथ नृसिंह के महान् मंत्र राज के विषय में बतलाऊँगा–पूर्व में–उग्र वीर–इन पदों को कहे। इसके अनन्तर 'महाविष्णु' इसको बोले। फिर 'ज्वलन्त'–इस पद को कहकर 'सर्वतो मुख' यह कहना चाहिये। इसके उपरान्त नृसिंह भीषण भद्र मृत्युमृत्यु' इन पदों को कहे। फिर 'नमाम्यहम्" यह कहे—यह मंत्रराज कहा।

गया है जो कल्प वृक्ष के समान होता है। इसका ऋषि ब्रह्मा, अनुष्टुप् छन्द कहा गया है। इसके देवता नृसिंह हैं जो सभी सुरों और असुरों के द्वारा वन्दित होते हैं।१-३। चार वर्णों से हृदय और चार से ही शिर कहा गया है। आठ से शिखा और छैं से कवच बताया गया है।४। उतने ही से नमन कहा है और अस्त्र करणाक्षरों से होता है। वर्णों को क्रम के अनुसार शिर, ललाट, नेत्रों, मुख, बाहु, चरण, सन्धियों, साग्रों, कुक्षि, हृदय, कण्ड और दोनों पार्श्वों में, अपराङ्ग में और ककुद में न्यास करना चाहिये।५-६।

माणिक्याद्रिसमप्रभं निजरुचा संत्रस्तरक्षोगणम्।
जानुन्यस्तकराम्बुजं त्रिनयनं रक्तोल्लसत्भूषणम्॥
बाहुभ्यां धृतचक्रशंखमनिशं दंष्ट्राग्रवकोल्लस।
ज्वालाजिह्वमुदग्रकेशनिचयं वन्दे नृसिंहं विभुम्।७
वर्णलक्षं जपेन्मत्रं तत्सहस्रं धृताप्लुतैः।
पायसन्नैः प्रजुहुयाद्विधिवत्पूजितेऽनले।८
एवं कृते भवेन्मन्त्री सिद्धमन्त्रः प्रतापवान्।
पूजा प्रागोरिते पीठे मूर्त्ति मूलेन कल्पयेत्।९
पूजयेद्विधिवत्तस्यां दैत्यशत्रुमनन्यधीः।
अङ्गान्यादौ समाराध्य दिग्दलेषु यजेत्पुनः।१०
पक्षीन्द्र शंकरं मेषमब्रजयोनि यथाक्रमम्।
श्रियं ह्रियं धृतिं पुष्टिमङ्ग्रयादिषु यजेत्ततः।११
लोकपालाः समभ्यर्च्चास्तदेस्त्राणि ततः परम्।
इत्थं जपादिभिः सिद्धे मनौ काम्यानि साधयेत्।१२

अब नृसिंह भगवान् का ध्यान बतलाया जाता है—माणिक्य के पर्वत के समान प्रभा से समवेत—अपनी रुचि से राक्षसगणों को सत्रस्त करने वाले, जानुओं पर अपने कर-कमलों को न्यस्त किये हुए, तीन नेत्रों से समन्वित, रक्त उल्लसत् भूषणों से युक्त बाहुओं में निरन्तर चक्र और शंख को धारण करने वाले, दाढ़ों के अग्रभाग से उल्लासित ज्वाला—

युत जीभ वाले, ऊपरकी ओर उठे हुए केशोंके समूहों से युक्त विभु भगवान् नृसिंह की वन्दना करता हूँ ।७। इस मन्त्र के जितने वर्ण हैं उतने ही लाख इस मन्त्र का जप करना चाहिए और उतने ही सहस्र घृत से प्लुत पायसान्न से विधि के साथ समर्चित अग्नि में होम करे ।८। इस प्रकार से करने पर मन्त्रधारी सिद्ध मन्त्र वाला हो जाया करता है और प्रताप वाला होता है । पूर्व मे वर्णित पीठपर पूजा करनी चाहिए और मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिये ।९। उसी मूर्ति में अनन्य धी वाला पुरुष दैत्यों के शत्रु नृसिंह भगवान् का विधि के साथ अर्चन करे । आदि में अङ्गों की समाराधना करके पुन: दिग्दलों में यजन करना चाहिये ।१०। फिर पक्षीन्द्र शंकर–शेष अन्य योनि का क्रमानुसार यजन करे । श्री – ह्री धृति–पुष्टि का अन्घ्र आदि में यजन करना चाहिये ।११। लोकपालों का भली भाँति अर्चन करे और इनके उपरान्त आगे उनके अस्त्रों का यजन करना चाहिये । इस प्रकार से जप आदि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर काम्य कर्मों का साधन करना चाहिए ।१२।

उद्यत्कोटिरविप्रभं नरहरिं कोटीरहारोज्ज्वलम् ।
दष्ट्राभीममुखं लसन्नखमुखैर्दीर्घैरनेकैर्भुजैः ।
निर्भिन्नासुरनाथमग्निशशभृत्यसूर्यात्मनेत्रयम् ।
विद्युत्पुंजजटाकलापभयदं वह्नि वमन्तं भजे ।१३
सौम्ये सौम्यं स्मरेत्कार्य्ये क्रूरे क्रूरमिमं भजेत् ।
श्रीपुष्पैर्जुहुयान्मन्त्री बिल्वकाष्ठैधितेनले ।१४
सहस्रं श्रियमाप्नोति पत्रैर्वा बिल्वसम्भवैः ।
प्रसूनैर्वा फलैस्तद्वद्दर्वाहोतादरोगताम् ।१५
मन्त्रजप्त वचां श्वेतां भक्षयेत्प्रातरन्वहम् ।
वाक्सिद्धि लभते मन्त्री वाचस्पतिरिवापरः ।१६
सलिले देवमभ्यर्च्य गन्धपुष्पादिभिः शुभैः ।
दूर्वाभिस्तत्र जुहुयान्नित्यमष्टोत्तरं शतम् ।१७

अब ध्यान कहा जाता है–उदीयमान करोड़ों सूर्यों के समान प्रभा से अन्वित–किरीट और हार से समुज्ज्वल दाढ़ों के द्वारा भीषण मुख से युक्त, कान्तियुक्त नखों और मुखों से जो दीर्घ, अनेक भुजाओंसे युक्त है–समन्वित असुरों के स्वामी हिरण्यकशिपु को विदीर्ण करते हुए–अग्नि और शश को धारण करने वाले सूर्य के स्वरूप वाले तीन नेत्रों से समन्वित विद्युत से पुंज के समान जटाओं के समुदाय से भय प्रदाता–वह्निका यजन करते हुए नृसिंह भगवान् का भजन करता हूँ ।१३। सौम्य कार्य में इनके सौम्य स्वरूप का तथा क्रूर कर्म में इन के क्रूर स्वरूपका सेवन करनाचाहिए । बिल्व वृक्षके काष्ठोंकी समेवित अग्नि में अथवा पत्रों से श्री पुष्पोंके द्वारा मन्त्रधारी होम करे । एक सहस्र आहुतियों से श्रीको प्राप्ति किया करता है । प्रसूनों से अथवा फलों से उसी भाँति दूर्वा के होम से निरोगिता को प्राप्त किया करता है ।१४-१५। मन्त्र के द्वारा जप की हुई श्वेत वच का प्रति दिन प्रातः काल में भक्षण करे तो मन्त्रधारी वाक् सिद्धि को प्राप्त कर लेता है और दूसरे वाचस्पति के ही समान हो जाया करता है ।१–। जल में परम शुभ गन्ध पुष्पादि के द्वारा देव का अभ्यर्चन करके वहाँ पर नित्य ही अष्टोतर शत का होम करे ।१७।

उपसर्गा विनश्यन्ति क्षुद्रभूतज्वरादिभिः ।
दुःस्वप्ने निशि संजाते स्नात्वा मन्त्रममुं जपेत् ।१८
अनिद्रो मन्त्रवित्पश्चात्सुस्वप्नस्तस्य जायते ।
व्याघ्रचौरमृगादिभ्यो महारण्ये भयाकुले ।१९
रक्षेन्मनुरयं जप्तो भयेष्वन्येषु मन्त्रिणम् ।
अनेन मन्त्रितं भस्म विषग्रहमहाभयान् ।२०
नाशयेदचिरादेव मन्त्रस्यास्य प्रभावतः ।
घोरेऽभिचारे सोन्मादे महोत्पाते महाभये ।२१
जपेन्मंत्रं स्मरेदेव दुःखान्मुक्तो भवेन्नरः ।
सिंहरूप महाभीमं नखदंष्ट्रातिभीषणम् ।२२

स्मृत्वाऽऽत्मानं रिपुं पश्चाद्ध्यायेन्मृगशिशुं पुरः ।
गृहीत्वा गलदेशे तं पुनर्दिक्षु क्षिपेद्द्रुतम् ।२३

इसके करने पर क्षुद्र भूत ज्वर आदि के द्वारा होने वाले उपसर्ग विनष्ट हो जाया करते हैं । रवि में दुःस्वप्न केहो जाने पर स्नान करके इस मत्र का जप करना चाहिए ।२८। इसके पीछे मत्र का ज्ञाता निद्रा रहित रहेतो उसको सुन्दर स्वप्नहुआ करता है । भयसे समाकुल महान् अरण्य में व्याघ्र चोर और मृगादि से यह जपा हुआ मंत्र रक्षा किया करता है तथा अन्य प्रकार के मंत्रों में भी यह मंत्रधारी की रक्षा करता है । इसके द्वारा अभिमंत्रित भस्म विष ग्रह के महान् भयों का तुरन्त ही विनाश कर दिया करता है । इस मन्त्र का यह प्रभाव होता है । घोर अभिचार मे उन्माद में महान् उत्पात में और महान् भय में इम महान् मंत्र का जप करे और देव का स्मरण करना चाहिए । इससे मनुष्य दुःख से विमुक्त हा जाया करता है । अपने आपको सिंह के स्वरूप वाला महान् भीषण नखों और दंष्ट्रा से अत्यन्त भयानक स्मरण करके इसके पश्चात् शत्रु को अपने आगे मृग के शिशु के रूप में ध्यान करना चाहिये । उसके कन्ठ को पकड़कर उसकी शीघ्रही दिशाओं में शिप्त कर देवे ।१९-२३।

पुत्रमित्रकलत्राद्यै रुच्चाटोजायते रिपोः ।
पर्वमृत्युपदे साध्यनामकृत्वा स्वयं हरिः २४
निशितैखदंष्ट्राग्रैः खाद्यमानं रिपुं स्मरेत् ।
नित्यमष्टोत्तरशतं जपेन्मन्त्रमतन्द्रितः ।२५
जायते मण्डलादर्वाक् शत्रु वैवस्वतप्रियः ।
कुर्वीत यत्नं विधिवच्छत्रुसेनानिवारणे ।२६
बिभीतकाष्ठे ज्वलिते पावके रिपुमर्द्दनम् ।
विचिन्त्य देवं नृहरिं सम्पूज्य कुसुमादिभिः ।२७
समूलतू (तूलमू) लैर्जुहुयाच्चक्षरैर्दशशतं पृथक् ।
रिपुं खादन्निव जपेतिभेदन्निव च तान् जपे (क्षिपे) त ।२८

हुत्वा सप्तदिनं मन्त्री सेनाभिष्टा महीपतेः ।
प्रस्थापयेच्छुभे लग्ने परराज्यजयेच्छया ।२९
तस्याः पुरस्तान्नृहरि निघ्नन्तं रिपुमण्डलम् ।
स्मृत्या प्रयोगं कुर्वीत यावदायाति सा पुनः ।३०
विजित्य निखिलाञ्छत्रून् सहवीरश्रिया सुखम् ।
आगत्य विजयी राजा ग्रामक्षेत्रधनादिभिः ।३१
प्रीणयेन्मत्रिणं सम्यग्विभवैः प्रीतमानसः ।
मन्त्री यदि न सन्तुष्टोह्यनर्थः स्यान्महीपतेः ।३२
बीज साध्यसमन्वितं प्रविलिखेन्मध्येऽष्टपत्रेष्वथो ।
मन्त्रार्णान् श्रुतिशो विभज्य विलिखेत् लिप्या बहिर्वेष्टयेत् ।
यन्त्रं क्षुद्रविषग्रहाभयरिपुप्रध्वसनं श्रीप्रदम् ।३३

रिपू को पुत्र-मित्र-कलत्र आदि से उच्चाटन हो जाता है । पूर्व मृत्यु पद में (मन्त्र में तो दो मृत्युपद है उनमें पिछले मृत्यु पद में) साध्य का नाम करके हरि स्वयं पैने नखों के अग्र भागों के द्वारा खद्य- अर्थात् खाये जाने वाले अपने शत्रु का स्मरण करना चाहिए । तन्द्रा रहित होकर नित्य ही मन्त्र को एक सौ आठ बार जपे तो मण्डल से पहिले ही शत्रु यमराज का प्रिय अर्थात् मृत हो जाया करता है । विधि के साथ शत्रु के निवारण करने में यत्न करना चाहिए । २४-२६। विभीत वृक्ष के काष्ठ से ज्वलित अग्नि में रिपु के मर्दन का ध्यान करके कुसुम आदि उपचारों से नृसिह देव का पूजन करे ।२७ मूल के सहित तूल शरों से पृथक् एक सहस्र का होम करे । रिपु को खाते हुये के समान तथा उसका भेदन करते हुये के समान जप करे ।२१। मन्त्रधारी सात दिन होम करके राजा को अभीष्ट सेना को शुभ लग्न में प्रस्थान करावे और दूसरे की राज्य की इच्छा से करावे ।२९। उस सेना के आगे रिपु मण्डल का निहनन करते हुये नृसिह भगवान् का स्मरण करके जब तक फिर न आवे प्रयोग करे ।३०।

इसका यह प्रभाव होता है कि विजय श्री के साथ सुख पूर्वक समस्त शत्रुओं को जीतकर राजा विजयी होता हुआ आकर ग्राम क्षेत्र धन आदि से भली भाँति प्रसन्न होकर विभवों से मन्त्रधारी को प्रीणित करे। यदि मन्त्रधारी सन्तुष्ट न होवे तो राजा का अनर्थ होता है। ।३१-३२। अब यन्त्र बतलाया जाता है—साध्य से समन्वित बीज को लिखे और आठ पत्रों में मध्य से श्रुतिशः विभाग करके मन्त्र के वर्णों को लिखना चाहिए। बाहर लिपि से वेष्टित कर देवे। बाह्य कोणों में गत बीज से बद्ध वसुधा गेह (भूपूर) दो से समावृत्त मन्त्र होता है। वह यन्त्र क्षुद्र, विष—ग्रह रोग–रिपुओं के नाश करने वाला तथा श्री का प्रदाता है।३३।

कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलं यन्त्रसंयुतम्।
अस्मिन् संस्थापयेन्मन्त्री कलशान्नव शोभनान् ३४
कषायतोयसम्पूर्णान् वस्त्ररत्नादिसंयुतान्।
मध्ये सम्पूजयेद्देवं नृसिंह शान्तविग्रहम् ।३५
तार्क्ष्यादीन्पूजयेन्मन्त्री पूर्वादिषु यथाक्रमम्।
इति संसाधितैस्तोयैरभिषिञ्चेत्प्रियं नरम् ।३६
अभिचारग्रहोन्मादा विनश्यन्त्यरिभिः सह।
अभिषिक्तस्तदा विप्रान् पूजयेद्देवता धिया ३७
यथावत्पूजयेत्पश्चात् भक्त्या गुरुमवञ्चयत्।
राजा विजयमाप्नोति युद्धेषु विधिनाऽमुना ।३८

नौ पदों के स्वरूप वाले मन्डल की रचना करके जो मन्त्र से संयुत होवे। इसमें मन्त्रधारी पुरुष नौ परम शोभन कलशों की स्थापना करे। जो कषाय जल से परिपूर्ण और नौ रत्नादि से समन्वित होवे। मध्य में परम शान्त शरीर वाले नृसिंह देव का इस प्रकार से पूजन करना चाहिए ।३४-३५। मन्त्रधारी पूर्व आदि दिशाओं में क्रम के अनुसार तार्क्ष्य आदि का अर्चन करे। इस रीति से संसाधित जलों से प्रिय मनुष्य का अभिषिचन करना चाहिए।३६। अभिचार—ग्रह—उन्माद शत्रुओं के साथ विनष्ट हो जाया करते हैं। उस समय में

अभिषिक्त होकर विप्रों को देवता की बुद्धि से पूजा करनी चाहिये ।३७।
इसके पीछे वंचना न करते हुए भक्ति की भावना से यथा रीति से गुरुदेव का अर्चन करे। इस विधि से राजा, युद्धों में विजय को प्राप्त किया करता है ।३८।

वीजाङ्कं गणपञ्चकं प्रविलिखेच्छेषस्य भोगे पुनः
द्वात्रिंशत्पदसंयुते परिलिखेन्मन्त्राक्षराणि क्रमात् ।
पुच्छेनाम जपादिसाधितमिदं होमेन सम्पातितम् ।
भूतापस्मृतिदुःखरोगशमनं मन्त्रं रिपुध्वसनम् ।३९
क्षकारी वह्निमारूढो मनुस्वरसमन्वि तः ।
बिन्दुनादलसन्मूर्द्धा बीज नरहरेर्मतम् ।४०
वीज नमोभगवते नरसिंहाय तत्परम् ।
स्याज्ज्वालामालिने पश्चाद्दीप्तदंष्ट्राय तत्परम् ।४१
अग्निनेत्राय सर्वादि दक्षोघ्नाय पदं वदेत ।
सर्वभूतविनाशान्तं नकारो दीर्घवान् मेरुत् ।४२
सर्वज्वरविनाशान्ते नायार्णोदहयुग्मकम् ।
पचद्वयं रक्षयुग्मं हुं फट् स्वाहा ध्रुवादिकाः ।४३
सप्तषष्ट्यक्षरैः प्रोक्तो ज्वालामाली महामुनिः ।
हृत्त्रयोदशिभिः प्रोक्तं शिरोदशभिरीरितम् ।४४
शिखैकादशभिः प्रोक्ता वर्माष्टादशभिर्मतम् ।
वर्णैर्द्वादशभिर्नेत्रमस्त्रं स्यात्करणाक्षरैः ।४५

फिर शेष के भोग में बीजों के गण पंचक को लिखे और क्रम से बत्तीस पद संयुक्त में मन्त्र के अक्षरोंको लिखना चाहिए। पुच्छ में नाम लिखे। इसको जपादि से साधित करे और होम से सम्पादित करे। यह मन्त्र भूत, अपस्मृति, दुःख, रोग का शमन करने वाला तथा शत्रुओं के ध्वंस करने वाला होता है ।३९। क्षकार वह्नि (रेफ) से संयुत होवे और मन्त्र के स्वरों से समन्वित होवे और विन्दु तथा नादसे उल्लासित मूर्द्धा वाला नृसिंह का बीज माना गया है ।४०। अब ज्वाला

नृसिंह मन्त्र को बताया जाता है–आदि में बीज फिर 'नमोभगवते'– यह पद, इसके बाद "नरसिंहाय'–यह पद, पश्चात् 'ज्वाला मालिने'– यह पद, पीछे 'दीप्तदंष्ट्रा'–यह पद, फिर, "अग्नि नेत्राय' यह पद, और सर्वादि में 'रक्षोघ्नाय'–यह पद बोलना चाहिए । 'सर्व भूत विनाशांत' के अन्त में दीर्घनकार होता है । दो बार 'पच' शब्द और दो बार 'रक्ष' शब्द होता हैं, ध्रुव आदि में और 'हूं फट् स्वाहा' यह पद होना चाहिये । यह सड़सठ अक्षरों वाला ज्वालामाली महा मन्त्र कहा गया है । इसका हृदय तेरह से बताया गया है और शिर दश से कहा है । द्वादश वर्णों से नेत्र तथा अस्त्र करणाक्षरों से कहा है । शिखा ग्यारह से और वर्म अठारह से बताया गया है ।४१-४५।

एवमङ्गानि विन्यस्य चिन्तयेन्मन्त्रदेवताम् ।४६
उज्ज्वलप्रलयानलाभमयुग्मनेत्रमनारतम् ।
भासुरं शिखिनः शिखाभिरुदग्रदंष्ट्रिमुखाम्बुजम् ।
रक्षसां भयदं विकीर्णजटाकलापविभीषणम् ।
शंखचक्रकृपाणखेटकधारिणं नृहरिं भजे ।४७
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं समाहितः ।
कपिलाज्येन जुहुयात् समिद्धे हव्यवाहने ।४८
प्रागुक्ते पूजयेत्पीठे देवं संप्रोक्तवर्त्मना ।
कुर्वीय मन्त्रराजोक्तान् प्रयोगान्मनुनाऽमुना ।४९
विशेषात् क्षुद्रभूतारिनाशनोऽयं मनुः स्मृतः ।
पाशशक्तिर्नरहरिरंकुशो वर्म फट् मनुः ।५०
षडक्षरो नरहरिः कथितः सर्वकामदः ।
ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम् ।
देवता नरसिंहोऽस्य षड्बीजैरङ्गकल्पना ।५१

इस रीति से अङ्गों का विन्यास करके मन्त्र के देवता का चिंतन करना चाहिए । अब ध्यान बतलाया जाता है-उज्ज्वल प्रलय की अग्नि की आभा के समान आभा वाले–निरन्तर अयुग्म नेत्र से युक्त,

भासुर-शिखोंकी शिखाओंके समान उपदंष्ट्राओंसे युक्त मुख कमल वाले-राक्षसों को भय कर देने वाले-फैले हुये जटाओं के समुदाय से भीषण-शंख, चक्र, कृपाण और खेटक को धारण करने वाले भगवान नरसिंह का भजन करताहूँ ।४६-४७। इस मन्त्रका एकलाख जपकरना चाहिये । जप का दशांश कपिलाओंके घृतसे समद्धि अग्निमें परम समाहित होकर होम करे ।४८। पहिले बताये हुए पीठ पर कहे हुए मार्ग के द्वारा देवका पूजन करना चाहिये । इस मन्त्र के द्वारा मन्त्र में कहे हुए प्रयोगों को करना चाहिए ।४९। विशेष रूप से यह मन्त्र क्षुद्र, भूत-और शत्रुओं का विनाश करने वाला होता है ऐसा कहा गया है । पाश शक्ति है, नरहरि अंकुश है-और वर्म फट् होता है । यह नरहरि का मन्त्र छै अक्षरों वाला है और सब कामनाओं का प्रदाता कहा गया है । इसका ऋषि कहा गया है और पंक्ति छन्द बताया गया है । इसका देवता नरसिंह है । छै बीजों से अङ्गों को कल्पना करे ।५०-५१।

कोपादालोलजिह्वं विवृतनिजमखं सोमसूर्याग्निनेत्रं
पादादनाभिरक्तप्रभमुपरि सितं भिन्नदैत्येन्द्रगात्रम् ।
चक्रं शंखं सपाशांकुशकुलिशगदादारुणान्युद्वहन्तम् ।
भीमं तीक्ष्णोग्रदंष्ट्रं मणिमयविविधाऽऽकल्पमीडे नृसिंहम् ।५२
तुलक्षं जपेदेतं वृतेन जुहुयात्ततः ।
तत्सहस्रं समिद्धेऽग्नौ तोषयेद्द्रविणैर्गुरुम् ।५३
अर्चा प्रागीरिते पीठेमूर्त्ति भूलेन कल्पयेत् ।
अङ्गवृत्तैर्बहिश्चक्रं शंखं पाशाङ्कुशौ पुनः ।५४
वज्रं कौमोदकीं खड्गखेटौ पत्रेषु पूजयेत् ।
इन्द्राद्यानेतदस्त्राणि पूजयेद्बाह्यतः सुधीः ।५५

अब ध्यान बताया जाता है-कोप से आलोल अर्थात् चंचल जिह्वा वाले-अपने मुख को खोले हुये-सोम, सूर्य और अग्नि के नेत्रों से युक्त करणों से नाभि पर्यन्त रक्त प्रभा संयुत ऊपर के भाग में सित-दैत्येन्द्र हिरण्य कशिपु के गात्र को विदीर्ण करने वाले--शंख, चक्र, पाश,

अंकुश, कुलिश गदा आदि दारुण आयुधों को धारण करते हुए—परम भीषण-तीक्ष्ण और उग्र दंष्ट्राओं से समन्वित, मणियों से परिपूर्ण अनेक भूषणों से भूषित भगवान् नृसिंह देव का मैं स्तवन करता हूँ ।५२। इस मन्त्र का छै लाख जप करे और उतने ही सहस्र घृत के द्वारा समिद्ध अग्नि में होम करना चाहिए । अपने गुरु को द्रव्य के दान द्वारा सन्तुष्ट करे ।५३। पहिले कथित पीठ पर पूजा करे और मूल मन्त्र से मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए । अङ्ग वृत्त से बाहर चक्र—शंख—पाश—अंकुश—वज्र—कौमोदकी खड्ग-खेटक पत्रों में अर्चन करना चाहिये । उपासक को इन्द्र आदि का और इनके आयुधों की बाहर पूजा करनी चाहिये ।५४-५५।

एवं कृत्वा पुरश्चर्यां मन्त्रेणानेन मन्त्रवित ।
प्रयोगान् कल्पनिर्द्दिष्टान् कुर्यात् स्वस्यापरस्यवा ।५६
रक्तोत्पलस्त्रिमध्वक्तैः महस्रं जुहुयान्नवैः ।
नित्यं मासाद्भवेदिष्टं वत्सराद्धनधान्यवान् ।५७
रक्तैस्त्रिमधुरोपेतः पद्मैर्भानुसहस्रकम् ।
जुहुयान्महतीं लक्ष्मीमायुर्वंश्यमवाप्नुयात् ।५८
लाजांस्त्रिमधुरोपेतान्प्रातः कालेषु जुह्वतः ।
कन्यासिद्धिर्भवेत्पश्चात्कन्यायाः सद्वरोभवेत् ।५९
दूर्वाः पयोघृताभ्यक्ता दशोत्तरशतं सुधीः ।
अन्वहं जुहुयात्सम्यग्दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।६०
तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहादिभिः सह ।
सपञ्चगव्यं जुहुयादपामार्गस्य मञ्जरीः ।६१
नित्यं सहस्रमानेन सप्ताहं विजितेन्द्रितः ।
होमोऽयं सर्वथा भतकृत्यारोगान् प्रणाशयेत् ।६२
सतिलैराज्यपामार्गहविराज्यैर्यथाक्रमम् ।
द्विसहस्रं प्रजुहुयात् क्षुद्ररोगग्रहान् जयेत् ।६३

इस तरह से पुरश्चरण करने वाला मन्त्र का ज्ञाता इस मंत्र के द्वारा कल्प में निर्दिष्ट अपने अथवा दूसरे के प्रयोगों को करे।५६। नवीन सहस्र उत्पलों को तीन मधुरों में अक्त करके नित्य होम करे तो एक ही मास में अभीष्ट की प्राप्ति होती है और एक वर्षमें धन धान्य-वान् हो जाया करता है।५७। तीन मधुरों से उपेत रक्त पद्मों के द्वारा बारह सहस्र आहुतियाँ देवे तो लक्ष्मी आयु तथा वशीकरण की प्राप्ति होती है।५८। तीन मधुरों से समुपेत लाजाओं का प्रात:काल में हवन करने वाले पुरुष को कन्या की सिद्धि हो जाती है और कन्या को श्रेष्ठ वर की प्राप्तिहो जाया करती है।५९। सपुरुष पय और घृतमें अभ्यक्त दूर्वा का एक सौ दश वार प्रतिदिन होम करे तो भली भाँति दीर्घ आयु प्राप्त करता है।६०। उस पुरुष के कृत्याद्रोह आदि के सहित सभी रोग नष्ट हो जाया करते हैं। अपामार्ग की मजरी से एक सप्ताह तक जितेन्द्रिय रहकर होम करे तो यह होम सर्वदा भूत, कृत्या रोगों का विनाश कर दिया करता है।६१-६२। क्रम के अनुसार ति-राजी-अपामार्ग-हवि–आज्य से दो सहस्र आहुतियाँ देवे तो क्षुद्र रोग और ग्रहों पर विजय प्राप्त कर लिया करता है।६३।

पयोक्तैरमृताखण्डैस्त्रिसहस्रं चतुर्दिनम् ।
अनेन विहितो हमो ग्रहज्वरविनाशनः ।६४
नृसिंहशक्तिबीजे द्वे शूले तारगते लिखेत् ।
तत्र ग्रहार्त्तं संस्थाप्य जपेन्मन्त्रं षडक्षरम् ।६५
अविश्य सद्यस्तं मुञ्चेद्ग्रहः क्रन्दन्भयाकुलः ।६६
आलिख्याग्निपुरद्वयं तदुदरे शक्ति ससाध्यां लिखेत् ।
षट्कोणेषु षडक्षराण्यथमनोः किञ्जल्कसंस्थान स्वरान् ।
पत्रेष्वष्टसु मन्त्रराजविहितान्वर्णान् क्रमाद्द्वदशः ।
काद्यर्णैः पुनरावृतं त्रितिपुरे कोणेषु चिन्तामणिम् ।६७
नारसिंहमिदयन्त्रं लिखितं भूर्जपत्रके ।
विधृतं शिरसा शीर्षरोगभूतज्वरान् हरेत् ।६८

दूध में अक्त अमृता (गिलौय) के खन्डोंके द्वारा दो सहस्र चार दिन तक होम करे उसके द्वारा किया हुआ होम यह ज्वर का विनाश करने वाला हुआ करता है ।६४। नृसिंह शक्ति के दो बीज और प्रणव गत शूलों को लिखे ! वहाँ पर ग्रहोंसे आर्त्त व्यक्ति को स्थापित करके छँ अक्षरों वाले मंत्र का जप करे। अविष्ट होकर तुरन्त ही भय से आकुल होकर रुदन करता हुआ यह उसको छोड़ दिया करता है ।६५। ६६। अग्नि पुर लिख कर उसके उदर में साध्य के सहित शक्ति का लेखन करे। छँ कोणों में छँ अक्षरों को लिखे मन्त्र के किंजल्को में स्थित स्वरों को और आठ पत्रों में मन्त्रराज में विहित वर्णोंकी क्रमसे लिखे। चारों ओर कादिवर्णों से त्रिपुर में कोणों में चिन्तमणि को पुनः आवृत्त करे ।६७। यह नरसिंह यन्त्र होता है। इसको भोज पत्र पर लिखे और इसको शिरपर बाँधे तो यह दीर्घ रोग-भूत ज्वरोंका हरण किया करता है ।६८।

बहुनात्र किमुक्तेन मन्त्रैतैरुदोरितैः ।
समोनास्ति मनुः कश्चिच्छायानुग्रहकारका ६९
तारो भृगुर्वियद्भूयस्तदाढयं वह्निदीर्घयुक् ।
पावकः कवचास्त्रान्तो मनुः सप्ताक्षरः स्मृतः ।७०
अहिर्बुध्न्यो मुनिः प्रोक्षश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
देवता मुनिभिः प्रोक्तश्चक्ररुपाहरिः स्वयम् ।७१
अचक्राय हृदाख्यातं विचक्राय शिराः स्मृतम् ।
सुचक्राय शिखा प्रोक्ता श्रीचक्राय तनुच्छदम् ।७२
सञ्चक्रात स्मृत नेत्र ज्वालाचक्राय ततारम् ।
षडङ्गमन्त्राः प्रत्येन द्विठान्ता जातिसंयुताः ।७३
ए ह्रीं चक्रेण बध्नामि नमश्चक्राय ठद्वयम् ।
मन्त्रेणानेन कुर्वीत दिशां प्रागादि बन्धनम् ।७४

यहाँ पर अत्यधिक कहने से क्या लाभ है। यही कहना पर्याप्त है कि इन उदीरित मन्त्रों के समान छायानुग्रह करने वाला अन्य कोई

भी मन्त्र नहीं है ।६९। अब सुदर्शन मन्त्र कहा जाता है–तार–प्रणव, भृगु––सः विद्युत–घः, उससे आढ्य स', वह्नि––रेफ, दीर्घ से युक्त हो अर्थात् साः पावक रेफ, कवच हुम, अस्त्र फट् यह मन्त्र सात अक्षरों वाला होता है ।७०। इसकाऋषि अहिर्बुध्न्य है और इसका छन्द अनुष्टुप कहा गया है । इसका देवता मुनियों के द्वारा स्वयं चक्र रूप वाले हरि बताये गयेहैं ।७१। अचक्राय-यह हृदय कहागया है और विचक्रॉय इसका शि है। सुचक्र य वह इस की शिखा कही गई है और श्री चक्राय इसका तगुच्छद होता है ।७२। सञ्चकाय–यह नेत्र है उसके आगे ज्वाला चक्राय है। प्रत्येक अङ्ग मन्त्र दो ठकार के अन्त वाले जाति संयुत है ।७ । ऐ ह्रीं चक्रेण वघ्नापि नमश्चक्राय और दो ठकार हैं। इस मन्त्र के द्वारा पूर्व आदि दिशाओंका बन्धन करना चाहिए।७४।

त्रैलोक्यान्ते रक्षयुगं हुं फट् स्वाहा ध्रुवादिकः ।
अग्निप्राकारमन्त्रोऽयं रक्षार्थं पुनरात्तनः ।७५
प्राकारं तेन कुर्वीत मन्त्रेण मनुवित्तमः ।
सियरक्ताञ्जनप्रख्यं नारं मूर्द्धनि विन्यसेत् ।७६
अन्यानग्निनिभान्वर्णान् भ्रुवोर्मध्ये मुखे हृदि ।
गुह्यजानुपदद्वन्द्वसन्धिषु क्रमशो न्यसेत् ।७७
कल्पान्तार्क्कप्रकाशं त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्त
रक्ताक्षं पिङ्गकेशं रिपुकलभयदं भीमदंष्ट्राट्टहासम् ।
शङ्खं चक्रं गदाब्जे पृथुतरमुशलं चापपाशाङ्कुशान्स्वै-
विभ्राणं दोर्भिराद्यं मनसि मुररिपुं भावयेच्चक्रसंज्ञम् ।७८

त्रैलोक्य-इसके अन्त में दो बार "रक्ष" यह पद होता है। आदि में प्रणव औरफिर 'हूँ फट् स्वाहा'–यहपद है । यह अग्नि प्रकारका मंत्रहै। अपनी रक्षा के लिये उससे (मन्त्र के द्वारा) मन्त्र का ज्ञाता प्राकार करे। सित-रक्त और अंचन वाले तार अर्थात् प्रणव का मूर्धा में विन्यास करना चाहिये ।७५-७६। अन्य अग्नि के तुल्य वर्णों का भ्रूओं के मध्य

में–मुख–हृदय–गुह्य–दोनों चरण और सन्धियों में क्रम से विन्यास करना चाहिये ।७७। अब ध्यान का क्रम बतलाया जाता है–कल्प के अन्त में रहने वाले सूर्य के समान प्रकाश से समन्वित-तेज के द्वारा सम्पूर्ण त्रैलोक्य को पूरित करते हुए–रक्त नेत्रों से संयुत–पिङ्गल वर्ण के केशों से युक्त–शत्रुओं के समुदाय को भयदाता–भीषण दंष्ट्राओं के प्रदर्शन करके अट्टहास हुए–अपनी बाहुनों के द्वारा शंख—चक्र–गदा, पद्म, पृथुतर मुसल, चाप, पाश, आकुश को धारण करने वाला–आद्य, मुरके शत्रु चक्र संज्ञा वालेकी मनमें भावना करनी चाहिए ।७८।

अर्कलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहयात्तत्सहस्रकम् ।
तिलैः ससर्षपैः रद्सैर्बिल्वैर्दुग्धौदनैः क्रमात् ।७६
विष्णोः सम्पूज्ययेत्पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत् ।
अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य चक्राद्यस्त्राणि तद्वहिः ।८०
चक्रं शंख गदां पद्म मुसलं सशरन्धनुः ।
पाशाङ्कुशौ दलाग्रेषु लक्ष्म्याद्याः पूजयेत्ततः ।८१
लक्ष्मीं सरस्वती पश्चाद्रतिं प्रीतिं ततः परम् ।
कीर्तिकान्ती तुष्टिपुष्टी सर्वा एताः स्मृता द्विधः ।८२
पीतरक्तसितश्यामा,इन्द्राद्यस्त्राणि तद्बहिः ।
इति सिद्धैर्मनौ प्रोक्तप्रयोग्रान्कर्त्तुमर्हति ।८३

इस मन्त्रमें जितने वर्ण है उतने ही लाख इस मन्त्रका जप करे और उतने ही सहस्र सर्षग के सहित तिलों के द्वारा–पद्मों से, बिल्व से और दुग्धओदन से क्रम से होम करे ।७६। भगवान् विष्णु के पीठ पर पूजन करे तथा मूल मन्त्र के द्वारा मूर्ति की कल्पना करनी चाहिए । पूर्व में अङ्गों का अर्चन करके उनके बाहर चक्रादि अस्त्रों का यजन करे ।८०। दलों के अग्रभागों में पाश और अंकुश का पूजन करे फिर लक्ष्मी आदि का अर्चन करना चाहिये ।८१। लक्ष्मी-सरस्वती-रति-प्रीति कीर्त्ति कान्ति–तुष्टि–पुष्टि–ये सभी दो बार समर्चित करे ।८२। इसके वर्ण

पीत–रक्त–सित और श्याम हैं। फिर इन्द्रादि का तथा उसके बाहर उनके आयुधों का पूजन करे। रीति से अर्चन करने पर मन्त्र सिद्ध हो जाता है और सिद्ध हो जाने पर कहे हुए प्रयोगों को करने के योग्य हो जाता है।८३।

आत्मनो वा परार्थं वा दृष्टादृष्टफलप्रदान्।
दूर्वाहोमो विधातव्यो दीर्घमायुरभीप्सता।८४
श्रीकामो जुहुयात्पद्मैः फुल्लैराज्यपरिप्लुतैः।
मेधाकामेन होतव्यं प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः।८५
दिनत्रयं यो जुहोति गुलिकाः पुरुनिर्मिताः।
अष्टोत्तरसपस्रेण स जियेन्निखिलापदः।८६
गव्येनाज्येन गोसिद्धयै जुहुयाद्दिवसत्रयम्।
उदुम्बरसमिद्धोमः पुत्रदायी भवेन्नृणाम्।८७
प्रलयाग्निसमं चक्रं यस्य मूर्द्धनि चिन्तयेत्।
सप्ताहाज्ज्वरमूर्च्छार्तो मण्डलान्मृतिमेति सः।८८

अपने लिये अथवा दूसरों के लिए इन दृष्ट तथा अदृष्ट फलके प्रदान करने वाले प्रयोगों को करना चाहिए। दीर्घ आयुकी इच्छा रखने वाले व्यक्ति को दूर्वा का होम करना चाहिए।८४। जो श्रीकी कामना वाला हो उसे विकसित तथा आज्य में परिप्लुत पद्मों के द्वारा हवन करना चाहिए। जो मेधा की कामना रखने वाला हो उसे ब्रह्म वृक्ष के पुष्पों के द्वारा होम करना चाहिए।८५। जो पुरुष तीन दिन तक पुरुनिर्मित गुलिकाओं का हनन किया करता है और एक सहस्र आठबार आहुतियाँ देता है वह समस्त आपदाओं पर विजय प्राप्तकर लिया करता है।८६। गौ सिद्धि के लिये गाय घृत से तीन दिन तक होम करे। गूलर की समिधाओं से किया हुआ होम मानवों कों पुत्र के प्रदान करने वाला हुआ करता है।७७। प्रलय काल की अग्नि के समान चक्र का जिसके मस्तक में चिन्तन करे वह एक सप्ताह में ज्वर की मूर्च्छा से पीड़ित हो जाता है और मन्डल से वह मृत्यु को प्राप्त हो जाया करता है।८८।

अकारादिस्वरावीतं याहियाहिपदावृतम् ।
सकारं चिन्तयेच्छत्रो मूर्द्धन्युच्चाटमावहेत् ।८८
अनेन विधिना शत्रुर्मण्डलामृत्युभाग्भवेत् ।
शरच्चन्द्रनिभं सार्णं सुधाधाराभिवर्षिणम् ।९०
स्मरेन्मूर्द्धनि यस्यासौ स जीवेद्विगतामयः ।
आत्मानं चक्रनाभिस्थं ध्यात्वा मन्त्रममुं जपेत् ।९१
एकोऽपि रणभूमिस्थो जयेत्प्रत्यर्थिनो बहून् ।
अपामार्गस्य समिधो जुहुयादयुतत्वधि ।९२
रक्षो भूतपिशाचारिपीडा तस्य न जायते ।
निर्गुण्डो सर्ज्जकनकश्वेताकिंशुकसम्भवैः ।९३
समिद्वरैः कृतो होमः क्षुद्ररोगग्रहापहः ।
अपामार्गस्य समिधाः सर्षिर्मध्ये श्रृतश्चरुः ।९४
आज्यमेतानि जुहुयादष्टोत्तरशतं पृथक् ।
साधकाय पुनर्दद्याच्चरुं सम्पातसाधितम् ।९५
अभिचारकृता द्रोहास्तस्य नश्यन्ति सर्वथा ।
अपामार्गस्य समिधः पञ्चगव्यपरिप्लुताः ।९६
जुहुयादयुतं मंत्री दिशासु बलिमाहरेत् ।
दध्योदनेन मनुना क्षुद्ररोगदिशांतये ।९७

अकार आदि स्वरों से आवीत और 'याहि-याहि'—इस पद से आवृत्त सकार को शत्रु के मूर्धा में चिन्तन करे तो वह उच्चाटन का आवाहन किया करता है ।८९। इसी विधि से करने पर शत्रु मन्डल में मृत्यु भजने वाला हो जाता है । शरत् काल के स्वच्छ चन्द्र के सदृश सकार वर्ण को जो सुधा धारा का अभिवर्णन करने वाला है, ऐसे का जिस पुरुष के मस्तक में स्मरण करे वह पुरुष विगत रोग वाला होकर जीवित रहा करता है । अपने आपको चक्र की नाभि में स्थित हुआ ध्यान करके इस मन्त्र का जप करे तो अकेला ही रण भूमि में स्थित होकर बहुत से शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेता है । अपमार्ग की

समिधाओं से दश सहस्र की अवधि पर्यन्त आहुतियाँ देवे ।९०-९२। तो इसका यहप्रभाव होता है कि उस पुरुषको राक्षस-भूत-पिशाच और शत्रु की पीड़ा कभी नहींहुआ करती है । निर्गुण्डी-सर्ज्जकनक (धतूरा) श्वेत पलाश की श्रेष्ठ समिधाओं के द्वारा किया हुआ होम क्षुद्र रोग-ग्रहों की आपदाओं का अपहरण करने वाला होता है । अपमार्ग की समिधा और घृत में शृत चरु तथा आज्य इनकी पृथक् एक सौ आठ बार आहुतियाँ देवे । फिर साधक के लिये सम्पात से साधित चरु को देवे ।९३-९५। इसका यह प्रभाव है कि उसके अभिचार कृत द्रोह सर्वथा नष्ट हो जाया करते हैं । अपमार्ग की समिधाओं को पञ्च गव्य में परिप्लुत करके मन्त्रधारी दश हजार आहुतियां देवे और दिशाओं से बलि का समाहरण करे । दध्योदन मन्त्र से करे तो क्षुद्र रोग आदिकी शान्ति होती है ।९६। ।९७।

क्षीरवृक्षसमितक्षीरहविराज्यैः पृथक् पृथक् ।
चतुःससस्रं होतव्यं शान्तिः स्यात्सर्वतोमुखी ।९८
दक्षिणोत्तरङ्ग मंत्री चक्रयुग्मं समालिखेत् ।
वेदादि विलिखेन्मध्ये मंत्रवर्णान्षडस्त्रिषु ।९९
मध्ये पीतं कोणषट्कं रक्तं श्यामलमांतरम् ।
मेमि श्वेतां लसद्वन्हिशिखाभिरुपशोभितम् ।१००
पार्थिव मण्डल वाह्ये कुर्यादेवं यथाविधि ।
रक्ततोयेन सम्पूर्णं कुम्भं सौम्ये प्रविन्यसेत् ।१०१
आवाह्य पूजयेत्तस्मिश्चक्रात्मान जनार्द्दनम् ।
दक्षिणे मण्डले कुर्याद्धोमकर्म विधानवित् ।१०२

दूध वाले वृक्षों की समिधा–क्षीर–हवि–और आज्य से पृथक्-पृथक चार सहस्र बार होम कर तो उस हवन करने वाले पुरुष को सर्वतोमुखी शान्ति हो जाती है ।९८। मन्त्र को धारण करने वाला दक्षिण और उत्तर में गत चक्र के युग्म को लिखे। मध्य में वेदादि का लेखन करे और षड़स्त्रियों में मन्त्र के वर्णों को लिखे । मध्य में

पीत छँ कोणोंमें रक्त–आन्तर श्यामला—श्वेतनेमि कान्ति युक्त वह्नि शिखाओं से उप शोभित बाहर में पार्थिव मण्डल को विधि के अनुसार बनावे। सौम्व दिशा में रक्त जल से परिपूर्ण कुम्भ का निन्यास करे। ।९९-१०१। वहाँ पर उसे आवाहन करके चक्र के स्वरूप वाले जनार्दन प्रभु का यजन करे। दक्षिण मन्डल में विधान का ज्ञाता होम कर्म करे।१०२।

क्रमात् सर्पिरपामार्गस्तन्डुलैः सर्षपैस्तिलैः ।
पायसैर्गव्यसर्पिभ्यां षड्विंशत्यधिकं शतम् ।१०३
जुहुयादेधिते वह्नौ प्रतिद्रव्य विधानवित् ।
सम्पातयेत्कुम्भतोये पूजिते सौम्यमन्डले ।१०४
प्रस्थार्द्ध चरुणा पिण्डकृत्वा तस्मिन्विनिःक्षिपेत् ।
वाह्ये बलिप्रदानार्थं तदर्द्धमवशेषयेत् ।१०५
स्नातं विशुद्धवस्त्राद्यैः साध्यमानीय तं पुनः ।
दक्षिणे स्थापयेन्मन्त्री कुम्भाग्निभ्यामनन्तरम् ।१०६
नीराज्य तौ नयेद्बाह्ये ग्रातादष्टमराशिके ।
नीराज्य तौ नयेद्बाह्ये ग्रामादष्टमराशिके ।
स्थापयेत्तौ यथापूर्वं सपस्तरणौ क्रमाव् ।१०७

फिर क्रम से घृत—अपामार्ग—तण्डूल–सर्षपतिल–पायस–गौ का घृतसे एकसौ छब्बीस आहुतियाँ देगे और एधित वह्नि में होम करे विधान का ज्ञाता पुरुष प्रति द्रव्य को पूजित कुम्भ के जल में सौम्य मन्डलमें सनातन करे।१०३-१०४। आधेप्रस्थ आधे प्रस्थ चरुसे पिन्डका निर्माण करके उसमें विनिःक्षिप्त कर देवे। बाहर में वलि के प्रदान करनेके लिए उसके आधे भागको अवशिष्ट रक्खे।१०५। स्नान कियेहुए विशुद्ध वस्त्रादिके द्वारा समन्वित उस साध्यको वहाँलावे और मंत्रधारी दक्षिण में कुम्भ और अग्नि के अनन्तप स्थापित करे। उन दोनों का नीराजन करके बाहिर लावे और ग्राम से अष्टम राशि में स्थापित करे। उन दोनों को परिस्तरण के सहित क्रम के रखना चाहिये।१०६-१०७।

हुत्वा वह्नौ यथापूर्वं शिष्टान्नेन बलिं हरेत् ।
मनुना वक्ष्यमाणेन दशदिक्षु यथाविधि ॥१०८
सहृद्विष्णुगणेभ्योऽन्ते गर्वशान्ति पुनः ।
तेभ्यो बलि प्रगृह्णन्तु शान्तये हृदय ततः ॥१०९
ब्राह्मणान् भोजयेत् सभ्य मधुरोत्तरमादरात् ।
गुरवे दक्षिणां दद्याद्वस्त्रं भूषणसंयुतम् ॥ ११०
हन्त्यादयं विधिः पुंसां कृत्यारोगग्रहज्वरान् ।
रक्षःपिशाच नार्यादि क्लेशान् शीघ्रं न संशयः ॥१११
विधाय पञ्जरं मन्त्री फलकैः क्षीरशाखिनाम् ।
पञ्चगव्येन सम्पूर्य तस्मिन् साध्यं निवेशयेत् ॥११२

पूर्व की ही भाँति अग्नि में हवन करके शिष्ट अर्थात् बचे हुए अन्न के द्वारा बलि का अपहरण करना चाहिये । आगे बताये जाने वाले मंत्र द्वारा विधि के सहित दश दिशाओं में 'नमः पट्ट के साथ विष्णु और गणेश के लिए तथा अन्त में सर्वशान्ति वह कर उनके लिये 'शान्ति के लिये बलिको ग्रहण करो उनको बलि देवे और अन्त में नमः' कहे ।१०८-१०९। फिर बड़े आदर भाव से ब्राह्मणों के लिए मधुर पदार्थोंका भोजन करावे । अपने गुरुदेव को वस्त्र और भूषण से युत दक्षिणा देनी चाहिए ।११०। यह विधान पुरुषों के कृत्या रोग-ग्रह और ज्वर हनन किया करता है । राक्षस-पिशाच और आर्वादि के क्लेशों का विनाश करता है-इसमें कुछ भी संशय नहीं है।१११। मन्त्र धारण करने वाला पुरुष दूध वाले वृक्षों के तख्तों के द्वारा एक पंजरका निर्माण करे । उस पंजर को पंच गव्य से सम्पूरित करके उसमें साध्य का निवेश कर देवे ।११२।

धौतवस्त्रं विशुद्धाङ्ग स्पृष्टवा सम्यग्जपेन्मनुम्
पूर्वादिदिक्षु संस्थाप्य वह्नि ब्राह्मणसत्तमैः ११३
कारयेत्पूर्वसन्दिष्टैर्द्रव्यैर्होमं विधानवित् ।
तोषयेद्दक्षिणाभिस्तान् यजमानः स्वशक्तितः ॥११४

गुरुं च धनधान्याद्यैर्नत्वा सम्प्रीणयेत्तदा ।
सर्वरोगहरः प्रोक्तः कृत्याद्रोहादिनाशनः ।११५
अपमृयुहरः पुंसां विधिरेष प्रकीर्त्तितः ।
पञ्चगव्यैः कषायैर्वा क्षीरभूरुहसम्भवैः ।११६
पूरितैः कलशैर्जप्तैः कृतसम्पातसंयुतैः ।
अभिषिञ्चेद्ग्रहाविष्टनभिचारातुरन्ततः ।११७
स्वस्थो भवति शीघ्रेण विधानेनामुना नरः ।
भानुवारेऽभिषेकस्य विधानेन सुसाक्षितैः ।११८
सलिलैःस्नापयेन्नारीं सुखप्रसवकाङ्क्षिणीम् ।
सप्तवाराभिषेकेण सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।११९

धुले हुये वस्त्रों से संयुत तथा विशुद्ध अङ्गों वाले का स्पर्श करके भली रीति से मन्त्रका जप करे । पूर्व आदि दिशाओंमें अग्नि को सस्थापता करके विधान के ज्ञाता को चाहिये कि वह परम श्रेष्ठ ब्राह्मणों से सन्दिष्ट द्रव्यों के द्वारा होम करावे । यजमान अपनी शक्ति से दक्षिणाके द्वारा उन ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करे ।११४। उस अवसर पर गुरुदेव को प्रणाम करके धन धान्यादि से प्रसन्न करे । यह विधान समस्त रोगों के हरण करने वाला तथा कृत्यादि के देह का विनास करने वाला है ।११५। यह विधि पुरुषों का अपमृत्यु के हवन करने वाली कोर्त्तित की गयी है । पञ्चगव्य से अथवा कषायों से जो क्षीर वाले वृक्षों से किये गये हों इन कलशों को पूरित जप के साथ करे और सम्पात से समन्वित करे । फिर इनके द्वारा जो ग्रहों से आविष्ट हो तथा अभिचार से आतुर हो उसका अभिषिचन करना चाहिये ।११६-११७। मनुष्य इस विधान के करने पर शीघ्र हो स्वस्थ हो जाया करता है । रविवार में अभिषेक के विधान के द्वारा सुसाधित जल से नारी का स्नपन करावे इससे सुख पूर्वक प्रसव सम्पन्न हो जाता है । सातवारों में यह अभिषेक करने से सभो उपद्रव नष्ट हो जाया करते हैं ।११८-११९।

पञ्चगव्ये श्रृतं सर्पिर्मन्त्रितं मनुनाऽमुना ।
गर्भिणीनां ग्रहार्त्तानां सेवितं ,च्छुभावहम् ।१२०
उच्चस्थानगते शुक्रे मनुना साधुसाधिना ।
त्रिलोही मुद्रिका हन्यान् क्षुद्रभूतग्रहान् ज्वरान् ।१२१
तद्वर्णसंख्यया सूत्रे ग्रन्थीन् कृत्वा जपादिभिः ।
साधितं कल्पयेद्धस्ते कण्ठे वा दुःखशान्तये ।१२२
पञ्चगव्य जपेत्स्पृष्ट्वा मन्त्रं दशशतावधि ।
न्यस्तं तत्पद्मपत्रादौ पात्रे वा ब्रह्मवृक्षजे ।१२३
फले बिल्वस्य वा मन्त्री गृहे स्वस्य परस्य च ।
निखनेत् सर्वरक्षास्याद्वर्द्धते सवसम्पदः ।१२४

पञ्चगव्य में श्रृत घृत को इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित करे। यह गर्भिणियों और ग्रहों के द्वारा आर्त्तों को सेवन कराया जावे तो अत्यन्त ही शुभ करने वाला होता है ।१२०। शुक्र के उच्च स्थान पर स्थित होने के समय में मन्त्र के द्वारा भली भाँति साधित की हुई तीन लोहों की मुद्रिका क्षुद्रभूत ग्रहों को और ज्वरों को नष्ट कर दिया करती हैं ।१२१। उसके वर्णो की संख्या से सूत्र में जप आदि के द्वारा ग्रन्थियाँ लगाकर इसकी साधित करे और इसको हाथ में अथवा कण्ठ में धारण करे तो दुःखों की शान्ति होती है ।१२२। पञ्चगव्य का स्पर्श करके एक सहस्र की अवधि पर्यन्त मन्त्र का जप करे और उसको पद्म पत्र आदि में न्यस्त करे अथवा ब्रह्म वृक्ष से निर्मित पात्र में रखे या विल्व के फल में रखे। उसको मन्त्रधारी अपने या दूसरे के गृह में गाढ़ देवे। इसका यह प्रभाव होता है कि उसकी सभी प्रकार से रक्षा होती है और सभी सम्पदा बढ़ती है ।१२३-१२४।

पलाशक्षीरवृक्षाणा त्वचोमलयजं पुरुम् ।
कुङ्कुमं यामिनीकुष्ठविलत्रायामार्गसर्षपान् ।१२५
तिलदूर्वायवान् देवी तुलसी युगलं कुशम् ।
लक्ष्मी गोरोचना पद्मं वचां गोमयसंयुताम् ।१२६

विष्णुकान्तामर्कयुतां जपेन्मन्त्रं विनिःक्षिपेत् ।
पञ्चगव्येन सम्पूर्णे पात्रे सत्संस्कृतेऽनले ।१२७
संस्थाप्य क्काथयेत् सम्यग्यांवत्भस्म भविष्यति ।
तदादाय जपेद्भूयः प्रयुतं देवता धिया ।१२८
लिम्पेत्सर्वाङ्गमेतेन किञ्चिच्छिरसि निः क्षिपेत् ।
कृत्याद्रोहग्रहोन्मादव्याधिदुःखनिवारणम् ।१२९
सर्वशत्रुप्रशमनं सर्वपापहरम्परम् ।
शुभदं वश्यदं पुंसां समस्तापन्निवारणम् ।१३०
गर्भिणीबालरुग्णानां विशेषेण प्रशस्यते ।
अस्मात्परतरा रक्षा नास्ति लोके प्रकीर्त्तित ।१३१

पलाश वृक्ष तथा क्षीर वाले वृक्ष की त्वचा, चंदन, गूगन, कुंकुम वामिनी, कुण्ठ, बिल्व, अपामार्ग, सर्षप (सरसों), दूर्वा, यव, देवी, तुलसी, युगलकुशा, लक्ष्मी, गोरोचन, पद्म, वच जोगोमयसे संयुत होवे, विष्णुकान्ता और अर्क इनको मंत्र का जप करते हुए पञ्चगव्य से पूर्ण पात्र में डालना चाहिए । फिर सुसंस्कृत अग्नि पर उस पात्र को रखकर भली भाँति क्वाथ करे और तव तक करे जव तक भस्म हो जावे । उसकी लेकर फिर देवताकी बुद्धिसे प्रयुत जप करे ।१२५-१२८। इसे सर्वाङ्ग में लेपन करे और कुछ शिर पर विनिःक्षिप्त करनी चाहिए। यह कृत्या के द्रोह, ग्रहोन्माद व्याधि और दुःखों का निवारण करने वाला होता है ।१२९। इसके समस्त शत्रुओं का शमन होता है और यह सब पापों का हरण करने वाला है। यह शुभों के देने वाला वश्य करने वाला और पुरुषों की सब आपदाओं का निवारक है ।१३०। गर्भिणी बालक और रुग्णों को तो यह विशेष रूप से प्रशस्त माना जाता है। लोक में इससे बड़ी रक्षा कोई भी नही कही गयी है ।१३१।

मुस्ता शुण्ठी निशावन्हिरेलायष्टिर्वचा वृषम् ।
पाठा विडङ्गं मन्जिष्टा द्राक्षा दार्वी सरोहिणी ।१३२

फलत्रयं च तैः कल्कैः पञ्चगव्येषु सर्पिषाम् ।
प्रस्थं पचेद्यथान्यायं मन्त्रेणानेन साधितम् ।१३३
कान्तिदं सुतदं स्त्रीणां भूतप्रेतभयापहम्
गर्भरक्षाकरं शुद्धं पञ्चगव्यघृतं विदुः ।१३४
ठान्तान्सप्त लिखेन्मध्ये षटसु कोणेषुतेष्वथ ।
मन्त्रवर्णाल्लिखेदेतच्चक्रमाषन्निवारणम् ।१३५
षट्कोणमध्ये विलिखेत्ससाध्यं तारं षड्ष्ववशिष्टवर्णान् ।
अङ्गानि तत्सन्धिषु मन्त्रमेतत्करोति रक्षां विधिवत्प्रजप्तम् ।१३६

मुस्ता, शुण्ठी, हल्दी, वह्नि (चित्रक), एला (इलायची), यष्टि (यष्टी, मधु), वच, वृष, पाठा, विडङ्ग, माजिष्ठा, द्राक्षा वार्वी, रोहिणी, तीन फल (हर्र, बहेड़ा, आमला) इन सबके कल्कों को पञ्चगव्य मिश्रित घृत में डाल कर विधिपूर्वक इस मंत्र द्वारा साधित करके पकावे ।१३२-१३३। इसको शुद्ध पंचगव्य घृत कहते हैं। यह कान्ति के देने वाला, स्त्रियों को पुत्र दाता, भूत प्रेतों के भय का अपहर्त्ता, गर्भ की रक्षा करने वाला होता है ।१३४। अब मन्त्र बतलाया जाता है— मध्यादि षट्कोणों में सात ठकारों को मिलकर उन ठकारों में क्रम से मन्त्र के अक्षरों का लेखन करना चाहिए । साध्य साधक का कर्म भी लिखना चाहिए । यह चक्र आपदाओं का निवारण करने वाला है ।१३५। अब दूसरा मन्त्र बतलाया जाता है—षट्कोणों के मध्य में साध्य के सहित प्रणव तथा ६ अस्त्रों में अवशिष्ट वर्णों को लिखे । उनकी सन्धियों में अङ्गों को लिखे । फिर विधि के साथ अभिमन्त्रित किया हुआ यह मन्त्र रक्षा किया करता है ।१३६।

तारं लिखेट्टान्तगतं ससाध्यं कोणेषु शिष्टे मनुवर्णषट्कम्
अङ्गानि सन्धिष्वथ षोडशार्णं सषोडशार्णं वसुधानुरस्थम् ।१३७
जपित्वा कृतसम्पातं गर्भिणीनां हितं परम् ।
अभिचारग्रहोन्मादान्यन्त्रमेतद्विनाशयेत् ।१३८

मध्ये तारं ससाध्य मनुमथ विलिखेत् षटषु कोणेषु सन्धि
ष्वङ्गान्यन्ते कलानां युगयुगविलसत्केशराष्टार्णपत्रम् ।
किञ्जल्कार्द्धिवसुदललसत्षोडशार्णस्वनाम्ना
हक्षाभ्यां त्रिः परीतं लिखतु परिवृतंतत्त्रिपाशांङ कुशाभ्याम् ।१३९
तारन्नमो भगवते महासुदर्शनाय च ।
वर्मास्त्रान्तश्चक्रमन्त्रः षोडशाक्षर ईरितः ।१४०

अब अन्य यन्त्र बताया जाता है टकार के अन्तर्गत प्रणव को लिखे जो साध्य के सहित होवे शिष्ट कोणों में मन्त्र के छै वर्णों का लेखन करना चाहिये। सन्धियों में अङ्गों को लिखें । षोडश वर्णों के सहित षोडशाद लिखे और उसे भूपुर में स्थित करे ।१३७-१३८। जप करके सम्पात किया हुआ गर्भिणी नारियों के हित के प्रदान करने वाला होता है। यह यन्त्र अभिचार—ग्रहोन्माद का विनाश कर दिया करता है ।१३९। अब अन्य यन्त्र को बतलाते हैं—मध्य में राज्य के सहित प्रणव को तथा मन्त्र को लिखे । मन्त्र यहां पर प्रणव से अतिरिक्त कवच मन्त्र ग्रहण किया जाता है। इसके अनन्तर षट्कोणों में और सन्धियों में अङ्गों का लेखन करे। अन्त में अर्थात् षोडश कोणों के बाहर स्वरों के दो-दो से शोभित केशरों के आठ वर्ण पत्र को बनावे। फिर किंजल्का के आदि वर्णो से षोड़श दलों से शोभित अपने नाम से षोड़श वर्णों को लिखना चाहिये। हकार और क्षकार तीन बार परीत करे। फिर तीन पाश और अंकुशों से उसे परिवृत करे अब षोड़शाक्षर मन्त्र का उद्धार बताया जाता है—प्रणव फिर 'नमो भगवते महासुदर्शनाय' कहे और वर्म और अस्त्र अन्त में कहे—यह षोड़श अक्षरों वाला चक्र मन्त्र कहा गया है ।१३९-१४०।

चक्रयन्त्रमिदं प्रोक्तं सर्वभीति निवारणम् ।
क्षुद्रापमृत्युशमनं राज्ञां विजयवर्द्धनम् ।१४१
रेखा विलिख्याष्टशिरांसि तामासाध्व वाह्ये श्रुतिशः क्रमेण ।
स्थाने हृषीकेषमनुं विभज्य पादाल्लिखेत्कोष्ठचतुष्टतस्थान ।१४२

अष्टाक्षरार्णैः प्रतिदर्भितास्तान्कोष्ठद्वये चक्रमनुं यथावत् ।
मध्यस्थकोष्ठे विलिखेत्ससाध्यं स्यात्सप्तकोष्ठाह्वययन्त्रमेतत् ।१४३
स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते ।च ।
रक्षांसि भीतानि दिशोद्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघा ।१४४
धारितं सप्तकोष्ठं तत्त्रायते महतो भयात् ।
दुःस्वप्नदुर्निमित्तादिशमनङ्कीर्तितं बुधैः ।१४५

यह चक्र यन्त्र कहा गया है जो सभी प्रकार के भयों का निवारण करने वाला होता है । यह क्षुद्र अपमृत्यु के शमन करने वाला तथा नृपों के विजय के बढ़ाने वाला होता है ।१४१। अब सप्तकोष्ठ यन्त्र को बतलाते हैं–आठ शिरों वाली रेखायें को लिखकर बाहिर चारों के क्रम से उनको आवद्ध करे । स्थान में हृषीकेश मन्त्र को विभक्त करके चारों ओष्ठों मेरे स्थिते पादोंका लेखन करे । उनको अष्टाक्षर के वर्णो से प्रतिदर्भित करे और यथा रीति से दो कोष्ठों में चक्र मन्त्र को लिखे । मध्य में स्थित कोष्ठ में साध्य के सहित लिखे तो यह सप्तकोष्ठ नामक यन्त्र होता है ।१४२-१४२। हे हृषीकेश ! यह ठीक ही है आपकी कीर्त्ति से यह जगत् प्रहृष्ठ और अनुरंजित होता है । इससे सब राक्षस भीत होते हैं, दिशायें द्रवित होती है और सब सिद्धों के सङ्घ नमस्कार किया करते हैं । इस सप्त कोष्ठ को धारण करे तो यह महान् भय से रक्षा करता है । मनीषियों के मतामुसार यह दुःस्वप्न और दुर्निमित्त आदि का यजन करने वाला कीर्त्तित किया है ।१४५।

पंचदश पटल

।। पुरुषोत्तम प्रकरण ।।

अथ वक्ष्ये जगन्मूलं मन्त्रं श्रीपुरुषोत्तमम् ।
रोपितं वैष्णवे तन्त्रे भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ।१

तारमाररमाबीजं नत्यन्ते पुरुषोत्तमम् ।
पुनरप्रतिरूपान्ते ततो लक्ष्मीनिवासच ।२
सकलान्ते जगत्पूर्व क्षोभणेति पद पुनः ।
सर्वस्त्रीहृदयोपेत विदारणपदं पुनः ।३
ततः परं त्रिभुवनमदोन्मादकरं ततः
सुरासुरान्ते मनुजसुन्दरीजनशब्द (वर्ण) तः ।४
मनांसि तापयद्वन्द्व दोपयद्वितयं पुनः ।
शोषयद्वियं भूयो मारयद्वितयं पुनः ।५
स्तम्भयद्वितयं पश्चान्मोहयद्वितये पुनः ।
द्रावयद्वितयं पश्चादाकर्षययुगं ततः ।६
समस्तपरमोपेतं सुभगेन च संयुतम् ।
सर्वसौभाग्यशब्दान्ते करेति पदसंयुतम ।७
सर्वकामप्रद ादमभुकं हनयुगमकम् ।
चक्रेण गदया पश्चात् खड्गेन तदनन्तरम् ।८

इसके अनन्तर जगत् के मूल स्वरूप श्री पुरुषोत्तम मन्त्र को बतलाऊँगा तो वैष्णव तन्त्र में गोपित है और सांसारिक सुखों के उपभोग और सांसारिक बन्धन से मोक्ष दोनों ही के फल का प्रदान करने वाला है ।१। तार (प्रणव), मार, काम बोज, रमा बीज, फिर 'नमः'—यह पद, इसके अन्त में 'पुरुषोत्तम'—यह पद, फिर 'अप्रतिरूप' और इसके अन्त में लक्ष्मी निवास' यह पद, सवके अन्त में 'जगत्पूर्व—वह पद, फिर 'क्षोमण' पद, फिर 'सर्व स्त्री हृदयोपेत विदारण'—यह पद, इसके आगे 'त्रिभुवन मदोन्मादकर' यह पद, फिर 'सुरासुर' इसके अन्त्र में 'भनुजमुन्दरीजन'—यह पद, फिर इसके अन्त में 'मनासि' यह पद होना चाहिए । फिर 'मारय'—यह दोवार फिर 'दीपय'—यह पद दो बार, इसके पश्चात् 'शोषय' और 'मारय ये दोनों पद दो-दो बार कहे । फिर 'स्तम्भय' और 'मोहय' ये दोनों पद दो-दो बार कहे । फिर 'द्रावय' और आकर्षय'—ये दो पद दो-दो बार

है। फिर 'समस्त परम' से उपेत और सुमगन'—इससे संयुत कहे। सर्व सौभाग्य के अन्त में कर' इस पद से संयुत करे। फिर 'सर्व काम प्रद' यह कहकर 'अमुकं, हन-हन' कहे। फिर 'चक्रेय, गदया, खड्गेन' में पद कहे।२-८।

कट्टद्वयान्तेऽङ्कुशेन ताडयद्वितय पुनः ।
सर्ववार्णैर्भिन्दयुग पाशेनेति पदं ततः।९
त्वरशब्दद्वयमथोकिन्तिष्ठसि पदं पुनः ।
तावद्यावत्सदस्यान्ते समाहितमनन्तरम्।१०
ततो मे सिद्धिमाभाष्य भवत्वन्ते सवर्म फट् ।
नमोऽन्तोऽय मनु प्रोक्तो द्विशताक्षरसंयुतः।११
जैमिनिर्मुनिराख्यातश्छन्दश्चामितमीरितम् ।
समस्तजगतामादिर्देवता पुरुषोत्तमः।१२

फिर दो वार 'कट्ट' पद कहे और 'अंकुशेन' यहकहकर 'ताड़य' इस पद को दो बार बोले। फिर 'सर्व वार्णः' कहकर 'भिन्द' इस पद को दो बार बोले। इसके पश्चात् 'पाशेन'' - यह कहकर 'त्वर'—इस पद को दो बार कहे। फिर 'कि तिष्ठसि' इस पद को कहे। 'तावद यावत्' इस पद के अनन्तर 'समाहित' यह कहे। फिर ततो में सिद्धि भवतु' यह कहकर अन्त में वर्म सहित 'फट् यह कहे। अन्त में इस मन्त्र के 'नमः' यह पद होता है। इस प्रकार से यह मन्त्र दो सौ अक्षरों वाला होता है।९-११। इस मन्त्र का ऋषि जैमिनि कहा गया है। इस का छन्द अमित कहा गया है। इसका देवता सम्पूर्ण विश्व का आदि भगवान पुरुषोत्तम है । अब षडङ्ग मन्त्रों का उद्धार बताया जाता है।१२।

पुरुषोत्तमशब्दान्ते वदेत्त्रिभुवनं ततः (पुनः) ।
मदोन्मादकरान्ते हुँ हृदयं सफलं ततः।१३
जगत् क्षोभणशब्दान्ते लक्ष्मीदयितहुँ शिरः।१४

मन्थोत्तमसंयुक्तमङ्गजे कामदायिनि ।
हुँ शिखापरमोपेतसुभगाक्षरसंयुतम् ।१५
सर्वसौभाग्यकरहुँ कवच परिकीर्त्तितम् ।
उक्त्वा सुरासुरोपेतमनुजान्वितसुन्दरीम् ।१६
ततः परस्ताढहृदयविदारणपद वदेत् ।
सर्वप्रहरणधरसर्वकामिकतत्परम् ।१७
हनद्वयं च हृदयं बन्धनानि ततः परम् ।
आकर्षयपदद्वन्द्वं महाबलहुमस्त्रकम् ।१८
त्रिभुवनेश्वरपदन्ततः सर्वजनन्ततः ।
मनासि हनयुग्मान्ते दारय द्वितयं च मे ।१९
वशमानय हुँ नेत्रं ताराद्याः फट् नमोन्तकाः ।
षडङ्गमन्त्राः सन्दिष्टा नेत्रान्तास्तन्त्रवेदिभिः ।२०

पुरुषोत्तम शब्द के अन्त में त्रिभुवन बोलना चाहिये । मदोन्माद कह कर अन्त में 'हुं', हृदयं सकलं कहे 'जगत्' क्षोभण के अन्त में लक्ष्मी दयित हुँ शिर है । मन्मथोत्तमसे सयुक्त अङ्ग के कामदायिनि हुँ शिखा है परमोपेत सुभगाक्षर से संयुत सर्व सौभाग्य करहु कवच कीर्त्तित किया गया है । सुरासुर से युक्त मनुज सुन्दरीम् यह कह कर इसके आगे हृदय विदारण पद बोलना चाहिये । उसके आगे सर्व प्रहरण धर कामिक कहे । दो हन पद हृदय है और इसके आगे बन्धनानि पद कहे । दो बार 'आकर्षय कहे । महाबल हुँ—यह प्रमव होता है । इससे आगे 'त्रिभुवनेश्वर' और फिर 'सर्वजनं' कहे । फिर मनासि कहकर दो बार इन पद और दो बार दराय पद कहे । 'वशमानयहु' नेत्र है । इनके आदि में प्रणव और अन्त में फट्तथा, नमः – यह पद है । ये षडङ्ग मन्त्र सन्दिष्ट किये हैं जो तन्त्र के ज्ञाताओं के द्वारा नेत्रान्त कहे गये हैं ।१२-२०।

त्रैलोक्यमोहनार्णान्ते हृषीकेशपदं पुनः ।
पश्चादप्रतिरूपादि मन्मथानन्तरं वदेत् ।२१

सर्वादि स्त्रीपदं पश्चाद्हृदयाकर्षणं ततः ।
आगच्छागच्छ मन्त्रोऽयं ताराद्यो नमसान्वितः ।२२
अनेन मनुना कृत्वा व्यापक न्यस्य बाहुषु ।
अष्टायुधानि मुद्राभिर्मन्त्रैः सार्द्ध विचिन्तयेत् ।२३
क्षीराम्भोनिधिमध्यस्थ निरन्तरसुरद्रुमम् ।
उद्यदर्केन्दुकिरणदूरीकृततमोभरम् ।२४
कालमेघसमालोकनृत्यद्बर्हिकदम्बकम् ।
उत्फुल्लकुसुमामोदप्रहृष्यद्भृङ्गसङ्कुलम् ।२५
कूजत्कोकिलसंघेनः वाचालितदिगन्तरम् ।
नानाकुसुमसौगन्धवाहिगन्धवहान्वितम् ।२६
कल्पवल्लीनिकुञ्जेषु क्रीडत्सिद्धकदम्बकम् ।
देवगन्धर्वकन्या (नारी) भिर्यायन्तीभिरलङ्कृतम् ।२७
अनेनदीर्घिकायुक्तमुद्यान महदद्भुतम् ।
तस्न मध्ये मणिमये मण्डपे तोरणाञ्जिते ।२८

त्रैलोक्य मोहन वर्णों के अन्त में हृषीकेश पद को कहे । पीछे अप्रति रूपादि और इसके अनन्तर मन्मथ बोले ।२१। पीछे सर्वादि पद वाला स्त्री पदकहे । फिर हृदयाकर्षण कहे । पीछे आगच्छ-आगच्छ कहे। इसके आदि में प्रणव और अन्त में 'नमः यह पद है यह मंत्र है ।२२। इस मंत्र के द्वारा बाहुओं में व्यापक न्यास करे । मुद्राओं के सहित आठ आयुधों का मन्त्रों के साथ चिन्तन करना चाहिए ।२३। क्षीर सागर के मध्य में स्थित निरन्तर सुर द्रुम है—उदीय मान सूर्य और चन्द्र की किरणों से तम के भार को जहाँ पर दूर भगा दिया है—काल मेघों के समलोक में जहाँ पर नृत्य करते हुए मयूरों का समुदाय है--खिले हुए पुष्पों के गन्ध से प्रसन्न होते हैं भ्रमरों से समावृद्ध है--कजत कूरती हुई कोकिलों के समूह के द्वारा दिशाओंका अन्तर शब्दायमान हो रहा है—अनेक प्रकार के कुसुमों को सुगन्ध की वहन करने वाली वायु से समन्वित कल्प वल्ली के निकुंजों में कीड़ा करते हुए सिद्धों के समुदाय

से समन्वित–देवों और गन्धर्वों की गायन करती हुई कन्याओं के द्वारा समलंकृत बहुत-सी बावड़ियों से संयुत एक महान अद्भुत उद्यान है। उस उद्यान के मध्य में तोरणों से आञ्जित एक मणिमय मन्डप है ।२४–२८।

ऋतुभिः षड्भिरनिश सेवितस्य महीयसः ।
सुरद्रुमस्य मूलस्थे महासिंहासने शुभे ।२९
रक्तारविन्दमध्यस्थगरुडोपरि संस्थिमम् ।
ध्यायेद्वल्लभया सार्द्धं जगन्नाथ जगन्मयम् ।३०
देवं श्रीपुरुषोत्तमं कमलया स्वाङ्कस्थया पङ्कज ।
बिभ्रत्या परिरब्धमम्बुजरुचा तस्यां निरुद्धेक्षणम् ।
ध्यायेच्चेतसि शंखपाशमुशलाश्चापारि षड्गङ्गादां
हस्तैरकुशमुद्वहन्तमरुण स्मेरारबिन्दाननम् ।३१
एवं ध्यात्वा श्रियः कान्तं मनुं लक्षाचतुष्टयम् ।
जपेद्वशी विधायाथ कुण्डमर्द्धेन्दुसन्निभम् ।३२
जुहुयाद्वैष्णवे वह्नौ पद्मैर्जातिसमुद्भवैः ।
पुष्पैर्यवैः क्रमात्पश्चाद्ब्राह्मणानपि भोजयेत् ।३३

उस मन्डप में निरन्तर छै ऋतुओं के द्वारा सेवित एक महान कल्प वृक्ष है। उस कल्प वृक्ष के मूल मे स्थित एक परम शुभ महान सिंहासन है। उस सिंहासन पर रक्त कमल में मध्य में विराजमान गरुड़ के ऊपर संस्थित अपनी वल्लभा के साथ में जगन्मय जगन्नाथ प्रभु का ध्यान करना चाहिए ।२९-३०। अब ध्यान करने का प्रकार बतलाया जाता है—अपनी गोद में विराजमान पंकज को धारण करती हुई कमला के द्वारा समालिङ्गित कमल की कान्ति से उसमें ही अपनी दृष्टि को बाँधे हुए—कर कमलों के द्वारा शंख, पाश, मुशल, चाप शंख, गदा और अंकुश का वहन करने वाले–अरुण और मन्दस्मित युक्त मुख कमल वाले देव श्री पुरुषोत्तम का चित्त में ध्यान करना चाहिए ।२९-३१। इस रीति से श्री देवी के कान्त का ध्यान करके मन्त्र

का चार लाख जप करें। वशी आधे चन्द्रमा के समान कुण्ड की रचना करके वैष्णव वह्नि में पद्मों के द्वारा जाती के पुष्पों से और यवों से क्रम से होम करे और ब्राह्मणों को भी भोजन करावे।३२-३३।

अर्चयित्वा तु जगन्नाथं गायत्र्या परिशोधयेत् ।
आत्मानं यागवस्तूनि यागभूमिं च देशिकः ॥३४
त्रैलोक्यमोहनायेति विद्महे पदमीरयेत् ।
स्मराय धीमहि पश्चात्तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥३५
गायत्र्यैषा समाख्याता वैष्णवा सर्वसिद्धिदा ।
प्राक्प्रोक्ते वैष्णवे पीठे कल्पयेदासन ततः ॥३६
पक्षिराजाय ठद्वन्द्वमस्य मन्त्रः प्रकीर्त्तितः ।
सङ्कल्पितायां मूलेन मूर्त्तौ देवमनन्यधीः ॥३७
आवाह्य मनुना विद्वान्व्यापकेन समर्चयेत् ।
भृगुर्लान्तियुतः सेन्दु बीज देव्याः प्रकीर्त्तितम् ॥३८

जगन्नाथ प्रभु का अर्चन करते हुए देशिक को चाहिये कि गायत्री के द्वारा अपनी आत्मा का, याग की वस्तुओं का और याग की भूमि का शोधन करे।३४। 'त्रैलोक्य मोहनाय विद्महे'—यह पद कहे। फिर 'स्मराय धीमहि'–यह कहे–इसके पश्चात् 'प्रचोदयात्' यह बोले। वह सर्व सिद्धियों के देने वाली वैष्णवी गायत्री कही है। पूर्व में कथिते वैष्णव पीठ पर आसन की कल्पना करनी चाहिए।३५-३६। इसके बाद 'पक्षिराशाया' कहकर दो ठकार कहे—यह इसका मन्त्र कहा गया है। मूल मन्त्र के द्वारा कल्पित की हुई भूर्त्ति में आनन्य बुद्धि वाला होकर देव का आवाहन करे। विद्वान पुरुष व्यापक मन्त्र के द्वारा समर्चन करे। लान्त से युक्त बिन्दु के सहित भृगु देवी का बीज कीर्त्तित किया गया है।३७-३८।

कर्णिकायां यजेदादौ विधानेनाङ्गदेवताः ।
दलेषु पूजयेत्पश्चाल्लक्ष्म्याद्या घृतचामराः ।३९

मुक्ताहारलसच्चारुपयोधरभारान्विताः ।
जपाकुसुमसङ्काशा मदविभ्रदमन्थराः ।४०
ह्रस्वत्रयक्लीविसर्गरहितस्वरशोभितम् ।
देवीबीजं क्रमदासां मन्त्रमाहुर्मनीषिणः ।४१
दलाग्रेषु यजेच्छंखं शाङ्गं चक्रमसिं गदाम् ।
अङ्कुशं मुसलं पाशमेतान्यस्त्राणि शाङ्गिणः ।४२
स्वमुद्राभिः स्वमनुभिः कथ्यन्ते मनवः क्रमात् ।
आद्योजलचरायान्ते ठद्वयं मनुरीरितः ।४३
शाङ्गाय सशरायान्ते स्वाहान्तोऽनन्तरो मनुः ।
सुदर्शनमहाचक्रराजान्ते स्याद्दहद्वयम् ।४४
सर्वदुष्टभयं पश्चात्कुरु छिन्दद्वयं (युगं) पृथक् ।
विदारय पदद्वन्द्वं परमन्त्रान्ग्रसग्रस ।४५
भक्षय त्रासयद्वन्द्वं प्रत्येकं वर्मठद्वयम् ।
चक्राय नम इत्येष तृतीयो मन्त्र ईरितः ।४६

आदि में कर्णिका में विधान से अङ्ग देवों का यजन करना चाहिए पीछे दलों में चमर धारण की हुई लक्ष्मी आदि का पूजन करे। ये सब मोतियों के हार से शोभित सुन्दर पयोधरों के भार समन्वित हैं। ये सब जपा के पुरुष के सदृश हैं और मद के विभ्रमों से मन्थरगति वाली हैं। ३९-४०। ह्रस्वत्रय अर्थात् अ इ उ इनसे रहित और क्लीब और विसर्गों से रहित स्वर अर्थात् आ—ई ऊ–ए—ऐ–ओ–औ और अं से युक्त देवी का बीज इनको मनीषी गण मन्त्र कहते हैं ।४१। अपनी मुद्राओं से अपने मन्त्रों से क्रम से मन्त्र कहे जाते हैं। 'आद्यजल चराय' पद है और अन्त में दो ढकार (ठः ठः) हैं यह मन्त्र कहा गया है ।४३। शाङ्गाय सशराय—इसके अन्त में स्वाहा है—यह अनन्तर मन्त्र है। सुदर्शन महचक्र राज के अन्त में तो डकार हैं। पीछे सर्व दुषभयं कुरु और दो बार छिन्द पृथक् पृथक् कहे। फिर 'विदारय' इस पद को दो बार कहे। पश्चात् 'परमन्त्रान् ग्रस-ग्रस कहे'। भक्षय--भक्षय, त्रासय--

त्रासय' कहे। प्रत्येक में दो ठकार वम हैं। चक्राय नमः यह कहे-यह तीसरा मन्त्र कहा है ।४४-४६।

षड्गतीक्ष्णपदान्ते स्याच्छिन्दयुग्मं हुमादि च ।
चतुर्थोऽयं मनुः प्रोक्तः, कौमोदकि महाबले ।४७
सर्वासुरान्तकि पदं प्रसीदयुगवर्मफट् ।
स्वाहान्तोऽयं मनुः प्रोक्तःसद्भिः कौमोदकी प्रिय ।४८
अङ्कुशान्ते कट्टयुगं षष्ठोऽयं मनुरीरितः ।
संवर्तका मुशलं पोथयद्वितयं पुनः ।४९
हुँ फट् द्विठान्तोमन्त्रोऽतः सप्तमः परिकीर्तितः ।
पाशबन्धद्वय पश्चादाकर्षय पदद्वयम् ।५०
वह्निजायावधिः सद्भिरष्टमो मन्त्रईरितः ।

खड्ग तीक्ष्ण पद के अन्त में छिन्द छिन्द में ये कहे और हुम आदि यह चौथा मन्त्र कहा गया है। 'कौमोदिक—महाबले—सर्वासुरान्तकि' ये पद कहे दो बार प्रसीद पद कहे तथा वर्म और फट् कहे यह स्वाहा अन्त वाला सत्पुरुषों ने मन्त्र कहा है। कौमोदकी प्रिय-यह पद कहकर अन्त में अंकुश पद कहे। फिर दो बार 'कट्ट' यह पद कहे। यह छठवां मन्त्र कहा गया है। सम्वर्त्तक-इन पद के अन्त में मुशलं-यह पद होता है और फिर दो वार 'पोथय' यह शब्द बोले। इसके अन्त में हुँफट् और दो ठकार कहे-यह सातवाँ मन्त्र कहा गया है। फिर दो वार पाश बन्ध-यह तथा दो वार 'आकर्षय,—यह पद बोले। अन्त में 'स्वाहा' यह कहे तो सत्पुरुषोंके द्वारा यह आठवां मन्त्र कहा गया है। इसके पीछ वज्रादि आयुधों के सहित लोकेशों का अर्चन करना चाहिए।४७-५१।

लोकेशान् पूजयेत्पश्चाद्वज्राद्यै रायुधैः सह ।५१
इत्थमभ्यर्चयेन्नित्यं यथावत्पुरुषोत्तमम् ।
प्राप्नोति महतीं लक्ष्मीं सौभाग्यमतुलं यशः ।५२
आयुरारोग्यमैश्वर्यं मनोभीष्टानि विन्दति ।
हयारिकुसुमैर्देवमर्चयित्वा यथाविधि ।५३

शशिप्रसूनजुहुयाद्वसुसंख्यसहस्रकम् ।
मासमात्रेण वशगास्तस्य् : सकला नृपाः ।।५४
हुत्वा बिल्वफलैः पक्कैः श्रियं विन्देदनिन्दिताम् ।
प्रफुल्लैररुणाम्भोजैस्तामेव लभते पुनः ।५५
हुत्वा ज्योतिष्मतीतैलं सहस्रं वसुसंस्यकम् ।
सुभखगा जायते सम्यक् सर्वेषां नात्र संशयः ।५६

इस रीति से नित्य ही अर्चन करता हुआ यथा रीति से पुरुषोत्तम प्रभु की पूजा करनी चाहिए । इस के प्रभाव से मनुष्य बहुत बड़ी लक्ष्मी को तथा अतुल वैभव को प्राप्त किया करता है ।५२। आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य और यम के अभीष्टों की प्राप्ति किया करता है। ध्यारि के पुष्पों से नित्य ही यथाविधि अर्चन करके शशि के पुष्पों के द्वारा एक सहस्र आठ बार होम करना चाहिये । इसके प्रभाव से एक ही मास में सम्पूर्ण नृप वश में हो जाने वाले हो जाया करते हैं ।५३-५४। पके हुए वेल के फलों द्वारा होम करके अनिन्दित श्री को मानव प्राप्त कर लेता है । खिले हुए अरुण कमलों से होम करके वही फल प्राप्त कर लेता है ।५५। ज्योतिष्मती के तैल से एक हजार आठ आहुतियाँ देकर भली भाँति सुभगा लक्ष्मी सबको प्राप्त हो जाया करती है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।५६।

विधानेनामुवा मन्त्री महारोगात्प्रमुच्यते ।
अश्वत्थसमिधां होमः पराहृतधनप्रदः (नावहः) ।५७
आज्याक्तदूर्वाहोमेन मुच्यते महतोभयात् ।५८
यस्य नामयुतं मन्त्रं जपेदयुतसंख्यया ।
स भवेद्दासवत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ।५९
वह्नि किसिहोक्तेन मनुना साधकोत्तमः ।
साधयेत्सकलान्कामान् साक्षाद्विष्णुरिवापरः ।६०
उत्तिष्ठ पदमाभाष्य श्री क्रोकपोधीशहुताशानौ ।
वह्निजायावर्मिन्त्रो वस्वक्षरसमन्वितः ।६१

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ 1315 पुस्तकालय

मन्त्रधारी इस विधान से महारोग से मुक्त हो जाया करता है। पीपल की समिधाओं के द्वारा किया हुआ होम दूसरों के द्वारा हरण किये हुए धन के प्रदान करने वाला होता है।५७। घृत में अक्त की हुई दूर्वा के होम के द्वारा महान् भय से छुटकारा पा जाया करता है।५८। जिसके नाम से युक्त मन्त्र का दश सहस्र की संख्या में जप करे तो वह मानव उसके दान की ही भाँति हो जाता है—इसमें विचारणा कभी नहीं करनी चाहिए।५९। यहाँ पर इस विषय में बहुत अधिक कथन से क्या प्रयोजन है। इस मन्त्रके द्वारा साधक अपने सभी कामों का साधन करता है और साक्षात् दूसरे विष्णु के ही समान हो जाता है।६०। अब श्री कर मन्त्र का उद्धार बतलाया जाता है—उत्तिष्ठ श्री कहकर ककार और रेफ कह कर स्वाहा—यह पद कहे। यह मन्त्र आठ अक्षरों वाला होता है।६१।

ऋषिरस्य भवेद्वामः पंक्तिश्चन्द उदाहृतम् ।
श्रीकराख्यो हरिः प्रोक्तो देवतास्य मनीषिभिः ।६२
हृदयं भीषय द्वन्द्वं त्रासयद्वितयं शिरः ।
शिखाप्रमर्दययुगं वर्मपध्वंसयद्वयम् ।६३
अस्त्रं रक्षयुगं सर्वे हुतन्ताः समुदीरिताः ।
मुद्र्धूनि मेत्रद्वये कण्ठे हृदयोदरयोः पुनः ।६४
उरुजङ्घापदद्वन्द्वे मन्त्रवर्णान्प्रविन्ससेत् ।
मुखे न्यसेद्ब्राह्मणोस्य मुखमासीदिमं मनुम् ।६५
बाहूराजन्यः कृतोऽयं न्येस्तत्र्यो वाहुयुग्मके ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्य इममूरूद्वये न्यसेत् ।६६
पादद्वये न्यसेन्मत्रं पद्भ्यां शूद्रो अजायत ।
चक्रं शंखं गदां पद्मं हस्ताग्रेष्वथ विन्ययेत् ।६७

इस मन्त्रका ऋषि वाम देव है और पंक्ति इस का छन्द कहा गया मनीषियों ने इस मन्त्र का देवता श्रीकर नाम वाले हरि भगवान् को बताया है।६२। भीषय का द्वन्द्व इसका हृदय है और त्रासय का जोड़ा

इस का शिर होता है। मर्दय का जोड़ा उग्रकी शिखा है। प्रध्वसद—इसका युगल इसका वर्म होता है।६३। रक्ष का युगल अस्त्र है। ये सब हुम अन्त वाले कहे गये हैं। अर्थात् इन सबको अन्त में हुम यह होता है। मूर्धा, दोनों नेत्र, कण्ठ, हृदय, उदर, उरु, जघा पद द्वंद्व में मन्त्र के वर्णो का विन्यास करना चाहिए। ब्राह्मण इसका मुख है---इस मन्त्र का मुख में न्यास करे।६५। बाहुराजन्य: कृत---इसका दोनों बाहुओं में न्यास करे। 'ऊरू तदस्य यद् वैश्य:'--इसका ऊरू हृदय में न्यास करना चाहिए। 'पदभ्याशूद्रो अजायत्--इसका दोनों पादों में विन्यास करे। हस्तों के अग्र भागों में शख, चक्र, गदा और पद्म का न्यास करना चाहिए।६६।६७।

इत्थं न्यासं तनौ कृत्वा देवं पूर्वोक्तमण्डपे।
रक्तपद्मासनस्थस्य गरुडस्योपरि स्थितम् ।६८
काञ्चनाद्रिसमप्रभ कमलाननं कमलेक्षणम्।
चक्रशंखगदासरोजधरं मनोहरदर्शनम् ।६९
कौस्तुभाङ्कितवक्षासं मुकुटाङ्गदादिविभूषणम्।
तार्क्ष्यवाहनमच्युतं हृदि भावयामि जगत्पतिम्।७०
अष्टलक्षा जपेन्मन्त्री मन्त्रमेनं दशांशतः।
बिल्वक्षीरद्रुमोत्थाभि: समिद्भिररुणाम्बुजैः ।७१
पयोन्नैः सर्पिषा हुत्वा गुरुं सन्तोषयेद्धनैः।
मूर्त्तौ मूलेन क्लृप्तायां पूजयेद्देवमन्वहम् ।७२
अङ्गान्यादौ समाराध्य दिक्पत्रेषु समर्चयेत।
श्रियं धृतिं रतिं कान्तिं लोलापङ्कजधारिणीः ।७३
पीतारूणाः श्यामनीला विदिक्पत्रेषु पूजयेत्।
वासुदेवादिका मूर्त्तीः पार्श्वयोर्निधियुग्मकम् ।७४

इस प्रकार से शरीर में न्यास करके पूर्व में कहे हुए मण्डप में देव का जो रक्त पद्म के आसन पर स्थित है---गरुड़के ऊपर विराजमान हैं सुवर्ण के पर्वत के समान प्रभा से संयुत--कमल जैसा जिनका मुख

हैं तथा कमल के सदृश नेत्र हैं। जो शंख, चक्र, गदा और पद्म को धारण करने वाले हैं–जिनका दर्शन परम मनोहर है–जिनका वक्षःस्थल कौस्तुम मणि से अंकित है–जो मुकुट, अङ्गद आदि भूषणों से विभूषि है जिनका गरुड़ बाहन है–जो अच्युत और जगतों के स्वामी हैं, मैं उनकी अपने हृदय में भावना करता हूँ।६८-७०। मन्त्रधारी इस मन्त्र का आठ लाख जप करे और जप का दशांश भाग दित्र—क्षीर द्रुम की समिधाओं से–अरुण कमलों से–पयोऽन्नों से और घृत से हवन कर के अपने गुरुदेव को धनों से सन्तुष्ट करना चाहिए। मूल से कल्पित मूर्ति में देव का प्रतिदिन पूजन करना चाहिए।७१-७२। आदिमें अङ्गों का समाराधन करके दिशात्रों में अर्चन करे। श्री, घृति, कान्ति का जो लीला पंकजों के धारण करने वाली है तथा पीत, अरुण, श्याम और नील है इनका विदिशाओं के पत्रोंमें अर्चन करना चाहिए। वासुदेव आदि मूर्त्तियों का पूजन करे। दोनों पार्श्वों में दोनों विधिओं का यजन करे।७३-७४।

विष्त्रवसेनं यजेदीशे लोकपालानन्तरम्।
एवं सम्पूजयेद्देवं हाधयेदिमात्मानः।७५
दूर्वाचरुभ्या साज्याभ्यां जुहुयादयुतं बुधः।
सपातितं चरु पश्चात्साध्यो भुञ्जीत साधितम्।७६
ब्राह्मणान् भोजयेत्सम्यङ् मधुरैर्वोमवासरे।
तोषयेद्गुरुमर्थेन वस्त्रै धान्यैर्विभूषणैः।७७
जित्वापमृत्युरोगादीन् दीर्घमायुः स विन्दति।
आज्यसिक्तैः सरसिजैर्जुहुयादयुतत्रयम्।७८
निवसेत्कमला तस्मिन्न त्यजेत्तत्सुवानपि।
विल्ववृक्षसमिद्धोमात्साक्षाद्धनपतिर्भवेत्।७९
पूगपुष्पसमायुक्तै स्तण्डुलैर्मधुरोक्षितैः।
जुहुयादचिरादेव सम्पदां जायते निधिः।८०

ईशदिशा में विष्वक्सेन का अर्चन करे और इसके अनन्तर लोक-पालों का अर्चन करे और इस रीति से देव का यजन करे तथा आत्मा के अभीष्ट का साधन करे ।७५। बुध को चाहिए कि घृत के सहित दूर्वा चरु से दश हजार आहुतियाँ देवे । पश्चात् सम्पतित चरु को जो साधित है साध्य खा लेवे ।७६। होम के दिन में मधुर पदार्थोंसे ब्राह्मणों को भली भाँति भोजन करावे । वस्त्रों से, धान्यों से, भूषणों से और अर्थ के द्वारा अपने गुरुदेव को सन्तुष्ट करे ।७७। वह मानव फिर अप-मृत्यु को जीत कर और रोगों पर विजय पाकर दीर्घ आयु का लाभ किया करता है आज्य से सिक्त कमलों के द्वारा तीन आयुत अर्थात् तीस हजार आहुतियां देनी चाहिए ।७८। उस पुरुष के गृह में कमला निवास किया करती है और उसके पुत्रों का भी कभी त्याग नहीं करती है । बिल्व वृक्ष की समिधाओं के होम से मानव साक्षात् धनपति ही हो जाया करता है ।७९। पूग के पुष्पों समायुक्त तण्डुलों से जो मधुर में उक्षित होवें हवन करे तो शीघ्र ही वह सम्पदाओं का निधि हो जाया करता है ।८०।

आज्येन जुहुयाल्लक्षं परान् जयति पार्थिवः ।
अब्जसूत्रं भुजेबद्धं मनुनानेन साधितम् ।८१
रोगापमृत्युदुःखानि नाशयेन्नात्र संशयः ।
जलाञ्जलिभिरात्मानमभिषिञ्चेद्दिनेदिने ।८२
स्नानकालेषु स भवेत् सौभाग्यश्रीसमृद्धिमान् ।
ऊर्द्ध्वबाहुरयो मन्त्री पश्यन्नादित्यमण्डले ।८३
सहस्रमानं प्रजपेन्नित्य निशिमधोर्मनुम् ।
सर्वे मनोरथास्तस्य सिद्धेयुर्नात्र सशयः ।८४
कृष्णाय पदमाभाष्य गोविन्दाय ततः परम् ।
गोपीजनपदस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधिः ।८५
कामबीजादिराख्यातो मनुरष्टादशाक्षरः ।
नारदोऽस्य मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द उच्यते ।८६

देवता कथितः कृष्णः सर्वकामफलप्रदः ।
चतुःकरणवेदानेत्रसंख्याक्षरैः क्रमात् ।८७
पञ्चाङ्गानि मनोः कुर्यान्मन्त्रविज्जातिसंयुतैः ।
स्मरेद्वृन्दावने रम्ये मोहयन्तं मनोरमम् ।८८
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्याः सहस्रशः ।
आत्ममो वदनाम्नाम्भोजप्रेषिताक्षिमब्रया ।८९

घृतसे एक लाख आहुतियां देवे तो राजा शत्रुओं पर विजय प्राप्त किया करता है इस मन्त्र के द्वारा साधित अब्ज सूत्र को अपनी भुजा में बाँधे तो वह अपने रोग—अपमृत्यु और दुःखों का विनाश कर देता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है। जल की अञ्जलियों के द्वारा दिनों दिन अपने अपका अभिषिञ्चन् करे और स्नान के समय में करे तो वह श्री और समृद्धिवाला होता है। दोनों बाहुओं का ऊपर की ओर करके मन्त्रधारी पुरुष आदित्य मण्डल में देखता हुआ मन्त्र को नित्य एक सहस्र जप करे तो पैनी बुद्धि वाला होता है। उस मनुष्य के सब मनोरथ सिद्ध होते हैं——इसमें तनिक भी संशय नहीं है ।८१-८४। अब गोपाल मन्त्र का उद्धार करके बताया जाता - 'कृष्णाय' यह पद कह कर उसके पश्चात् 'गोविन्दाय' कहे। फिर 'गोपीजन' इस पद के अन्त में 'बल्लभाय' — यह कहे और अन्त में द्विष्ठ अर्थात् 'स्वाहा' बोले ।८५ काम बीज अर्थात 'क्लीं' यह आदि में कहा गया है। यह मन्त्रराज आठ अक्षरों वाला होता है। इसका ऋषि नारद और गायत्र छन्द बताया गया है।८६। इसके देवता भगवान् श्री कृष्ण कहे गये हैं जो सब कामों के फल के प्रदान करने वाले हैं। चार करण-वेद (चार)–अब्धि तथा नेत्र (दो) की संख्या वा अक्षरों से क्रम से मन्त्र का वेत्ता जाति संयुतों से मन्त्र के पाँच अङ्गों को करे। रम्य वृन्दावन में मोहन करते हुए— मनोरम पुण्डरीकाक्ष गोविन्द का स्मरण करना चाहिए। सहस्रों गोप कन्याऐं उनके मुख कमल में लगायी हुई आँखों के भ्रमरों वाली हैं ।८७-८९।

पीडिताः कामवाणेन चिरमाश्लेषणोत्सुकाः ।
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभारान्विताः ।९०
स्रस्तधम्मिल्लवसना मदस्खलितभूषणाः ।
दन्तपङ्क्तिप्रभोद्भासिस्पन्दमानाधराञ्चिताः ।९१
विलोभयन्तीर्विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्भितैः ।९२
फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं वर्हावतंसप्रियम् ।
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोपालसंघावृतम् ।
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे ।९३
मन्त्रमेनं यथान्यायमयुतद्वितयं जपेत् ।
जुहुयादरुणाम्भोजैस्तद्दशांश समाहितः ।९४
वैष्णवे पूजयेत्पीठे यथावद्देवकीसुतम् ।
अङ्गावरणमाराध्य पत्रेषु पूजयेत्प्रियाः ।९५

ये सभी गोप कन्याऐं कामवाण से पीड़ित है। और चिरकाल तक आश्लेषण करने के लिए समुत्सुक हो रही हैं। मोतियों के हार से शोभित स्थूल और ऊँचे स्तनों के भार से युक्त हैं—इसके धम्मिल के वस्त्र स्रस्त्र हो गये हैं–इनके मद से इनके भूषण स्खलित हो गये हैं ये दाँतों की पक्ति की प्रभा से उद्भासित और स्पन्दमान अधरों से अञ्चित हैं-भावों को गर्भ में रखने वाले अनेक विभ्रमों से विलोभित करती हुई हैं। अब ध्यान बतलाया जाता है–विकसित इन्दीवर की कान्ति से संयुत चन्द्र के समान मुख वाले–मयूर पिच्छ के अवतंस से परम प्रिय, श्री वत्स के चिन्ह वाले–उदार कौस्तुभ को धारण करने वाले पीत वर्ण के वस्त्रधारी, सुन्दर, गोपियों के नेत्र कमलों से अर्चित शरीर वाले, गोपालों के समुदाय से आवृत्त-कल वेणु (वंशी) के वादन करने में तत्पर, दिव्य अङ्गों की भूषा से अन्वित श्री गोविन्द का भजन करता हूँ ।९०-९३। इस मन्त्र का विधि के अनुसार बीस हजार जप करे और जप के दशांश भाग का अरुण कमलों से परम समाहित होकर

होम करे । वैष्णव पीठ पर रीति के अनुसार देवकी सुत का अभ्यर्चन करना चाहिए । अङ्गावरण की आराधना करके पत्रोंमें प्रियाओं का पूजन करे ।९४-९५।

कालिन्दीनग्ननजित्याख्या मित्रविन्दा ततः परम् ।
चारुहासिन्यथपरा रोहिणी जाम्बवत्यथ ।९६
रुक्मिणी सत्यभामेति कथिताश्चारुभूषणाः ।
पीताम्बरधराः सौम्याः कराम्बुजधृताम्बुजाः ।९७
ऐरावतदीनभ्यर्चेद्नजानष्ठौ ततो बहिः ।
लोकपालान्यजेमन्त्री वज्राद्यस्त्राणि तद्वहिः ।९८
इति सम्पूजयेद्देवं गोविन्दं जगतां पतिम् ।
कुर्वीत कल्पनिर्दिष्टान्प्रयोगान्निजवाञ्छितान् ।९९
लक्ष्मीप्रसूनैजुहुयाच्छि यमिच्छन्ननिन्दताम् ।
साज्येनान्नेन जुहुयादाज्यान्नस्य समृद्धये ।१००

श्री भगवत्प्रियाओं के भ नामों का परिगणन किया जात है–कालिन्दी, नग्नजिती, मित्र विन्दा, चारुहासिनी, रोहिणी, जाम्बवती, रुक्मिणी, सत्यभामा—ये उनके नाम हैं और ये सब परम चारुतम भूषणों के धारण करने वाली है। पीताम्बर धारिणी–सौम्य, अपने कर कमलों में अम्बुजों को धारण कर रही है ।९६-९७। उनके बाहिर ऐरावत प्रभृति गजों की, जो आठ हैं, अभ्यर्चन करे। मन्त्रधारी पुरुष लोकपालों का यजन करे और उनके बाहिर वज्र आदि उनके आयुधों का पूजन करना चाहिए ।९८। इसी रीति से जगतों के पति गोविन्द देव का भली भाँति यजन करे। फिर कल्प में निर्दिष्ट अपने वाञ्छित प्रयोगों का समाचरण करे ।९९। अनिन्दित श्री की इच्छा रखता हुआ लक्ष्मी के पुष्पों से होम करे। अन्न की समृद्धि के लिये घृत सहित अन्न से होम करना चाहिए ।१००।

आरण्यैः कुसुमैर्विप्रान् जातिभिः पृथिवीपतीन् ।
प्रसूनैरसितैर्वैश्यान् शूद्रान्नीलोत्पलैर्नवैः ।१०१

वशयेल्लवणैः सर्वान्पङ्कजैर्वनिनिताजनान् ।
गोशालासु कृतो होमः पायसेनः ससर्पिषा ।१०२
गवां शान्ति करोत्याशु नोविन्दगोकुलप्रियः ।
शिमुवेषधरं देवं किङ्किणीदामशोभितम् ।१०३
स्मत्वा प्रतपृयेन्मन्त्री दुग्धबुध्या भैर्जलैः ।
धनधान्यांशुकादीनि प्रीतस्तस्मै ददातिसः ।१०४
f.ण्डमूलेन वीतं दहनपुरयुगे कोणराजद्रसार्णे ।
कुर्यात्पद्मं दशार्णस्फुरितदशदलं कामबीजेन वीतम् ।
पद्मं किञ्जल्कसस्थ स्वरविकृतिदलप्रोल्लसत्षोडशार्णं
किजल्कं व्यञ्जनाढयं विकृतियगदलेष्वर्पितानुष्टुवर्णम् ।१०५
पाशांकुशाभ्यामावीतं क्षोणीपुरयुगास्त्रिषु ।
अष्टाक्षरेण लसितं यन्त्रं गोविन्ददेवतम् ।१०६

जंगली पुष्पों के द्वारा होम करने से विप्रों को, जाती के पुष्पो मे पार्थिवों को——आति पुष्पों से वैश्यों और नवीन नीलोत्सलो से शूद्रों को वश में कर लेता है तथा लवण के होम से सबको और पंकजो के द्वारा होम का समाचरण करने से वनिता जनों को वश में कर लिया करता है। गोशालाओं में घृत के साथ पायस से किये होम से शीघ्र ही गौओं में गोकुलप्रिय गोविन्द शान्ति किया करते हैं। किंकिणी दाम से शोभित——शिशु वेष को धारण करने वाले देव का स्मरण करके दूध कीभावना करके शुभ जलके द्वारा मन्त्रधारी तर्पण करे।वे परम प्रसन्न होकर उसके लिये धन-धान्य वस्त्र आदि दिया करते हैं । १०१-१०४। अब यन्त्र बतलाया जाता है——पिण्ड बीज को मूल से परिवीत करे । छै वर्णोंसे रंजित कोण में दहन पुर युग में एक पद्मकी रचना करे। जो पद्म दस वर्णो से स्फुरित दश दलों वाला होता है । यह काम बीज से वीत होवे । किंजल्क से व्यञ्जनों आढ्य होवे । बत्तीस दलों में अर्पित अनुष्टुप् वर्ण वाला करे । पाश और अंकुश से आवीत करे । तीनों में

भूपुर क युग करे। आठ अक्षरों से शोभित यह गोविन्द के दैवत बाला यन्त्र होता है।१०५-१०६।

धर्मार्थकामफलदं सर्वरक्षाकरं स्मृतम्।
पञ्चान्तकोधरासंस्थोमनुबिन्दुभूषितः।१०७
पिण्डबीजमिदं प्रोक्तं सर्वसिद्धिकरपरम्।
स्मरः कृष्णाय ठद्वन्द्वं षडर्त्तो मनुरीरितः।१०८
गोपीजनान्ते प्रवदेद्वल्लभायाग्निसुन्दरी।
अयं दशाक्षनीरोमन्त्रीदृष्टफलप्रदः।१०९
प्रणवं हृदयं कृष्ण ङऽन्तमुक्ता ततः परम्।
तादृश देवकीपुत्रं हुँ फट् स्वाहासमन्वितः।११०
षोडषाक्षरमन्त्रोऽयं गोविन्दस्य समीरितः।
पिण्ड रतितेर्वीजं नमो भगवते ततः।१११
नन्दपुत्राय बालादिवपुषे श्यामलाय च।
गोपीजनपनस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधिः।११२

यह मन्त्र धर्म - अर्थ और काम के फल को देने बाला है और सब की रक्षा करने वाला कहा गया है। अब पिन्ड बीज बताया जाता है- पञ्चान्तक—गः धरा—लः, इठः,-यः, यह मन्त्र विन्दु से भूषित होता है। यही पिन्ड बीज कहा गया है जो परम सिद्धि के करने वाला है। स्मर—काम बीज, कृष्णाय-और उद्वन्द्व—स्वाहा। यह छै वर्णो का मन्त्र होता है।।१०७-१०८। अन्त में 'गोपीजन' कहे और पीछे 'बल्लभाय' कहे तथा अन्त में 'स्वाहा' कहे। यह दश अक्षरों वाला मन्त्र होता है जो दृष्ट और अदृष्ट के फल का दाता है।१०९। 'प्रणव' फिर हृदय—'नमः' यह पद कहे। उसके अनन्तर चतुर्थ्यन्त 'कृष्ण' पद कहे। उज प्रकार का देवकी पुत्र कहे और 'हूँ फट् स्वाहा'— यह कहे।११०। यस षोडश वर्णों वाला गोविन्द का मन्त्र बताया गया है पिंड-काम बीज-पीछे 'नमो भगवते'-यह पद कहे।१११। इसके अनन्तर 'नन्द पुत्राय-वालावपुषे और श्यामलाय-ये पद कहे। फिर। 'गोपीजन

इस पद के अन्त में 'वल्लभाय' कहे और अन्त ये 'स्वाहा, कहना चाहिए ।११२

अनुष्टुप् मन्त्र आख्यातो गोपालस्य जगत्पतेः ।
अनङ्गः कृष्णगोविन्दो ङेन्तावष्टाक्षरो मनुः ।११३
प्राक्प्रत्यग्दक्षिणादविधिवदभिलिखेत्स्पष्टरेखाचतुष्कं
कोणोद्यच्छूलयुक्तं वलययुगयुतं मध्यपूर्वं तदन्तरम् ।
श्लोकस्यार्णान्परस्ताद्वसुपदविवरेष्वष्टवर्णं लिखित्वा
तद्वा ः द्वादशार्णैस्तदनु परिवृत देवकीतुत्रयन्त्रम ।११४
तं सुकीदेवदेवे त तं देवे वरतो रनम् ।
त वा रतो ढत ख्यातं देवकीसुतम् ।११५
लिखित भूर्ज्जपत्रादौ तन्त्रमेतद्यथाविधि ।
विधृतं बाहुना नित्यं सर्वकामफलप्रदम् ।११६
पलाशवृक्षफलके लिखितं साधुसाधितम् ।
गोस्थाने निखनेदेतद्गवां वृद्धिमवीत्सदा ।११७

यह जगत्पति गोपाल का अनुष्टुप् मन्त्र बताया गया है काम बीज और चतुर्थ्यन्त कृष्ण तथा गोविन्द होते हैं । यह आठ अक्षरों वाला मन्त्र होता है ।११३। अब काम लिङ्ग मन्त्र बताया जाता है—पूर्व और पश्चिम में दो रेखाऐं लिखे तथा दक्षिण–उत्तर में दो रेखाऐं लिखें । इस तरह से चार रेखाऐं लिखनी चाहिए। मध्य कोण में कर्ण सूत्र चतुष्टय देवे । इससे शूल का आकार हो जाता है जो दो वृत्तों से युक्त करे । मध्य कोष्ठ से आरम्भ करके मध्य कोष्ठ में ही समाप्ति करे श्लोक के आठ वर्णों को आगे आठ पद विवरों में लिखे । उसके बाहर बारह वर्णो से उसके पीछे परिवृत करे । यह देवकी पुत्र का यन्त्र होता है ।११४। सुकी देव में त-त देव में---त वरतो रत—अथवा तं रतो रूढ----त ख्यात और तं देवकी सुतम् है ।११५। इस यन्त्र को विधि के साथ भोज पत्र आदि पर लिखे । इसे बाहु पर नित्य विधृन करे तो यह सब कामनाओं के फल को प्रदान करने वाला होता है ।११६।

ढाक वृक्ष के तख्ते पर लिखकर उसे साधु साधित करे। इस मन्त्र को गौओं के स्थान में गाड़ देवे तो इससे गौओं की वृद्धि सदा होती है।११७।

श्लोक चतुः षष्टदेष भूर्ज शिवादि दैत्यादि लिखेत्क्रमेण ।
तत्सर्वतोभद्रमिति प्रसिद्ध यन्त्रः श्रीविजयप्रदायि ।११८
फलके खादिरे क्लृप्तं गवां गोष्ठे निवेशितम् ।
रक्षाकृच्चौरमारिघ्न सवत्सानां गवां हितम् ।११९
क्षीरगोयगीरक्षोरक्षमाक्षपक्षर ।
योमानोनगनोमागोपक्षगक्षक्षगक्षप ।१२०
ब्रह्मा भूम्या समासीनः शान्तिबिन्दुसमन्वितः ।
बीज मनोभुव. प्रोक्तं जगत्त्रितयमोहनम् ।१२१
ऋषिस्सम्मोहनः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम् ।
सर्वसम्मोहनः साक्षाद्देवता मकरध्वजः ।
बीजेन दीर्घयुक्तेन षड्ङ्गविधिरीरितः ।१२२

अब अन्य मन्त्र बताया जाता है—भोज पत्र में चौंसठ पदों में श्लोक को लिखे और क्रमसे शिवादि दैत्यादि लिखे। 'यह सर्वतो भद्र'—इस नाम से प्रसिद्ध है। यह यन्त्र यश, श्री और विजय के प्रदान करने वाला होता है।११८। खादिर वृक्षके तख्ते पर लिख कर गायों के गोष्ठ में निवेशित करे तो यह चोर आदि के हनन करने वाला तथा रक्षाप्रद होता है और वत्सों के सहित गौओं का हित करने वाला है।११९। अक्षर वाला एक काम मन्त्र कहा जाता है—ब्रह्मा, कः, भूमि, लः, इस पर आसीन शांति—ई, विन्दु, अनुस्वार, इससे क्लीं हुआ। यह कामदेव का बीज कहा गया है। जो तीनों जगतोंका मोहने वाला होता है।१२०।१२१। इस मन्त्र का ऋषि सम्मोहन कहा गया है तथा इसका छन्द गायत्र है। इस मन्त्र का देवता साक्षात् सर्व सम्मोहन मकर ध्वज होता है। दीर्घ से युक्त बीजके द्वारा इसके षडङ्गों की विधि कही गयी है।१२२।

तपा (वा)रुणं नत्नविभूषणाढ्यं मीनध्वजं चारकृताङ्गरागम् ।
करांबुजैरकुं शमिक्षु चापं पुष्पास्त्रपाशौ दधत भजामि ।२३
लक्षात्रयं जपे न्शं मधुरत्रयसंयुतैः ।
पुष्पैः किंशुकजैः फुल्लैजुहुयात्तद्दशांशतः ।१२४
वक्ष्यमाणे यजेत्पीठे विधिना मकरध्वजम् ।
मोहिनी क्षोभिणी त्रासीस्तम्भिन्याकर्षिणो पुनः ।१२५
द्राविण्युन्मादिनीक्लिन्नाक्लेदिन्यः पीठशक्तयः ।
बीजाद्यमासनं दत्त्वा मूर्त्ति मूलेन कल्पयेत् ।१२६
अस्यां सम्गग्यजेद्देव वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।
इष्ट्वाङ्गावरणं पूर्वं मध्ये दिक्षु यजेच्छरान् ।१२७
द्राङाद्यं शोषणं तूर्वं द्रीडाद्यं मोहन ततः ।
गंदीपनाख्यं क्लीमाद्यं क्लुमाद्यं तापनं ततः ।१२८
सर्गान्तिभृगुणा भूयो मादन पञ्चमन्ततः ।
प्रणामबाणहस्ताब्जा ध्येयास्ना बाणदेवताः ।१२९

अब ध्यान बताया जाता है—क्रान्तिसे युक्त अरुणरत्नों के—भूषणोंसे समन्वित-मीन ध्वजा वाले—सुन्दर अङ्ग राग किये हुए-करकमलों में अंकुश इक्षुचाप-पुष्पास्त्र और पाश को धारण करने वाले का मैं भजन करता हूँ ।१२१। इस मन्त्र का तीन लाख जप करना चाहिए। और जप का दशांश भाग तीनों मधुरों में संयुक्त ढाक के पुष्पों से होम करें। आप बताये जाने वाले पीठ पर विधि के साथ मकरध्वज का अर्चन करना चाहिए। अब पीठ की शक्तियाँ बतलायी जाती हैं—मोहिनी— क्षोभिणी— स्तम्भिनी—आकर्षिणी—द्राविणी— उन्मादिनी—क्लिन्न—क्लेदिनी—ये पीठ की शक्तियाँ हैं बीजाद्य आसन देकर मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए ।१२६-१२६। इस मूर्ति में आगे कहे जाने वाले मार्ग से भली भाँति देव का यजन करना चाहिए। पूर्व में अङ्गावरण का अर्चन करके मध्य में दिशाओं में शरों का अर्चन करना चाहिए ।१२७। पूर्व में द्रडाद्य—द्रीड्य—मोहन —

दीपन–क्लीमाद्य–तापन–सर्गान्तभृगु अर्थात् सः, फिरमादन पाँचवाँ होता है। एक हाथ से प्रणाम और दूसरेसे अब्ज धारण करने वाले बाथ युक्त देवता है जिनका ध्यान करना चाहिए। वहां पर मध्य में क्रम के अनुसार शक्तियों का पूजन करें। २८ १२९।

सम्पूज्यास्तत्र मध्ययेषु शक्तयोऽष्टौ यथाक्रमम्।
अनङ्गरूपान्याऽनङ्गमदनानङ्गमन्मथा ।।१३०
अनङ्गकुसुमा पश्चादनङ्गमतुरा।
अनंगशिशिरानङ्गमेखलानंगदीपिका ।।१३१
लीलाकमलधारिण्यः स्मरवक्त्राः सुशोभितः ।।१३२
वह्निः षोडशपत्रेष पूज्याः षोडश शक्तयः।
यवतिविप्रयलम्भान्या ज्योस्ना शुभ्रर्मन्द्रवा ।।१३३
सुरता वारुणी लोभा कान्ति सौदामिनी पुनः।
कामच्छत्रा चन्द्ररेखा शुकी स्यान्मदना पुनः।१३४
ज्योतिर्मयावनी ता स्य्रः कह्लारविलसत्कराः।
स्मेरवक्त्रा युवतयो मदविभ्रममन्थराः।१३५

उन शक्तियों के नाम बताये जाते हैं—अनङ्गरूपा–अनङ्गणदना–अनङ्गमन्मथा—-अनङ्गकुसुमा—अनङ्गभदनातुरा—-अनङ्गशिशिरा—अनङ्गमेखला–अनङ्गदीपिका ये हैं।१३०-१६१। ये सब लीला कमलों के धारण करने वाली हैं, इनके मुख पर मन्द मुस्कान रहती है और ये सुशोभित हैं।१३२। बाहर सोलह पत्रों में इन षोडश शक्तियों का पूजन करना चाहिए। उनके शुभ नामों का, परिगठन किया जाता है—युवतिविप्रलम्भा, ज्योत्स्ना, शुभ्र, मदद्रवा,सुरता, वारुणी, लोभा, कान्ति, सौदामिनी, कामच्छत्रा, चन्द्ररेखा, शुक्री, मदना, ज्योति, मायावती, ये इनके नाम हैं। ये सब कह्हार के शोभित करने वाली है इनका मुख स्थित से मुक्त है–ये सब युवतियाँ है और मद के विभ्रमों से मन्थरा है।१३३-१३५।

दलाग्रेषु पुनः पूज्याः स्मरस्य परिचारिकाः।
शोकमोहीं विलासोऽन्यो विभ्रमो मदनातुरः।१३६

अपत्रयोयुवा कांमी धृतपुष्पोरतिप्रियः ।
ग्रीष्मस्तपान्त ऊर्ज्जोऽन्यो[हेमन्तः शशिरो मतः ।१३७
इक्षु कामुंकपूष्पेषुधरा रक्ता सुभूषिताः ।
अपराङ्गनिषङ्गाद्या वनितासक्तमानसाः ।१३८
रतिप्रियानष्टदिक्षु यजेदद्वौ विशिष्टधीः ।
परभृत्यारसौ पश्चाच्छुकमेधाह्वयौ पुनः।१३९
अपाङ्गभ्रू विलासौ द्वौ हावभावौ प्रकीर्तितौ ।
चतुरस्रस्य कोणेषु पूज्यास्तत्परिचारकाः ।१४०
माधवी मालती पश्चाद्धरिणाक्षी मदोत्कटा ।
सितचामरधारिण्यः सर्वाभरणभषिताः ।१४१
बाह्ये लोकेश्वरान्पश्चात्तदस्त्राण्यर्चयेत् क्रमात् ।१४२
इत्थं योभजते देवं सुगन्धिकुसुमादिभिः ।
स भवेल्लब्धसौभाग्यो लक्ष्म्या जितधनेश्वरः ।१४३
अशोकपुष्पैर्दध्यक्तै र्जुहुयाद्दिवमत्रयम् ।
अष्टोत्तरसहस्रं यो स भवेज्जगतां प्रियः ।१४४
गव्येनाज्येनः जुहुयान्मन्त्रो णाष्टोत्तरं शतम् ।
साधकेन्द्रः संसारार्तचिते हव्यवाह ।१४५
सम्पाताज्येन वनिता भो येदात्मनः पतिम् ।
अनया यद्यदादिष्टं तत्तत्स कुरुते सदा ।१४६
कन्यार्थी जुहुयाल्लाजैर्दध्यक्तमण्डलान्तरे ।
कन्यामिष्टामवाप्नोति सापि सत्पतिमाप्नुयात् ।१४७

दलों के अग्रभागों में पुनः स्मर देव की परिचारिकों का पूजन करना चाहिए। शोक, मोह विलास, विभ्रम, मदनातुर, अपत्रय, युवा, कामी, घृतयुष्य रति प्रिय, ग्रीष्म तपान्त, ऊर्ज्ज, हेमन्त, शिशिर, ये इनके नाम हैं।१३६-१३७। ये सब इक्षुकार्मुक और पुष्पों के वाणों को धारण करने वाली हैं। इनका रक्त वण है और ये सब सुभूषित है। अपराङ्ग, निषङ्गद्या --वनिताओं में आसक्त मानस हैं ।

ये रति प्रिय है। विशिष्ठ बुद्धि वाले को चाहिये कि इन आठों का आठों दिशाओं में यजन करे। परभृत्, सारस, शुक्र, मेधा ।१३८-१३९। अपाङ्ग, भ्रू विलास, हावभाव कीर्त्तित किये गये । चतुरस्र के कोणों में उनके परिचारक पूजने चाहिए ।१४०। माधवी, मालती, हरिणाक्षी —मदोत्कटा—ये सित चमरों के धारण करने वाली तथा सब आभरणों से विभूषित हैं ।१५१। बाहर में लोकेश्वरों का तथा क्रम से उनके अस्त्रों का अर्चन करना चाहिये ।१४२। इस प्रकार से सुगन्धित कुसुम आदि से जो देव का भजन किया करता है वह सौभाग्य के प्राप्त करने वाला और लक्ष्मी से धनेश्वर को जीतने वाला हो जाया करता है ।१४३। जो पुरुष अशोक के पुष्पों की दधि से अक्त करके दिनदिन तक एक सहस्र आठ बार होम किया करता है वह समस्त जगतों का प्रिय होता है ।१४४। गौ के घृत से मन्त्र के द्वारा एक सौ आठ आहुतियाँ दिया करता है अर्चि हैं हव्य वाहन में साधकेन्द्र को चाहिए सम्पात करे। उस सम्पात के घृत से वनिता अपने पति को भोजन करावे। उसके द्वारा जो-जो आदिष्ट होवे वह उस-उसको ही करे ।१४५-१४६। जो कन्याओं का अर्थी हो वह मण्डल के अन्दर में ही दध्यक्त लाजाओं के होम से प्राप्त कर लेता है और कन्या भी अपना सत्पति प्राप्त कर लिया करती है ।१४७।

कामोल्लासितसाध्यमङ्गविलसतषट्कोणमेतद्बहि-
र्गायत्रीगुणवर्णबद्धसुदल मालामनोरक्षरैः ।
षट्संख्येः सहिताष्टपत्रसहितं क्षोणीपुरेणावृतम् ।
कोणन्यस्तमनोभावेन कथितं यन्त्रं जगन्मोहनम् ।१४८
कामदेवाय शब्दान्तं विद्महे ङेऽन्तमीरयेत् ।
पुष्पवाणं धीमहिस्यात्तन्नोऽनङ्ग प्रचोदयात् ।१४९
नमोऽन्तकामदेवाय वदेत् सर्वजन ततः ।
प्रियास सर्वव्रणान्ते जनसम्मोहनाय च ।१५०

ज्वलद्वयंप्रज्वलार्णान्वदेत् सर्वजनस्य च।
हृदयं मम शब्दान्ते वशंकुरुयुगं शिरः।१५१

अब मन्त्र वतलाया जाता है-षट्कोण के मध्य में कामबीज के अन्दर साध्य–साधक कर्म का नाम लिखना चाहिए। अग्नेपादि षट्कोणों में काम षडङ्गों को लिखे। उसके बाहिर अष्टदल के मध्य में वक्ष्यमाण गायत्रीके वर्णोको तीन बार लिखकर माला मन्त्र के षट्-षट् अक्षरों को दलों के अग्रभागों में लिखना चाहिए। में न्यस्त मनोभाव से भूपुर को आवृत्त करे। यह जगन्मोहन यन्त्र कहा गया है।१४८। काम गायत्री का उद्धार वतलाया जाता है–'कामदेवाय' के अन्त में चतुर्थ्यन्त 'पुष्प वाण' लिखना चाहिए। फिर 'विदमहे'और 'धीमहि' लिखकर अनङ्ग प्रचोदयात लिखे।१४९। माला मन्त्र बतलाते हैं–'कामदेवाय नमः' यह कहकर 'सर्व नमः सर्व प्रियाग जन मोंहनाय' लिखकर 'ज्वल' को दो वार और प्रज्वल वर्णों को कहे। फिर सर्व जनस्य हृदय मम वश कुरु कुरु स्वाहा' कहे-यह माला मन्त्र अड़तालीस अक्षरों से युक्त होता है।१५०-१५१।

मालामनुरयं साष्टचत्वारिंशद्भिरक्षरैः।१५२
साध्याख्यापुटितः स्मरैः परिवृतं कामं लिखेत्मध्यतः।
पश्चात्तारविकारपक्षकपरान्नासाधिझिण्टीशघान्।
शूलाढयाष्टदलेषु साधुविलखेत्ताम्बूलपत्रोदरे।
यन्त्रं या निशि खादयेत्कृतजपं वश्या भवेत्तस्य सा।१५३
कथित पुष्प बाणस्यसांगोपाँगसमर्चनम्।
सौभाग्यकान्तिविभदारपुत्रतमृद्धिदम्।१५४

अब अन्य यन्त्र बतलाया जाता है–आठ दलों की कर्णिका में मध्य में साध्य कर्म नाम से पुटित काम बीजों से परिवृत करके लिखे। पीछे तार-विकार पक्षक पर नासाधिझिण्टीशयों की शूलाढय आठ दलों में भली भाँति लिखना चाहिए। फिर ताम्बूल के मध्य में रखकर रात्री में खावे ओर जप करे तो वह उसके वश्य हो

जाती है ।१५३। यह पुष्प व.ण का साङ्ग-उपाङ्ग समर्चन कह दिया गया है। यह सौभाग्य-कान्ति-वैभव-द्वारा-पुत्र और समृद्धि के प्रदान कर ने वाला होता है ।१५४।

आदाय वेदाः सकलाः समुद्रान्निहत्यांशङ्खासुरमत्युदग्रम् ।
दत्ताः पुरा येन पितामहाय विष्णुं तमाद्यं भज मत्स्यरूपम् ।१५५
दिव्यामतार्थं मथिते महाब्धो देवर्दासुरैर्वासुकिमन्दराभ्याम् ।
भूमेर्महावैगविघूर्णितायास्तं कूर्ममाधारगतं स्मरामि ।१५६
समुद्रकाञ्ची वसुन्धरा सरिदुत्तरीया मेरुकिरीटभारा ।
दंष्ट्राग्रतो येन समुद्धृता भूस्तमादिकोलं शरणं प्रपद्ये ।१५७
सक्तार्त्तिभगक्षमया धिया यस्तम्भान्तरालादुदितोर्नसिंह ।
रिपुं सुराणां निशितैर्नखाग्रैर्विदारयन्तं नच विस्मरामि ।१५८

अत्यन्त उग्र शंखासुर का निहनन करके सब ददोंको लाकर जिसने पहले पितामह को दिये थे उन आद्य मत्स्य स्वरूप वाले भगवान् विष्णु का भजन करो ।१५५। दवों और तसुरों के द्वारा वासुकि और मन्दराचल से दिव्य अमृत की प्राप्तिके लिये महासागर के मथन किए जाने पर महान वेग से विघूर्णित भूमि के आधार में स्थित उन भगवान् कूर्म का मैं स्मरण करता हूँ ।१५६। जिसकी काँची समुद्र है और जिसका उत्तरीय श्रेष्ठ सरिता है—मेरु के किरीट के भार वाली वसुन्धरा को जिसने अपनी दाढ़ के अग्रभाग पर धारण किया था उन आदि कोल (बाराह) की मैं शरणागति में गमन करता हूँ ।१५७। अपने भक्त की पीड़ा के भंग करने में समर्थ श्री से युक्त जो स्तम्भ के अन्तराल से समुदित हुये थे और जो सुरो के शत्रु हिरण्यकशिपु को अपने पैने नखों से विदीर्ण कर रहे थे उन भगवान् नृसिंह कामैं कभी भी विस्मरण नहीं करता हूँ ।१५८।

यतुः समुद्रावरणा धारित्री न्यासाय नाल चरणस्य यस्य ।
एकस्य नान्यस्य पद सुराणां त्रिविक्रमं सर्वगतं स्मरामि ।१५९

त्रिः सप्तवार नृपतीन्निहत्य यस्तर्पणं रक्तमयं पितृभ्यः ।
चकार दोर्दण्डगलेन सम्यक् तमादिशूरं प्रणमामि भक्त्या ।१६०
कुले रघूणां रमवाप्य जन्म विधायं सेतुं जलधेर्जलान्तः ।
लङ्केश्वर यः शमयाञ्चकार सीतापति तं प्रणमामिभक्त्या ।१६१
हलेन सर्वानसुरान्विकृष्य चकार चूर्णं मुशलप्रहारैः ।
यः कृष्णमासाद्य बल बलीयान् भक्त्या जजेत बलभद्ररामम् ।१६२

चार सागरों के आवरण वाली धरित्री जिसके चरणों में न्यास करने के लिए समर्थ नहीं हुई थी, सुरों के पद (स्थान) अन्य एक पद का नहीं था उन भगवान् त्रिविक्रम का जो सर्वगत है उसे मैं स्मरण करता हूँ ।१५९। जिसने इक्कीस बार राजाओं का निहनन करके पितृगण का रक्तमय तर्पण किया था और भलीभाँति अपने महान बल के द्वारा ही किया था उन आदिशूर परशुराम का मैं भक्ति की भावना से स्मरण करता हूँ । अर्थात् प्रणाम करता हूँ ।१६०। जिनने रघुकुल में जन्म ग्रहण करके समुद्र के जल के अन्दर सेतु बनवाकर लंकेश्वर रावण का शमन किया था, उन भगवान सीता के पति श्रीराम को मैं भक्ति भाव से प्रणाम करता हूँ ।१६१। जिसने अपने हल के द्वारा समस्त असुरों को खीचकर मुशल के प्रहारों से उनका चूर्णं कर दिया और जो श्री कृष्ण के बल को प्राप्त करके बलीयान् थे उन श्री बलभद्र राम का मैं भक्ति से भजन करता हूँ ।१६२।

पुरा पुराणानसरान्विजेतुं सम्भावयन् चोवरचिह्नवेषम् ।
चकार यः शास्त्रमोचकल्पं तं मूलभूत प्रणतोऽस्मि बुद्धम् ।१६३
कल्पावसाने निखिलैः खुरैः स्वैः संघट्टयामास निमेषमात्रात् ।
यस्तेजसा निर्दहनातिभामो विश्वात्मकं तुं तुरग भजामः ।१६४
शंख सुचक्रं सुगदां सरोजं दोर्भिर्दधानं गरुडाधिरूढम् ।
श्रीवत्सचिह्नं जगदादिमूलं तमालनीलं हृदि विष्णुमीडे ।१६५
क्षीराम्बधो शेषविशेषतल्पे शयानमन्तः स्मितशोभिवक्त्रम् ।
उत्फुल्लनेत्राम्बुजमम्बुजाभमाद्यं श्रुतीनामसस्कृतस्मरामि ।१६६

प्रणयेदनया स्तुल्या जगन्नाथं जगन्मयम् ।
धमार्थकाममोक्षाणामाप्तये पुरुषोत्तमम् ।१६७

जिसने पुराने असुरों पर विजय प्राप्त करन के लिये चीवर चिह्न डाले वेष की सम्भावनाये करते हुए अमोघ शास्त्र कल्प को किया था उन मूल भूत बुद्ध को मैं प्रणाम करता हूँ ।१६३। जिसने कल्प के अवसान के समय में अपने समस्त वुरोंके द्वारा निमेषपात्र में ही संघट्ट करा दिया था और दहन करने वाले तेज से जो अत्यन्त ही भीषण हो गये थे हम उन विश्वात्मक तुरंग का भजन करते हैं ।१६४। जो शंख चक्र-गदा और पद्म को धारण किये हुये हैं और गरुड़ पर अधिरूढ़ है–जिनके वक्ष: स्थल में श्रीवत्स का चिह्न है और समस्त जगतों के आदिमूल हैं तथा जिनका वर्ण तमाल के समाल नील है उन भगवान् विष्णु का मैं अपने हृदय में स्तवन करता हूँ ।१६५। जो क्षीर सागर में शेष की विशेष शय्या पर शयन करने वाले हैं और अपने अन्दर स्थित से शोभित मुख वाले हैं जिनके नेत्र विकसित कमल की आभा से समन्वित हैं–जो श्रुतियों के आद्य हैं, उन भगवान् नारायण का मैं बारम्बार स्मरण करता हूँ ।१६६। इस स्तुति के द्वारा जगन्मय जगन्नाथ श्री पुरुषोत्तम को प्रसन्न करना चाहिये । इससे धर्म-काम–अर्थ और मोक्ष प्राप्ति होती है ।१६७।

षोडश पटल

।। महेश प्रकरण ।।

अथ वक्ष्ये महेशस्य मन्त्रान् सर्वसमृद्धिदान् ।
यैः पूर्वमृषयः प्राप्ताः शिवतायुज्यमञ्चसा ।१

हृदयं वपरं साक्षि लान्तानतान्वितो मरुत् ।
पञ्चाक्षरोमनुः प्रोक्तस्ताराद्योऽयं षडक्षरः ।२
वामदेवो मुनिश्छन्दः पंक्तिशीशोऽस्य देवता ।।
षड्भिर्वर्णः षडङ्गानि कुर्यान्मन्त्रस्य देशिकः ।३
मन्त्रवर्णादिकान्यस्येतृपञ्चमूर्त्तीयथाक्रमम् ।
तर्जनीमध्ययोरन्त्या नामिकाङ्.गुष्ठकं पुनः ।४
ताः स्युस्तत्पुरषाघोरसद्यवामेशसञ्ज्ञकाः ।
बक्त्रहृत्पादगुह्येषु निजमूर्द्धनि ताः पुनः ।५

इसके अनन्तर सब समृद्धियों के प्रदार करने वाले भगवान् महेश मन्त्रों को बतलाया जायेगा जिनके द्वारा पहिले ऋषियों ने तुरन्त ही भगवान् शिव के सायुज्य की प्राप्ति करली थी ।१। अब मन्त्र का उद्धार बताया जाता है—हृदयं—नमः यह पद । वपरं—शः, साक्षि—हकारयुक्त शि । लान्त—वः, अनन्त—आ, तदन्वित—वा, मरुत्—यः, यह पाँच अक्षरों वाला मन्त्र कहा गया है । इसके आदि में प्रणव (ॐ) है अतएव यह षट् अक्षरों वाला है ।२। इसका ऋषि वामदेव है और छन्द पंक्ति और ईश इसका देवता आचार्य को चाहिये कि छै वर्णों से इसके षट् अङ्गों को करे ।३। पाँच मूर्त्त वर्गादिक को यथाक्रम न्यास करे । तर्जनी, मध्यमा, कनिष्ठिका, अनामिका और अगुष्ठ में करे । वे मूर्त्तियाँ तत्पुरुष, अघोर, सद्यो जात। वामदेव और ईशान संज्ञा वाले हैं मुख, हृदय, पाद गुह्य और अपने मूर्धा में न्यास करे ।४-५।

प्राग्याम्यवारुणोदीच्यमध्यवक्त्रेपु पञ्चसु ।
मन्त्राङ्गानि न्यसेत्षश्चाज्जातियुक्तानि षट्क्रमात् ।६
कुर्वीत गोलकन्यासं रक्षार्थं तदनन्तरम् ।
हृदि वक्त्रांसयोरूर्वोः कण्ठे नाभौ द्विपार्श्वके ।७
पृष्ठे हृदि ततो मूर्द्ध्नि वदने नेत्रयोर्नसोः ।
दोः पत्सिन्धिषु साग्रेषु वित्यसेत्तदनन्तरम् ।८

शिरोवदनहृत्कुक्षि सोरुपाददद्वये पुनः ।
हृदि वक्त्राम्बुजे टङ्कमृगाभयवरेऽव्रथ ।९
वक्त्रांसहृत्सु पादोरुजठरेषु क्रमान्यसेत् ।
मूलमन्त्रस्य षड्वर्णान्यथावद्देशिकोत्तमः ।१०
मूर्ध्नि भालादरांसेषु हृदये ताः पुनर्न्यसेत् ।
पश्चादनेन मन्त्रेण कुर्वीत व्यापकं सुधीः ।११
नमोऽस्तु स्थाणुरूपाययज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने ।
चतुर्मूर्त्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे ।१२
एव न्यस्तशरीराऽसौ चिन्तयेत्पार्वतीपतिम् ।१३
ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम् ।
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्ति वसानम् ।
विश्वाद्यं विश्वरूपनिखिभयहरल पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ।१४

यूर्व, याम्य, वरुण, उत्तर और मध्य वक्त्र पत्रों में मन्त्र के अङ्गों का न्यास करना चाहिए। पीछे जाति युक्तों को षट् क्रम से न्यास करे। उसके अनन्तर रक्षा के लिये गोलक न्यास करना चाहिए इसके अनन्तर हृदय में--मुख, अंसों में दोनों उरुओं में, कण्ठ में नाभि में, दोनों पार्श्वों में-बाहुओं में-पदों में और साग्र सन्धियों में विन्यास करे।६-८। शिर, मुख, हृदय, कुक्षि, दोनों उरू, दानों पाद, मुख कमल, टंक (परशु)—मृग, अभय, बर, वक्त्र, अंस जठर में क्रम से न्यास करना चाहिए। उत्तम आचार्य को चाहिये कि वह मूल मन्त्र के छँ वर्णो को रीत्यानुसार उनका मूर्धा, भाल, उदर--अंस और हृदय में पुनः न्यास करे। पीछे इस मन्त्र के द्वारा सुधी पुरुष व्यापक न्यास करे ।९-११। स्थाणु रूपाय ज्योतिर्लिङ्गा-मृतात्मने चतुर्मूर्त्ति वपुश्छाया भासिताङ्गाय शम्भवे नमः। इस प्रकार से शरीर में न्यास करने वाला यह पार्वती के स्वामी का ध्यान करना चाहिये ।१२-१३। अब ध्यान बतलाया जाता है—चाँदी

के पर्वत के समान सुन्दर, चन्द्र के भूषण से संयुत, रत्नों के आकल्पों से उज्ज्वल अङ्ग वाले–कर कमलों में परशु, मृग, वरदान और अभय-दान धारण किए-प्रसन्न–पद्म के आसन पर विराजमान–चारों ओर से अमर गणों के द्वारा स्तवन किये गये–व्याघ्र के चर्म को धारण करने वाले विश्व के आद्य, विश्व के स्वरूप वाले, सम्पूर्ण भय को हरण करने वाले, पाँच मुखों से समन्वित, तीन नेत्रों से युक्त-महेश का नित्य ध्यान करना चाहिए।१४।

तत्त्वलशं जपेन्मन्त्रं दीक्षितः शैववर्त्मना ।
तावत्संख्यासहस्राणि जुहुयात्पायसैः शुभैः ।१५
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रः साधकाभीष्टसिद्धिदः ।
देवं संपूजयोत्पीठेवामादिनव शक्तिके ।१६
वामा ज्येष्ठा ततोरौद्री काली कल्पदादिका ।
विकरिण्याहवया प्रोक्ता शलाद्याविकरिण्यथ ।१७
बलप्रमथनी पश्वत्सर्वभूतदमन्यथ ।
मनोन्मनीति संप्रोक्ताः शैवपीठस शक्तयः ।१८
मनो भगवते पश्चात्सकलादिवदेत्पुनः ।
गुणात्मशक्तियुक्ताय ततोऽनन्ताय तत्परम् ।१९
योगपीठात्मने भूयो नमस्तारादिको मनुः ।
अमुना मनुना दद्यादासनं गिरिजापतेः ।२०

इस दन्त्र का चौबीस लाख जप शिव के मार्ग से दीक्षित होकर करे। उतने ही सहस्र संख्या में शुभ पायस से हवन करना चाहिये ।१५। इसके अनन्तर मन्त्र सिद्धहो जाता है और यह साधना करने वाले साधक के अभीष्टों की सिद्धि का प्रदान करने वाला है। वामादि नौ शक्तियों से समन्वित पीठ में देव का भली-भाँति पूजन करना चाहिये ।१६। वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कल्पदा, विकरिणी, आहवया वलाद्या, अविकरिणी, बलप्रमथनी, सर्वभूतदमनी, मनोन्मनी, ये शैव पीठ की शक्तियाँ है ।१७-१८। अब मन्त्र का उद्धार बताया जाता

है– 'नमोभगवते – सकलगुणात्मशक्तियुक्ताय – अनन्तायरयोगपीठात्मने नमः'। इसके आदि में प्रणव होता है। इस मन्त्र के द्वारा गिरिजापति देव को आसन अर्पित करना चाहिए ।१९-२०।

मूर्त्ति सूलेन संकल्प्य तत्रावाह्य यजेच्छिवम् ।
कर्णिकायां यगेन्मूर्त्तौ रोशमीशानदिग्गतम् ।२१
शुद्धस्फटिकसंकाश दिक्षु तत्पुषादिकाः ।
पीताञ्जश्वेत्तरक्ताः प्रधानसद्धशायुधाः ।२२
चतुर्वक्त्रसमायुक्ता यथावत्यंप्रपूजयेत् ।
कोणेष्वर्च्याः निबृत्याद्यास्तेजोरूपाः कलाः क्रमात् ।२३
अङ्गानि केसरस्थानि विघ्नेशान्पत्रगान्यजेत् ।
अनन्त सूक्ष्मनामानं शिवोत्तममनन्तरम् ।२४
एकनेत्रमकरुद्रं त्रिमूर्त्ति (नेत्रं) तदनन्तरम् ।
पश्चाछ्रीकण्ठनामान शिखण्डिनमनन्तरम् ।२५
रक्तपीतसितारक्तकृष्णरक्ताञ्जनासितम्
किरीटार्पितवालेन्दूपद्मस्थान् भूषणान्वितान् ।२६
त्रिनेत्रात् शूलवज्रास्त्रचापसस्तान्मनोहरान् ।
उत्तारादि यजेत्पश्चादुमा चन्डेश्वरं पुनः ।२७

मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करके वहाँ पर अर्थात् उस मूर्त्तिमें आवाहन करके भगवान् शिवका अभ्यर्चन करना चाहिये। कर्णिका में मूर्त्तियों का यजन करे। ईशान दिशा में संस्थित ईश का यजन करे ।२१। ईश देव शुद्ध स्फटिक मणि के सदृश हैं। दिशाओं में तत्पुरुष आदि का पूजन करना चाहिए। ये वर्णों में पीत, अञ्जन, श्वेत और रक्त है और प्रधान सदृश इनके आयुध हैं–इन सबके चार मुख हैं। इन सबका यथा रीति से अभ्यर्चन करना चाहिए। कोणों में जो तेजोरूपा निवृत्ति आदि कलाओं का क्रम से पूजन करे ।२२-२३। केसरों में संस्थित अंगों का तथा पत्रों में विराजमान विघ्नेश्वरों का यजन करे। अनन्त, सूक्ष्मनामा, शिवोत्तम, ·एकनेत्र, एकरुद्र त्रिमूर्ति–

श्रीकन्ठ नाम वाले—शिखंडी का पूजन करे ।२४-२५। इनका वर्ण, रक्त, पीत, सित, आरक्त, कृष्णरक्त, अञ्जन, और आसित है । ये सब अपने किरीटों में बालेन्दु को अर्पित किये हुए है--सभी पद्मों के आसनों पर विराजमान है और सब भूषणों से विभूषित है ।२५-२६। ये सभी तीन नेत्रों से समन्वित हैं और शूल, वज, अस्त्र, चार हाथों में धारण किये हुये हैं----मनोहर हैं । उत्तरादि में पीछे उमामहेश्वर का पुन: यजन करना चाहिए ।२७।

ततो नन्दिमहाकालौ गणेशवृषभौ पुनः ।
अथ भृङ्गिरिटिं स्कन्दमेतान्मवृमासनस्थितान् ।२८
स्वर्णतोयारुणश्याममुक्तेन्दुसितपाटलान् ।
इन्द्रादयस्ततः पूज्या वज्राद्यायुधसंयुताः ।२९
इत्थं संपूज्योद्देशं नित्यशो जयते ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाद्वाञ्छिता श्रियम् ।३०
द्विसहस्रं जगेद्रोगात्मुच्यते नात्र संशयः ।
त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्रं दीर्घमायुरवाप्नुयात् ।३१
सहस्रवृद्धया प्रजपन् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।
आज्यान्वितैस्तिलैः शर्द्धर्जुहुयाल्लक्षमादरात् ।३२
उत्पाततज्जनितान् क्लेशान्नाशयेन्नात्र संशयः ।
शतलक्षं जपेत्साक्षाच्छिवोभवति मानवः ।३३

इसके अनन्तर नन्दी और महाकाल, गणेश और वृषभ, भृङ्गी, रिटि, स्कन्द को पूजित करे । ये सब पद्म के आसनों पर संस्थित हैं ।२८। ये सब स्वर्णतोय, अरुण, श्याममुक्ता, इन्दु, सित और पाटल वर्णो वाले हैं । इसके अनन्तर इन्द्र देव आदि का जोकि वज्र आदि आयुधों से समन्वित है अर्चन करना चाहिये ।२९। इस रीति से देव का भली भांति अर्चन करे और नित्य ही सहस्र मन्त्र का जप करना चाहिए । ऐसे करने वाले पुरुष सभी पापों निर्मुक्त हो जाया करते हैं और ये अपनी मनोवांछित श्री की प्राप्ति कर लिया करते हैं ।३०।

दो सहस्र मन्त्र का नित्य जप करे तो मनुष्य रोग से मुक्त हो जाता है--इसमें कुछ भी संशय नहीं है। तीन सहस्र यदि नित्य मन्त्र का जप करे तो जप करने वाला मानव दीर्घ आयु का लाभ प्राप्त किया करता है ।३१। इसी रीति से एक सहस्र की नित्य वृद्धि करने वाला पुरुष सभी कामनाओं को प्राप्त कर लिया करता है। शुद्ध आज्य से समन्वित तिलों से आदर के साथ एक लाख आहुतियाँ देवे तो उत्पातों से समुत्पन्न क्लेशों का विनाश किया करता है--इसमें कुछ भी संशय नहीं है। वह शिव ही हो जाया करता है ।३२-३३।

षड्क्षरः शक्तिरुद्धः कथितोऽष्टाक्षरो मनुः।
ऋषिश्छन्दः पुराप्रोक्ते देवता स्यादुमापतिः ।३४
अङ्गानि पूर्वमुक्तानि सोममीश विचिन्तयेत् ।३५
बन्धकाभं त्रिनेत्रं शशिशकलधरं स्मेरवक्त्रा वहन्तम्।
हस्तैः शूलं कपाल वरदभयद चारुहारं भजामि।
वामोरुस्तम्भगायाः करतलविलसच्चारुरक्तोत्पलायः।
हस्तेनाश्लिष्ठदेह मणिमयविलसद्भूषणायाः प्रियायाः ।३६

शक्ति से सम्पुटित षडक्षर 'अष्टाक्षर मन्त्र कहा गया है इस मन्त्र के ऋषि और छन्द पहिले ही कहे हुए हैं। इसका देवता भगवान् उमापति है। इसके अङ्ग पूर्वमें कहे गये हैं। सोम और ईश का चिन्तन करना चाहिए।३४-३५। अब ध्यान बतलाया जाता है। इसी के अनुसार देव के स्वरूप का चिन्तन करना चाहिए। ध्यान---बन्धूक के पुष्प के समान आभा से संयुत हैं---तीन नेत्रों से संयुत है—मस्तक में चन्द्रमा के खण्ड को धारण किए हुए हैं--मन्दस्मित से युक्त मुख वाले हैं--हाथों में शूल, कपाल, वरदान अभयदान धारण करने वाले हैं--सुन्दर हार से शोभित को मैं प्रणाम करता हूँ ।३५। आपके बाँये उरुस्तम्भ पर विराजमान और करतल में शोभित एवं सुन्दर रक्तोत्पल को लिए हुई है ऐसी प्रियतमा को, जो मणिमग कान्तियुक्त

भूषणों से भूषित हैं, अपने कर से देहालिंगन करने वाले देव का ध्यान करे ।३६।

मनुलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्त्र यथाविधि ।
जहुयान्मधुरासिक्तै रारग्वधसमिद्वरैः ।३७
प्राक् प्रोक्ते पूजयेत्पीठे गन्धपुष्पैरुमापतिम् ।
अङ्गाबृत्तैर्वहिः पूज्या हृल्लेखाद्या यथापुरा ।
मध्यप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु विधानतः ।
हृल्लेखा गगना रक्ता चतुर्थी तु करालिका ।३८
महोच्छुवा क्रमादेताः पंचभूतसमप्रभाः ।
पाशांकुशवराभीतिधारिण्योऽमित्तभूषणाः ।३९
यजेत्पूर्वादिगत्रेषु वृषभाद्याननुक्रमात् ।
हिमालयाभं वृषभं तीक्ष्णश्रृङ्ग त्रिलोचनम् ।४०
सर्वाभरणसंदीप्तं साक्षाच्छब्दस्वरूपिणाम् ।
कपालशूलविलसत्करं कालधनप्रभम् ।४२

इस मन्त्र का एक लक्ष जप करे और दशांश विधि के अनुसार मधुरों में आसिक्त आरग्वध की श्रेष्ठ समिधाओं से हवन करना चाहिये ।३७। पूर्व में कहे हुये पीठ पर गन्ध पुष्पादि के द्वारा उमापति का पूजन करे। पूर्व की भाँति अंग वृतों के द्वारा हृल्लेखा आदि का बाहर पूजन करना चाहिए । मध्य–पूर्व–दक्षिणा--उत्तर--पश्चिम में विधान के साथ पूजन करे । हृल्लेखा--गगना--रक्ता--करालिका–महोच्छुत्रा का क्रम से यजन करे । ये सब पाँच भूतों की प्रभा के तुल्य प्रभा वाली हैं । ये सब पाश ०ंकुश–वरदान--अभयदान की धारण करने वाली है और समित भूषण वाली है ।३८-३। पूर्वादि पत्रों में अनुक्रम से वृषभादि का यजन करना चाहिये । वृषभ हिमालय के समान आभासे संयुक्त है, उसके तीक्ष्ण श्रृङ्ग हैं और तीन लोचनोंवाला है ।४०। समस्त आभरणों से श्रेष्ठ दीप्तिमान्--साक्षात् शब्द के स्वरूप वाले हैं । कमल और शूल से कर शोभित है और कामदेव के तुल्य

प्रभा से युक्त हैं ।४१। ऐसे तीन नेत्रधारी और दिगम्बर (नग्न) क्षेत्र-पाल का अर्चन करे ।४२।

क्षेत्रपालं त्रिनयनं दिगम्बरमथार्चयेत् ।
शूलटङ्काक्षवलयक्रमण्डलूलसत्करम् ।४३
रक्ताकारं त्रिनयनं चन्डेशमथ पजयेत् ।
चक्रशखभयाभीष्टकरां मरकतप्रभाम् ।४४
दुर्गा प्रपूजयेत्सौम्यां त्रिनेत्रां चारुभषणाम् ।
कल्पशाखा रत्नघण्टां दधानं द्वादशेक्षणम् ।४५
बालार्काभं शिशुं कान्तं षण्मुख पूजयेत्तत ।
नन्दिनं पूजयेत्सौम्यं रत्नभूषणमन्डितम् ।४६
परश्वेणवराभीतिप्रारिणं श्यामविग्रहम् ।
पाशांकुशवराभीष्टधारिणं कुंकुमप्रभम् ।४७
विघ्नानायकमभ्यर्च्यं चन्द्रार्द्ध कृत्तशेखरम् ।
श्यामंरक्तोत्पलकरं बामाङ्कन्यस्ततत्करम् ।४८
त्रिनेत्रं रक्तावस्त्राढ्यं सेनापतिमर्च्चयेत् ।
ततोष्टमातरः पज्या ब्राह्मयाद्याः प्रोक्तलक्षणाः ।४९

त्रिशूल–टङ्क-अक्षवलय--और कमण्डल से सुशोभित करो वाले ।४३। रक्त वर्ण से यक्त आकार वाले तीन नेत्रों को धारण किये हुए चण्डेश का पूजन करे । शंख, चक्र, अभय और अभीष्ट को करों में धारिणी--मरकतमणि की प्रभा से समन्वित--तीन नयनों वाली तथा मनोहर भषणों से विभूषिता सौम्य स्वरूप वाली दुर्गा का अभ्यर्चन करना चाहिए। कल्प शाखा अर्थात् कल्प वृक्षकी डाली और रत्न घन्टा को धारण करने काले बारह नेत्रों से युक्त, बालार्क सूर्यके समान आभा वाले-परम कान्त शिशु षण्मुखका इसके अनन्तर अर्चन करना चाहिए। परम सौम्य और रक्त वर्ण के भूषणों से भूषित नन्दी का यजन करे। ।४६। परशु--वर--अभीति के धारी--कुंकुम के समान प्रभा से युक्त तथा अर्ध चन्द्रसे अपना मुकुट बनाये हुए भगवान् विघ्न नायक

का अभ्यर्चन करे। श्याम--रक्त उत्पल को कर में लिये हुये--उस कर को वामाङ्ग में न्यस्त करने वाले--तीन नेत्रों से युक्त तथा रक्त वर्ण के वस्त्रों से आवृत उमापति का अर्चन करना चाहिए। वहाँ पर ब्रह्माणी आदि आठ माताओं का पूजन करे जिनके लक्षण बताये जा चुके हैं ।४७-४९।

इन्द्रादिकांल्लोकपालान् स्वस्वदिक्षु समर्चयेत् ।
वज्रादीनि तदस्त्राणि तद्बहिः क्रमशोऽर्चयेत् ।५०
एवं योभजते मन्त्री देवेश तमुमापतिम् ।
स भवेत्सर्वलोकानां प्रियः सौभाग्यसम्पदाम् ।५१
सान्तःसद्यान्तसंयुक्तो बिन्दुभुषितमस्तकः ।
षड्दीर्घयुक्तवीजेन षडङ्गविधिरीरित्तः ।
वामदेवो मुनिश्छन्दः पँक्तिदेवः सदाशिवः ।५३
ईशानादीर्ग्यसेन्मूर्त्तीरङ्गुष्ठादिषु देशिकः ।
ईशानाख्यां तत्पुरुषमघोर तदनन्तरम् ।५४
वामदेवाह्वायां सद्यमासां वीजं क्रमाद्विदुः ।
ओकाराद्यैः पञ्चह्रल्वैविलोमात्संयुत वियत् ।५५
तत्तदङ्गुलिभिर्भूयस्तत्तदवीजादिकान्यसेत् ।
शिरोवदनहृद्गुह्यापादशेषे यथाक्रमम् ।५६
ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु ताः ।
ततः प्रविन्यसेद्विद्वानष्टत्रिंशत्कलास्तनौ ।५७

इन्द्र देव आदि लोकपालों का अपनी-अपनी दिशाओं में समर्चन करे। वज्र आदि जो उनके आयुध हैं उनके बाहर उनका क्रम से पूजन करना चाहिए। जो मन्त्र के धारण करने वाला पुरुष इस प्रकार से देवेश्वर उमापति का सेवन किया करता है वह पुरुष सब लोकों का प्रिय और सोभाग्य--सम्पदाओं का स्थान हों जाया करता है ।५१। अब प्रसाद मन्त्र को उद्धार के सहित वताया जाता है--सान्त--हः,

सद्यान्त--औ, इससे संयुक्त ही और मस्तक में बिन्दु अर्थात् अनुस्वार से भूषित होवे। यह प्रासाद नाम वाला मन्त्र कहा गया है जो सेवन करने वालोंको सब सिद्धियाँ प्रदान करने वाला होताहै।५२। षडगदीर्घ युक्त बीज के द्वारा इस मन्त्र की षडङ्ग विधि कही गयी है। इस मन्त्र का ऋषि वाम देव हैं और छन्द पंक्ति कहा गया है। देव इसका सदा-शिव होते हैं।५३। ईशानादि मूर्त्तियों का अंगुष्ठ आदि में न्यास करे। ईशान नामक. तत्पुरुष, अघोर--वामदेव और सद्य इन मूर्त्तियों के बीज क्रम से जान लेने चहिये। ओंकार आति पाँच ह्रस्वों से विलोम से संयुत विपत् को उस-उस अंगुलियों से फिर उन-उन बीजादि का न्यास करना चाहिये। शिर, मुख, हृदय, गुह्य. पाद, शेष में क्रम के अनुसार न्यास करे। ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, उत्तर, पश्चिम में मुखों में उनका विद्वान् फिर तनु में अड़तीस कलाओं का विन्यास करे।५ -५७।

ईशानाद्या ऋचः सम्यगंगुलीषु यथाक्रमम्।
यङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तां न्यसेद्देशिकसत्तम।५८
मूर्द्धास्यहृदयाम्भोजगुह्यपादेषु ता पुनः।
वक्त्रीषूर्द्ध्वादिष न्यस्येद्भूयोऽङ्गानि प्रकल्पयेत् ५९
तारपञ्चकमुच्चार्यसर्वज्ञाय हृदीरितम्।
अमृते तेजोमालिनि तृप्तायेति पदं पुनः।६०
तदन्ते ब्रह्मशिरसे शिरोऽङ्गं ज्वलितं ततः।
शिखि शिखाय परतोऽनादिबोधाय तच्छिखा।६१
वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय तनुच्छतम्।
सौं वौ हौंमिति संभाव्य पुरतोऽलुप्तशक्तये।६२
नेत्रमुक्तंश्लीपशुहूँ फडन्तेऽनन्तशक्तये।
अस्त्रमुक्तं षडंगानि कुर्वाद्देशिकसत्तमः।६३

श्रेष्ठ आचार्य को चाहिए कि वह ईशा नाद्य ऋचाओं का भली भाति क्रम के अनुसार अंगुष्ठ से आदि लेकर कनिष्ठिका के अन्त पर्यन्त

न्यास करे ।५८। मूर्द्धा, मुख, हृदय, गुह्य, पाद मैं उनका पुनः ऊर्ध्वादि वक्त्रोंमें न्यास करे। फिर अंगोंकी कल्पना करनी चाहिए। तार पंचक का समुच्चारण करके सर्वज्ञाय:यह हृदय कहा गया है। फिर मृते तेजो मालिनि तृप्ताह--'यह पद कहे उसके अन्त में 'ब्रह्मा शिर से' शिर है 'अंग ज्वलित शिख शिखाय' इसके आगे 'अनादि बोधाय' यह उसकी शिखा है।५९-६१। 'वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय'-यह तनुच्छदहै। सौ वौं हौं--यह कहकर आगे 'अलुप्त शक्तये नेत्र' कहा गया है। 'श्लीं पशु हूं फट्' और अन्त में 'अनन्त शक्तये'--यह अस्त्र बताया गया है। इस प्रकार श्रेष्ठ विधि से षडंगों को करे।६२-६३।

पूर्वदक्षिणपाश्चात्यसोममध्येषु पंचसु।
वक्त्रेषु पञ्च विन्यस्येदीशानस्य कलाः कमात् ।६४
ईशानः सर्वविद्यानां शशिनी प्रथमा कला।
ईश्वरः सर्वभूतानामङ्गदा तदनन्तरम् ।६५
ब्रह्माधिपतिशब्दते ब्रह्मणोऽधिपतिः पुनः।
ब्रह्मेष्टदा तृतीया स्याच्छिवी में अस्तुतत्परः ।६६
मरोचिः कथितस्तत्वे चतुर्थी च सदाशिवोम्।
अंशुमालिन्यथपरा प्रणवाद्या नमोऽन्विताः ।६७
पूर्वपश्चिमयाम्योदग्वक्त्रेषु तदन्तरम्।
चतस्रो विन्यसेन्मन्त्री पुरुषस्य कलाः क्रमात् ।६८

पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, सोम के मध्यों में पाँच वक्त्रों में ईशान की कलाओं का क्रम में विन्यास करना चाहिए।६४। ईशान सब विद्याओं की शशिनी प्रथमा कला है। सब भूतों का अंगदा इसके अनन्तर में है। 'ब्रह्माधिपति, शब्दके अन्तसे ब्रह्माका अधिपति यह ब्रह्मष्टदा तीसरी कला होती है। 'शिवो में अस्तु त्पर मरीचि मन्त्र में कहा गया है। यह चौथी सदा शिवी कला होती है। 'अंशुमालिनी' अन्य कला है जिनके आदि में प्रणव तथा अन्त नमः--इस में समन्वित है।६४-६५। इसके

अनन्तर पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर में रहने वाले मुखों में पुरुष की चारों कलाओं का मन्त्रधारी पुरुष विन्यास करे ।६८।

आद्या तत्पुरुषायेति विद्महे शान्तिरीरिता ।
महादेवाय शब्दान्ते धीमहि स्थात्तात:परम् ।६९
विद्या द्वितीया कथिता तन्नो रुद्रः पदं ततः ।
प्रतिष्ठा कथिता पश्चात्ततीया स्यात्प्रचोदयात् ।७०
निवृत्तिस्तत्पराः सर्वाः प्रणवाद्या नमोऽन्विताः ।
हृद्ग्रीवांसद्धयेनाभौ कुक्षौ पुच्छेऽथ वक्षसि ।७१
अघोरस्य कला न्यस्येदष्टौ मन्त्री यथाविधि ।
अघोरेभ्यस्तथा पूर्वमीरिता प्रथमा कला ।७२
अथघोरेभ्य इत्यन्ते मोहा स्यात्तदनन्तरम् ।
घोरान्ते स्यास्क्षमा पश्चात्तृतीया परिकीर्तिता ।७३
घोरतरेभ्यो निद्रा स्थात्सर्वतः सर्वतत्परा ।
व्याधिस्तु पञ्चमी प्रोक्ता सर्वेभ्यस्तदनन्तरम् ।७४
मृत्युर्निगादिता षष्ठी नमस्ते अस्तु तत्परम् ।
क्षुधा स्यात्सप्तमी रुद्ररूपेभ्यः कथिता तृषा ।७५
अष्टमी कथिता एतद् ध्रुवाद्या नमसाऽन्विताः ।
गुह्यमुष्कोरुयुग्मेषु जानुजंघायुगे स्फिचो ।७६

आद्या तत्पुरुषाय यह है। विद्महे शान्ति कही गयी है। महादेवाय--इस शब्द के अन्त में धीमहि है उससे आगे विद्या दूसरी कही गयी है । इसके अनन्तर तन्नो रुद्र--यह पद होता है। पीछे प्रतिष्ठा कही गयी है यह तृतीया है । प्रचोदयात् निवृत्ति है। उससे आगे सब ऐसी है जिनके आदि में प्रणव होता है। और अन्त में 'नमः--इस पद से अन्वित होती है। मन्त्रधारी पुरुष को चाहिए कि वह हृदय--ग्रीवा दोनों कन्धें, नाभि, कुक्षि, पुच्छ, वक्षः स्थल मेंने विधि के अनुसार अधोर आठ कलाओं का न्यास करे। अघोरों से तथा पूर्वमें प्रथवा काल कही गयी है ।६९-७२।

है। इसके उपरान्त घोरान्त में पीछे क्षमा होती है जिसको तृतीया कहा गया है। ।७३। 'घरतरों' से निद्रा होती है। सबसे सबमें तत्परा व्याधि पाँचवीं कही गयी है। इसके अनन्तर सब से मृत्यु छठवीं कही गई है। उसके आगे नमस्ते अस्तु क्षुधा सातवीं होती है। रुद्र रूपेभ्या कही गई तृषा आठवीं बतायी गयी है। इनके आदि में ध्रुव है और अन्त में ये नमः——इसमें समन्वित होती है। गुह्य, मुष्क, ऊरुयुग्म, दोनों जानु और जंधायें, स्फिच युगल, कटि, दोनों पार्श्व में त्रयोदश वाम कलाओं में न्यास करना चाहिए ।७४-७६।

कठयां पार्श्वद्वये वावकला न्तस्तेत्त्रयोदश ।७७
स्याज्ज्येष्ठाय नमो रक्षा द्वितीया परिकीर्तिता।
स्याद्रुद्राय नमः पश्चातृतीया रति रीरिता ।७८
बालाय नमइत्यन्ते पालिनी परिकीर्त्तिता ।
कला कामा पञ्चमी स्यात्तनो विकरणाय च ।७९
मन संयमनी षष्ठी कथिता तदनन्तरम् ।
बलक्रिया समादिष्टा कला विकरणाय च ।८०
नमोबृद्धिरष्टमीं स्वाद्वलान्ते च स्थिरा कला ।
पश्चात्प्रमणनायान्ते नमोरात्रिरुधीरिता ।८१
सवंभूतद नाय नमोऽन्तेभ्रामणी कला ।
नमोऽन्ते मोहिनी प्रोक्ता मन्त्रैर्द्वादशी कला ।८२

'स्यात् ज्येष्ठाय नमो रक्षा'–यह द्वितीया कही है। 'स्यात् रुद्राय नमः'—यह तीसरी रति कही गई हैं। 'बलाय नमः'–इसके अन्त में मालिनी कोर्त्तिता की गई है। कला कामा पाँचवीं होती है। फिर 'विकरणाय मनः संयमनीं' छठवी होती हे। इसके अनन्तर बल क्रिया कला बतायी गई है। और विकरण के लिये नमो वृद्धि अष्टमी होती है। और बलान्त में स्थिरा कला होती है। पीछे 'प्रमथनाय' के अंत 'नमो रात्रि' कही गयी है ।७७-८१। 'सर्वभूत दमनाय नमः'—इसके

अन्त में भ्रामणी कला होती है । मन्त्रों के ज्ञान रखने वालों के द्वारा नमः के अन्त में बारहवीं मोहिनी कला होती है ।८२।

उन्मनाम नमः पश्चाज्जरा प्रोक्ता त्रयोदशी ।
प्रणवाद्याश्चतुर्थ्यन्ता नमोऽन्तास्ताः प्रकीर्तिताः ।८३
पाददोःस्तननासासु मूर्ध्नि बाहुयुगे न्यसेत् ।
सद्योजातोद्भवाः सम्यगष्टौ मन्त्री कलाः क्रमात् ।८४
सद्योजातं प्रपद्यामि सिद्धिःस्यात्प्रथमा कला ।
सद्योजातय वै भूयो नमः स्याद्वद्धिरीरिता ।८५
भवेद्यु तिस्तृतीया स्यादभवे तदन्तरम् ।
लक्ष्मीश्चातुर्थी कथिया ततो नातिभवे पदम् ।८६
मेधा स्यात्पञ्चमी प्रोक्ता कला भूयी भवस्वमाम् ।
प्रज्ञा समीरिता षष्ठो भवान्ते स्यात्प्रभा कला ।८७
उद्भवाय नमः पश्चात्स्वधा स्यादष्टमी कला ।
प्रणवाद्याश्चतुर्थ्यन्ताः कलाः सर्वा नमोन्विताः ।८८

उन्मनाम नमः-उसके पीछे जरा तेरहवीं कला कही गयी है । ये सब के आदि मे प्रणव वाली–चतुर्थी विभक्ति अन्त वाली है और इनके अन्त में नमः–यह पद कहा गया है ।८३। इनका पद-बाहु-स्तिमा नासिका–मुर्धा और दोनों बाहुओं में न्यास करना चाहिये । मन्त्रधारो पुरुष क्रमसे सद्योजातोद्भाव आठ कलाओं का न्यास करे ।८४।सद्योजात प्रपद्यामि–यह सिद्धि होती है-प्रथमा कला में । सद्योजायत वैभूयो नमः स्याहे--यह वृद्धि कही गई है ।८२। भवेद्यु वि तीसरी होती है । इसके अनन्तर लक्ष्मी चौथी कही गयी है । इसके उपरान्त 'नातिमनेपद्म मेधा होती है--पाचची कला कही है । फिर 'भवस्वमाम् प्रज्ञा' छठवीं बताई गई है । भवान्तमें प्रभा कला होती है ।८६-८७। 'उद्भवाय नमः पश्चात्'—यह स्वधा आठवी कला है । सब कलायें नमः-इससे अन्वित और प्रणव के आदि वाली चतुर्थ्यन्त होती है ।८८।

अष्टत्रिंशत्कलाः प्रोक्ताः पञ्चब्रह्मापदान्तिकाः ।
इति विन्यस्तदेहोऽसौ भवेन्द्रङ्गाधारः स्वयं ।८९

ततः समाहितो भूत्वा ध्यायेद्देवं सदाशिवम् ।९०
मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजपावर्णैर्मुखैः पञ्चभिः ।
त्र्यक्षैरञ्जितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम् ।
शूलं टङ्ककृपाणवज्रदहनान्नागेन्द्रघण्टाकुशान् ।
पाश भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलं चिन्तयेत् ।९१
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं पञ्चलक्षं मधुप्लुतैः ।
प्रसूनैः करवीरोत्थैर्जुहुयात्तद्दशांशकम् ९२
पूर्वोदिते यजेत्पीठे मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।
आवाह्य पूजयेत्तस्या मूर्त्याद्यावरणैः सहः ।९३

ये अड़तीस कलायें कही गयी है इसमें पाँच ब्रह्म पदान्तिक हैं। इस रीति से देह में विन्यास किया हुआ पुरुष स्वयं गगा का आधार हो जाया करता है ।८९। अतएव परम सावधान होकर इस रीति से ही भगवान् सदाशिव का ध्यान करना चाहिए ।९०। अब ध्यान करने का प्रकार बतलाया जाता है--मुक्ता (मोती) पीत, पयोद, मौक्तिक और जपा के पुष्प के वर्णों वाले पंच मुखों से समन्वित है--तीन लोचनों से आञ्जित है-चन्द्र के मुकुट को धारण करने वाले हैं--करोड़ों पूर्ण चन्द्रों की प्रभा से संयुत है--अपने कर कमलों के द्वारा शूल, टङ्क, कृपाण, वज्र, दहन, नागेन्द्र, धारा, कुश, पाश, भीति का हरण को धारण करते हुये-अमित कल्पोज्ज्वल ईश का चिन्तन करना चाहिए ।९१। इस रीति से ध्यान करके पाँच लाख मन्त्र का जप करे और मधुर से प्लुत करवीरों के पुष्पों से जप का दशांश होम करना चाहिए ।९२। सूर्य के उदित होने पर पीठ में यजन करे। और मन्त्र के मूल भाग के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए। उसमें आवाहन करके मूर्त्यादि आवरणों के सहित पूजन करे ।९३।

शक्तिं डमरूकाभीतिवरान्सन्धतं करैः ।
ईशानं त्रीक्षणं शुभ्रमैशान्यां दिशि पूजयेत् ।९४

अक्षस्रजं मृगपाशौ सृणिं डमरुकं ततः ।
खट्वागं निशितं शूलं कपालं विभ्रतं करैः ।९५
परश्वेणवराभीतीर्दधानं विद्युदुज्ज्वलम् ।
चतुर्मुखं तत्पुरुषं त्रिनेत्रं पूर्वतोऽर्चयेत् ।९६
अब्जनाभ चतुर्वक्रं भीमदष्ट्रं भयावहम् ।
अघोरं त्रीक्षणं याम्ये पूजयेन्मन्त्रवित्तमः ।९७
कुंकुमाभं चक्रवंक्रं वामदेवं त्रिलोचनम् ।
वराभयाक्षवलयकुठारं दधतं करैः ।९८
विलासिन स्मेरवक्रं सौम्ये सम्यक्समर्चयेत् ।
कर्पूरेन्दुनिभं सौम्यं सद्योजात त्रिलोचनम् ।९९
हरिणाक्षगुणाभीतिवरहस्तं चतुर्मुखम् ।
बालेन्दुशेखरोल्लासि मुकुटं पश्चिमे यजेत् ।१००

करों के द्वारा डमरू—शक्ति अभयदान और वरदान को धारण करते हुए—तीन नेत्रों से युक्त और परम शुभ्र ईशान देव का ईशानी दिशा में अर्चन करना चाहिए ।९४। कर कमलों में अक्ष, स्रज, मृग, पाश, सृणि, डमरू, खट्वांग, निशित, शूल और कपाल को धारण करने वाले हैं। परशु—ऐश—वर और अभय को धारण किये हुए हैं और विद्युल्लता के समान उज्ज्वल स्वरूप से युक्त है। चार मुखों से युक्त—तीन नेत्रों वाले तत्पुरुष का पूर्व में अर्चन करना चाहिए ।९५-९६। नाभि में अब्ज को रखने वाले, चार मुखों से युक्त, भीषण दाढ़ों वाले, भयदाता, तीनों नेत्रों से युक्त अघोर मन्त्र के ज्ञाता पुरुष का याम्य दिशा में पूजन करना चाहिए ।९७। कुंकुम के तुल्य आभा से युक्त, चार मुखों वाले, तीन लोचनों से युक्त, कर कमलों द्वारा वर अभय, अक्षयमाला और कुठार को धारण करते हुए, विलासी, स्मेर युक्त मुख वाले वामदेव का सौम्य दिशा में भली भाँति अर्चन करे ।९८। कर्पूर और इन्दुके तुल्य—सौम्य—विलोचन—हरिण, अक्षमाला, अभय और वरदान को हाथों में रखने वाले—वाल चन्द्रके शेखरसे उल्लसित मुकुट

धारी-चार मुखों से युक्त सद्योजात का पश्चिम में यजन करना चाहिए ।९९-१००।

निवृत्याद्यास्ततः कोणे तेजोरूपाः कलाः क्रमात् ।
केसरेषु षडङ्गानि पूर्ववत्पूजयेत्सुधी ।१०१
विश्वेश्वराननन्ताद्यान्पत्रेषु परितो यजेत् ।
उमादिकास्ततोबाह्ये शक्राद्यानायुधैः सह ।१०२
इति संपूज्य देवेशं भक्त्या परमया युतः ।
प्रीणयेन्नृत्यगीताद्यैः स्तोत्रैर्मन्त्रैर्मनोहरैः ।१०३
तारो माया वियद् बिन्दुमनुस्वरसमन्वितम् ।
पंचाक्षरसमायुक्तो वसुवर्णो मनुर्मतः ।१०४
पंचाक्षरोक्तवत्कुर्यादङ्गन्यासादिकं बुधः ।१०५

सुधी को चाहिए वह फिर तेज के स्वरूप वाली निवृत्ति आदि कलाओं का क्रम से कोण में पूजन करे और केसरोंमें षडङ्गों का अर्चन करना चाहिए ।१०१। पत्रों में सब ओर विश्वेश्वर-अनन्त आदि का यजन करे । फिर उमादिक का अर्चन बाहर आयुधों के सहित इन्द्र आदि का अभ्यर्चन करना चाहिए ।१०२। इस प्रकारसे परम भक्ति की भावना से संयुत होकर देवेश्वर का भली भाँति पूजन करे । और फिर नृत्य गीत आदि स्तोत्रों के द्वारा तथा मनोहर मन्त्रों के द्वारा देवेश्वर को प्रीणित करे ।१०३। अब आठ अक्षरों वाले प्रसाद मंत्र का उद्धार बतलाते हैं । तार-प्रणव, माया-शक्ति का बीज, वियत्—हः, जो हकार बिंदु और अनुस्वार से संयुत होवे । यह मंत्राक्षरों से समन्वित आठ अक्षरों वाला मंत्र माना गया है ।१०४। बुध को चाहिए कि वह पंचा-क्षर में कहे हुए की ही भाँति अङ्ग न्यास आदि सब करे ।१०५।

बन्दे सिन्दूरवर्णं मणिमुकुटलसच्चारुचन्द्रावतंसम् ।
भालोद्यन्नेत्रमीशं स्मितमुखकमलं दिव्यभूषाङ्गरागम् ।
वामोरुन्यस्तपाणेररुणकुवलयं सन्दधत्याः प्रियायाः ।
वृत्तोद्तुङ्गस्तनाग्रे निहितकरतलं वेदटङ्केऽष्टहस्तम् ।१०६

अष्टलक्षं जपेदेनं मनुं मनुविदाम्बरः ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात्पायसान्नैर्घृतप्लुतैः ।१०७
प्राक् पीठे मूलमन्त्रेण मूर्तिं संकल्प्य पूजयेत् ।
अङ्गैरावरणैः पूर्वमनन्ताद्यैरनन्तरम् ।१०८
उमादिभिः समुद्दिष्टं तृतीतं लोकनायकैः ।
चतुर्थं पञ्चमं तेषामायुधैः परिकीर्तितम् ।१०९
एवं प्रतिदिनं देवं पूजयेत्साधकोत्तमः ।
पुत्र मित्रादिसहितां श्रियं प्राप्य प्रमोदते ।११०

अब ध्यान बतलाते हैं—सिंदूर के समान वर्ण वाले, मणियों के मुकुट के समान चारु चन्द्रमा के अवतंस से विभूषित, भाल में उदीयःमान नेत्र से युक्त, मुस्कराहट से युत मुख वाले, दिव्यभूषा और अङ्गराग से समन्वित, बांये उरु पर हाथ रखने वाली, अरुण कुवलय को करने वाली प्रिया के वृत्त और उतुङ्ग स्तनों के अग्रभाग में करतल को रक्खे हुए, दश हस्त में अष्ट हस्त वाले ईश की मैं वन्दना करता हूँ ।१०६। मंत्रों के ज्ञाता पुरुष ,को इस मंत्र का आठ लाख जप करना चाहिए । उस जप का दशांश सहस्रों का घृत में प्लुत पायसान्नों के द्वारा होम करना चाहिए ।१०७। पूर्व पीठ पर मूल मंत्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करके अभ्यर्चन करना चाहिए । इसके अनन्तर अमन्तादि अङ्गों से अनन्तर में आवरण पूजन करे ।१०८। यह उमादि के द्वारा समुदिष्ट किया है । तृतीय लोक नायकों से—चौथा और पाँचवा उनके आयुधों के द्वारा कीर्त्तित किया गया है ।१०९। इस प्रकार से साधकों में श्रेष्ठ पुरुष को प्रतिदिन देव की पूजा करनी चाहिए । वह पुरुष पुत्र मित्रादि के सहित श्री की प्राप्ति करके प्रमुदित होता है ।११०

तारः स्थिरा सकर्णेन्दुर्भृगुः सर्गविभूषितः ।
अक्षरात्मा निगदितो मनुर्मृत्युज्जयादिकः ।१११
ऋषिः कहोलोदेव्यादिगायत्रीच्छन्द ईरितम् ।
मृत्युञ्जयो महादेवो देवतास्य समीरितः ।११२

भृगुणा दीर्घयुक्तेन षडङ्गानि समाचरेत् ।११३
चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तः स्थितम् ।
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम् ।
किरीटेन्दुगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलम् ।
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत् ।११४

अब मृत्युञ्जय मन्त्र बतलाया जाता है – तार–प्रणव, स्थिर–जः, वामकर्ण–ऊ, इन्दु–बिन्दु अर्थात्, अनुस्वार, भृगु–सकार, सर्ग–विसर्ग से युक्त ग्रह अक्षरात्मा मन्त्र कहा गया है। यह मन्त्र मृत्युञ्जयादिक है ।१११। इसका ऋषि कहोलो आदि है और छन्द गायत्री कहा गया है। मृत्युञ्जय महादेव इस मन्त्र का देवता है ।११२। दीर्घयुक्त भृगु के द्वारा इस मन्त्र के छै अङ्गों का समाचरण करना चाहिए ।११३। अब ध्यान का प्रकार बतलाया जाता है–चन्द्र, सूर्य और अग्नि के लोचनों वाले हैं, स्मित युक्त मुख से संयुत, दो पद्मों के अन्दर संस्थित, मुद्रा, पाश, मग और अक्ष माला से शोभित करों वाले—चन्द्र के समान प्रभा समन्वित–किरीट में स्थित चन्द्र गलकर बहती हुई सुधा से प्लुत शरीर वाले–हार आदि भूषा से उज्ज्वल—कान्ति से विश्व को मोहन करने वाले–पशुपति मृत्युञ्जय की भावना करनी चाहिए ।११४

गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं विशालधीः ।
जुहुयादमृताखण्डैः शुद्धदुग्धाज्यलोलितैः ।११५
शैवे संपूजयेत्पीठे मूर्तिमूलेन कल्पयेत् ।
अङ्गावरणमाराध्य पश्चाल्लोकेश्वरान्यजेत् ।११६
तदस्त्राणि ततो वाह्ये पूजयेत्साधकोत्तमः ।
जपपूजादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन्मनुना क्रमात् ।११७
कुर्यात्प्रयोगान्कल्पोक्तानभीष्टफलसिद्धये ।
दुग्धयुक्तैः सुधाखण्डैर्मन्त्री मासं सहस्रकम् ।११८
आराधितेऽग्नौ जुहुयाद्विधिवद्विजितेन्द्रियः ।
सन्तुष्टः शंकरस्तेन सुधाप्लावितविग्रहः ।११९

आयुरारोग्यसम्पत्तियशः पुत्रान्विवर्द्धयेत् ।
सुधावटौ तिलादूर्वा पयः सर्पिः पयोहविः ।१२०
इत्युक्तैःलिप्तभिर्द्रव्यैर्जुहुयात्सप्तवासरम् ।
क्रमादृशांशतोनित्यमष्टोत्तरमतन्द्रितः ।१२१

इस मन्त्र का तीन लाख जप करे। विशाल बुद्धि वाले को चाहिए कि उसका दशांश भाग शुद्ध दूध और घृत में लोलित करके अमृता (गिलोय) के खण्डों से होम करना चाहिए ।११५। शेष पीठ पर भली भाँति पूजन करना चाहिए और मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करे। अङ्गों के आवरण की समाराधना करके पीछे लोक नायको को यजन करे ।११६। इसके उपरान्त बाहर उनके अस्त्रों का साधकोत्तम अर्चन करे। इस मन्त्र के द्वारा क्रम से जप-पूजा आदि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध होने पर मनुष्य अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिये कल्पोक्त प्रयोगों को करे ।११७। दुग्ध से युक्त सुधा के खण्डों से मन्त्रधारी एक सहस्र आहुतियाँ एक मास तक समराधित अग्नि में देवे और जितेन्द्रिय रहकर विधिके साथ ही करना चाहिए। इससे सुधा प्लावित विग्रह वाले शंकर सन्तुष्ट होकर कृपा किया करते हैं ।११८-११९। आयु, आरोग्य, सम्पत्ति यश और पुत्रादिक की वृद्धि किया करते हैं। सुधा, वट, तिल, दूर्वा, पय, घृत, पयोहवि, इन कथित सप्त द्रव्यों से सप्त वासर होम करे। क्रमसे उसकी दशांश नित्य एक सौ आठ बार तन्द्रा रहित होकर आहुतियाँ देवे ।१२०-१२१।

सप्ताधिकान् द्विजान्नित्यं भोजयेन्मधुरान्वितम् ।
विकारानुगुण मन्त्री वदर्धयेद्धोमवासरान् ।१२२
होतृभ्योदक्षिणान्दद्यादरुणा गाः पयस्विनी :
गुरुं संप्रोणयेत्पश्चाद्धनाद्यै र्देवताधिया ।१२३
अनेन विधिना साध्यः कृत्याद्रोहज्वरादिभिः ।
विमुक्तः सुचिरं जीवेच्छरदां शतमञ्जसा ।१२४

अभिचारे ज्वरे तीव्रे घोरोन्मादे शिरोगदे ।
असाध्यरोगक्ष्वेडादौ महादाहे महाभये ।१२५
होमोऽयंशान्तिदः प्रोक्तः सर्वसम्पत्प्रदायकः ।
द्रव्यैरेतैः प्रजुहुयात्रिजन्मसु यथाविधि ।१२६
भोजयेन्मधुरैस्साज्यैर्ब्राह्मणा-वेदपारगान् ।
दीर्घमायुरवाप्नोति वाञ्छितां विन्दति श्रियम् ।१२७
एकादशाहुतीर्नित्यं दूर्वाभिर्जुहुयाद्बुधः ।
अपमृत्युजितेषु स्यादायुरारोग्यवर्द्धनः ।१२८

सप्त से अधिक द्विजों को नित्य मधुर से अन्वित पदार्थों का भोजन करावे । विकारों अर्थात् रोगों के अनुरूप ही मन्त्रधारी होम के दिनों की वृद्धि कर देवे ।१२२। जो इसमें होता होवें उनको पुष्कल दक्षिणा देनी चाहिए और अरुण वर्ण वाली दुधार गायको देवे । इसके पीछे अपने गुरुदेव को देवता की बुद्धि से ही धनादि के द्वारा प्रीणित करना चाहिए ।१२३। इस विधि से साध्य कृत्या द्रोह और ज्वर आदि से मुक्त होकर बहुत समय तक सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रहा करता है ।१२४। अभिचार में, तीव्र ज्वर में, घोर उन्माद में, शिरोरोग में, असाध्य रोग क्ष्वेडादि में, महादाह में, महाभय में यह होम शान्ति देने वाला कहा है और यह सब प्रकार की सम्पदाओं के प्रदान करने वाला होता है । विधि के सहित त्रिजन्मा (अग्नि) में इन द्रव्यों से होम करे । १२५।१२६। इसके अनन्तर वेदों में पारगामी विद्वान् ब्राह्मणों को घृत के सहित मधुर पदार्थों के द्वारा भोजन करावें । वह मनुष्य दीर्घ आयु की प्राप्ति किया करता है और अपनी मनोवांछित श्री का लाभ भी किया करता है ।१२७। बुध पुरुष एकादश आहुतियाँ नित्य दूर्वाओं के द्वारा देवे । वह मनुष्य अपमृत्यु पर विजेता हो जाता है और आयु तथा आरोग्य वाला होता है ।१२८।

त्रिजन्मसु सुधावल्लीकश्मरीबकुलोदभवैः ।
समिद्वरैःकृतोहोमःसर्वमृत्युग्रहापहः ।१२९

सिद्धान्नैर्विहितो होमो महाज्वरविनाशनः ।
अपामार्गसमिद्धोमः सर्वामयनिषूदनः ।१३०
प्रणवरचितनालं मन्त्रमध्नार्णपत्रं
भृगुविलसितमध्यं पद्मतुग्मं तदन्तः ।
कृतवसतिमुमेशं वर्गनिर्यत्सुधार्द्रं
कलयतु हृदि नित्यं सर्वदुःखप्रशान्त्यै ।१३१
यन्त्राढ्ये कमले सौम्ये कलशं प्रोक्तवर्त्मना ।
नवरत्नसमायुक्तं दुकूलाभ्यामलङ्कृतम् ।१३२
आपूर्य सलिलैः शुद्धैस्तस्मिन्देवं प्रपूजयेत् ।
उपचारैः षोडषभिर्विधानेन विधानवित् ।१३३

सुधा वल्ली—कश्मरी और बकुल की समुद्भूत समिधाओंसे अग्नि में होम करने वाला मनुष्य सब प्रकार की मृत्यु और ग्रहों के अपहरण करने वाला होता है ।१२६। सिद्ध अन्नों के द्वारा किया हुआ होम महाज्वर के विनाश करने वाला होता है। अपामार्ग की समिधाओं से किया हुआ होम सभी रोगों का विनाश करने वाला हुआ करता है। ।१३०। प्रणव के द्वारा विरचित नाल वाला—पत्रों के मध्य में मन्त्र के वर्ण होवें—विसर्ग सहित सकार से युक्त मध्य होवे—उसके अन्दर पत्रों का युग्म होवे—वर्णों से निर्यत्सुधा के लिए निवास करने वाले उमेश को कलिन करे। यह मन्त्र हृदय में नित्य ही सब दुःखों की प्रशान्ति करने के लिए होता है ।१३१। यन्त्र से युक्त सौम्य कमल में कहे हुए मार्ग के द्वारा नौ प्रकार के रत्नों से समायुक्त और दो वस्त्रों से अलंकृत कलश स्थापित करे और उसको शुद्ध जल से पूरित कर देवे। इस कलश में देव का अभ्यर्चन करना चाहिए। विधान के ज्ञाता पुरुष को विधि के साथ सोलह पूजन के उपचारों के द्वारा अर्चन करना चाहिए। ।१३२-१३३।

अभिषिञ्चेत्प्रियं साध्यं विनीतं दत्तदक्षिणम् ।
आधिव्याधिमहारोगकृत्याद्रोहनिवारणम् ।१३४

अभिषेकोऽयमाख्यातः कीतिलक्ष्मीं जयप्रदः ।१३५
मध्ये साध्याक्षराढ्यं ध्रुवमभिविलिखेन्मध्यम दिग्दलस्थम् ।
कोणेष्वन्त्यं मनोस्तत्क्षितिभुवनमथोदिक्षुच द्रं विदिक्षु ।
टान्तं यन्त्रं तदुक्तं सकलभयहर क्ष्वेडभूतापमृत्यु-
व्याधिव्यामोहदुःखप्रशमनमुदितं श्रीप्रदं कीर्तिदायि ।१३६

परम विनम्र और दी हुई दक्षिणा वाले साध्य का इसके जल से अभिषेक नित्य ही करे तो अभिषिचत समस्त आधियाँ—व्याधियाँ—महान् रोग और कृत्या के द्रोह का विनाश करने वाला हुआ करता है ।१३४। यह इस प्रकार से किया हुआ अभिषेक कीर्त्ति-लक्ष्मी और विजयके प्रदान करने वाला कहा गया है ।१३५। अब एक यंत्र वतलाया जाता है—मध्य में साध्य के अक्षरों से युक्त ध्रुवको लिखे । मध्य का अभिप्राय कणिका होता है । मध्यम दिग्दलों में स्थित करे और कर्णोमें मन्त्र का अन्त्य लिखे । दिशाओं में क्षितिभुवन और विदिशाओंमें चंद्र लिखे । वह मंत्र टांत कहा गया है । थह सब प्रकार के भयों के हरण करने वाला है । इस यंत्र को क्ष्वेड—भूत—अपमृत्यु—व्याधि व्यामोह दुःखों का शमन करने वाला तथा श्री का प्रदाता और कीर्ति का देने वाला बताया गया है ।१३५-१३६।

—×—

सप्तदश पटल

पुरुषार्थ मन्त्र

अथ वन्ये मन्त्ररत्नं समस्तपुरुषार्थदम् ।
अवापुर्येन जप्तेन दिव्यं ज्ञान मुनीश्वराः ।१
दक्षिणामूर्तये पूर्वं तुभ्य पदमनन्तरम् ।
बटमूलपदस्यान्ते पदं पश्चान्निवासिने ।२

ध्यानैकनिरयाङ्गाय पश्चाद्ब्रू यान्नमः पदम् ।
रुद्राय शम्भवे तारशक्तिरुद्धोऽयमीरितः ।३
षट्त्रिंशदशक्षरोमन्त्रः सर्वकामफलप्रदः ।
मुनिः शुकः समुद्दिष्टश्छन्दोऽनुष्टुप्समीरितम् ।४
दक्षिणामूर्त्तिनामास्य देवता शम्भुरीरितः ।
षड्भिर्वर्णैर्हृदाख्यातं द्वाभ्यां शिर उदीरितम् ।५
शिखाष्टभिः समुद्दिष्टा वस्त्वर्णैः कवचं मतम् ।
पञ्चभिर्नेमाख्यातं त्रिभिरस्त्रमुदाहृतम् ।६
षडेते मारशब्दाद्या ह्लाङद्यन्ताः सजातयः ।
अङ्गमन्त्राः समुद्दिष्टा यथावद्देशिकोत्तमैः ।७

इसके अनन्तर समस्त पुरुषार्थों के प्रदान करने वाले मन्त्र रत्न को बतलाया जाता है जिसके जप करने से मुनीश्वरों ने दिव्य ज्ञान को प्राप्त कर लिया था ।१। मन्त्र का जोकि श्लोक के स्वरूप वाला है अब उसका उद्धार बतलाया जाता है—पूर्व में दक्षिणामूर्त्ति में यह पद होता है । इसके अनन्तर 'तुभ्यंम्प्रह' पद होता है । वट मूल-इस पद के अन्त में पीछे निवासिने—यह पद होता है ।२। इसके पश्चात् 'ध्यांनैक निरताथ'—यह पद है और अन्त में 'ममः' पद होता है । 'रुद्राय शम्भवे'—ये पद हैं । यह तार शक्ति से अवरुद्ध कहा गया है ।३। यह मन्त्र चौबीस अक्षरों वाला होता है । यह मन्त्र समस्त कामनाओं के फलका प्रदान करने वाला होता है । इस मन्त्र के ऋषि शुक बतलाये गये हैं और इसका छन्द अनुष्टुप् बनाया गया है । इसका देवता दक्षिणा मूर्त्ति शम्भु कहे गये हैं । छै वर्णों से इसका हृदय कहा गया है और दो से शिर कहा है ।४।५। आठ से शिखा कही गयी है और आठ वर्णों से कवच माना गया है । पाँच वर्णों से नेत्र बताया है और तीन वर्णों से इसका अस्त्र उदाहृत किया गया है ।६। ये छे मार शब्द आद्य है और ह्लाङादि अन्त वाले से सजाति हैं । आचार्यों ने यथावत् अङ्ग मन्त्र बनाये हैं ।७।

मूर्द्धिन भाले दृशोः श्रोत्रे गण्डयुग्मे सनासिके ।
आस्ये दोः सन्धिषु गले स्तयहृन्नाभिमण्डले ।८
कटयां गुह्ये पुनः पादसन्धिष्वर्णान्न्यसेत्क्रमात् ।
व्यापकं तारशक्तिभ्यां कुर्याद्देहे ततःपरम् ।९
हेमाचलतटे रम्ये सिद्धकिन्नरसेविते ।
विविधद्रुमशाखभिः सर्वतोवारितामपे ।१०
सुपुष्पितैर्लताजालैराश्लिष्टकुसुमद्रुमैः ।
शिलाविवरनिर्गच्छनिर्झरानिलसेविते ।११
गायद्भृङ्गाङ्गनासङ्घै नृत्यद्बर्हिकदम्बके ।
कूजत्कोकिलसङ्घेन मुखरीकृतदिङमुखे ।१२
परस्परविनिर्मुक्तमात्सर्यमृगसेविते ।
आद्यैः शुकात्तैर्मुनिभिरजस्रं समुपस्थिते ।१३
पुरन्दरमुखैर्देवैः सेवायातर्विलोकितम् ।
वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम् ।१४

मूर्धा में—ललाट में, नेत्रों में, श्रोत्र में, दोनों गण्ड स्थलों में, नासिका में, मुख में, बाहुओं की सन्धियों में, कण्ठ में, स्तर, हृदय में, नाभि मण्डल में, कटि में, गुह्य में, पादों की सन्धियों में क्रम से वर्णों का न्यास करना चाहिए। इसके पश्चात् तार और शक्ति से देह में व्यापक न्यास करे।८-९। सिद्धों और किन्नरों के द्वारा मेवित सुरम्य हिमालय पर्वत के तट में जो अनेक द्रुमों की शाआओंसे आतपके ताप को निवारित करने वाला है—जो सुपुष्पिलताओं के समुदार से समाश्लिष्ट कुसुमों वाले वृक्षों के द्वारा संयुत शिलाओं के विवरों से निकलने वाले निर्झरों से समन्वित वायु से सेवित हैं, जिसमें गान करने वाले भौंरियों का समुदाय विद्यमान हैं और नाचते हुये मयूरों का संघ है, बहाँ पर कूजन करने वाली कोयलों के समूह से दिशाओं का मुख शब्दायमान है, जहाँ पर आपसी मत्सरता का त्याग कर मृगगण विचरण कर रहे हैं, जहाँ आदि में होने वाले शुक आदि मुनिगण

निरन्तर समुपस्थित रहा करते हैं, जिसको सेवा के लिये समायात, इन्द्रादि देवों के द्वारा देखा गया है ऐसा एक बहुत बड़े उच्छ्राय वाला और पद्म राग के समान फलों से उज्ज्वल वट का वृक्ष है।६-१४।

गारुत्मतमयैः पत्रैर्निवडैरुपशोभितम् ।
नवरत्नमयाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम् ।१५
जलजैः स्थलजैः पुष्पैरामादिभिरलङ्कृतम् ।
शृण्वद्भिर्वेदशास्त्राणि शुकवृन्दैनिषेवितम् ।१६
संसारतापविच्छेदकुशलच्छायमद्भुतम् ।
विचिन्त्य तस्य मूलस्थे रत्नसिंहासने शुभे ।१७
आसीनममिताकल्पं शरच्छन्द्रनिभाननम् ।
स्तूयमानं मुनिगणैर्दिव्यज्ञानाभिलाषिभिः ।१८
संस्मरेज्जगतामाद्यं दक्षिणामूर्तिमव्ययम् ।१९

वह वट वृक्ष घने गारुत्मतमय पत्रों से उपशोभित हैं। नौ रत्नों से परिपूर्ण भूषणों से जो लटके हुए हैं यह समलंकृत है। यह वेद और शास्त्रों के श्रवण करने वाले शुकों के समुदायों के द्वारा निषेवित है और जल में स्थित तथा स्थल में स्थित सुगन्धित्व पुष्पों से अलंकृत है।१५-१६। सांसारिक ताप के विच्छेद करने में कुशल छाया वाला अत्यन्त अद्भुत वह वट वृक्ष है। ऐसे वट वृक्ष का भली-भाँति ध्यान करे और उसके मूल में स्थित एक परम शुभ रत्नों से निर्मित सिंहासन है।१७। उस सिंहासन पर अपरिमित आभूषणोंसे समन्वित—शरत्काल में उदित होने वाले चन्द्र के समान मुख वाले—दिव्य ज्ञान के अभिलाषी मुनिगणों के द्वारा स्तवन किये हुए जगत के आद्य-दक्षिगा मूर्ति अविनाशी का स्मरण करना चाहिए।१८-१९।

कैलासाद्रिनिभं शशाङ्कशकलस्फूर्जज्जटामण्डितम् ।
नासालोकनतत्परं त्रिनयनं वीरासनाध्यासितम् ।
मुद्राटङ्ककुरङ्गजानुविलसत्पाणि प्रसन्नाननम् ।
कक्षाबद्धभुजङ्गमं मुनिवृतं बन्दे महेशं परम् ।२०

अयुतद्वयसंयुक्तं गुणलक्षं जपेन्मनुम ।
तद्दशांशन्तिलैः शुद्धैर्जुहुयात् क्षीवसंयुतैः ।२१
पञ्चाक्षरोदिते पीठे विधानेन प्रपूजयेत् ।
उपचारैः सयुत्पन्नैः पाद्याद्यैः परमेश्वरम् ।२२
एवं कृतपुरश्चर्यः सिद्धमन्त्रीभवेत्सुधीः ।
भिक्षाहारो जपेन्मासं मनुमेनं जितेन्द्रियः ।२३
नित्यं सहस्रमष्टाद्र्ध्वं परं विन्दति वाङ्मयम् ।
त्रिवार जप्तमेतेन मनुना सलिलं पिबेत् ।२४

अब ध्यान करने का प्रकार बतलाया जाता है कैलाश गिरि के सदृश—चन्द्र के खण्ड से स्फूर्यमाण जटाओं से मण्डित—ध्यान की अवस्था में अपनी नासिका के अग्रभाग को देखनेमें परायण—तीन नेत्रों से समन्वित—वीरासन पर संस्थित, मुद्रा, टंक, कुरङ्ग और जानपुर अपना कर रक्खे हुए परम शोभित—प्रसन्न मुख वाले—कक्षोंमें आवद्ध सर्प से युक्त तथा मुनिगणों से परिवृत परम महेश की मैं वन्दना करता हूँ ।२०। इस मन्त्रका तीन लाख बीस सहस्र जप करना चाहिए इस जप का दशांश भाग क्षीर से संयुत शुद्ध तिलों से हवन करना चाहिए । पंचाक्षर—उदित पीठ पर विधि–विधान के साथ अभ्यर्चन करे । जो भी उस अवसर पर पूजाके उपचार उपस्थित होवे उनसे और पाद्यादिक के द्वारा परमेश्वर प्रभु का यजन करे ।२२। इस रीति से पुरश्चरण किये जाने पर सुधी मन्त्र को सिद्ध करने वाला हो जाया करता है । अपनी समस्त इन्द्रियों को जीत लेने वाला तथा भिक्षान्न द्वारा अशन क्रिया के सम्पादन करने वाला पुरुष इस मन्त्र का एक मास तक जप करे ।२३। जो नित्य ही एक सहस्र चार सौ बार मन्त्र का जप करता है वह परम वाङ्मय का लाभ किया करता है । इस मन्त्रसे तीन वार अभिमन्त्रित करके जल का पान करे ।२४।

नित्यशो दक्षिणामूर्ति ध्यायन्साधकसत्तमः ।
शास्त्रव्याख्यानसामर्थ्यं लभते वत्सरान्तरे ।२५

ब्राह्मीसैन्धवसिद्धार्थवचाकुष्ठकणोत्पलैः ।
सुगन्धिसंयुतैः कल्कैः श्रृतं ब्राह्मी रसे घृतम् ।२६
मनुनानेन सञ्जप्रेमयुतं साधुसाधितम् ।
निपीतं कविताकान्तिरक्षायुः श्रीधृतिप्रदम् ।२७
प्रणवो हृदयं पश्चात्ततो भगवते पदम् ।
ङेयुतो दक्षिणामतिर्मह्यं मेधामुदीरयेत् ।२८
प्रयच्छ ठद्वयान्तोऽय द्वाविंशत्यक्षरो मनुः ।
मुनिश्चतुमुखश्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।२९
दक्षिणामूर्तिराख्यातो वेदव्याख्यानतत्परः ।
ताररुद्धैः स्वरैर्दीर्घैः षडभिरङ्गानि कल्पयेत् ।३०
अथवा मनुसम्भूतैः पदैर्वा कल्पयेत्क्रमात् ।
पूर्वोक्तवटमूलस्थं चिन्तयेन्मन्त्रनायकम् ।३१

साधकों में श्रेष्ठ नित्य ही दक्षिणा मूर्त्ति का ध्यान करता हुआ एक वर्ष के अन्दर में ही शास्त्रोंके व्याख्यान करने की क्षमता प्राप्त कर लिया करता है ।२५। ब्राह्मी–सैन्धव–सिद्धार्थ–वच–कुष्ठ–कणोत्पल के सुगन्धियुत कल्कों को ब्राह्मी से ही रसयुक्त करके घृत को सिद्ध करे और इस मन्त्र से उसको अभिमंत्रित करे जो दश हजार वार जप करके करना चाहिए । ऐसे साधुतया साधित करे । इसका पान करे तो यह कविता की रचना करने की शक्ति—कान्ति—सुरक्षा आयु—श्री—और धृति के प्रदान करने वाला हुआ करता है ।२६-२७। अब अन्य मन्त्र का उद्धार वतलाया जाता है—प्रणव—ओंकार, हृदयं नमः यह पद फिर 'भगवते'—यह पद होता है। पीछे चतुर्थ्यन्त दक्षिणा मूर्त्ति पद है । इसके अनन्तर 'मह्य' मेधा प्रयच्छ'—यह पद है । अन्तमें दो ठकार हैं—यह मन्त्र बाईस अक्षरों का होता है । इसका ऋषि चतुर्मुख है और छन्द गायत्री तथा देवता इस मन्त्र का दक्षिणामूर्त्ति कहे गये हैं, जो वेदों के व्याख्यान करने में तत्पर हैं । तार अर्थात् प्रणव से रुद्ध दीर्घ स्वरों से षट् अङ्गों की कल्पना करे ।२८-३०। अथवा

मन्त्र से समुद्भूत पदों के द्वारा क्रम से करे। पूर्व में वर्णित विशाल एवं सुरम्य वट के मूल में विराजमान मन्त्र नायक का ध्यान करना चाहिए।३१।

स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमाला-
ममृतकलशविद्याज्ञानमुद्राः कराग्रैः।
दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्र
विधृतविविधभूषन्दक्षिणामूर्तिमीडे।३२
लक्षमेकं जपेन्मत्रं ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
जुहुयात्सघृतैः पद्मैर्दशांशं संस्कृतेऽनले।३३
पूर्वोदिते यजेत्पीठे वक्ष्यमाणेन वर्त्मना।
अङ्गानभ्यर्चयेद्बाह्ये पत्रेष्वष्टसु पूजयेत्।३४
सरस्वती वाचयन्ती पुस्तकं सस्मिताननाम्।
ब्रह्माणं सनकं पश्चात्सनन्दनमतः परम्।३५
सनत्कुमारनामानं शुक्रं व्यास गणेश्वरम्।
सिद्धगन्धर्वयोगीन्द्रविद्याधरगणान्बहिः।३६

अब ध्यान वतलाया जाता है—स्फटिकमणि और रजत (चांदी) के समान वर्ण वाले हैं अर्थात् एकदम श्वेत वर्णसे युक्त हैं—कर-कमलों के अग्रभागों के द्वारा मौक्तिकों की अक्षमाला-अमृतका परिपूर्ण कलश विद्या और ज्ञान मुद्रा धारण करने वाले—अपनी कक्ष में उरग को रखते हुए—चूड़ा में चन्द्र के धारी तीन नेत्रों से समन्वित अनेक भूषणों को धारण किये हुए भगवान् दक्षिणा मूर्त्ति का मैं ध्यान करता हूँ।३२। ब्रह्मचर्य के व्रत में स्थित रहकर इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए। जप का दशांश भाग संस्कार किये हुए अग्नि में घृत के सहित पद्मों के द्वारा होम करना चाहिए। पूर्व में वर्णित पीठ पर कहे जाने वाले मार्ग से यजन करे। अङ्गों का वाहर में अभ्यर्चन करे और आठ पत्रों में पूजन करना चाहिए।३३-३४। पुस्तक का वाचन करती हुई सरस्वती देवीका, जिसके मुख पर मन्द हास्य क्रीड़ा कर रहा

है, ब्रह्माजी का—सनक और पीछे सनन्दन—सनत्कुमार नामधारी का शुक मुनिका व्यासदेव का—गणेश्वर का और बाहर सिद्ध, गन्धर्व, योगीन्द्र, विद्याधर गणों का अर्चन करना चाहिए।३५-३६।

बाह्ये लोकेश्वरा नर्चेद्वज्राद्यायुधसंयुतान् ।
इत्थं पूजादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन्साधकोत्तमः ॥३७
वल्लभोजायते वाचां वाचस्पतिरिवापरः।
मन्त्रेणानेन सञ्जप्तै विशुद्धैः सलिलैः सुधीः ॥३८
अभिषिञ्चेत्स्वशिरसि श्रियमारोग्यमाप्नुयात् ।
कण्ठमात्रे जले स्थित्वा जपेन्मंत्र सहस्रकम् ॥३९
प्रत्यहं मण्डलादर्वाक्कवीनामग्रणीर्भवेत् ।
गौर्या पाश्वस्थया सार्द्धं श्रीकामी चिन्तयन्विभुम् ॥४०
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं भूयसीं श्रियमाप्नुयात् ।
भुञ्जानः प्रयतो मन्त्री गोमूत्रं श्रृतमोदनम् ॥४१
भिक्षान्नमथवा मन्त्रमयुतद्वितयं जपेत् ।
अश्र तान्वेदशास्त्रादीन् व्याचष्टे नात्र संशयः ॥४२

इसके बाहर मन्त्र आदि अपने आयुधों से समन्वित लोकेश्वरों का पूजन करे। इस प्रकार से पूजा आदि के द्वारा इस मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधकों में परम श्रेष्ठ वाणी का प्रिय हो जाता है अर्थात् सरस्वती देवी का प्यारा बन जाया करता है और वह दूसरा बृहस्पति ही हो जाया करता है। सुधी पुरुष इस मन्त्र के द्वारा भली भांति जाप किए हुए विशुद्ध जल से अपने मस्तक में अभिषिञ्चन करे तो श्री और आरोग्य की प्राप्ति कर लेता है। कण्ठ पर्यन्त किसी जलाशय अथवा तीर्थोदक में खडे होकर इस मन्त्र का एक सहस्र जप करे और ऐसा जप प्रतिदिन किया करे तो मण्डल से पूर्व ही ऋषियों का अग्रणी अर्थात् नायक हो जाया करता है। श्री की कामना रखने वाला पुरुष पार्श्व में विराजमाना गौरी के साथ विभुका चिन्तन करे।३७-४०। मंत्र धारण करने वाला यदि दश सहस्र मन्त्र का जप करे तो बहुत अधिक

श्रीका लाभ किया करता है। मन्त्रधारी प्रयत होकर रहे और गो मूत्र में पकाये हुए ओदन का अशन करे अथवा भिक्षा के अन्न का आहार करे और बीस हजार मन्त्र का जप करे तो वह पुरुष बिना सुने हुए वेद शास्त्र आदि की व्याख्या करने की क्षमता प्राप्त कर लिया करता है—इसमें कुछ भी संशय नहीं है।४१-४२।

सिद्धगन्धर्वमुनिभिर्योगीन्द्रै रपिसेविते।
ज्ञानवार्गार्थिनां प्रीत्यै कथितौ मन्त्रनायकौ।४३
लौहितोग्न्यासनः सद्यबिन्दुमान्प्रथमं ततः।
द्वितीयं वह्निबीज स्याद्दीर्घा शान्तीन्दुभूषिता।४४
तृतीयं लाङ्गली सर्गी मन्त्रोबीजत्रयान्वितः।
नीलकण्ठात्मकः प्रोक्तोविषद्वयहरः परः।४५
हरद्वयं वह्निजाया हृदयं परिकीर्तितम्।
कपर्द्दिने ठयुगलं शिरोमन्त्र उदाहृतः।४६
नीलकण्ठाय ठद्वन्द्वं शिखामन्त्र उदाहृतः।
कालकूटपदस्यान्ते विषभक्षणङेयुतम्।४७

सिद्ध, गन्धर्व, मुनियों के द्वारा तथा योगीन्द्रों के द्वारा सेवित ज्ञानयोग के अर्थियों की प्रीति के लिए ये मन्त्र नायक कहे गये हैं।४३। अब भगवान् नीलकण्ठ के मन्त्र को बतलाते हैं—लोहित—पः, अग्नि—रेफ के आसन वाला, सद्य, ओ और बिन्दु—अनुस्वार से युक्त होवे। फिर प्रथमं—नः वह्निबीज—रेफ, दीर्घा—नकार, शान्ति—ई, और बिंदु—अनुस्वार से संयुत होवे। लाङ्गली—टकार, सर्ग—विसर्ग से संयुक्त होवे। यह तीन बीजों से अन्वित मन्त्र हैं। नीलकण्ठ के स्वरूप वाला दोनों (स्थावर-जङ्गम) विषों के परम हरण करने वाला कहा गया है।४४-४५। दोनों हर और वह्निजाया (स्वाहा) इसका हृदय कीर्त्तित किये गये हैं। 'कपिद्दि ने युगल ठकार' शिरो मन्त्र उदाहृत किया है।४६। नीलकण्ठाय—दो ठकार, शिखा मंत्र बताया है। कालकूट इस पद के अन्त में चतुर्थ्यन्त विष भक्षण है।४७।

हुँ फट् कवचमादिष्टं विद्वद्भिर्नीलकण्ठिने ।
स्वाहान्तमस्तमेतानि पञ्चांगानि मनीर्विदुः ।४८
मूर्द्धिन कण्ठे हृदयम्भोजे क्रमाद्बीजत्रयं न्यसेत् ।
ततः समाहितोभूत्वा नीलकण्ठं विचिन्तयेत् ।४९
बालार्कायततेजसन्धृतजटाजूटेन्दुखण्डोज्ज्वलम् ।
नागेन्द्रैः कृतभूषणं जपवटी शूलं कपालङ्करैः ॥
खट्वांगं दधतं त्रिनेत्रविलसत्पञ्चाननं सुन्दरम् ।
व्याघ्रत्वक्परिधानमब्जनिलयं श्रीनीलकण्ठं भजे ।५०
लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं ससर्पिषा ।
हविषा जुहुयात्सम्यक् संस्कृते हव्यवाहने ।५१
शैवे पीठे यजेदेनं मृत्युञ्जयविधानतः ।
एवं पूजादिभिः सिद्धे मनौ मन्त्रीविषद्वयम् ।५२

हुँफट्—इसका विद्वानों ने कवच समादिष्ट किया है। लीलकठिने से स्वाहा के अन्त तक इसका अस्त्र बताया गया है। ये इस मन्त्र के पाँच अंग जानने चाहिए ।४८। मूर्धा में—कण्ठ में और हृदय कमल में क्रम से तीनों बीजों का न्यास करना चाहिए। इसके अनन्तर परम सावधान होकर वे भगवान् नीलकण्ठ प्रभु का ध्यान करना चाहिए ।४९। अब ध्यान करने की रीति बतलाई जाती है—बालसूर्य के सहित तेजयुक्त भली भाँति धारण की हुई जटा जूट में चन्द्र के खण्ड से समुज्ज्वल—नागेंद्रोंके द्वारा भूषणों की रचना किये हुए—करकमलोंमें शूल—कपाल और खट्वांग को धारण करने वाले—तीन नेत्रों से शोभित पाँच मुखों से संयुत, सुंदर, व्याघ्र के चर्म का परिधान करने वाले—अब्ज में निवास करते हुए श्री नीलकण्ठ का मैं भजन करता हूँ ।५०। इस मंत्र का तीन लाख जप करे और जप का दशांश घृत युक्त हवि से हवन करना चाहिए जो कि सुसंस्कृत अग्नि में भली भाँति किया जावे ।५१। मृत्युञ्जय के विधान से शैव पीठ पर इनका यजन करना चाहिए। इस रीति से पूजन आदि के द्वारा मंत्र के सिद्ध

हो जाने पर मन्त्र को धारण करने वाला पुरुष दोनों प्रकार के विषों का शीघ्र ही नाश कर देता है और वह दूसरा नीलकण्ठ जैसा ही हो जाता है ।५२।

नाशयेदचिरादेव नीलकण्ठ इवापरः ।
मनुनानेन सञ्जप्तैः कुम्भस्थैः सलिलैः शुभैः ।५३
अभिषिञ्चेद्विषाक्रान्तं स विषान्मुच्यते ध्रुवम् ।
स्पृष्ट्वा जपेद्विषाक्रान्त तत्क्षणं निर्विषो भवेत् ।५४
बीजाभ्यां प्रथमान्ताभ्यां पार्श्वयोर्विषमाहरेत् ।
मध्येन मध्यगं सर्व मनुनानेत संहरेत् ।५५
बहुना किमिहोक्तेन मन्त्रेणानेन मन्त्रवित् ।
कालकूटविषं साक्षाद्भुक्तं स्यात्परमामृतम् ।५६

इस मन्त्र के द्वारा भली-भाँति जपे हुए कुम्भ में स्थित शुभ जल मे विष से आक्रान्त व्यक्ति का अभिषिचन करे तो निश्चित रूप से विष से युक्त हो जाया करता है । विष से आक्रान्त व्यक्ति का स्पर्श करके जप करे तो व्यक्ति उसी क्षण में विष से रहित हो जाया करता है । ५३।५४। प्रथम और अन्त के बीजों मे पार्श्वों के विष का हरण करना चाहिए । मध्य बीज से मध्य में रहने वाले समस्त विष का इस मन्त्र के द्वारा संहार करे ।५५। यहाँ पर इस मन्त्र के विषय में बहुत अधिक कहना व्यर्थ है । मन्त्र का ज्ञाता पुरुष इस मन्त्र के द्वारा कालकूट विष से भी साक्षात् मुक्त कर देता है । यह परम अमृत के समान माना गया है ।५६।

अग्निःसंवर्तकादित्यरानिलौषष्ठबिन्दुमत् ।
चिन्तामणिरितिख्यातं बीजं सर्वसमृद्धिदम् ।५७
काश्यपोमुनिराख्यातश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
अर्द्धनारीश्वरः प्रोक्तो देवता जगतां पतिः ।५८
रेफादिव्यञ्जनैः षड्भिः कुर्यादङ्गानि षट् क्रमात् ।५९

नीलप्रवालरुचिरं विलसच्चिनेत्रं पाशारुणेत्पलत्रिशूलहस्तम् ।
अर्द्धाम्बिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं ।
बालेन्दुवद्धमुकुट प्रणमापि रूपम् ।६०
एकलक्षं जपेद्बीजमित्थ मन्त्री विचिन्तयेत् ।
अयुतं मधुना सिक्तैज्जुहुयात्तिलतण्डुलैः ।६१

अव चिन्तामणि मन्त्र का उद्धार करके वतलाया जाता है—अग्नि—रेफ, सम्वर्त्तक क्षः, आदित्त—मः र—स्वरूप, अनिल—यः, ओ-स्वरूप है। षष्ठ—ऊः, विन्दु—अनुस्वार से युक्त होता है। यह चिन्तामणि—इस नाम से मन्त्र विख्यात है। यह बीज सब प्रकार की समृद्धि से युक्त होता है ।५७। अर्थात् सम्पूर्ण समृद्धि का दाता है। इसका ऋषि कश्यप है, छन्द अनुष्टुप् है—और इस मन्त्र का देवता जगतों के स्वामी भगवान् अर्द्धनारीश्वर कहे गये हैं ।५८। रेफादि छै व्यंजनों से इसके छै अङ्गों को क्रम से ही करना चाहिए ।५९। अब ध्यान वतलाया जाता है—नील प्रवाल के समान रुचिर तीन लोचनों से शोभित—करों में पाश—अरुणोत्पन्न, कपाल और त्रिशूल को धारण करने वाले–प्रकर्ष रूप से विभक्त भूषा से संयुत–वालचंद्र से वद्ध मुकट वाले, अम्बिका के स्वामी के रूप को निरन्तर प्रणाम करता हूँ। इस बीज का एक लाख जाप करे और मन्त्रधारी को इस प्रकार से ही ध्यान करना चाहिए। मधुसे सिक्त तिलों और तण्डुलोंके द्वारा इसकी दस हजार आहुतियाँ देकर होम करना चाहिए ।६१

शैवोदिते यजेत्पीठ प्रागङ्गैः षड्भिरीरितैः ।
वृषाद्यैर्मातृभिः पश्चाल्लोकपालैस्तदायुधैः ।६२
एवमभ्यचयेद्दवमर्द्धनारीश्वरम् परम् ।
तेजः कान्तियशोलक्ष्मींवाचां भवति वल्लभः ।६३
प्रासादाद्यं जपेन्मन्त्रमयुतं रोगशान्तये ।
स्वरावृतमिदं बीज विगलत्परमामृतम् ।६४

चन्द्रबिस्थितं मूर्द्धन्नि ध्यातं क्ष्वेडगदापहम् ।
प्रतिलोमस्वरावीतं बीजं वह्निगृहे स्थितम् ॥६५
रेफादिव्यञ्ज्कोल्लासिषट्कोणाभिवृतं बहिः ।
भूतार्त्तन्य स्मृतं मूद्ध्नि भूतमाशु विनाशयेत् ॥६६

पूर्वोक्त शैव पीठ पर पूर्व में कथित छै अङ्गोंके द्वारा यजन करे । इसके पश्चात् वृषादि मातृकाओं तथा आयुधों के सहित लोकपालों का अर्चन करे ।६२। इसी रीति से परम भगवान अर्द्धनारीश्वर का देवेश्वर का यजन करना चाहिये । ऐसा अर्चन करने वाला साधक तेज कान्ति, यश, लक्ष्मी और वाणी का बल्लभ हो जाया करता है ।६३। प्रासादय मन्त्र का दश हजार जाप रोगों की शान्ति के लिये करना चाहिये । यह बीज स्वरों से आवृत है और इस से परमामृत विगलत होता हैं ।६४। मूर्धा में चन्द्र विम्ब को धारण करने वाले का ध्यान करे तो श्वेत गद का अपहरण करने वाला होता है । प्रतिलोम स्वरों से आवत बीज वह्निगृह मे स्थित है । ६५। रेफादि व्यञ्जनों से शोभित षट्को से बाहर अभिवृत होता है । जो भूतों से आर्त्त होवे उसकै मूर्धा में स्मृत किये जाने पर बहुत शीघ्र ही भूत का यह विनाश कर दिया करता है ।६६।

बीजं चन्द्रगतं वीत स्वरैः षोडशभिः क्रमात् ।
गलत्परसुधापूर्णे नेत्रे ध्यातं रुजं हरेत् ॥६७
एवमेवस्मृतं बीजं कुक्षौ शूलादिरोगहृत् ।
स्फोटे विषज्वरे दाहे मोहे शीर्षगदे भ्रमे ॥६८
बीजमेत्तथाध्यातं तत्तत्क्लेशान्विनाशयेत् ।
कुङ्क माभमिदं बीज त्रिकोणगतमुज्जगलम् ॥६९
यस्य मूर्द्ध्नि स्मरेन्मन्त्री स वश्यो जायतेऽचिरात ।
ऊर्ध्वरेफस्थसाध्याख्यं बीजं वह्निगृहे स्थितम् ॥७०
वह्निगेहद्धयेनाग्नियुक्तकोणेन संवृतम् ।
प्रतिलोमस्वरावीतं चुल्लीस्थाने निवेशितम॥७१

चन्द्रगत वीज क्रम से सोलह स्वरों से वीत होवे तो गलत्पर सुधा से पूर्ण नेत्र में ध्यान किये जाने पर यह नेत्र के रोग का हरण किया करता है ।६७। इस रीति से स्मरण किया हुआ बीज जो कि कुक्षि में किया जावे तो यह शूल आदि रोगों का हरण करने वाला हुआ करता है । स्फोट में, विष ज्वर में, दाह में, मोह में, शीर्ष के रोग में, भ्रम में इस वीज का ठीक उसी भाँति से ध्यान किया जाने पर उन-उन सम्पूर्ण क्लेशों का विनाश कर दिया करता है । यह बीज कुंकुम की समान आभा वाला त्रिकोण में गत उज्ज्वल है ।६८।६९। मन्त्रधारी पुरुष जिसके ही मूर्धा में इसका स्मरण अर्थात् ध्यान करे वही पुरुष थोड़े ही समय में वश्य हो जाया करता है। यहाँ हर ६७ वेश्लोक में जो चन्द्रगत है उसका आशय ठकार गत होता है । ऊर्ध्व रेफ गत साध्य के नाम वाली बीज वह्निगृह में स्थित हैं ।७०। दो वह्निगेह से युक्त अग्नि युक्त कोण से संवृत तथा प्रतिलोम स्वरों से आवृत को चूल्हे के स्थान में निवेशित कर देवे ।७१।

वशीकरोति रमणमचिरेणैव दासवत् ।
मधुरत्रययुक्तेन शालिपिष्टेन पुत्तलीम ।७२
कृत्वा प्रतिष्ठितप्राणां विभज्य जुहुयाद्वशी ।
त्रिवासरमनेनैव साध्यस्तस्य वशी भवेत् ।७३
मकारगतसाध्याख्यमनलस्थगदाह्वयम् ।
चन्द्रगञ्चतुरस्रेण टान्तकोणेन वेष्टितम् ।७४
बीजं ताम्बूलपत्रस्थं प्रजप्तं मनुनामुना ।
भक्षितं नाशयेत्सम्यक् शिरोरोगं न सशयः ।७५
लिखित्वा वन्धुजीवेन त्रिकोणं बीजगर्भितम् ।
अत्र वह्निं समाधाय सम्यगाराध्य देवताम् ।७६

इसका ऐसा अद्भुत प्रभाव हो ताकि यह रमण को अपने दास की ही भाँति थोड़े समय में वश में कर दिया करता है । तीन मधुरों से युक्त शाली के चून से पुतला वनावे और उसमें पुष्पों की प्रतिष्ठा करे

और वशी विभाग करके उसमें हवन करे तो इसी के द्वारा तीन दिन में ही साध्य उसके वश गत हो जाया करता है ।७२।७३। मकार गत साध्य के नाम को अनलस्थ गद नाम वाले चन्द्रगत को चतुरस्त्र (चौकोर) टान्त कोण से वेष्टित करे ।७४। बीज को ताम्बूल के पत्ते में स्थित कर के इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित करे । फिर इसका भक्षण करे तो यह शिर के रोग का अच्छी तरह से विनाश कर दिया करता है–इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।७५। बन्धु जीव के द्वारा बीज से गर्भित त्रिकोण लिखकर इसमें वह्नि का समाधान करे और अच्छी रीति से देवता की अराधना करनी चाहिए ।७६।

जुहुयात्कृतसंपातं सर्पिषाष्टोत्तरं शतम् ।
संपाताज्येन संसिक्ता त्रिलोहकृतमुद्रिका ।७७
विधृता भूतवेतालकृत्यारोगविनाशिनी ।७८
ऊर्ध्ववह्निदहितं मनुमेनं वह्निगेहयुगलोपरि लिखितम् ।
अग्निमस्त्रिषु महीपुरवीतं यन्त्रमेतदुदितं ग्रहगौरि ।७६
अग्निबीजलत्कोणत्रिकोणलिखिते ध्रुवे ।
शरावे कपिलाज्याब्जसूत्रदीपं प्रविन्यसेत् ।८०
घटेनैनं पिधायास्य पृष्ठे यन्त्रमिदं लिखेत् ।
भूतार्तमत्र संस्थाप्य चिन्तामणिमनुं जपेत् ।८१

फिर घृत से अष्टोत्तर शत कृत सम्पात आहुतियाँ देवे । उस सम्पात किये हुए घृत से संसिक्त करके तीनों लोहों की मुद्रिका बनावे । इस मुद्रिका को धारण करने से यह भूत, वेताल, कृत्या के द्वारा हुए रोगों का विनाश हो जाता है ।७८। अब एक यन्त्र बतलाया जाता है– ऊर्ध्व बह्नि से रहित इस मन्त्र को वह्नि गेह युगल के ऊपर लिखे षट्कोणों में अग्नि को भूपुर से वीत करे । यह मन्त्र ग्रह गौरि नाम वाला कहा गया है ।७६। अग्नि बीज से शोभित कोण त्रिकोण में ध्रुव के लिखने पर मिट्टी के दिये में कपिला गौ के घृत में अब्ज सूत्र वाले

दीप का विन्यास करना चाहिए ।८०। इसको घट से ढककर इसके पृष्ठ भाग पर इस मन्त्र को लिखे । जो भूतों से आर्त्त होवे उसको यहाँ पर संस्थापित करके चिन्तामणि मन्त्र का जाप करना चाहिए ।८१।

नमाविश्य क्षणान्नश्येद्ग्रहः क्रूरोऽपिसर्वथा ।८२
कृशानुभवनद्वये मनुमिनं लिखित्वा पुन—
स्तदस्त्रिषु हलोलिखेत्स्वरयुग ततः सन्धिषु ।
ध्रुवेण परिवेष्ठितं धरणिगेहमध्यस्थितम् ।
मनोरथफलप्रद भवति यन्त्रमेतन्नृणाम् ।८३
षट्कोणान्तस्त्रिकोणे लिखतु मनुमिमं साध्यनामाक्षराढ्यम् ।
षट्कोणेष्वङ्गमन्त्रान्वसुदलविवरेष्वष्टमन्त्राक्षराणि ।
वीतं बाह्य कलाभिस्तदनु परिवृत कादिभिर्यादिभिस्त ।
त्क्षोणीबिम्बेन युक्त नृहरिमनुयुजा यन्त्रमापद्ग्रहघ्नम् ।८४
अस्मिन्यन्त्रे प्रतिष्ठाप्य कलशं प्रोक्तवर्त्मना ।
कृताभिषेकः स्यात्कृत्याभूतद्रोहादिशान्तिदः ।८५

उसमें अविष्ट होकर ग्रह चाहे वह सर्वथा क्रूर होवे एक ही क्षण में नष्ट हो जाया करता है ।८२। अग्नि के दोनों गृहों में इस मन्त्र को लिखकर फिर उसके षट्कोण में हलो लिखे । फिर सन्धियों में दो स्वर लिखने चाहिए । ध्रुव से अर्थात् प्रणव से परिवेष्टित करे और धरणी के गेह के मध्य में स्थित करे । यह मन्त्र मानवों के मनोरथों के फल का प्रदान करने वाला होता है ।८३। इस मन्त्र को षट्कोण के अन्दर त्रिकोण में साध्य के नाम के अक्षरों से युक्त लिखे । षट्कोणों में अङ्गभूत मन्त्रों को लिखे और आठ दलों के विवरों में आठ मन्त्रों के अक्षरों का लेखन करना चाहिए । बाहर में कलाओं में वीत करे और इसके अनन्तर आदि और यादि से परिवृत करे तथा क्षोणी विम्ब से युक्त करे । यह नृसिंह मन्त्र से युक्त होवे तो यह यन्त्र आपदा और ग्रहों के नाश करने वाला होता है ।८४। इस मन्त्र में कहे हुए मार्ग

से कलश को प्रतिष्ठापित करे। फिर इससे अभिषेक करे तो कृत्या और भूत द्रोह आदि को शान्ति प्रदाता होता है।८५।

स्वरावृतमयुङ्मनुं लिखतु टान्तमध्ये ततः।
षडस्त्रिषु हुताशनं तदनु कादिवर्णेवृतम्।
धरापुरयुगेन तन्नृहरिबीजयुक्तास्त्रिणा।
प्रवेष्टितमुदाहृतं दुरितरोगकृत्यापहम्।८६
क्षकारोमाग्निपवनवामकर्णार्द्धचन्द्रवान्।
उक्तं तुम्बुरुबीज तद्येन सिध्यन्ति साधकाः।८७
षड्दीर्घभाजा बीजेन डङ्गानिप्रकल्पयेत।
क्षकाररहितं बीजं क्रमाज्जभसहान्वितम्।८८
चत्वारि देवीबीजानि देव्योज्ञेया इमाः क्रमात्।
जयाख्या विजया पश्चादजितर चापराजिता।८९
बीजमंगुलिषु न्यस्य करयोर्व्यापकंततः।
कनिष्ठादिषु विन्यस्येत्षडङ्गानि तलावधि।९०

फिर टान्त के मध्य में स्वरों से आवृत अयुक् मन्त्र को लिखे। षट्कोण में हुताशन को लिखे फिर इसके अनन्तर कादिद वर्णों से इसको वृत करे। फिर दो भूपुरों से तथा नृसिह के बीज से युक्त षट्कोण से इसको परिवेष्टित करे। यह दुरित रोग और कृत्या के दोषों का अपहरण करने वाला उदामृत किया गया है।८६। क्षकार, अग्नि, पवन, वाम, कर्ण अर्ध चन्द्र वाला—यह तुम्बुरु बीज कहा गया है जिसके द्वारा साधकगण सिद्ध होते हैं।८७। छै दीर्घों से युक्त बीज के द्वारा छै अङ्गों की कल्पता करनी चाहिए। क्षकार से रहित बीज से क्रम से ज—भ—स—ह से अन्वित होता है।८८। चार देवी के बीज होते हैं। उनको क्रम से जान लेने चाहिए। जया—विजया—अजिता—अपराजिता है। बीज का अँगुलियों में न्यास करके पीछे दोनों करों में व्यापक न्यास करना चाहिए। फिर कनिष्ठा आदि में तल की अवधि पर्यन्त षडङ्गों का न्यास करे।८९।९०।

देवं देवीः स्वबीजादि कनिष्ठादिषु विन्यसेत् ।
पादान्मूर्द्धावधि न्यस्येन मुष्टिनाऽवयवेषु तत् ।६१
तलाभ्यां व्यापकं कुर्यान्मूर्धादि चरणावधि ।
षडङ्गानि ततोन्यस्येद्यस्थानं विशालधीः ।६२
देवं देवी यथापूर्व मूर्द्धास्यहृदयाम्बुजे ।
नाभौ गुह्ये क्रमान्न्यस्येत्पश्चाद्देव विचिन्तयेत् ।६३
रक्ताभमिन्दुसकलाभरणं त्रिनेत्रं खट्वाङ्गपाशसृणिशूलकपालहस्तम्
वेदाननं चिपिटनासमनर्घ्यभूषं रक्ताङ्गरागकुसुमांशुकमीशमीडे ।६४
लक्षमानं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्सर्पिषाऽयतम् ।
वक्ष्यमाणे यजेत्पीठे देवमावरणैः सह ।६५

देव का—देवी का और स्वबीजादि का कनिष्ठ का आदि में न्यास करे । पाद से मूर्धा की अवधि तक मुष्टि से अवयवों में उनका न्यास करे ।६१। मूर्धा से आदि लेकर चरणों की अवधि पर्यन्त तलों से व्यापक न्यास करना चाहिए । विशाल बुद्धि वाले पुरुष को चाहिए कि वह इसके अनन्तर स्थान के अनुसार षट् अङ्गों का न्यास करे ।६२। देव का और देवी पूर्व की ही तरह से मूर्धा, मुख, हृदय कमल, नाभि; गुह्य क्रम से न्यास करना चाहिए । इसके पश्चात् इस प्रकार से चिन्तन करे ।६३। अब ध्यान बतलाया जाता है—रक्त आभा से युक्त, चन्द्रखंड के आभरण से भूषित—तीन नेत्रों वाले—करों में खट्वाङ्ग—पाश—सृणि-शूल और कपाल को धारण करने वाले—चार मुखों से समन्वित—चिपिटनासिका से युत—श्रेष्ठ वेषभूषा से भूषित—रक्त अङ्गराज से युत—कुसुमों के वस्त्रधारी ईश का स्तवन करता हूँ ।६४। एक लाख मान में इस मन्त्र का जप करे और जप का दशांश भाग दश सहस्र घृत से होम करे । आगे कहे जाने वाले पीठ पर आवरणों के साथ देव का यजन करे ।६५।

नपुंसकस्वरैर्विद्वान्स्वराद्यन्तद्वयेन च ।
धर्मादिकानधर्माद्यान्पादगात्राणि विन्यसेत् ।६६

इकारेण न्यसेत्पश्चात्तत्त्वरूपान्गुणानथ ।
शान्त्या तत्परवर्णेन मायाविद्यामजे क्रमात् ।९७
अधऊर्ध्वच्छन्दे न्यस्येदर्धीशेन ततोऽम्बुजम् ।
सन्ध्यक्षरैर्यजेन्मन्त्रीं शक्तीर्वामादिकाः क्रमात् ।९८
वामां ज्येष्ठां तथा रौद्रीमिच्छां ज्वालास्वरूपिणीः ।
एवं प्रकल्पित पीठे मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।९९
आवाह्य पूजयेद्देवं तस्यामावरणैः सह ।
अङ्गावृतेर्बहिर्देवीं दिक्पत्रेषु समर्चयेत् ।१००

विद्वानों को उचित है कि नपुंसक स्वरों से और स्वराद्यन्त दो से धर्मादि काम धर्माद्यों तथा पादगात्रों का विन्यास करे ।९६। ईकार से न्यास करे और पीछे तत्व रूप गुणों को, शान्ति से तत्पर वर्ण के द्वारा क्रम से माया विद्यमय में नीचे ऊपर के छन्द में न्यास करे। अर्धीश से अम्बुज को करे। मन्त्रधारी शक्तियों और वामदिक का क्रम से यजन करे ।९७।९८। उन शक्तियों नामों का परिगणन करके बताया जाता है—वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, इच्छा, ज्वाला स्वरूपिणी हैं। इस प्रकार से प्रकल्पित पीठ पर मूल मन्त्र के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए ।९९। उस मूर्त्ति में देव का आवाहन करके आवरणों के सहित पूजन करे। अङ्गावृत्ति के बाहर दिक् पत्रों में देवी का अर्चन करना चाहिए ।१००।

जयाद्याः स्वस्वबीजेन रक्ता रक्तानुलेपनाः ।
अरुणांशुकपुष्पाढ्यस्ताम्बूलाऽऽपूरिताननाः ।१०१
वल्लकीवादनपरा मदमन्मथपीडिताः ।
ईशादिकोणेष्वभ्यर्चेद्दूतीबीजादिकाः क्रमात् ।१०२
दुर्भगां सुभगां भूयः करालीं मोहिनीमिमाः ।
बद्धाञ्जलिपुटाः किंचिदानम्रवदनाम्बुजाः ।१०३
देवीः सदृशभूषाढ्या दूतीमन्त्राविदुः क्रमात् ।
चतुरः शादिकान्वर्णानर्द्धेन्दुकृतशेरान् ।१०४

लोकपालान्यजेद्बाह्ये वज्राद्यायुधसंयुतान् ।
एवं यो भजते भक्त्या देवमुक्तेन वर्त्मना ।१०५

जपाद्या स्वस्थ वीज से रक्ता है और रक्त अनुलेपन वाली है। अरुण वर्ण के वस्त्र और पुष्प से आढ्य है। उनका मुख ताम्बूल से परिपूरित रहता है। ये सब वल्लकी वाद्य के वादन करने में परायण हैं और मद तथा मन्मथ (कामदेव) से पीड़ित है ईशादि कोणों में बीजादिक दूतियों का क्रम से अभ्यर्चन करे ।१०१।१०२। दूतियों के नामों का परिगणन किया जाता है—दुर्भगा, सुभगा, कराली, मोहिनी—ये हैं। ये सब अपनी अंजलिपुटों को बाँधे हुए हैं और इनका मुख कमल नम्रता से कुछ नीचे की ओर हो रहा है ।१०३। ये सब देवी के ही समान भूषणों से समन्वित हैं। अब दूतियाँ के मन्त्रों को क्रम से जान लेवे। चार शाकादि वर्ण अर्थात् शषसह, अर्धेन्दु—बिन्दु से शेखरों वाली हैं ।१०४। बाहर लोकपालों का यजन करे तथा वज्र आदि उनके आयुधों का अर्चन करे। इस प्रकार से उक्त मार्ग के द्वारा जो भक्ति की भावना से देव का अर्चन किया करता है ।१०५।

न तस्य दुर्लभं किञ्चित्त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
वायुवह्निपरान्तस्थं बीजं स्मृत्वा जपेत्सुधीः ।१०६
ज्वरभूतमहारोगानश्यन्ति तेन तत्क्षणात् ।
क्रुद्धस्य हृदये ध्यात्वा जपेद्बीजमनन्यधीः ।१०७
स वश्यो जायते शीघ्रं मन्त्रस्यास्य प्रभावतः ।
हृद्रोगे कामला रोगे विषृम्भि श्वासकासयोः ।१०८
एतज्जप्तं जलं प्रातः पिबेत्तद्रोगशान्तये ।
कृत्वा नवपदात्मानं मण्डलं तत्र शोभनाम् ।१०९
कलशान्स्थापयेन्मन्त्री नव पूर्वोक्तलक्षणान् ।
मध्यदेवं यजेत्सम्यक् देवीः पूर्वादिकुम्भगाः ।११०
इष्ट्वा कोणस्थिता दूतीरभिषिञ्चेत्पतिव्रता ।
नारी सा लभते पुत्रं वन्ध्यापि किमुतापरा ।१११

भूतकृत्याग्रहद्रोहशान्तिदः संपदावहः ।
अभिषेकोऽयमाख्यातो राज्ञां विजयवर्द्धनः ।११२

उस पुरुष को तीनों लोकों में कुछ भी वस्तु अप्राप्य नहीं है । वायु वह्निपुर के अन्दर स्थित बीज को स्मरण करके अनन्य बुद्धि वाला होकर जप करे तो उसके ज्वर भूत महा रोग उसी क्षण में नष्ट हो जाया करते हैं । क्रुद्ध का हृदय में ध्यान करके अनन्य बुद्धि होकर बीज का जप करे ।१०६।१०७। इस मन्त्र के प्रभाव से वह शीघ्र ही वश्य हो जाता है । हृद्रोग में—कामला रोग में विषृम्भि श्वास और कास में—ईस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित जल को प्रात:काल में रोग की शान्ति के लिए पान करना चाहिए । नव पदों के स्वरूप वाले मंडल की रचना करके उसमें परम शोभन पूर्व में वर्णित नौ कलशों की मन्त्रधारी स्थापना करे । मध्य में देव का यजन करे और पूर्वादि कुम्भों में स्थित देवियों का अर्चन करे ।१०८।१०६।११०। कोणों में स्थित दूतियों का अर्चन करके पतिव्रता स्त्री अभिषिञ्चन करे ! वह नारी अवश्य ही पुत्र जन्म का लाभ किया करती है, चाहे वह वन्ध्या ही क्यों न हों औरों की तो बात ही क्या है ।१११। यह अभिषेक भूत-कृत्या द्रोह को शाँति देने वाला होता है तथा सम्पदाओं का आवाहन किया करता है और राजाओं की विजय का वर्धन करने वाला है ।११२।

अन्तर्बीजं स्वरगणलसत्केसरं तस्य बाह्ये ।
देवीदूतीमतुयुतदलं दिग्विदिक्षु क्रमेण ।।
काद्यैर्वर्णैर्वृतमथ वह्निर्भूमिगेहेन वीतम् ।
यन्त्रं प्रोक्तं सकलसुखदं रोगकृत्याग्रहघ्नम् ।११३
प्रणवो हृदयं पश्चातृङेऽन्तं पशुपति पुनः ।
तारो नमोभूतपदं तताऽधिपतये ध्रुवम् ।११४
नमो रुद्राय युगलं खड्गरावणशब्दतः ।
विरहद्वितयं पश्चात्सरनृत्ययुगं पृथक् ।११५

श्मशानभस्मार्चितान्ते शरीराय ततः परम् ।
घण्टाकपालमालावि धरायति पदं पुनः ।११६
व्याघ्रचर्मपदस्यान्ते परिधानाय तत्परम् ।
शशाङ्ककृतशब्दान्ते शेखराय ततः परम् ।११७
कृष्णसर्पपद पश्चात्ततो यज्ञोपवीतिने ।
चलयुग्मं वल्गुगमनिवर्तकपालिने ।११८
हनयुग्मं ततो भूतान त्रासयद्वितयं पुनः ।
भूयो मण्डलमध्ये स्यात् कट्टयुग्मं ततः परम् ।११९
रुद्राङ्कुशेन शमय प्रवेशययुगं तत ।
आवेशययुगं पश्चाच्चण्डासिपदमीरयेत् ।१२०
धराधिपतिरुद्रोऽथ ज्ञापयत्यग्निसुन्दरी ।
खडगरावणमन्त्रोऽयं सप्तत्यूद्र्ध्वशताक्षरः ।१२१

अब मन्त्र वतलाया जाता हैं—आठ दलों से समन्वित कमल की रचना करके उसकी कर्णिका में मूल का लेखन करके दिशाओं के दलों में देवी के बीजों को तथा विदिशाओं में दूती बीजों को लिखना चाहिए। क्रम से ही अर्थात् पूर्व की ही रीति से लिखे । ककार से आदि वर्णों के द्वारा उसे बीत करे तथा बाहर में भूपुर की रचना करके उससे परि-वीत करे । यह मन्त्र ऐसा ही वताया गया है जो समस्त सुखों का प्रदान करने वाला है और रोगों का तथा कृत्या के गृहों का विनाश करने वाला है ।११३। अब खड्ग रावण मन्त्र वतलाया जाता है–प्रणव हृदय और इसके पीछे चतुर्थी विभक्ति जिसके अन्त में होवे ऐसा पशु-पति'–पद लिखे । फिर तार—प्रणव, फिर भूत अधिपति और ध्रुव अर्थात् प्रणव लिखे । इसके पीछे 'नमो रुद्राय' इसका युगल लिखे । खंग रावण शब्द से 'विरहा' का युगल लिखें । फिर 'नृत्य' पद का युगल लिखे । इसके अनन्तर 'श्मशान भस्मार्चित शरीराय'–और 'घंटा कपाल माला धराय'–यह पद कहे । इसके पश्चात् 'व्याघ्र चर्म परिधानाय' और 'शशांक कृत शेखराय'–यह लिखे । इसके अनन्तर 'कृष्ण सर्प यज्ञोपवीतिने

यह पद लिखे। इसके आगे 'चल-चल' और 'अनिवर्त कपालिने'–हन–हन—भूतान् त्रासय—यह लिखे। फिर मण्डप के मध्य में— 'फट्-फट्' और रुद्राङ्कु-शेन 'शमय-प्रवेशाय' का युग्म लिखे। फिर 'खण्डासि' पद कहे। धराधिपति रुद्रो ज्ञापय—यह लिखकर 'स्वाहा लिखना चाहिए। यह खङ्ग रावण मन्त्र है जो एक सौ सत्तर अक्षरों वाला है।

भूताधिपतये स्वाहा पूजामन्त्रोऽयमीरतः।
सद्यादिपञ्चह्लस्वाडचकान्तबीजादिकान्यसेत् ।१२२
ईशानाद्याः पञ्चमूर्तीर्देहे वक्त्रेषु च क्रमात्।
षड्दीर्घबिन्दुयुक्तेन मन्त्रेनाङ्गक्रिया मता ।१२३
घण्टाकपालसृणिमुण्डकृपाणखेटखट्वाङ्गशूलडमरूनभयन्दधानम्।
रक्ताङ्गमिन्दुशकलाभरणं त्रिनेत्र पचाननाब्जमरुणांशुकमीशमीडे।
।।१२४

अयुतद्वितय मन्त्रं जपित्वा तद्दशांशतः।
पायसेन घृता यक्तेन जुहुत्तस्यसिद्धये ।१२५
पञ्चाक्षरोदिते पीठे पूजयेत्खङ्गरावणम्।
बीजेन मूर्तिक्लृप्तिः स्यात्तत्कान्तं मनुविन्दुमत् ।१२६

भूताधिपतये स्वाहा—यह पूजा मन्त्र कहा गया है। सद्य जिनके आदि में होवे ऐसे पंचह्लस्व से आद्य कान्त बीजादिक का न्यास करे। ।१२२। ईशानाद्य पांच मूर्त्तियों का देह में और वक्त्रों में क्रम से षड्-दीर्घ बिन्दु से युक्त मन्त्र से इसकी अङ्गों की क्रिया मानी गई ।१२३। अब ध्यान का प्रकार बतलाया जाता है—घण्टा, कपाल, सृणि-मुण्ड कृपाल, खेट, खट्वाङ्ग, शूल, डमरू और अभयदान को धारण करने वाले—रक्ताङ्ग और चन्द्रमा के खण्ड के आभरणों से अलंकृत—तीन नेत्रों से संयुत–पांच मुख कमलों से समन्वित–अरुण वर्ग के वस्त्रों को धारण करने वाले ईश का मैं स्तवन करता हूँ ।१२४। इस मन्त्र का दो अयुत अर्थात बीस सहस्र जप करे और फिर जप का दशांश भाग का

उसकी सिद्धि के लिए घृत से अक्त पायस से होम करना चाहिए।१२५। पंचाक्षर के उदित पीठ पर खङ्ग रावण का अर्चन करे। बीज के द्वारा मूर्त्ति की कल्पना करनी चाहिए। उसका कान्त मन्त्र से युक्त है। ।१२६।

अङ्गानि दलमूलेषु दूतीः पत्रेषु संयजेत्।
चुलुकुण्डां प्रज्वलिनीं तृतीयां कृष्णपिङ्गलाम् ।१२७
फल्गुनीं टिरिटिल्लीं च पञ्चमी मन्त्रमालिकाम्।
सप्तमीं शंखिनीं पश्चाच्चन्द्राङ्कितजटामिमाः ।१२८
पूर्वपत्रादि सव्येन खडगरावणवल्लभाः।
ऐन्द्री कौमारिकी ब्राह्मीं बाराहीं वैष्णवीं पुनः ।१२९
वैनायकीं च चामुण्डां माहेशीं दिक्षु पूजयेत्।
द्वारपालान्यजेद्दिक्षु द्वौ द्वौ प्रागादिदेशिकः ।१३०

अङ्गों का दलों के मूलों में और दूतियों का पत्रों में भली भाँ। यजन करना चाहिए। अब उनके नामों का परिगणन करके बता... जाता है, चुलुकुण्डा, प्रज्वलिनी और तीसरी कृष्ण पिङ्गला है।१२७। फल्गुनी, टिरिटिल्ली पाँचवी और छठी मन्त्रमालिका है। सप्तमी शखिनी—और चन्द्रांकित जटा है। ये पूर्व पत्रादि सव्य में खङ्ग रावण की वल्लभायें हैं। इनके पश्चात् ऐन्द्री, कौमारिका, ब्राह्मी, वाराही, वैष्णवी, वैनायिकी, चामुण्डा और माहेशी का दिशाओं में अर्चन करना चाहिए। फिर आचार्य द्वारा पूर्व आदि दिशाओं में दो-दो द्वारपालों का यजन करना चाहिए।१२८-१३०।

रौद्रपिङ्गलनामानौ द्वौ श्मशानविभीषणौ।
दृढकर्ण भृङ्गिरीटिमुदीच्यामचयेत्पुनः ।१३१
आमर्ईकमहाकालौ कोणपालान्यजेत्पुनः।
कुम्भकर्णमशोकाख्यं भल्लाटं च सिहारकम् ।१३२
इन्द्रादिकाँल्लोकपालान्सायुधान्पूजयेत्ततः।
धूपदीपादिभिर्देव प्रीणयित्वा महेश्वरम् ।१३३

पञ्चकूरान्धसा बाह्यै ततो भूतबलिं हरेत् ।
एवं पूजादिभिः सिद्धै मन्त्रै मन्त्रविदाम्बरः ।१३४
नाशयेत्सकलान्भूतान्कृत्याग्रहमहाभयान् ।
आदेश तस्य कुर्वन्ति भूता भीता महात्मनः ।१३५
बहुना किमिहोक्तेन मन्त्रेणानेन भूतले ।
सदृशोनास्ति मन्त्रोऽन्योभूतनिग्रहसाधने ।१३६

रौद्र पिंगल नामों वाले दो और श्मशान विभीषण वाले दो दृढ़-कर्ण और भृंगि-रीटिका उत्तर में पुनः समर्चन करना चाहिये ।१३१। फिर इसके अनन्तर आमर्दक-महाकाल और फिर कोण पालों का यजन करे। कुम्भकर्ण—अशोक नामक भल्लाटक और सिहरक का अर्चन करना चाहिए ।१३२। इसके अनन्तर इन्द्रदेव आदि लोक पालों का जो अपने २ आयुधों के सहित होवें पूजन करे। धूप-दीप आदि पूजन के उपचारों के द्वारा देवेश्वर महेश्वर प्रभु का प्रीणन करना चाहिए ।१३३ बाहिर में पञ्च कूरान्ध से भूत बलि का पीछे आहरण करे। इस रीति से पूजादि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर मन्त्रों के ज्ञान रखने वालों में परम श्रेष्ठ पुरुष समस्त भूतों का तथा कृत्या के ग्रहों का और महान् पापों का विनाश कर दिया करता है। उस महान् आत्मा वाले पुरुष से फिर भीत होकर भूतगण आज्ञा का पालन करते हैं ।१३४-।१३५। इस मन्त्र के विषय में यहाँ पर बहुत अधिक कहने का क्या प्रयोजन है बस इतना ही कहना प्रर्याप्त है कि इस भू-मण्डल में इस मन्त्र की समानता रखने वाला भूतों के विग्रह करने के साधन में अन्य कोई दूसरा मन्त्र ही विद्यमान नहीं है ।१३६।

अष्टादश पटल

।। अधोरास्त्रो वर्णन ।।

अथाभिधास्ते विधिवदघोरारास्रमनुत्तमम् ।
यस्य संस्मरणादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवा ।१
माया स्फुरद्वय भूयः प्रस्फुरद्वितयंततः ।
घोरघोररतरेत्यन्ते तनुरूपपदं पुनः ।२
चटयुग्मं तदन्तेस्यात्प्रचटद्वितयं ततः ।
कहयुग्मं वमद्वन्द्वं ततो बन्धयुगं पुनः ।३
घातयद्वितयं बर्म फडन्तः समुदाहृतः ।
लकपञ्चाशदर्क्षोऽयमघोरास्त्रमहामनुः ।४
अघोरारोऽस्य मुनिः प्रोक्तश्छन्दस्त्रिष्टुबुदाहृतम् ।
अघोररुद्रः संदिष्टो देवता मन्त्रवित्तमैः ।५

इसके अनन्तर परमोत्तम अधोरास्त्र के विषय में वर्णन करूँगा जिसके सस्मरण मात्र से ही सब उपद्रव नष्ट हो जाया करते हैं।१। मन्त्र का उद्धार करके वताया जाता है—माया शक्ति बीज, दो बार 'स्फुट'—यह पद, इसके पश्चात् 'प्रस्फुट'—यह पद दो बार कहे, घोर घोरतर'–इस पद के पश्चात् 'तनुरूप'—यह पद कहे ।२। इसके अनन्तर दो बार 'चट'–इस पद को बोले और इसके अनन्तर दो बार 'प्रचड'–इस पद का उच्चारण करना चाहिए। इसके उपरान्त दो वार 'कह'–यह पद और 'वम'—यह दो बार कहे। फिर 'बन्ध' को दो बार कहे और 'घातय' इसको दो वार कहे। फिर वर्म और फट् कहे। यह मन्त्र बताया गया है। यह अघोरास्त्र मन्त्र इक्यावन वर्णो का होती है, जो यहाँ पर वताया गया है है।३-४। इस मन्त्र का ऋषि अचोर होता है और इसका छन्द अनुष्टुप् गया है। मन्त्रों के शनि

रखने वाले पुरुषों के द्वारा इस मन्त्र का देवता अघोर रुद्र ही बताये गये हैं ।५।

हृदय पञ्चभिः प्रोक्तं शिरः षड्भिरुदाहृतम् ।
शिखा दशभिराख्याता तावद्भि कवच मतम् ।६
वसुवर्णैः स्मृतं नेत्रं मासार्णैरस्त्रमीरितम् ।
मूर्द्धानेत्रास्य कन्ठेषु हृन्नाभ्यन्धूरुषु क्रमात् ।७
जानुजंघापदद्वन्दे रुद्राभिन्नाक्षरैर्न्यसेत् ।
पञ्चभिश्चपुनः षड्भिर्द्वाभ्यामष्टभिरक्षरैः ।८
चतुर्वर्णैः षड्र्णैश्च करणैः करणै पुनः ।
चतुर्भिः षड्भिरक्षिभ्यां वर्णभेदोऽयमीरितः ।९
सजलघनसमाभं भीमदंष्ट्रं त्रिनेत्रं
भुजगधरमघोरं रक्तवस्त्रङ्गरागम् ।
परशुडमरुखड्.गान्खेटक वाणचापौ
त्रिशिखनरकपाले विभ्रतं भावयामि ।१०

इसका हृदय पाँचों से बताया गया है और छँ से इसका शिर कहा गया है । इसकी शिखा दश से वतायी गयी है और उतनी ही से इसका कवच माना गया है ।६। आठ वर्णों से इसका नेत्र कहा है और बाहर वर्णो के द्वारा इसका अस्त्र बताया गया है इसका न्यास क्रम से मूर्धा नेत्र-मुख-कण्ट-हृदय-नाभि--अन्धु-उरुओंमें-जानु-जंघा और दोनों चरणोंमें रुद्र से भिन्न अक्षरों के द्वारा करना चाहिए । फिर पांचों से, छँ से, दो से, आठ अक्षरों से, चार वर्णों से, छँ वर्णों से और फिर चार करणों और छँ अक्षियों करे । यह वर्ण भेद कहा गया है ।७।८।९। अब ध्यान करने की रीति बतलायी जाती है—ध्यान—जल के सहित मेघों की आभा के समान आभा से समन्वित—महान् भीषण दाढ़ों से युक्त—तीन नेत्रों वाले—सूर्योको अपने शरीर पर धारण करने वाले—रक्त वस्त्र के तुल्य अङ्गराग से संयुत—अपने कर कमलों में परशु—

डमरू—खड्ग—खेटक–वाणचाप–त्रिशिख–नर, कपाल को धारण करने वाले अघोर की भावना करता हूँ ।१०।

अभिचारे ग्रहध्वसे कृष्णवर्णो भवेद्विभूः ।
वश्ये कुसुम्भसङ्काशो मुक्तौ चन्द्रमप्रभः ।११
लक्षमेकं जपेन्मत्रं घृत सक्तोस्तिलः शुभैः ।
तद्दशांश प्रजुहुयान्मत्री मन्त्रस्य सिद्धये ।१२
शैत्रे सम्पूजयेत्पीठे षट्कोणान्तः स्थपङ्कजे ।
अ गपूजां केसरेषु कृत्वा पत्रेषु तत्परम् ।१३
परशु डमरुं खड्ग खेट वाण च (णांश्च) कार्मुकाम् ।
शूलं कपालं प्रयजदष्टास्त्राण्यस्य देशिकः ।१४
दलाग्रेषु ततः पूज्या ब्राह्मयाद्याः प्रोक्तलक्षणा ।
लोकेशान्पूजयेत्पश्चादायुधैः स्वैः समन्वितान् ।१५

अभिचार में–ग्रहों के ध्वंस में विभु का कृष्ण वर्ण होता है । वंश्य के प्रयोग में विभु का वर्ण कुसुम्भ के सदृश हुआ करता है और मुक्ति में उसका वर्ण चन्द्र के समान प्रभा से संयुत होता है ।११। इस मन्त्र का एक लाख जाप करना चाहिए और घृत सिद्ध परम शुभों तिलों से जप का दशांश भाग का होम करे । । तभी मन्त्रधारी को मन्त्रकी सिद्धि होती है ।१२। शेव पीठ पप षट्कोण के अन्दर स्थित कमल अच्छी तरह से यजन करना चाहिए । अङ्गों की पूजा केसरों में करके फिर पत्रों आयुधों का अर्चन करे जिनके नाम ये हैं—परशु, डमरू, खड्ग, खेट, वाण, कामुक, शूल, कपाल ।१३।१४। दलों के अग्रभागों में इसके अनन्तर ब्राह्म्यादि का यजन करना चाहिये जिनके लक्षण पूर्व में ही कह दिये गये हैं । इनके पश्चात् लोंकपालों का अर्चन करे जो कि वज्रादि अपने-अपने आयुधों के सहित है ।१५।

इति पूजादिभिः सिद्धे मन्त्रेणानेन साधकः ।
इष्टान्प्रयोगान्कुर्वीत सिद्धयन्ते नात्र संशयः ।१६

क्रमात्सर्पिरपामार्गतिलसर्षपपायसैः ।
साज्यैः सहस्रं प्रत्येकं यामिन्यां जुहुयात्सुधीः ।१७
होमोऽयं नाशयेत्सद्यो भूतकृत्याद्युपद्रवान् ।
सितकिंशुकनिर्गुण्डो होमाऽपामार्गसम्भवैः ।१८
समिद्वरैः कृतोहोमः पूर्ववद्भूतशान्तिदः ।
चपामार्गारग्वधयोः पञ्चगव्यसमुक्षिताः ।१९
समिधो जुहुयात्कृष्णपञ्चम्यां निशि संयुतः ।
पृथक् सहस्रहोमेन भूयानां निग्रहो भवेत् ।२०

इस प्रकार से अर्चना आदि के द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधक इस मन्त्र के द्वारा अपने अभीष्ट प्रयोगों का समाचरण करे। वे सभी प्रयोग सिद्ध होते हैं—इसमें कुछ भी संशय नहीं है ।१६। फिर क्रम से घृत—अपामार्ग—तिल—सरसों और पायन से प्रत्येक की घृत के साथ सहस्र आहुतियाँ देवे और सुधी पुरुष रात्रि में होम करे। यह किया हुआ होम तुरन्त ही भूतों और कृत्या आदि के उपद्रव्यों का विनाश कर दिया करता है। सफेद पलाश (ढाक) निर्गुडी के द्वारा किया हुआ होम तथा अपामार्ग से समुद्भुत श्रेष्ठ समिधाओं से किया गया होम पूर्व की ही तरह भूतों को शान्ति का देने वाला होता है। ।१७-१८। अपामार्ग और आरग्वध की समिधाऐं जो पञ्चगव्यमें संभुक्षित की गयी होवे ।१९। मास की कृष्ण पक्ष की पंचमी में रात्रि के समय में संयत होकर हवन करे। प्रथक् एक सहस्र होम से भूतों का निग्रह होता है ।२०।

क्रमात्सर्पिरमार्गपञ्चगव्यद्दविर्घृतैः ।
हुत्बा सहस्रं प्रत्येक पात्रो संपा (१) ययेत्सुधीः ।२१
संपातसर्पिशा साध्यं भोजयेद्भूतशान्तये ।२२
मध्ये शक्ति ससाध्यां स्वपगणसहितां केसरेष्वष्टवर्गा-
न्पत्रान्तर्मन्त्रवर्णान् लिखिय गुणमितानग्रदेनेषु तद्वत् ।

वर्मास्त्रोल्लासिकोणे दहनपुरयुगे कल्पिते भूपुरस्थे
यन्त्रोऽस्मिन्प्राग्विधानात्कृतकलशविधिः सर्वदुःखापहारी ।२३
षटकोणे शक्तिरन्तः स्फुरयुगलवृत्ता प्रस्फुरद्वन्द्वकोणे
शिष्टैर्मन्त्रस्य वर्णै रसकरणचतुः शट् चातुर्वेदवेदैः ।
षड्भिः क्लृप्ताष्टपत्रं दहनपुरयगेनावृतं वर्म स्फुटः
राजत्कोणेन बीतं (बाह्यं) धरणिपुरयुगं यन्त्रमाघोरमेतत् ।२४
क्षुद्रचोरग्रहव्यालभूतापस्मारनाशनम् ।
यन्त्रमेतत्समाख्यातं सर्वसिद्धिप्रदातकम् ।२५

क्रमसे घृत:अपामार्ग, पंचगव्य-हवि और घृतसे प्रत्येककी एक सहस्र आहुतियाँ देवे और सुधी एक पात्रसे घृतका सम्पात करे।२१।उस सम्पात के घृतसे साध्य व्यक्ति को भूतोंकी शान्तिके लिये भोजन करावे।२२।अब एक मन्त्र बतलाया जाता है । इसका उद्धार इस तरहसे होता है-मध्यमें साध्य के सहित शक्ति को जो स्वरगणसे सहित होवे लिखे और केसरों में अष्ट वर्णो का लेखन करे तथा पत्रों के अन्दर मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसी भाँति अग्रदेशों में गुणमितों को लिखे । वर्म और अस्त्र से शोभित कोण में लिखे । भूपुर में स्थित दहनयुगों के युग में जो कि कल्पित किया गया होवे । इस मन्त्र में पूर्वोक्त विधान से कलश की विधि को करे तो यह मन्त्र सब दुःखों का अपहरण करने वाला होता है ।२३। अब अन्य मन्त्र को बतलाया जाता है–षट्कोण में शक्ति है और अन्दर स्फुरित युगल से वृत हो । फिर प्रस्फुर द्वन्द कोणमें आकृता होव । मंत्र के शिष्ट वर्णों से छै-करण-चार-सौ चार वेद वेदोंसे षड्ाग क्लप्त अष्टपत्र को जो दहन पुरयुग से आवृत्त वर्म हो स्फुट से शोभित कोणसे परिवीत करे और इसमें दो भूपुर होते है—यही अघोर मन्त्र होता है ।२४। यह मन्त्र क्षुद्र चोर ग्रह व्याल भूत–अपस्मार का नाश करने वाला है और यह सब सिद्धियों का प्रदान करने वाला कहा गया है ।२५।

तारोवान्तोधरासंस्थो वामनेत्रेन्दुभूषितः ।
पार्श्वोवक्रः कर्णयुतो वर्मास्त्रान्तः पञ्चाक्षरः ।२६

मनुः पाशुपतास्त्राख्यो ग्रहक्षुद्रनिवारणः ।
षडभिर्वर्णैः षडङ्गानि हुंकडन्तैः सजातिभिः ।२७
मध्याह्नार्कसमप्रभ शशिधरं भीमाट्टहासोज्ज्वलम् ।
त्र्यक्ष पन्नगभूषण शिखिशिखाश्मश्रुस्फरन्मूर्द्धजम् ।
हस्ताब्जैस्त्रिशिखं समुद्गरसिं शक्ति दधानं विभुम् ।
दंष्ट्रामिच्चतुं मुखं पशुपति दिव्यास्त्ररूप स्मरेत् ।२८
वर्णलक्षं जपेन्मत्रं जुहुयात्तद्दशांशतः।
गव्येन सर्पिषा मन्त्री संस्कृते हव्यवाहने ।२९
शैवे पीठे यजेद्देव प्राङ्गैरष्टमातृभिः ।
इन्द्रादिभिर्लोकपालैर्वज्राद्यै रायुधैस्ततः ।३०

अब पाशुपतास्त्र को बताते हैं तार–प्रणव व्यक्त–शकार. धरा–ल, उसमें स्थित वामनेत्र–ई, इन्दु–अनुस्वार त भूषित है। पार्श्व पः, वकः–श, कर्णयुत–उकार से संयुत, वर्मास्त्रान्तः षट् अक्षरों वाला है ।२६। यह पाशुपत नामक मन्त्र ग्रहों और क्षद्रों के निवारण करने वाला होता है। जिनके अन्त में हुँ फट् हो ऐसे सजाति छः वर्णों से छ अङ्गों को करना चाहिए ।२७। अव ध्यान बताया जाता है मध्याह्न काल के सूर्य के समान प्रभा से समन्वित–चन्द्रदेव को धारण करने वाले–परम भीषण अट्टास से समुज्ज्वल–तीन नेत्रों से युक्त–सर्पों के भूषणों से संयुत की शिखा के समान श्मश्रु तथा स्फुरित केशों से युक्त हस्त कमलों के द्वारा त्रिशिख सुन्दर–असि और शक्ति का धारण करने वाले विभु का जो दाढों के द्वारा परम भीषण चार मुखों वाले–दिव्य अस्त्र स्वरूप पशुपति प्रभु का स्मरण करना चाहिये ।२८। इस मन्त्र में जितने वर्ण होवे उतने ही लाख इस मन्त्र का जप करना चाहिये। और जप के दशांश भाग का गाय के घृत से होम करे और मन्त्रधारी पुरुष को संस्कार किये हुये अग्नि में ही हवन करना चाहिये ।२९। शैव पीठ पर देव का यजन करे जो प्राक् अङ्ग, अष्ट मातृका–इत्यादि देवगण, लोकपाल और उनके वज्रादि आयुधों के

साथ ही यजन करे, तात्पर्य यह है कि सबका पूजन करना चाहिये।३०।

अनेन मन्त्रितं तोय ग्रस्तस्य वदनेक्षिपेत् ।
सद्यस्तं मुञ्चति क्रन्दन् ग्रहो मन्त्रप्रभावतः ।३१
अमुना मन्त्रितान् वाणान् विसृजेदुयधि भूपतिः ।
जयेत्क्षणेन निखिलान् शत्रून्पार्थ इवापरः ।३२
वर्णान्त्यमोबिन्दुयुक्तं क्षेत्रपालाय हृन्मुनः ।
ताराद्योवसुवर्णोऽयं क्षेत्रपालस्य कीर्तितः ।३३
षड् दीर्घभाजा बींजेन षडङ्गान्यस्य योजयेत् ।
ऋषिर्ब्रह्मा भवेदस्य गायत्रं छन्द ईरितम् ।३४
क्षेत्रपालो देवता चलायेति शक्तिरीरितः ।३५

मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित जल को जो भी ग्रस्त हो उसके मुख में डाल देवे। इस मन्त्र के प्रभाव से ग्रह तुरन्त ही रुदन करता हुआ उसका त्याग कर दिया करता है। इस मन्त्र के द्वारा अभिमन्त्रित किये हुये वाणों को राजा यदि युद्ध में छोड़े यो वह दूसरे अर्जुन को ही भाँति अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लिया करता है ।३१-३२। अब क्षेत्रपाल के मन्त्र का सोद्धार वर्णन किया जाता है—वर्णान्त्ये—अः, औ—स्वरूप, हृत्—नमः यह पद, औ बिन्दु (अनुस्वार) से युक्त होता है। नमः इसके पूर्व क्षेत्रपालाय—यह पद होता है। इसके आदि में तार अर्थात् प्रणव होता है। यह क्षेत्रपाल का मन्त्र आठ वर्णों वाला होता है, ऐसा कीर्त्तित किया गया है।३३। इसके छै दीर्घों के भजन करने वाले बीज के अङ्ग को योजित करना चाहिये। इसका ऋषि ब्रह्मा है और इसका छन्द गायत्र कहा गया है।१४। इसका देवता क्षेत्रपाल है और 'चलाय'—यह शक्ति कही गयी है।३५।

नीलाञ्जनाद्रिनिभमूर्द्ध्वपिशङ्गकेशं
वृत्तोग्रलोचनमुपान्तगदाकपालम् ।
आशाम्बरं भुजगंभूषणमुग्रदंष्ट्रं
क्षेत्रेशमद्भुततनुं प्रणमामि देवम् ।३६

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
चारूणा घृतसिक्तेन ततः क्षेत्रेशमर्चयेत् ।३७
धर्मादिकल्पिते पीठे पूर्वमङ्गानि पूजयेत् ।
अनलाख्यमग्निकेशं करालं तदनन्तरम् ।३८
घण्टारवमहाकोपं पिशिताशनसंज्ञकम् ।
पिङ्गलाक्षमूर्द्ध्वकेशं पत्रेषु परितोयजेत् ।३९
प्रधानमूर्तिप्रतिमान्नालङ्कारबन्धुरान् ।
लोकपालांस्तदस्त्राणि यथापूर्वं प्रपूजयेत् ।४०

अब ध्यान कहा जाता है—नील अंजन के सदृश ऊपर की ओर पिशङ्ग वर्ण वाले केशों से युक्त, वृत्त और उग्रलोचनों से अन्वित—समीप में ही गदा कपाल वाले--दिशाओं के वस्त्र वाले अर्थात् नग्न--सर्पों के भूषणों से भूषित--उग्र दष्ट्राओं से युक्त--अद्भुत शरीर धारी देव क्षेत्रपाल के लिए मैं प्रणाम करता हूँ ।३६। इस मन्त्र का एक लाख जाप करे और जप का दशांश भाग वृतसे सिक्त चरुसे होम करना चाहिए । इसके अनन्तर क्षेत्रपाल का अर्चन करे ।३७। धर्मादि के द्वारा कल्पित किये हुए पीठ पर पहिले अङ्गों का यजन करना चाहिये । अनल नामक अग्नि केश कराल--घण्टारव महाकोप-पिशिताशन संज्ञा वाला पिङ्ग-लाक्ष—ऊर्ध्व केश का सब और पत्रों में यजन करना चाहिए ।३८-३९। प्रधान मूर्त्ति प्रतिमा--अनेक अलंकारों से बन्धुर--लोकपालों का तथा उनके वज्रादि आयुधों का पूर्व की ही भाँति पूजन करना चाहिए ।४९।

तस्मै सपरिवाराय बलिमेतेन निर्हरेत् ।
पूर्वमेहि द्वयं पश्चाद्विदुषि स्यात्पुरुद्वयम् ।४१
भञ्जय द्वितय भ्रयोनर्नय द्वितयं पुनः ।
तत विघ्नपदद्वन्द्वं महाभैरवतत्परम् ।४२
क्षेत्रपाल बलिं गृह्णद्वय पावकसुन्दरी ।
बलिमन्त्रोऽयमाख्यातः सर्वकामफलप्रदः ।४३

सोपदशं बृहत्पिण्ड कृत्वा रात्रिषु साधकः ।
स्मृत्वा यथोक्तं क्षेत्रेशं तस्य हस्ते वलिं हरेत् ।४४
बलिनानेन सन्तुष्ट क्षेत्रपाल प्रयच्छति ।
कान्तिमेधाबलारोग्यतेजः पुष्टिर्यशः श्रियः ।४५

परिवार के सहित उनके लिए इसके द्वारा वलि का निर्हरण करे। पूर्व में 'एहि'--इस पद को दो बार कहे पश्चात् विदुषी पुरु-इसको दो बार बोले। भञ्जय--इसकी दो वार 'नर्त्तय'--इसको दो बार कहे। फिर विघ्न पद को दो बार कहे। इसके आगे महाभैरव'--यह पद कहे। इसके अनन्तर ,क्षेत्रपाल बलि 'गृह्ण' इस को दो बार कहकर अन्त में पावकसुन्दरी 'स्वाहा'--वह पद कहे। यह बलि देने का मन्त्र कहा गया है जो समस्त मनो कामनाओं के फलों का प्रदान करने वाला होता है। ।४१-४३। उपदंश अर्थात् व्यंजन के सहित का एक बहुत बड़ा पिण्ड बनाकर रात्रि के समय में साधक जैसा उनका स्वरूप बताया गया है वैसे ही स्वरूप वाले क्षेत्रपाल का स्मरण करके हाथ में बलि देवे ।४४। इस बलि से परम सन्तुष्ट होकर क्षेत्रपाल कान्ति, वन, आरोग्य तेज पुष्टि, यश और श्री को प्रदान किया करते हैं। ४५।

उद्धरेद्वटुकं ङेऽन्तं आपुदुद्धारणं तथा ।
कुरुद्वयं पुनर्ङेऽन्तं वटुकान्तं समुद्धरेत् ।४६
एकविंशत्यक्षरात्मा शक्ति द्धो महामनुः ।
अभीष्टफलसंसिद्धयै कीर्तितः सुरपादपः ।४७
बृहदारण्यक ऋषिश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
आपदुद्धारणो देवो भैरवो देवता बुधैः ।४८
अङ्गुलीदेहवक्त्रेषु मूर्तीर्न्यस्येद्यथापुरा ।
सद्यादिपञ्चाह्रस्वाढयशक्तिबीजपुरः सरम् ।४९
बकारं पञ्चह्रस्वाढयमीशानादिषु योजयेत् ।
षड्दीर्घयुक्तया शक्त्या वकारेण च तद्वता ।५०

अङ्गानि जातियुक्तानि प्रणवाद्यानि कल्पयेत् ।
तस्य ध्यानं त्रिधा प्रोक्तं सात्विकादिविभेदतः ।५१

अब आपदुद्धारण मन्त्र बतलाया जाता है चतुर्थी विभक्ति के अन्त वाले वटुक' का उद्धार करे फिर आपदुद्धारण'—इस पद को कहे । फिर दो वार 'कुरु'—उस पद को कहे । फिर चतुर्थ्यंन वटुकान्त का उद्धार करे ।४६। यह महामन्त्र शक्ति से रुद्ध इक्कीस अक्षरों वाला होता है । यह मन्त्र मनोभीप्सित फल की सिद्धि के लिये सुरपादप अर्थात् कल्पवृक्ष कहा गया है—कल्पवृक्ष का यह प्रभाव होता है कि उसके सामने जो भी व्यक्ति मन में सोचता है वही सिद्ध हो जाया करता है । ऐसा ही इस मन्त्र का प्रभाव होता है ।४७। इस मन्त्र का वृहदारण्यक ऋषि है और इसका छन्द अनुष्टुप् कहा गया है । बुधों के द्वारा इनका देवता आपदुद्धारण भैरव कहा गया है ।४८। पूर्व की तरह अङ्गुली—देह मुख के द्वारा इसकी मूर्त्तियों का न्यास करना चाहिये । सद्यादि पाँच ह्रस्वों से आढय शक्ति वीज के पूर्वक पञ्चह्रस्वाढ्य वकार को ईशान आदि में योजित करे । षड् दीर्घो से युक्त शक्ति से और वैसे ही वकार से प्रणवाद्य जाति युक्त षट् अङ्गों की कल्पना करनी चाहिये । सात्विक आदि भेदों से उसका ध्यान भी तीन प्रकार का कहा गया है ।४९-५१।

वन्देवालं स्फटिकसदृशं कुन्तलोल्लासिवक्त्रम् ।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किंकिणीनूराद्यैः ।
दीप्ताकारं विशदवसनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रम् ।
हस्ताब्जाभ्यां बटुकमनिशं शूलदण्ठौ दधानम् ।५२
उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरास्रजम् ।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः ।
नीलग्रीवमुदारभूषणशतं शीतांशुचूडोज्वलं
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ।५३

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेश
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं डमरुमयश्रृणि खङ्गपाश शूलाऽभयानि
नाग घटाङ्कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रम् ।
सर्वाकल्प त्रिनेत्रं मणिमयविलसत्किंकिणीनुपुराढयम् ।५४
सात्विकं ध्यानमाख्यातमयमृत्युनिवारणम् ।
आयुरारोग्यजननमपवर्गफलप्रदम् ।५५

अब क्रम से तीनों ध्यानों को बतलाया जाता है -स्फटिक के सदृश-केशों से शोभित मुख वाले नौरत्नों से परिपूर्ण दिव्य आभरणों से और किंकणी नूपुर आदि से भूषित-दीप्त आकार वाले-स्वच्छ एवं विशाल वस्त्रों से संयुक्त-परम प्रसन्न-तीन नेत्रों से युक्त कर कमलों के द्वारा शूल और दण्ड को धारण करने वाले वटुक की निरन्तर वन्दना करता हूं ।५२। उदीवभान भुवन भास्कर के समान प्रभा से समन्वित-तीन नेत्रों से युक्त-रत अंगराग और माला धारण करने वाले—हास्य युक्त मुख से अन्वित—वरदान दाता करों द्वारा कपाल-अभयदान और शूल को धारण करने वाले—नील ग्रीवा से युक्त-उत्तम सैंकड़ों भूषणों से विभूषित-चन्द्र से समुज्ज्वल चूडा वाले-बन्धूक पुष्प के तुल्य अरुण वस्त्रों को पहिने हुये-भयके हरने वाले देवकी सदा भावना करता हूँ ।५३। नीलगिरिके समान कान्त चन्द्र के खण्ड को धारण करने वाले-मुण्डों की माला पहिने हुये-दिशाओं के वस्त्र वाले-पिङ्ग वर्ण के केशों से अन्वित-कर कमलों के द्वारा डमरू-श्रृणि खङ्ग-पाश् अभयदान-नाग-घण्टा— कपाल को धारण करने वाले भीषण दाढोंसे युक्त-सर्पोके भूषणों से भूषि-तीन नेत्रों से युक्त मणियों से पूर्ण एवं शोभित किंकिणी और नूपुरों से आढ्य महेश का ध्यान करना चाहिये ।५४। यह सात्विक ध्यान अपमृत्यु का निवारक कहा है और आयु तथा आरोग्य का जनम और अपवर्गके फल का होता है ।५५।

राजसन्ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थसिद्धिदम् ।
तामस शत्रुशमन कृत्याभूतग्रहा (गदा) पहम् ।।५६
वर्णलक्ष जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रयः ।
तद्दशांश प्रजुहुयात्तिलैर्मधुरसंयुतैः ।।५७
धर्माधर्मादिभिः क्लप्ते पीठे पङ्कज शोभिते।
षट्कोणान्तस्त्रि कोणस्थव्योम पङ्कजसंयुते ।।५८
वटुक तजयेद्देवं मूर्ति मूलेन कल्पयेत् ।
सद्योजातेन मन्त्रेण देवमावाहयेत्ततः ।।५९
मूलादिवामदेवेन स्थापयेत्परमेश्वरं।
मूलमन्त्रेण कर्त्तव्यं सान्निध्यं तदनन्तरम् ।६०

दूसरा राजस ध्यान है। यह धर्म--काम और अर्थ की सिद्धि का प्रदाता होता है, ऐसा कहा गया है। तीसरा तामस ध्यान है। यह शत्रुओं के शमन करने वाला होता है ओर कृत्या, भूत, महाग्रहों के अवहनन करने वाला है।५६। इस मन्त्र में जितने वर्ण है उतने ही लाख इस मन्त्र का जप करना चाहिये और जप करने वाले व्यक्ति को हविष्य का अशन करने वाला तथा इन्द्रियों को जीतकर रखने वाला होना चाहिए। जप का दशवां भाग मन्त्र द्वारा मधुरों से संयुत तिलों के द्वारा हवन करे। धर्माधर्मादि से क्लप्त पर जो पंकजों से शोभित होवे और जो षट्कोण के अन्दर स्थित त्रिकोण में स्थित व्योम पंकजों से संयुत होवे।५७-५८। उस पीठपर बटुक देव की पूजा करे और मूल मन्त्र के द्वारा ही मूर्त्ति की कल्पना कर लेनी चाहिए। फिर सद्योजात मन्त्र के द्वारा देव का आवाहन करे।५९। मूलादि वामदेव के द्वारा परमेश्वर की स्थापना करनी चाहिए। इसके अनन्तर मूलमन्त्र से सान्निध्य करे।६०।

अघोरेण सुधीः कुर्यात्सन्निरोधमनन्तरम्।
तुरुषाख्येन मनुना योनिमुद्रां प्रदर्शयेत् ।६१

देवाय वन्दन कुर्यादीशानेन समाहितः ।
एतत्सर्वं विधातव्यं तत्तन्मुद्राभिरादरात् ।६२
ईशानादीन्यजेद्देवान्यासमार्गेण देशिकः ।
सकलीकरणं कृत्वा यजेन्मूर्त्तीर्यथापुरा ।६३
व्योमपद्मदलेष्वर्चेदसिताङ्गादिभैरवान् ।
असिताङ्गं रुरुं चण्डं क्रोधमुन्मत्तभैरवम् ।६४
कपालिनं भीषणाख्यं संहारं च क्रमादमन् ।
षट् कोणेषु षड ङ्गानि क्रमादभ्यर्चयेत्सुधीः ।६५

सुधी को चाहिए कि वह अघोर मन्त्र से इसके अनन्तर सन्निरोध करे। पुरुषाख्य मन्त्र के द्वारा योनि मुद्रा को प्रदर्शित करे ।६१। फिर परम सावधान होकर ईशान के द्वारा देव के लिए वन्दना करनी चाहिए। यह सभी कुछ बड़े आदर के साथ उस-उस मुद्रा के द्वारा ही करना चाहिए ।६२। आचार्य ईशान आदि देवों का न्यास के मार्ग द्वारा यजन करे। सकलीकरण करके पूर्व की ही तरह से मूर्त्तियों का अभ्यर्चन करे ।६३। व्योम पद्म दलों में असिताङ्गादि भैरवों का-अर्चन करना चाहिये। अब उन भैरवों का नामों का परिगणन करके-बताया जाता है—असिताङ्ग--रुद्र—चण्ड—क्रोध—उन्मत भैरव—कपाली—भीषण और संहार—इनका क्रम से ही अर्चन करना चाहिए यह सुधी का कर्त्तव्य है। षट् कोणों में क्रम से छै अङ्गों का अर्चन करे ।६४।६५।

पूर्वादीशानपर्यन्तं तद्बहिः पूजयेदिमान् ।
डाकिनीपुत्रकान्पूर्वं राकिनीपुत्रकांस्ततः ।६६
लाकिनीपुत्रकान्पश्चात्काकिनीपुत्रकास्ततः ।
शाकिनीपुत्रकान्भूयो हाकिनीपुत्रकान्पुनः ।६७
मालिनीपुत्रकान्पश्चाद्देवीपुत्रांस्ततः परम् ।
अथोमारुद्रमातॄणां पुत्रान्दक्षिणतोयजेत् ।६८

ऊर्ध्वमुख्याः सुतानूर्ध्वमधोमुख्याः सुतानधः ।
इति सम्पूजयेन्मन्त्री पुत्रवर्गा स्त्रयोदशः ।६९
तद्वहिः पद्मपत्रेषु लोकेशवटुकान्यजेत् ।
ब्रह्माणिपुत्रकं पूर्वे माहेशीपुत्रमैश्वरे ।७०

पूर्व दिशा में ईशान पर्यन्त उनके बाहर इनका पूजन करना चाहिये–पूर्व में डाकिनी पुत्रों का–फिर डाकिनी पुत्रों का—पीछे लाकिनी पुत्रों का--इनके अनन्तर काकिनी के पुत्रों का, शाकिनी के पुत्रों का, फिर हाकिनी के पुत्रों का फिर मालिनी के पुत्रों का। इसके अनन्तर देवों के पुत्रों का--इसके उपरान्त उमा रुद्र मातृकायों के पुत्रों का दक्षिण की ओर यजन करना चाहिये ।६६-६८। ऊर्ध्व में मुख्व सुतो का ऊर्ध्व में और अधोमुख्य सुतों का अधोभाग में इस तरह से मन्त्रधारी को इन तेरह पुत्र वर्गों का अच्छी तरह से पूजन करना चाहिये ।६९। इनके बाहरी भागों में पद्म के पत्रों में लोकों के ईश वटुकों का यजन करना चाहिये । पूर्व दिशा में ब्राह्मणी पुत्र का अर्चन करे और ईश्वर की दिशा मे माहेशी के पुत्रों का अर्चन करना चाहिये ।७०।

वैष्णवीपुत्रक सौम्ये कौमारीपुत्रमानिले ।
इन्द्राणीपुत्रकं भूयः पूजयेत्पश्चिमे तमः ।७१
महायक्ष्मीसुतं पश्चाद्रक्षोदिशि समर्चयेत् ।
बाराहीपुत्रकं याम्ये चामुण्डासुतमानले ।७२
वटुकान्दशदिक्ष्यर्चेद्धेनुक त्रिपुरान्तकम् ।
बेताल बह्निजिह्वाख्यं कालान्ताख्य करालकम् ।७३
एकपादं भीम दष्ट्रमचलं हाटकेश्वरम् ।
दिग्विदिक्ष्वन्तरालेषु श्रीकण्ठान्‍ जेत्पुनः ।७४
क्रोधीश्वरादीनवृग्वन्तांस्तद्वद्बाह्ये समर्चयेत् ।
ततस्त्रीन्नकुलीशाद्यान्दक्षिणे पूजयेत्सुधीः ।७५

वैष्णवीके पुत्र का सौम्य दिशा में और कौमारी पुत्र का वायव्य में यजन करे। इसके उपरान्त इन्द्राणी के पुत्र का पश्चिम दिशा में पूजन करना चाहिये।७१। राक्षस दिशा में पीछे महालक्ष्मीके पुत्र का समर्चन करे। याक्ष्य दिशा में बाराही के पुत्र का तथा आनिल दिशा में सुत का यजन करना चाहिये।७२। वटुकों का दशों दिशाओं में अर्चन करे। धेनुक-त्रिपुरान्तकवेताल वह्नि जिह्वाख्य, कालान्त, करालक पाद, भीमदंष्ट्र, अचल, हाटकेश्वर का दिशा, विदिशाओं के अन्तरालों में यजन करे और फिर श्रीकण्ठ आद का अर्चन करे। इनके बाहिरी भाग में क्रोधीश्वर से आदि भृगु के अन्त तक का समर्चन करना चाहिये। ७४-७५। इस के अनन्तर सुधी पुरुष दक्षिण में तीन नकुलीशाद्यों का पूजन करे। ७८।

दिव्यन्तरिक्षभूमिष्ठान्योगीशान् शक्तिसंयुतान्।
योगिनीभिः सहाभ्यर्चेदीशाग्निऋ तिस्थितान्।७६
इति सम्पूज्योद्देव वटुकं प्रोक्तवर्त्मना।
धमार्थकाममोक्षाणां पतिर्भवति मानवः।७७
विघ्नदुर्गा समाराध्य बलिं दत्वा विधानतः।
काम्यामि साधयेन्मन्त्रा यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात्।७८
शाल्यन्नं पलरुं सर्पिर्लाजाचूर्णानि शर्करा।
गुडमिक्षुरसापूपर्मध्वक्तैः परिमिश्रितैः।७९
कृत्वा कवलमाराध्य देवं प्रागुक्तवर्त्मना।
रक्तचन्दनपुष्पाद्यैनिशि तस्मै बलिं हरेत्।८०

ईशान-निर्ऋति, अग्नि दिशाओं में स्थित दिविलोक और भूमि में स्थित शक्ति से समन्वित योगीशों का योगिनियों के ही साथ में अभ्यर्चन करना चाहिये।७६। इस प्रकार से कथित मार्ग के द्वारा वटुक देव का पूजन करे। इसके प्रभाव से मानव धर्म--अर्थ--काम--और मोक्ष का स्वामी हो जाता है। अर्थात् ये सभी उसे आसानीसे प्राप्त हो जाते हैं।७७। विघ्न दुर्गा का समाराधन करके विधान के

साथ बलि देवे। इसका यह प्रभाव होता है कि मन्त्रधारी पुरुष अपने काम्य कर्मों का साधनकर लिया करताहै और यथोक्त सिद्धि की प्राप्ति कर लिया करता है।७८। शाली अन्न–पलल—घृत लाजाओं का चूर्ण ––शक्कर—–गुण – ईख का रस और पूजा–इन सबको मधु में अक्त करके परिमिश्रित करके कवल बनावे और पूर्व में कथित मार्ग से देव का समाराधन करके रदत चन्दन पुष्प आदि के द्वारा रात्रि में उन के लिए बलि का आहरण करना चाहिए।७६-८०।

ततः सिध्यन्ति कार्याणि बलिनानेन मन्त्रिणः।
जुहुयात्सर्पिषा मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात् ।८१
वश्याय जुहुयादिक्षुशकलैर्वशयेज्जनान् ।
जुहुयात्पुत्रलाभाय प्रफुल्लैः कैरवैः सुधीः ।८२
धनधान्यादिसम्पत्त्यै जुहुयादिलतण्डलैः ।
विल्वप्रसूनैर्जुहुयान्महतीं बिन्दति श्रियम् ।८३
लोणैर्मधुरसम्मिश्रैर्वशयद्वनिताजनान् ।
वृष्टिकामेन होतव्यं वेतसानां (सस्य) समिद्वरैः ।८४
अन्नेन जुहुयान्नित्यं धनधान्यादिसम्पदे ।
वश्याय जुहुयान्मन्त्री मधुना दिवसत्रतम् ।८५

इसके उपरान्त मन्त्रधारी के इस बलि के करने से समस्त कार्य सिद्ध हो जाते हैं। मन्त्रधारी घृत से होम करे तो यथोक्त सिद्धि को प्राप्त कर लिया करता है।८१। वश्य के लिए ईख के खण्डों से होम करे तो वह सभी मनुष्यों को अपने वंश में कर लिया करता है। सुधी पुरुष को पुत्र के लाभ के लिए खिले हुए कैरव के पुष्पों से होम करना चाहिए।८२। धनधान्य आदि की सम्पदा के प्राप्त होने के लिए तण्डुलों से होम करना चाहिए। यदि विल्व वृक्ष के पुष्पों से हवन करे तो वहुत वड़ी श्री का लाभ मनुष्य किया करता है।८३। मधुर से सम्मिश्रित लवणों से यदि होम करे तो वनिताजनों को अपने वश में कर लिया करता है। यदि वृष्टि कराने की कामना हो तो

वेतसों की श्रेष्ठ समिधाओं के द्वारा हवन करे ।८४। धनधान्य आदि की सम्पदा के लिए अन्न के द्वारा ही नित्य होम करना चाहिए । मन्त्रधारी को चाहिए कि वश्य करने के लिए तीन दिन पर्यन्त मधु से होम करे ।८५।

रोगोक्तौषधहोमेन रोमा नश्यन्ति तत्क्षणात् ।
कृत्याद्रोहे ग्रहे द्रोहे भूतापस्मारसम्भवे ।८६
व्याघ्राजिने समासीनोजुहुयादयुतं तिलैः ।
भतादयः पलायन्ते नेक्षन्ते तां दिशं भयात् ।८७
कृष्णाष्टमी समारभ्य यावत् स्यात्तच्चतुर्दशी ।
तिलैस्तण्डुलसम्मिश्रैमधुरत्रयलोलितैः ।८८
त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जुहुयात्संस्कृतेऽनले ।
बटुकेश्वरमभ्यर्च्य भक्ष्यभोज्यफलान्वितम् ।८९
नित्यं निवेद्य नैवेद्यं मध्यरात्रे बलि हरेत् ।
एवं जपित्वा प्रयतः सहस्राण्येकविंशतिम् ।९०
समाप्तिदिवसे नात्रावज हत्वा बलि हरेत् ।
ततः कारयिता राजा तोषयेत्साधकं धनैः ।९१
विधिनानेन सन्तुष्टो बटुकेशः प्रयच्छति ।
तेजो बल यशः पुत्रान्कान्ति लक्ष्मीमरोगताम् ।९२

रोग में कही हुई औषध के होम करने से रोग उसी क्षण में नष्ट हो जाया करते हैं । कृत्या के द्रोह में–ग्रहों के द्रोह में–भूतों और अपस्मार के समुत्पन्न होने पर व्याघ्रचर्म पर स्थित होकर तिलों के द्वारा दश सहस्र आहुतियाँ देवे । इस होम के करने से भूत आदि सब भाग जाया करते है और उस दिशा की ओर भय से देखते भी नहीं हैं ।८६-८७। मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी से आरम्भ करके जब तक चतुर्दशी होवे तीनों मधुरों में लोलित करके तन्डुलों से मिश्रित तिलों से हवन करे और प्रतिदिन तीन सहस्र आहुतियाँ देवे तथा संस्कार किये हुये अग्नि में ही होम करना चाहिये । बटुकेश्वर का

अभ्यर्चन करके भक्ष्य भोज्य और फलों से समन्वित नैवेद्य का नित्य निवेदन करके रात्रि के मध्य में बलि का अपहरण करे । इस प्रकार से प्रयत होकर इक्कीस हजार जप करे और समाप्ति के दिन में रात्रि में बकरा का हनन करके बलि का अपहरण करे । राजा इस तरह इसे कराकर धनों के द्वारा साधक पुरुष की सन्तुष्ट करे । इस विधि से करने पर वटुकेश परम सन्तुष्ट होकर तेज, बल, यश, पुत्रगण, कान्ति, लक्ष्मी और निरोगता को प्रदान किया करते हैं ।८६-६२।

नश्यन्ति शत्रवः सर्वे वर्द्धन्ते बन्धुबान्धवाः ।
अवग्रहो न जायेत विषये तस्य भूपतेः ९३
जुहुयात्केवलैर्लोणैरयुतं स्तम्भनेच्छया ।
निगडादिविमोक्षाय प्रयोगोऽयमुदाहृतः ।९४
बचाचूर्णपलं जप्तं गव्येनाज्येन लोलितम् ।
त्रिभज्य भक्षयेद्वन्ध्या मण्डलात्पुत्रकांक्षिणी ।९५
विनीत पुत्रमाप्नोति मेधाऽऽरोग्यबलान्वितम् ।
आदावन्ते प्रयोगस्य वटुकाय बलि हरेत् ।९६
द्विविधो बलिराख्यातो राजसः सात्विको बुधैः ।
राजसो मांसरक्ताढ्यः पलत्रयसमन्वितः ।९७

उसके सभी शत्रुगण नष्ट हो जाया करते हैं और उसके वन्धु-बान्धवों की वृद्धि होती है । उस राजा के देश में अवग्रह नहीं हुआ करता है ।९२। यदि किसी के स्तम्भन करने की इच्छा हो तो केवल लोण से दश सहस्र आहुतियां देनी चाहिये । बन्धन आदि के विमोक्षण करने के लिये यह प्रयोग उदाहृत किया गया है ।९४। वच के चूर्ण को गौ के घृत में लोलित करके एक पल प्रमाण को अभिमन्त्रित करे । फिर इसको विभक्त करके वन्ध्या नारी खावे । जो मण्डल से पुत्र की प्राप्ति आकांक्षा रखने वाली होवे तो यह नारी परम विनीत पुत्र को किया करती है, जो मेधा—आरोग्य और बल से अन्वित हुआ करता। आदि में और अन्त में प्रयोग करने पर वटुक के लिये बलि का

आहरण करना चाहिये ।९४-९५। बुध पुरुषों के द्वारा दो प्रकार का बलि बताया है। एक सात्विक होता है और दूसरा राजस बलि हुआ करता है। जो राजस बलि होता है वह रक्त-माँस से अन्वित होता है और तीन फलों से युक्त होता है ।९७।

मुद्गपायससंयुक्तो मधुरत्रयलोलितः ।
सात्त्रिको मांसरहितः शेषमन्यत्पुरोक्तवत् ।९८
ब्राह्मणो विनयः शुद्धः सात्विकं बलिमाहरेत् ।
साधयन्मनुनाने भस्म सर्वार्थसिद्धिदम् ।९९
उशीर चन्दनं कोष्ठ घनसारं सकुंकुमम् ।
श्वेतार्कमूलं वाराहीं लक्ष्मी क्षीरमहीरुहाम् ।१००
त्वचो बिल्वतरोर्मूलं शोषयित्वा सुचूर्णयेत् ।
चूर्णं व्योम्नि गृहीतेन गोमयेन विमिश्रिम् ।१०१
कृत्वा पिण्डानि संशोष्य संस्कृते हव्यवाहने ।
मूलेन दग्ध्वा तद्भस्म शुद्धपात्रे वनिःक्षिपेव ।१०२

जो सात्विक बलि होता है वह मूँग व पायस से संयक्त और मधुर त्रय में लोलित होता है। सात्विक बलि माँस से रहित होता है और शेष सब पूर्व में कहे हुये ही की भाँति हुआ करता है ।९८। विनय से युक्त और शुसे ब्राह्मण सात्विक बलि का ही आहरण करे। इस मन्त्र के द्वारा साधन करते हुआ जो भस्म होती है वह सब अर्थ और सिद्धि से प्रदान करने वाली हुआ करती है ।९९। अब भस्म के साधम का प्रकार बताया जाता है, शरीर, चन्दन, कुष्ठ, कपूर, कुंकुम, श्वेत आक का मूल, बाराही, लक्ष्मी, और दूध वाले वृक्षोंकी त्वचा (बल्कल) विल्व वृक्ष की जड़–इस सबको सुखाकर कूट-पीस कर चूर्ण बना लेवे। चूण को व्योम गृहीत कर गोमय से विमश्रित करे ।१००-१०१। उसके पिन्ड बनाकर सुखावे तथा संस्कार की हुई अग्नि में मूल-मन्त्र से जला कर उस भस्म को शुद्ध पात्र में विनिक्षिप्त कर देवे ।।१०२।

केतको मालती पुष्पैर्वासयेत् भस्म शोधितम् ।
अयुतं प्रजपेन्मन्त्र स्पृष्ट्वा भस्म सुपुजितम् ।१०३
एतदादाय दिनशः प्रातः पुण्ड्रं करोति यः ।
तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्यादोहमहाग्रहाः ।१०४
रिपुचौरमृगादिभ्यो भयमस्य न जायते ।
वर्द्धन्ते सम्पदः सर्वाः पूज्यते सकलैर्जनैः ।१०५
राजा वश्योमवेत्तस्य सामात्यः सपरिच्छदः ।
अभिषेकं प्रकुर्वीत राज्ञो विजयकांक्षिणः ।१०६
पूर्वोक्ते मण्डपे क्लृप्ते वितानध्वजशोभिते ।
सर्वतोभद्रमालिख्य कर्णिकां तस्य पूरयेत् ।१०७

उस शोभित भस्म को केतकी और मालतीके पुष्पोंसे वासित करे। उस भली भाँति पूजति भस्म का स्पर्श करके दश सहस्र की संख्या में मन्त्र का जप करना चाहिये ।१०३। इसको ग्रहण करके दिन में जो पुरुष प्रातःकाल में पुन्ड्र (तिलक) करता है उस पुरुषके सब रोग और कृत्या द्रोह तथा महान ग्रह सभी नष्ट हो जाया करते हैं ।१०४। शत्रु-चोर और हिंसक पशु आदि से भी इस पुरुष को कभी भी भय नहीं हुआ करता है। इस पुरुष की सभी सम्पदायें बढा करती हैं और यह पुरुष सभी जनों के द्वारा पूजा जाया करता है ।१०५। उस पुरुष का राजा अपने अमात्यों के सहित और सम्पूर्ण परिच्छद के साथ वश्य हो जाया करता है। जो राजा विजय की आकाङ्क्षा रखता हो उस राजा का अभिषेक करना चाहिये ।१०६। पूर्व में वर्णित मंडप में जो क्लृप्त किया गया है और वितान और ध्वजा पताओं से सुशोभित है इसमें सर्वतोभद्र का आलेखन करके उसकी कर्णिका को पूरित कर देना चाहिये ।१०७

अष्टद्रोणप्रमाणेन शालिभिः शोभितैः शुभ्रैः ।
तदर्द्धन्तण्डुलांस्तस्मिन्न्यस्य दूर्वाक्षतान्विताम् ।१०८

हेमादिविहितं कुम्भ नवरत्नसमन्वितम् ।
सस्थाप्य विपुलैस्तोयैरापूर्यास्मिन्विनिः क्षिपेत् ।१०९
क्षीरद्रुमग्रपल्लवानि लक्ष्मीदूर्वा सहां पुनः ।
कर्पूरं चन्दनं बिल्वमुशीरं कुंकुमं पुनः ।११०
कङ्कोलमगुरुं जातिं मल्लिकां चम्पकोत्पले ।
गोमेदं दाडिम पश्चात्पट्टयुग्मेन वेष्टयेत् ।१११
तस्मिन्नावाह्य वटुक राजसं सम्प्रपूजयेत् ।
बहिरष्टसु कुम्भेषु भैरवानष्टपूजयेत् ।११२

आधे द्रोण के परिमाण से ‐भ शोभित शालियों से जिसमें उनके आधे तडुल रक्खे जो दूर्वा और अक्षतों से समन्वित होवे । एक कुम्भ सुवर्ण आदि धातुओ से निर्मित्त कराकर उसे नौ प्रकार के रत्नों से समन्वित करे । उस कुम्भ को संस्थापित करके बहुत अधिक जल से आपूरित करके उसमें डाल देवे । उसमें निःक्षिप्त की जाने वाली वस्तुयें ये हैं—दूध वाले वृक्षो के पल्लभ, लक्ष्मी, दूर्वा, सहा, कपूर, चन्दन, बिम्व, उशीर, कुंकुम, कंकोल,,अगुरु जाति, मल्लिका चम्पक, उत्पल्न, गोमेद, दाडिम, इन सबका प्रक्षेप करना चाहिये । फिरदो पट्टो से वेष्ठित कर देवे ।१०८-१११। उसमें राजस वटुक का आवाहन करके भली भाँति पूजन करे । बाहर में जो आठ पत्र है उनमें आठों भैरवों का अर्चन करना चाहिये ।११२।

त्रयोदशसुकुम्भेषु त्रयोदश गणान्यजेत् ।
बाह्ये दशसुकुम्भेषु लोकेशानर्चयेत्सुधीः ।११३
तत्बहिर्द्व्यष्टकुम्भेषु श्रीकण्ठादीन्सुरेश्वरान् ।
पञ्चत्रिशत् घटेष्वर्चेत्कादिबर्णेश्वरान्कमात् ।११४
इति गन्धादिभिः समयक् पञ्चावरणमर्चयेत् ।
अयुत प्रजपेत्पृष्ट्वा तान्घटान्देशिकोत्तमः ।११५
पायसैः सर्पिषा शुद्धैस्तिलैर्दशशतं पृथक् ।
जुहुयात्तन्घन्स्पृष्ट्वा प्रत्यह्नं बलिमाहरेत् ।११८

राजसोक्तप्रकारेण रात्रौ देशिकसत्तमः ।
सुदिने शोभने लग्ने वाचयित्वा द्विजन्मभिः ।११९
स्वस्तिमङ्गलवाक्यानि विशुद्धैर्वेदपारगैः ।
नदत्सुपञ्चवाद्येषु प्रणम्य बटुकेश्वरम् ।१२०
जितेन्द्रियं शुद्धकायं राजानं ब्राह्मणप्रियम् ।
आस्तिकं सत्यवचनमभिषिञ्चेत्प्रसन्नधीः ।१२१

तेरह सुन्दर कुम्भों में तेरह गणों का अर्चन करे । बाह्य भाग में दश कुम्भों में सुधी पुरुष लोकेशों का पूजन करे ।१३३। उनके बाहिर आठ कुम्भों में श्रीकण्ठ आदि सुरेश्वरों का यजन करे । पैंतीस घंटों में क्रम से आदि वर्णों के ईश्वरों का अर्चन करना चाहिये ।११४। इन रीति से गन्ध आदि उपचारों के द्वारा अच्छी तरह से पञ्चावरण की पजा करे । उत्तम आचार्य को चाहिये कि वह उन सब घटों का स्पर्श करके दश सहस्र मन्त्र का जप करे ।११५। पायस, घृत, शुद्ध तिल इनसे पृथक् उन घटों का स्पर्श करके दश शत होम करना चाहिये और प्रतिदिन वलि का आहरण करे ।११७-११८। राजस में कहे हुये प्रकार से आचार्यों में परम श्रेष्ठ रात्रि के समय में सुन्दर दिन में और शोभन लग्न में द्विजों के द्वारा स्वस्ति वाचन और पुण्याह वाचन आदि मङ्गल वाक्यों का वाचन करावे । किन्तु ब्राह्मण विशुद्ध और वेदों के पारगामी विद्वान् होने चाहिये । पाँचों प्रकार के वाद्यों के वजाये जाने पर वटु केश्वर को प्रणाम करे । फिर जिसमें इन्द्रियों को जीत लिया हो ब्राह्मणों पर प्यार करने वाला हो--शुद्ध शरीर वाला हो ऐसे राजा का जो आस्तिक--सत्यवादी होवे उसका प्रसन्न बुद्धि वाला पुरुष अभिषेक करे । ११९-१२१।

अभिषिक्तोनरपतिः प्रणिपत्य गुरुं परम् ।
भूयसीं दक्षिणां दद्यात्प्रसीदति यथा गुरुः ।१२२
राजाभिषक्तो भवति साक्षाद्भूमिपुरन्दरः ।
परान्विजयते भूपान्स्तूयते सकलैर्जनैः ।१२३

कृत्वाभिषेकं षणमासं प्रतिमासं महोपतिः ।
चतुरम्भोघिवलयां शास्ति सर्वा वसुन्धराम् ।१२४
गजाश्वशान्तिविधये तेष शालासु साधकः ।
कुण्ड कृत्वा विधानेनं होम कर्याद्यथाविधि ।१२५
पायसाज्यतिलै विद्वानयुतत्रियावधि ।
ब्राह्मणान्भोजयेन्नित्यं भक्ष्यभोज्यफलादिभिः ।१२६

अभिषेक किया हुआ राजा परम गुरुको प्रणाम करके वहुत ज्यादा दक्षिणादेवे जिसमे गुरुदेव प्रसन्न होवें।१२२। अभिषेक किया हुआ राजा साक्षात् भूति का इन्द्र हो जाता है। वह फिर दूसरे राजाओं पर विजय प्राप्त किया करता है और समस्त जलों के द्वारा स्तुत हुआ करता है ।१२३। राजा छै मास पर्यन्त प्रति मास में अभिषेक करके चार महासागरों के वलय वाली अर्थात् आसमुद्रान्त सम्पूर्ण वसुन्धरा पर शासन किया जाता है ।१२४। गजों, अश्वोंकी शान्ति की विधि के लिये साधक उनकी शालाओं में विधि-विधान से कुण्ड की रचना करके विधि के साथ होम करे ।१२५। विद्वान् पुरुष पायस-घृत और तिलों के द्वारा आयुतों की अवधि तक अर्थात् तीस हजार तक होम करे। नित्य ही भक्ष्य-भोज्य और फलादि के द्वारा ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिये ।१२६।

प्राक् प्रोक्तविधिना कुम्भान्स्थापयित्वात्र देशिकाः ।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यै स्तज्जलैः प्रोक्षयेद्गजान् ।१२७
अश्वशालामनेनै, वर्द्धन्ते दिने दिने ।
युद्धेषु महती शक्तिर्जा ते पूवतोऽधिका ।१२८
सर्वेरोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहाः परैः कृताः ।
अस्मात्परतरारा रक्षा नास्ति तेषा महीतले ।१२९
अभिषिच्य महीपालं परेषां विजयोद्यतम् ।
उक्तेन विधिना मन्त्रो यामिन्यां वलिमाहरेत् ।१३०
अन्यूनाङ्गमजं हत्वा राजसं प्रागुदाहृतम् ।
वलिप्रदानसमरे रिपूणा सर्वसैन्यकम् ।१३१

निवेदयेद्वलित्वेन बटुकाय: विशिष्टधीं: ।
विदर्भयेच्छत्रुनाम्ना बलिमन्त्रं तथा सुधी:।१३२

आचार्य प्राक् प्रोक्त विधि से यहाँ पर कुम्भों की स्थापना करके उनके जल से गजों का प्रोक्षण करना चाहिये ।१२७। इसी विधि से इसके ही द्वारा अश्वशाला का भी प्रोक्षिण करेतो वे गज और अश्व दिन पर दिन वृद्धि को प्राप्त ही जाया करते हैं । पूर्वसे भी कहीं अधिक इनकी युद्धों में बड़ी भारी शक्ति हो जाया करती है ।१२८। सभी रोगों का विनाश हो जाया करता है और कृत्या द्रोह जो अन्यों के द्वारा किये गये हैं उन सबका भी नाश हो जाता है । उनकी रक्षा इससे बड़ी कोई भी यही-तल में नहीं है ।१२९। उनकी सुरक्षा का यही सर्वोत्तम साधन होता है । जो राजा अपने-अपने शत्रुओं पर बिजय प्राप्त करने के लिये समुद्यत है उस नरपति का अभिषेक करके मन्त्रधारी पूर्वमें वर्णित विधि से यामिनी में बलि का अपहरण करे ।१३०। अन्यून अङ्गों वाले अजका हवन करके पहिले राजस कहा गया है । बलि के दान के समय में सम्पूर्ण सेना को वटुक के लिये बलि के रूप में विशिष्ट बुद्धि वाले की निवेदन करना चाहिये ।१३१। तथा शत्र के नाम से सुधी वाले मन्त्र को पढ़े और बलि का आहरण करे ।१३२।

शत्रुपक्षस्य रुधिर पिशितं च दिने दिने ।
भक्षय: स्वग्गणै: सार्द्धं सारमेय समन्वित: ।
बलिबन्त्रोऽयमाख्यात: शर्वषां विजयप्रद: ।
अनेन बलिना हृष्टा वटुक: परसैन्यकम् ।१३१
सर्वं गणेभ्यो विभजेमामिषं क्रुद्रमानस: ।
एवं कृते प१कुलं क्षीयते नात्र संशय: ।१३४
विजयश्रियमेतेन राजा प्राप्नोत्ययत्नत: ।१३५

आये दिन शत्रु के पक्ष वालों के रुधिर और मांस को अपने गणोंके साथ तथा सारमेयों से समन्वित होकर भक्षण करो । इस प्रकार से अभिमंत्रित यह विधान रात्रिमें करे तो विजयके प्रदान करने वाला हुआ

करता है। इस मन्त्र के द्वारा दिये हुए बलिसे भगवान् वटुक देव परम प्रसन्न होते हुये शत्रु की सेना के सैनिकों के मास को अपने समस्त गणों के लिये क्रुद्ध मन वाले होकर विभक्त कर दिया करते हैं। ऐसा करने पर शत्रु का बल अवश्य ही क्षीण हो जाया करता है—इससे कुछ भी संशय नहीं है।१३४। इस प्रयोग के द्वारा राजा विजय प्राप्त करने की श्री को अवश्य ही प्राप्त कर लिया करता है अर्थात् राजा को विजय निश्चित रूप से हुआ करती है और उसके प्राप्त करने में कुछ भी अन्य यत्न नहीं करना पड़ता है अर्थात् कुछ भी उपाय न करने पर भी विजय हो जाती है।१३५।

श्रीमायास्मरकूटमंत्रविलिखेन्मध्यं दलेष्वष्टस्
द्विः-प्रोक्त बटुकाय शब्दमपान्मन्त्रस्य वर्णान्बहिः।
अष्टद्वन्द्वदलेषु तद्बहिरधस्तत्संख्यपत्रेष्वथ।
द्वात्रिंशद्दलकादिशान्तसहितं यन्त्रं लिखेद्भूपुरे।१३६
आपदुद्धारणं यन्त्रमपमृत्युभयापहम्।
सर्वसम्पत्प्रदं नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम्।१३७
रक्षाकर ग्रहार्तानां राज्ञां विजयवर्द्धनम्।
आपदुद्धारणादस्मादापदुद्धारणक्षमः।१३८

अब यन्त्र विशेष बतलाया जाता है अर्थात् श्री बीज, माया-शक्ति का बीज, स्मर अर्थात् कामदेव—क्ली, बीज, कूट-क्रौं, मध्य में अर्थात् कर्णिका में लिखना चाहिये। दो बार कहा हुआ वटुकाय'—यह शब्द लिखे, आठ दलों में बाहर मन्त्र के दूसरे वर्णो को लिखना चाहिये। दो आठ दलों में उनके बाहिर और नीचे उतनी ही संख्या वाले पत्रों में लिखे। बत्तीस दलों के आदि वाले सान्त के सहित लिखे और भूपुर का लेखन करके मन्त्र की रचना करनी चाहिये।१३६। यह मन्त्र आपदाओं का उद्धरण है अर्थात् आपदाओं से रक्षा करने वाला होता है और अपमृत्यु अर्थात् बुरी रीति से होने वाली मौत के भय को दूर भगा देने वाला होता है। यह मन्त्र नित्य ही सब प्रकार की सम्प-

दाओं के प्रदान करने वाले हैं और सभी तरह के सौभाग्य का भी देने वाला होता है ।१३७। जो पुरुष ग्रहोंके द्वारा किये हुये उपद्रवों से आर्त्त अर्थात् पीड़ित होते हैं उनकी रक्षा करने वाला होता है। यह यन्त्र राजाओं के लिये विजय के वर्द्धन करने वाला करता है। इस तरह से आपदाओं के उद्धारण करने के कारण वह मन्त्र आपदाओं को दूर करने में समर्थ हुआ करता है ।१३८।

तन्त्रेष नास्ति मन्त्रोऽन्य इत्याहुर्मन्त्रवेदिमः ।
अर्धीशोवह्निशिखरोलान्तस्थो दान्त ईरितः ।१३९
फठन्तश्चण्डमन्त्रोऽयं त्रिवर्णात्मा समीरितः ।
अस्य त्रिको मुनिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।१४०
चण्डेशो देवता प्रोक्ता कुर्यादङ्गविधि पुनः ।
हृदयं दीप्नफट् प्रोक्तं ज्वलफट् शिर ईरितम् ।१४१
शिखा ज्वालामालिनी फट् ज्ञेया, फट् कवचं मतम् ।
हनफट् नेत्रमाख्यातं मर्वज्वालिनि फट् परम् ।१४२
विन्यस्यैवं षडङ्गानि ततोदेवं विचिन्तयेत् ।१४३

मन्त्रों के ज्ञान रखने वाले विद्वान् यही कहा करते है कि तन्त्र शास्त्रों में इससे बड़ा अन्य कोई भी यन्त्र नहीं है और न इसको समानता रखने वाला कोई दूसरा मन्त्र है। अब खण्ड मन्त्र बताया जाता है, अर्धीश, ऊ, दान्त, घः, वह्निशिखर, ध्व, लान्तस्थ, दान्त कहा गया है। इसके अन्त से 'फट्—यह शब्द होता है। यह मन्त्र तीन वर्णोंके स्वरूप वाला कहा गया गया है ।इस मन्त्र को ऋषि त्रिक कहा गया है और इसका छन्द अनुष्टुप् बताया गयाहै ।१३९-१४०। इस मन्त्र का देवता खण्डेश कहा गया है। फिर इसके अङ्गों की विधि की करना चाहिये। इसका हृदय दीप्त फट् कहा गया है और ज्वल फट् इसका शिर कहा गया है ।१४१। ज्वालामालिनी फट्-इसकी शिखा जाननी चाहिये और फट् यह इसका कवच बताया है। हस फट्-यह नेत्र कहा है और सर्व ज्वालिनि फट् परम है ।१४२। इस रीतिसे इसके

षट् अङ्गों का विन्यास करके इसके पश्चात् निम्न प्रकार से देव का चिन्तन करना चाहिये ।१४३।

चण्डेश्वरं रक्तनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढयं हृदि भावयामि ।
टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रतमिन्दुचण्डम् ।१४४
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमं कुर्यद्दशांशतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तैर्विशुद्धैस्तिलतण्डुलैः ।१४५
पञ्चाक्षरोदिते पीठे चन्डेशं साधु पूजयेत् ।
मूर्त्तौ बीजेनं क्लृप्तायः तत्क्रर्मो बिन्दुसयुतः ।१४६
चण्डेश्वराय हृद्बीलपूर्वः पूजामनुर्मतः ।
अङ्गैर्मातृभि राशेशं ज्राद्यैरायुधैर्यजेत् ।१४७
चतुरावरणं प्रोक्तं चन्डेशस्य समर्चनम् ।
इति सिद्धे मनौ मन्त्री धनवाञ्जायतेऽचिरात् ।१४८

अब ध्यान करने का प्रकार बतलाया जाता है–रक्त वर्ण के शरीर को धारण करने वाले–तीन नेत्रों से समन्वित–रक्त वर्ण वस्त्रों से आढ्य टङ्क--त्रिशूल--स्फटिकों की अक्ष माला--कमण्डल और चन्द्र के खण्ड को धारण करने वाले खण्डेश्वर को हृदय में भी भावना करता हूँ । अर्थात् अपने हृदय में ध्यान किया करता हूँ ।१४४। इस मन्त्र में जितने भी वर्ण है उतने ही लाख इस मन्त्र का जाप करना चाहिये और जो भी जप किया जावे उसके दशम भाग का मन्त्र के ही द्वारा होम करना चाहिये । हवन तीनों प्रकार के मधुरों से संयुक्त तिलों तथा तन्डुलों के द्वारा करे ।१४५। पाँच अक्षरों से उदित पीठ पर खन्डेश का भली-भाँति अर्चन करना चाहिए । बीज के द्वारा क्लृप्त मूर्त्ति में उसका विन्दु से संयुक्त कूर्म है ।१४६। खन्डेश्वरके लिये हृद् बीज पूर्व में रहने वाला इसकी पूजा का मन्त्र माना गया है । अङ्गों से मातृकाओं के द्वारा बज्र आदि आयुधों से यूक्त दिक्पालों का यजन करना चाहिए ।१४७। खन्डेश का समर्थन चार आवरणों से समन्वित कहा गया है । इस रीति से मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर मन्त्र

के धारण करने वाले पुरुष थोड़े ही समय में धनवान् हो जाया करता है ।१४८।

तर्पयेन्मनुनानेन नित्यमष्टोत्तरं शतम् ।
श्रियमाप्नोति महतीं पुत्रमित्रसमन्वितः ॥१४९
प्रियङ्गकुसुमैः फुल्लैस्तत्काष्टज्वलितेऽनले ।
जुध्यादयुत मन्त्री पुरक्षोभः प्रजायते ॥१५०
साध्यबृक्षत्विचो लोण पिष्ट्वा पिष्टसमन्वितम् ।
पुत्तलीं रुचिरां कृत्वा प्रतिष्ठाय समीरणम् ॥१५१

इसी मन्त्र के द्वारा मन्त्रधारी पुरुष को चाहिये कि नित्य ही देव का तर्पण किया करे । और एक सौ आठ बार तर्पण अवश्य ही करना चाहिये । इस तर्पण का यह प्रभाव होता है कि वह तर्पण करने वाला व्यक्ति अपने पुत्रों और मित्र मन्डलीके सहित वहुत बड़ी श्री की प्राप्ति का लाभ लिया करता है।४९। मन्त्र के धारण करने वाले पुरुष को प्रियङ्ग के काष्ठों के द्वारा प्रज्वलित किये हुये अग्निमें खिले हुये प्रियङ्ग के पुष्पों के द्वारा दश सहस्र बार हवन करना चाहिये । इससे पुरक्षोभ हो जाता है।१५०। साध्य वृक्ष की त्वचा अर्थात् उसका वल्कल और लोण इन दोनों को पीसकर पिष्ट से समन्वित करे । इसके द्वारा एक पुतली की रचना करनी चाहिये । यह पुतली परम सुन्दर बनानी चाहिये। इसकी रचना करके फिर उसमें शास्त्र की विधि के अनुसार प्राणों की प्रतिष्ठा करनी चाहिये १५१।

छित्वा छित्वा प्रजुहुयादष्टोत्तरशतं निशि ।
सप्ताहमेवं कुर्वीत साध्यो दासो भवेत्स्यम् ॥१५२
शैवमन्त्रेषु निष्णातश्चण्डेश्वरमनुं भजेत् ।
सर्वान्कामानवाप्नोति परत्रेह च नन्दति ॥१५३
धरापोऽग्निमरुद्व्योममखेशेन्द्वर्कमूर्तये ।
सर्वभूतान्तरस्थाय शङ्कराय नमोनमः ॥१५४

श्रुत्यन्तकृतवासाय श्रुतये श्रुतिजन्मने ।
अतीन्द्रियाय महस शाश्वताय नमोनमः ॥१५५

इस पुत्तलिका का छेदन कर-करके रात्रि के समय में एक सौ आठ बार प्रज्वलित अग्नि में आहुतियाँ देवे। इसी रीति से बराबर सात दिन तक किया करे तो वह साध्य ही आकर दास हो जाया करता है।१५२। जो पुरुष भगवान शिव से समन्धित मन्त्रों के ज्ञान में परम निष्णात हो उसको ही चन्डेश्वरके मन्त्र का सेवन करना चाहिये। यह मनुष्य मन्त्र के सेवन करने से सभी मनोवाञ्छित कामनाओं को प्राप्ति कर लिया करता है। यह इस लोक में तो परम सुख सम्पन्न होता ही है और परलोक में पहुँचकर परमानन्द का सुख भोगा करता है।१५३। धरा (भूमि), आपः, जल, अग्नि, मरुत, व्योम (आकाश) मखेश, इन्दु और अर्क, सूर्य की मूर्त्ति वाले तथा समस्त भूतोंके अन्तर में स्थित शंकर भगवान् के लिये बारम्बार नमस्कार है ।१५४। शैव मन्त्रों के अन्त में सर्वत्र भगवान् शिव का स्तवन होता है । मखेश का अर्थ यजमान होता है। श्रुति के अन्त में किए हुये वास वाले, भूतिस्वरूप, श्रुति के जन्म वाले इन्द्रियों की पहुँच से परे—शाश्वत अर्थात् तेज स्वरूपके लिए बारम्बार नमस्कार है।१५५।

स्थलसूक्ष्मविभागाभ्यामनिर्देश्याय शम्भवे ।
भवाय भवसम्भूतदुःखहन्ते नमोऽस्तुते ॥१५६
तर्कमार्गातिदूराय तपसः फलदायिने ।
चतुर्वर्गवदाग्याय सर्वज्ञाय नमोनमः ॥१५७
आदिमध्यान्तशून्याय निरस्ताशेषभीतये ।
योगिध्येयाय महते निर्गुणाय नमोनमः ॥१५८
विश्वात्मनेऽविचिन्त्याय विलसच्चन्द्रमौलये ।
कन्दर्पदर्पकालाय कायहन्ते नमोनमः ॥१५९

स्थूल और सूक्ष्म के विभागों से निर्देशन करने के योग्य—सांसारिक सम्भृत दुःखों को पूर्ण रूप से हनन करने वाले अर्थात् संसार में होने वाले सभी प्रकार के दुःखों को विनाश कर देने वाले भव शम्भु के लिए नमस्कार है।१५६। वे तर्कों के मार्ग में अत्यन्त दूर देश वाले अर्थात् ऐसे स्वरूप वाले है जहाँ तर्कों की सर्वथा पहुँच ही नहीं होती है। सभी प्रकार की तपश्चर्याओं के सुफलों को प्रदान करने वाले-धर्म—अर्थ—काम—मोक्ष इन चारों वर्गों के फलों को देने में वदान्य अर्थात् महान् दानी और सभी कुछ के ज्ञान रखने वाले शिव के लिए बारम्बार नमस्कार है।१५७। जिनका न तो कोई आदिकाल है और न कोई भी मध्यकाल है तथा न कोई अन्त काल ही होता है वे आदि—मध्य और अन्त से रहित है। सभी तरह की भीतियो को निरस्त कर देने वाले हैं अर्थात् उनके भजन करने वाले भक्तजनों को किसी भी प्रकार का भय नहीं हुआ करता है क्योंकि उनके उपास्य देव के सामने कैसा भी भय नहीं टिकता है। जो योगाभ्यास करने वाले योगियों का परम ध्येय है अर्थात् योगीजन अपने ध्यान में समाधिस्थ होकर भगवान् शिव का ही निरन्तर ध्यान किया करते हैं। वे भगवान् शम्भु सबसे महान् हैं अतएव उनका नाम महादेव कहा जाता है। वे त्रिगुणों से रहित है। ससार की वस्तुयें और प्राणीगण त्रिगुणों से समन्वित रहा करते हैं और देवगण भी सत्व, रज, तम इन तीन गुणों के चक्रसे शून्य नहीं है। किन्तु भगवान् शम्भु इन गुणों से रहित और निर्गुण हैं, ऐसे भगवान् शिव के लिये बारम्बार प्रणाम।१५८। यह प्रभु विश्व की आत्मा है अर्थात् सम्पूर्ण विश्व इनका ही स्वरूप है। चिन्तन करने के योग्य नहीं है अर्थात् इनका स्वरूप किसी के भी चिन्तन में नहीं आ सकता विराजमान है और इनका मस्तक उस इन्द्र के विद्यमान रहने में चन्द्र विराजमान है। कन्दर्प (कामदेव) के दर्प को लिए काल स्वरूप हैं। परम शोभित हैं। कन्दर्प (कामदेव) के दर्प को लिये काल स्वरूप है। कामदेव को सबको वश में कर लेने का बड़ा भारी अभिमान था और

उसने योगीराज परम महान् शिव को भी अपने चक्र में फाँस लेने का कुचक्र अज्ञानवश चलाया था। किन्तु शिव ने अपना तीसरा नेत्र खोल-कर उस काम को भस्म कर दिया था। उसकी पत्नी रति की अनुनय-विनय पर जीवित किया किन्तु उसे अङ्ग रहित ही जीवदान दिया था इसी से काम का नाम अनङ्ग है। काल सबका ही हनन करने वाला है देव-दानव-मानव सभी कालके ग्रास एक न एक दिन हो जाया करते हैं इसके प्रभाव से कोई भी अछूता नहीं रहा करता है, किन्तु भगवान् शिव उस काल का भी हनन कर देने वाले हैं और काल उनसे भयभीत रहा करता है। उने शम्भु के लिए बारम्बार प्रणाम है।१०९।

विषाशनाय विहरद्वृषस्कन्धमुपेयुषे।
सरितामसमाबद्धकपर्दात नमोनमः।१६०
शुद्धायशुद्धभावाय शुद्धानामन्तरात्मने।
पुरान्तकाय पूर्णाय पुण्यनाम्ने नमोरमः।१६१
भक्तानां निजभक्तानां भुक्तिमुक्तिप्रदायिने।
विवाससे विवासाय विश्वेशाय नमोनमः।१६२
त्रिमूर्तिमूलभूताय त्रिनेत्राय नमोनमः।
त्रिधाम्नां धामरूपाय जन्मघ्नाय नमोनगः।१६३
देवासुरशिरोत्नकिरणारुणिताङघ्रये।
कान्ताया निजकान्तार्षं दत्तार्द्धाय नमोनमः।१६४
स्तोत्रेणानेन पूजायां प्रीणयेज्जगतः पतिम्।
भुक्तिमुक्तिप्रदं भक्तया सर्वज्ञं परमेश्वरम्।१६५

भगवान् शम्भु विष के अशन कर देने वाले हैं। समुद्र के मन्थन करने पर कालकूट विष भी उसमें निकला था। सभी उस महा विष को देखकर भयभीत हो गये और सबने भगवान् शिव से प्रार्थना की तो इन्होंने सबको अभयदान देकर उस कालकूट विष का पान करके अपने कण्ठ में धारण कर लिया था। इससे विश को आश्रय

प्राप्त हुआ और उसका भय दूर हो गया था। तभी से शिव का शुभ नाम नीलकण्ठ हुआ है इक भगवान् का वाहन वृष है । ये सदा वृष के कन्धे पर समारूढ़ होकर ही विहार किया करते हैं । सरित के दाम से समावद्ध कपदीके लिए बारम्बार प्रणाम है ।१६०। भगवान शिव का स्वरूप परम शुद्ध है। स्वरूप ही केवल नहीं आपके भाव भी परम शुद्ध हैं आप बहुत ही स्वल्प अर्चना और स्तुति से प्रसन्न हो जाते हैं अतएव इनका आशुतोष नाम है। इनकी अर्चना भी मँहगी नहीं होती है धतूरा, आक के पुष्प और जल से आप प्रसन्न हो जाया करते हैं। जो भी शुद्ध अन्तःकरण वाले है उन भक्तों की ये अन्तरात्मा है । त्रिपुर दैत्य के बध करने वाले पूर्ण और पुण्य नाम वाले भगवान शम्भु के लिये बारम्बार प्रणाम समर्पित है ।१६१। जो भी भक्ति करने वाले में और अपने भक्त हैं उनको सांसारिक सुखों का उपभोग और सांसारिक आवागमन के वन्धन से मोक्ष प्रदान करने वाले हैं। आप विवासा अर्थात् दिगम्बर हैं और आपका निवास भी कहीं नही है तथा विश्व के ईश हैं, उनको बारम्बार प्रणामहैं। तीनों (ब्रह्मा विष्णु महेश) मूर्त्तियों के आप मूलभूत हैं–तीन नेत्रों वाले हैं–इनको बारम्बार नमस्कार है। तीनों धामों के धाम रूप जन्मों के विनाशक को बारम्बार प्रणाम है। देवों और असुरों के शिरो के रत्नों की किरणों से अरुणित चरणों वाले––अपनी कान्ता के लिए कान्त–अर्ध भाग देने वाले को बारम्बार प्रणाम हैं। इस स्तोत्र के द्वारा जगतों के स्वामी को भक्ति से प्रीणित करे, जो भक्ति और मुक्ति के दाता सर्वत्र और परमेश्वर हैं।१६५।

———

एकोनविंश पटल

।। यन्त्र प्रकरण ।।

अथ वक्ष्यामि यन्त्राणां भेदांस्तन्त्रेषु गोपितान् ।
ये साधयन्ति सतत मन्त्रिणोनिजवाञ्छितम् ।१
मार्ण लिखेत् सार्णयुतं स्वसाध्य वर्गाढ्यपत्रे स्वरकेसराब्जे ।
बहिः सदीर्घेर्गगनैः प्रवीतं रक्षाकरं यन्त्रमिदं प्रशस्तम् ।२
पुटीकृते भमिपुरस्य युग्मे मायां लिखेत् तध्यगसाध्ययुक्ताम् ।
वकारकोणेन महीपुरेण सवेष्टितं वश्यकरं तदुच्चैः ।३
मध्ये सार्णविभित प्रपुटित मृत्युञ्जयत्र्यक्षरैः ।
क्षान्तस्थं निजसाध्यनाम विलिखेत् किञ्जल्कसंस्थान् स्वरान्
पत्रेष्वष्टसु नाममन्त्रपुटितं वर्गास्तदग्रेष्वथी ।
यन्त्रं पद्मपुटीकृतं निगदित मृत्युञ्जयाख्यं परम् ।४
विषज्वरशिरोरोगनाशनं श्रीजयप्रदम् ।
कान्तिपुष्टिप्रदं वश्यं सर्व कामार्थसाधकम् ।५
साध्याढ्यचिन्तामणिमग्निबेहो विलिख्य बाह्यं ऽनलगेहवीतम्
प्रवेष्टयेत् तद्बहिरष्टवर्णमन्त्रेंण यन्त्रं ज्वरशान्तिदं स्यात् ।६
संप्लवसः प्लावयसोयन्त्रोऽष्टाक्षर ईरितः ।
एष एव भवेद्दक्षो ग्रहज्वरविनाशने ।७

इनके अनन्तर अब तन्त्रों में पोषित यन्त्रों के भेदों को बतलाते हैं जो सदा ही मन्त्रधारियों के अपने अभीष्ट को साधित किया करते हैं। कणिका में स्थित मकार के मध्य में सकार से युक्त अर्थात् बिन्दु के सहित 'स' वर्ग में संयुत अपने साध्य की अर्थात् फल वाचक पद को लिखना चाहिये । कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग—ऊष्मा संज्ञक शषसह और यरलव अन्तस्थ वर्गोसे युक्त जिसमें दल हों और दो-दो के क्रम से केसरों में जिके स्थर हों तथा बाहर दीर्घ के सहित गगनों से प्रतीत हो ऐसा यन्त्र ही परम श्रेष्ठ रक्षा के करने वाला होता

है ।१-२। यहाँ पर मातृका देवता है उसकी पूजा करके प्राण प्रतिष्ठापन करे और फिर उसे धारण करना चाहिए। भूपुर के युग्म के पुटीकरण में मध्यम साध्य से संयुत माया को लिखे। यहाँ सर्वत्र यन्त्रमें साधारण प्रक्रिया बतलाई गई है। वहाँ पर षट् कर्म—मारण, मोहन, वशीकरण स्तम्भन, आकर्षण, उच्चाटन इनमें यन्त्र में लिखना आवश्यक है। अब मृत्युञ्जय मन्त्र बतलाया जाता है। मध्य में आठ दल वाली कर्णिका दो निम्नलिखित विशेषणों से युक्त क्षकार के मध्यमें साध्य में का नाम लिखे। साध्य कर्मके लिखने का प्रकार यह है–'क' आदिक को पदमके आगे के भागों में लिखना चाहिये। जिसके कोण में वकार हो ऐसे भूपुर में सवेष्टित बहुत ऊँचा वश्य करने वाला होता है।:। अब मृत्युञ्जय नाम वाले यन्त्र को बतलाते हुए कहते है क्षान्त में अपने साध्य का नाम लिखना चाहिए और पद्म के आठ दलों के नामसे सम्पुटित वर्णों को लिखे। इसके अनन्तर उनके आगे पद्म से सम्पुटित यन्त्र को लिखे यह मृत्युञ्जय नामक परमयन्त्र होताहैं। यह यन्त्र विष की वेदना ज्वर शिर के रोगों का विनाश करने वाला होता है तथा श्री और जय के प्रदान करने वाला है। कान्ति एवं पुष्टि का प्रदाता—वशीकरण कारक और सभी कामों के अर्थ का साधक होता है ।४–५। अग्नि ग्रह में चिन्तामणि (शैव) साध्य से युक्त लिखकर वाह्य में अनल गेह से युक्त मन्त्र लिखे—यह यन्त्र ज्वर का शमन करने वाला होता है। सप्लवस प्लावयस यन्त्र आठ अक्षरों वाला बताया गया है। यही यन्त्र ग्रह बाधा से संयुत ज्वर का विनाश करने में दक्ष होता है ।६-७।

तारठद्वयपुट कुरुकुल्ले मन्त्रमत्रहुतभुक् गृहयुग्मे।
मध्यकोणविरेषु लिखेत् तन् मन्त्रमाशु विनिहन्ति भुजङ्गान्
ओं कारमायाद्विकमेखलेऽग्निवभूमनुं बह्निगृहस्य युग्मे।
मध्यादिकोणेषु विलिख्य भूर्ज यन्त्रं विदध्याद्रिपुनागसारि ।६

केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ पुस्तकालय 1315

शूलाङ्किते वह्निगृहस्य युग्मे धूमावती ंत्रलिखेत् क्रमेण ।
मध्याग्निकोणेषु मरुद्गृहुस्थे यन्त्रं, हुताशानिलवर्णचीतम् ।१०
दान्तौ सार्धीशावन्द्वन्तौ बीजे धूमावती द्विठः ।
धूमावती मनुः प्रोक्तः शत्रु निग्रहकारकः ।११
विषेण कनकाम्भोभिः प्रेतकर्पटकल्पितम् ।
श्मशाने निखनेदेतत् शत्रूनुच्चाटयेद्द्रुतम् ।१२
हुताशगेहद्वितये लिखित्वा वैवस्वताय द्विठवर्णमन्त्रम् ।
मध्यास्तमाकल्पितमिन्दुबिम्बे यन्त्रं महाभूतपिशाचवैरि ।१३
नामालिख्य मकारकोष्ठयुगजे कोणेषु तस्या यन्त्रगान् ।
मन्त्रज्ञो ङञाणान्नकारसहितान् धूमावती यन्त्रवान् ।
वीतं घुघुंटिकादिना परमिदं वायुत्रिगेहावृतम् ।
यन्त्रां प्रान्तपरेतभूमिनिहितं विद्वेषण स्याद्द्विषाम् ।११४

दो तारोंसे सम्पुटित यन्त्र अर्थात् आदि में तार और अन्तमें स्वाहा कुरु कुल्ले मध्य में लिखे—यही इसका स्वरूप है इससे यह सात अक्षरों वाला होता है । अग्नि के दोनों गृहों में मन्त्र कोण-विरों में लिखे तो वह मन्त्र अति शीघ्र हीं भुजङ्गों का निहनन करने वाला होता है। यहाँ पर 'कुरु कुल्ल' देवता है ।८। अब अन्य सर्पों का हनन करने वाला यन्त्र बतलाया जाता है । यह सात अक्षरों वाला मन्त्र है । मेखला मे इसका स्वरूप यह है कि आदि में ऊँकार होता है विह्न गृह के युग्म में अग्नि वधू मन्त्र को मध्यादि कोणोंमें भोज पत्र पर लिखकर यन्त्र को बनावे । यह यन्त्र रिपु और नागों का हरण करने वाला होता है ।९। विह्न गृह के शूलांकित युग्म में क्रम से धूमावती मन्त्र को लिखना चाहिए । मध्याग्नि कोणों में मरुद गृह में स्थित मन्त्र को जो हुताश और अनिल वर्ण से संयुत हो, दीर्घकार जो विन्दु से युक्त हों अर्थात् घं-धूं हों—ये बीज हैं। हुताश रेफ का नाम है । यह आठ अक्षरों का मन्त्र है, दो 'ठ' हैं । यह धूमावती का मन्त्र है जो शत्रुओं के निग्रह करदे वाला होता है। १०-११। किसी विष जल से तथा धतूरे के रस से प्रिय के वस्त्र पर

अर्थात् कफन पर श्मशान में लिखे तो यह शत्रुका एक बहुत ही अद्भुत उच्चाटन करने वाला होता है ।१२। यह सात अक्षरों का मन्त्र होता है। दो बार 'ठ' लिखकर अन्तमें स्वाहा लिखना चाहिये । मध्यमें षट्कोणों में सात वर्णों को लिखे । यहाँ यम देवता है ।१३। यह मन्त्र महाभूत और पिशाचों का नाशक है । अब षट्कर्णो में एक विद्वेषण कर्म भी होता है । उसके लिये मकार कोष्ठ युगल में कोणों में साध्य साधक कर्म रूप नाम लिखे । एक स्थान में साध्य का नाम और दूसरे स्थान में साधक का नाम लिखना चाहिये । मन्त्रज्ञ-इससे ड़णाव्प को सामण्डत्व कहा गया है । आठ दलों वाला कमल लिखकर उसकी कर्णिकामें मकार लिये और उसके दलों में धूमावती के अक्षरों को लिखे । उसके ऊपर धु-धु आदि की आवृत्ति करे । बाहर और वायुगृह लिखे । जिन द्वेषियो का विद्वेषण करना हो उनका अमुक-अमुक साध्य नाम लिखे फिर प्रान्त में परेत भूमि में उसको विहित कर देवे तो निश्चित रूपसे विद्वेषण होता है । पूर्व में घुर्तु युग्म ओर फिर मर्क्कटिक युग्म घोर विद्वेष करने वाली और विद्वेषी के उद्वेग करने वाली है ।१४।

पूर्वं घुघुंटिके युग्मं ततोमवर्कटिके युगम् ।
घोरे विद्वेषकारिणि विद्वेषोद्वेगकारिणि ।१५
अथ घोराघोरयोः स्यादमुकासुकयोस्ततः ।
विद्वेषयद्वयं हुँ फट् विद्या घुघुंटिकेरिता ।१६
प्राक्प्रत्यग्दक्षिणोदग्विधिवदभिलिखेत् स्पष्टरेखाचतुष्कम् ।
कोणोद्यच्छूयुक्तं वलययुगयुत मध्यपूर्वं तदन्त्यम् ।
मन्त्रस्यार्णान् परस्तात् वसुपदविवरेष्वष्टवर्णाल्लॅंशित्वा ।
शूलोद्यत् द्वादशार्णं विधिवदभिहितं प्रेतराजस्य यन्त्रम्।१७
यमराजसदोमेययमेदोरुणयोदय ।
यदि योनिरपक्षेय चकिरामय ।
उक्तो धूमान्धकाराय स्वाहेत्यष्टाक्षरोमनुः ।१८

प्रणवः श्री ततोदष्ट्रा तत्परं विकृत ततः ।
क्षानताय वधूवह्निर्मन्त्रोऽयं दादशाक्षरः ।१६

इसके अनन्तर अमुक-अमुक का घोर-अघोर का जो विद्वेष द्वय है वह घुघु टिकके द्वारा ईरित हुँ फिट् विद्याकही गयी है । इसके अनन्तर मारण यन्त्र बतलाते हैं-उसकी विधि यह है-आदि में दोनों वाश्वों में महिषक चशिरों को लिखकर उसके मध्य में यन्त्र का समान करे । बाहर अष्टगुण वस्त्रमें विधि से उस मन्त्रको लिखना चाहिये । त्रिवर्तुल का लेखन करके मध्य में दक्षिणोत्तर रूप से दो रेखायें लिखकर और पूर्व पश्चिम रूप से दी रेखायें लिखे । आग्नेल आदि कोणोंमें चार रेखायें लिखित करके दिशाओं स्थित रेखाओं के अग्रभागों में आठ शूलों को कोण रेखा के अद्य भागों में (यही शूलों का चतुष्टय है) लिखकर- वहाँ शास्त्र में कथित प्रकार से मन्त्र के अक्षरों को लिखना चाहिए । वसुपद विकरों में आठ वर्णों को लिखकर पीछे मन्त्र के वर्णों को लिखे । यह प्रेतराज का मन्त्र होता है, जिसको विधिवत् बतला दिया गयाहै, शूलोद्यत् बारह वर्णों का है ।१५-१७। धूमान्धकात्तय स्वाहा—यह आठ वर्णों का मन्त्र है । प्रार्थना यह है-यमराज सदोमेय गये दोरुणयोदय, यदि योनि अपक्षेय और निरामय ।१८। कुछ मनीषी प्रथम मायष्टी पूर्व विकृत तनं हुँ फट् स्वाहा—ऐसा मन्त्र कहते हैं-यह द्वादश अक्षरों का मन्त्र होता है ।१६।

विषबृक्षस्य भलके नृचर्मणि पटेऽथवा ।
आलिख्याष्टविषैरेतत् श्मशाने निखनेतन्निशि ।२०
ज्वरण महता विष्टा मूर्छाकुलितमानसः ।
रिपुर्गच्छति पक्षेण यमलोकं न संशयः ।२१
एकाशीतिपदेषु मध्यदहने साध्यं लिखेदुधुं पुनः ।
क्षभ्रूं ब्लमिति दिग्गतासु विलिखेत् बोजानि पंक्तिष्वथ ।
शिष्टेष्वीशनिशाचरादि विलिखेत् कालोमनुं पंक्तिश-
स्तद्बांहे यमवातमग्निपवनाऽऽत्रीतच यन्त्र लिखेत् ।२२

काली माररमाली कलीनमोक्षक्षमोनलीं ।
मामो देततदे मामा रक्ष तत्वत्वक्षरः ।२३
काली मनूरयं प्रोक्तः कालरात्रिश्व (स्व) वैरिणाम् ।
यमामाटटमामाय माटमोटटमोटमा ।२४
वामो भूरिरिभूमो वा टटरीत्वत्व स्वस्त्व) रीट्ट ।
यमात्मकोयमाख्यातः श्लोको वैरिविनाशनः ।२५
लिखेदष्टविषाङ्गारनिम्बनिर्यासकज्जलैः ।
निग्रहाख्यमिदं यन्त्रं काकपक्षेण कप्पटे ।२६
विभीतवृक्षे वल्मीके श्मशाने वा चतुष्पथे ।
दक्षिणस्थंडिनिले मन्त्री निखनेदद्धंरात्रके ।२७
सर्वथा शत्रुरेतेन सप्ताहान्मरणं व्रजेत् ।
निगृह्यते महारोगैः पतितो वा भवेदसौ ।२८

मारण मन्त्र बताया जाता है–इस मन्त्र को विष वृक्ष के तख्ते पर या मानव के चमड़े पर अथवा पटपर आठों प्रकारके विषोंसे लिये और इसकी रात्रि में श्मशान मे गाड़ देवे । इसका परिणाम यह होगा कि शत्रु भयानक ज्वर से आविष्ट होकर मूर्च्छित-साहो जायगा तथा बेचैनी से व्याकुल मन वाला हो जायगा फिर यह शत्रु एक पक्ष में निस्सन्देह यमलोक में चला जाता है । इक्यासी पदों में मध्य दहन में साध्य को लिखे और इसके अनन्तर फिर-वम लिखना तथा क्षभ्रू ब्लूम इसको दिग्गतों में लिखे और इसके अनन्तर पक्तिलों से बीजों को लिखना चाहिये । शिष्टों में ईश निशाचर आदि काली के मन्त्र को यंक्तियों में लिखे । मध्य दहन का अर्थ है मध्य कोष्ठ रेफ । उसके बाहिर ईशाना दिनैर्ऋतान्त को एकबार लिखकर फिर नैर्ऋतादि ईशान्यान्त लिखना चाहिये । इस विधि से मन्त्र का लेखन करे । मन्त्र यह है–'काली मार-रमाली कालीन मोक्ष क्षमो नली । मामो देत तदे मामा रक्ष तत्वक्षरं ।२०-२३। यह काली का मन्त्र कहा गया है और यह अपने शत्रुओं के लिए कोल रात्रि होता है । मन्त्र यह है–'यमामाट टमामाय माट

मोटटमोटमा । वामो भूरिरिभूमो वाटटरीत्वत्व रीटट ।' यह श्लोक यम स्वरूप बताया गया है जो वैरियों के विनाश करने वाला है ।२४। ।२५। इसको अर्थात् यन्त्र (चक्र) को प्रेतके शूलाधिरूढ़ कपाट पर चिता के अङ्गार, आठ विष निम्बिका निर्यास के काजल से कौआ के पंख से लिखना चाहिये यह निग्रह नामक यन्त्रहै । विभीत वृक्षके नीचे, वल्मीक पर, श्मशान में और चौराहे पर वायु के दक्षिण होने पर मन्त्र साधक को आधी रातमें निखनन करना चाहिए इससे सर्वथा शत्रु एक सप्ताह मेंमृत्यु को प्राप्त हो जाता है ।२६।२७। अथवा वह शत्रु महान् रोग से ग्रस्त होता है अथवा पतित हो जाता है ।२८।

शिलायांमिष्टकायां वा चक्रमेतत् प्रकल्पितम् ।
मर्कती विषदण्डीभिः समालिप्तमघोमुखम् ।२९
यत्र रात्री खनेत्तत्र भयोभूयोऽशुभम्भवेत् ।
लिखेच्चतुः षष्ठिपदेषु कालीमीशादिकन्यादि यमात्मकेन ।
श्लोकेन संवेष्टय कृशानुवायुबीजावृतं यन्त्रमिदं विदध्यात्।३०
निशा विषमषीदण्डोमर्क्कटीभिरधोमुखम् ।
निखनेद्यत्र तत्र स्यान्नृणामुच्चाटनं सदा ।
सस्यहानिमनावृष्ठि गवां नाश करोति तत् ।३१
आद्यां तुम्बुरुमध्यतः स्मरगतामालिख्य जम्भादिकाम्
विद्यां दिग्गतपत्रकेष्वथ लिखेत् देवीदलेषु स्मरम् ।
कोणस्थेषु सनामक बहिरतः पाशांगु शाद्यां वृतम् ।
यन्त्रं वश्यकरं ग्रहादिभयहृत् क्षुद्राभिचारापहम् ।३२
जम्भेजम्भिनि ठद्वन्द्वं मोहे मोहिनि ठद्वयम् ।
अन्धेअन्धिनि ठद्वन्द्वं रुन्धे रुन्धिनि ठद्वयम् ।३३

शिला पर अथवा ईट पर इस चक्र को प्रकल्पित करे । विषदंडो से समालिप्त कर नीचे की ओर मुख करदे। जहाँ परभी रात्रिमें खनन करे वहाँ बारम्बार अशुभ होता है ।२९। अब उच्चाटन बताते हैं-श्लोक के रूप में काली का मन्त्र है । चोसठ पदोंमें यमात्मक काली मीशादि कन्या

प्रभृति लिखे और श्लोक से संवेष्टित करके कृपालु वायु बीजों से आवृत्त इस यन्त्रों को बनाना चाहिये ।३०। निशा-विष मषी ब्रह्म दण्डी और मर्कटी अर्थात् कपि कच्छु से नीचे की ओर मुख करके जहाँ पर भी निखनन करे वहाँ मनुष्योंका सदा उच्चाटन होता है । यह सत्य अर्थात् फसल की हानि-वर्षा का न होना तथा गौओं का नाश किया करता है ।३१। कर्म के साथ ही साध्य और साधक का नाम होना चाहिये । कर्णिका में स्थित तुम्बुरु मन्त्र में कहे गये चार बीजक और नायक ने सहित स्मर को दिग्देशों में लिखे । तुम्बुरु के मध्य में स्मरगत जम्पदक लिखें और दिग्गत दलों में विद्या लिखे तथा देवी दलों में स्मर को लिखे । कोणस्थों में नाम सहित लिखे । बाहर पाशङ्कुज में रत लिखे । यह मन्त्र वश्य करने वाला और ब्रह्मादि के भय के हरने वाला तथा ग्रह अभिचार को हरण करने वाला है । इसका ताष्पर्य यह है किदेबी बीज के मध्य में काम बीज और उसका नाम होना चाहिये । इस प्रकार से कोण चतु.दलों में लिखे में तुम्वुरुदेवता है ।३२-३३।

हित्वा कामां लिखत्शात्तिः यन्त्रेऽस्मिम् नृकपालके ।
सन्ध्यासु तापयेतेतदुच्चैः साध्य वशं नयेत् ।३४
हित्वा शान्ति लिखेद्वर्म पटे वा नरचर्माणि ।
वह्नि वायुगृहावोतं स्मशानस्थंपूरिन् हरेत् ।३५
त्यक्त्वा वर्म लिखेदस्त्रं फलकेऽक्षतरूद्भुवे ।
वह्नि वायुयुतं नाम विषाढ्यरुधिरेण तत् ।३६
चत्वरे निखनेद्यन्त्रं विद्वेषं कुरुते मिथः ।
हित्वा रंधयकारौद्वौ लकार मध्यतो लिखत् ।३७
धरापुरेण बीजं तदिष्टकान्तर्न्निवेशितम् ।
सर्वेषां स्तम्भनं कुर्य्यान्नात्र कार्या विचारणा ।

अब वश्य प्रयोग बतलाते हैं—काम के पाँच बीजकों का त्याग करके दीर्घ इकार अर्थात् विन्दु के सहित शान्ति को लिखे और शान्ति के स्थान में वर्म अर्थात् हैं लिखे । मनुष्य के कपाल में इस मन्त्र में लिखना

चाहिये तथा संध्याओं में अतिशय से इसको तापे तो साध्य जो भी हो उसको वश्य लेता है।३४। अथवा शान्ति का त्याग करके पट में अथवा नरचर्म में वायु गृहावीत वह्नि की श्मशान में स्थित पूरि का हरण करे। वर्म का त्याग करके विभीतक के पदे अस्त्र को लिख और विश से युक्त रुधिर से वायुसे युक्त वह नाम तुम्बुरू बीज मिलकर वहाँ पर लकार लिखे। इस यन्त्र को चत्वर में लिखना कर देवे तो परस्पर में विशेष कर देता है। रेफ और मकार दोनों को त्याग करके मध्य में लकार लिखना चाहिये। धरापुर से अर्थात् काम में तुम्वुरु के मध्य में वायुबीज को लिखें और दो ईंटों के मध्य में निवेशित कर देवे। यह सब का स्तम्भन करता है इसमें कुछ भी संशय नहीं है।२५-३८।

हित्वा लकारं तन्मध्ये वायुबीज समालिखेत्।
विषरक्तमषीकाकपुरीषैर्ध्वजवाससि ।३९
श्मशाने निहित कुर्यात् कुलोच्छेदं स्ववैरिणाम्।
मुक्त्या वायुमयं बीजं तत्र फट्कारमालिखेत् ।४०
परेतवस्त्रे काकस्य रुधिरेण यथाविधि।
ईप्सिते निखनेतस्थाने विद्वेषं कुरुते नृणाम ।४१
मेस्त्रबीजमपास्यास्मिन् लकारं सार्णसंयतम्।
विलिखत्पत्रमेतस्यात लोहत्रयसमावृतम् ।४२
सर्वरोगप्रशमन कृत्याद्रोहादिशान्तिदम्।
विहाय वीजं लृङ्कारं ग्लौं कारं तत्र संलिखेत् ।४३
क्षकारणावृतं वाह्ये पाशाङ्कुशवृतं पुनः।
ठपरेणवृतं भूयो भूमिमण्डलमध्यगम् ।४४
लकारैर्बिन्दुसंयुक्तैर्वेष्टितां तद्वहिः क्रमात्।
सर्गान्तमातृकाबीज सर्वं वृत्तेन वेष्टितम् ।४५
कौशेयकर्प्पटे क्लृप्तमिष्टकाद्वयमध्यगम्।
सेनाग्रे निखनेद्यन्त्र स्तम्भेनं कुरुते ध्रुवम् ।४६

लकार को त्याग करके उसके मध्य में वायु बीज को लिखे तथा उसे वि–रक्त—मषी तथा कौए के मल से ध्वज वस्त्र पर लिखना चाहिए। फिर उसे श्मशानसे निहित कर देवे तो अपने शत्रुओं का कुलोच्छेद कर दिया करता है। वायुमय बीज का त्याग करके वहां पर फट्कार लिखे। शव के वस्त्र पर कौए के रुधिरसे विधि के सहित लिखे और उसको अभीष्ट स्थान में निखनन कर देवे तो मनुष्योंमें विद्वेष कर दिया करता है। इसका तात्पर्य यह है कि जिनमें विद्वेषण करना होवे दोनों उस स्थान का उल्लघन करें ऐसे ही स्थान में गाड़ना चाहिए। ।३९-४१। इसमें रुस्त्र बीज का त्याग कर सार्ण से युक्त लकार को विशेष रूप से लिखे। यह मन्त्र लोहत्रय समावृत होना चाहिए। यह समस्त रोगों का शमन करने वाला और कृत्या द्रोह आदि की शान्ति करने वाला है। लूंकार वीज का त्याग करके वहाँ पर ग्लौंकार लेखन करे।४२।४३। बाह्य में क्षकार से आवृत और फिर पाशांकु से वृत होवें। फिर ठ पर से वृत हो और भूमि मण्डल के मध्य में जाने वाला हो। उसके बाहिर क्रम से बिन्दु से युक्त लकारोंसे वेष्टित होवे। सर्गान्त मातृ का बीज सब वृत से वेष्ठित होवे ।४४-४६।

मध्ये श्रीनरसिंहबीजमथ तद्बाह्ये स्वरान् केसरे।
वारीट्चन्द्रयमेन्द्रदिक्षु विखिलेन्मध्ये मनुड्गरुडम्।
अन्तस्थाम् मरुदग्निनिऋतिशिवेष्वालिख्य वर्णावृतम्।
यन्त्र मर्गिभिरष्टभिः परिवृतं संबर्तकैर्गारुडम् ।४७
सवर्तकोनेत्रयुतः पार्श्वस्तारोग्निसुन्दरी।
गारुडो मनुराख्यातो विषद्वयविनाशनः ।४८
स्मरन् गरुडमात्मानं मन्त्रमेनं जपेन्नरः।
विषमालोकनेनैव हन्यान्नागकुलोद्भवम्। ९
मध्ये वार्ण भृगुस्थ विलिखतु विधिवत्साध्यनाम्ना समेतम्
किञ्जल्केषु स्वराः स्युर्वसुदलविवरेष्वालिखेन्मध्यबीजम्।

काद्यार्णान् केसरेषु द्विगुणवसुदलेष्वर्पयेन्मध्यबीजम् ।
यन्त्रं संजीवनाख्यं सोलपुरगतं क्षुद्ररोगापहारि ।५०
मध्ये पिण्डमघोदलाद्विषु लिखेद्वारीशताराधिप
प्रताधीश्वरशक्रदिक्षु विमतेर्मध्यो चवर्णा लिलखेत् ।
यादीन्मारुतवह्निराक्षसशिवेष्वर्णान् बहिर्वेष्टयेत् ।
काद्यैर्वामविलोचनैः कलितं पिण्डाख्ययन्त्रं परम् ।५१

अब गारुड़ यन्त्र बताया जाता है कौशेयवस्त्रमें क्लप्त और दो ईंटों के मध्य में रहने वाला यन्त्र को सेनाग्र में गाड़ देवे तो निश्चय ही स्तम्भन किया करता है। कर्णिकाके मध्य में श्री से युक्त नरसिंह बीज लिखो। यहाँ श्री शब्द से एक देश रेफ का ग्रहण किया गया है। उसके बाह्य में केसर स्वरों को लिखो तथा मध्य में गारुड़ मन्त्र को लिखना चाहिए। इनको वारीट चन्द्र यम और इन्द्र दिशाओं में लिखो। बिन्दु सहित अन्तस्थ वर्णो को मरुद्अग्नि निर्ऋति और शिव दिशाओं में लिखकर वर्णों वृत करे। विसर्ग युक्त आठ संवर्त्तकों से परिवृत गारुढ़ यन्त्र होता है।४७। अब गारुड़ मन्त्र बतलाते हैं--नेत्रयुक्त सम्वर्तक अर्थात् इकारसे संयुत क्षकार और पवर्ग अर्थात् पकार, प्रणव तथा अग्नि सुन्दरी-स्वाहा–इस प्रकार का गारुड़ मन्त्र कहा गया है, जो कि स्थावर और जङ्गम दोनों विषों का विनाश करने वाला होता है। इस गारुड़ मन्त्र का स्मरण करता हुआ जो मनुष्य जाप किया करता है वह वलोकन मात्रसे ही नागकुलसे समुत्पन्न विष का हनन कर देताहै ।४८-४९। अब सञ्जीवन मन्त्र बताया जाता है—आठ दलों वाली कर्णिका में सकार में स्थित वकार से युक्त बीज को लिखो तथा विधि के सहित साध्य का नाम लिखना चाहिए। किञ्जल्कों में स्वर होने चाहिए। द्विगुण वसु दलों में मध्य बीज को लिखो तथा केसरों में कादि शान्त वर्णो का लेखन करे। द्विगुण वसुदल का अभिप्राय षोड़श दलों से होता है यह प्रथम पटल में कथित सञ्जीवन नामक यन्त्र है जो क्षुद्र रोगों का अपहरण करने वाला है, इसका मृत्यु जप देवता है ।५०। अब पिण्ड

मन्त्र बतलाते हैं—अष्ट दलों वाली कर्णिका के मध्य में उन-उन बीजों से संयुत विदर्भित नाम लिखना चाहिये। वश्य प्रयोग में पाश बीज शांति प्रयोग में वरुण बीज, उच्चाटन में क्रोधाग्नि बीज लिखे। मध्य में पिणु और नीचे दलादिल में पश्चिम में—उत्तर दिशा में दक्षिण दिशा में और पूर्व दिशा में गरुड़ मन्त्र के मध्य में कर्णिकान्तर अन्त्य अक्षर लिखे अर्थात् चवर्णों को लिखना चाहिए। बाहर वदि अर्थात् परवल आदि को लिख। पश्चिम उत्तर तथा पूर्व दिशाओं में बाहिर अर्णो को वेष्टित करे। दक्षिण नाम विलोचन अर्थात् दीर्घ इकार से संयुत क-आद्यों से कल्पित पिण्ड नामक परम यन्त्र होता है। यहाँ पर पिण्डान्या देवता है।५१।

मनुस्वरेन्द्वजेंशाग्निसंयुतश्चपुराननः।
पिन्डवीजमिदं प्रोक्त पुंसा सर्वार्थसाधकम्।५२

बीजेनानेन सञ्जप्तं मन्त्रं रक्षाकरं परम्।
आयुरारोग्यजननं लक्ष्मीसौभाग्यवश्यदम्।५३

चौरसर्पमृगव्यालभूतामयनिकृन्तनम्।
गर्भरक्षाकर स्त्रीणां पुत्रदं क्षुद्रनाशनम्॥
धृतं मूर्ध्नि करोत्येतल्लोकवश्यमणुत्तमम्।५४

मध्यो तोयगृहे लकारविवरे साण्णाढ्यसाध्यं।
पत्रेष्वष्टसु हंसमन्त्रमभितोहमार्णसंवेष्टितम्।
यन्त्रं भूमिगृहेण वेष्टितमिदं मूर्द्धना सदा धारितम्।
हन्यात् क्षुद्रमहाज्वरामयरिपून् दद्यात् यशः सम्पदः।५५

ईकारमध्ये विलिखेत्ससाध्यं तमष्टपत्रेषु पुनर्विलिख्य।
संवेष्टयेत् तेन धरापुरस्थं यन्त्रं भवेद्वश्यकं नराणम्।५६

ताम्रपात्रे समालिख्य यन्त्रमेतत्प्रपूजयेत्।
वशयेत्सकलान्मर्त्यान्नात्र कार्या विचारणा।५७

मध्ये भान्तं भृगुविनिहितं नामवर्णैः प्रवीतम् ।
टान्तं लान्तान्वितमथलिखेदष्टपत्रेषु भूयः ।
भूविम्बस्थ निगदितमिदं साधुमञ्जीवनाख्यम् ।
शस्त्रोद्भूतं भयमपहरेत् धार्यमाण भुजेन ।५८
वार्णावृतं साध्ययुत सकार टान्ते लिखेदष्टदलेषु हंसम् ।
आवेष्टयेदम्बगृहेण बाह्ये लान्तावृतं यन्त्रमिद ज्वरघ्नम् ।५९

अब पिण्ड बीज का उद्धार कहते हैं–मनुस्वर का अर्थ है 'औ'— इन्दु अर्थात् विन्दु, अजेश, जकार, अग्नि, रेफ यह चतुरानन वकार है। यह पिण्ड बीज मनुष्यों के समस्त अर्थों का साधक कहा गया है। ।५२। इस बीज के द्वारा जाप किया हुआ मन्त्र परम रक्षा करने वाला होता है यह आयु और आरोग्य को उत्पन्न करने वाला तथा लक्ष्मी और सौभाग्य एवं वश्य करने वाला होताहै ।५६। चोर, सर्प, मृग, व्याल और भूत योनि द्वारा होने वाले भय को दूर करता है। स्त्रियों के गर्भ की रक्षा करने वाला और पुत्र सन्तति प्रदान किया करताहै तथा क्षुद्रों का नाशक है। इसको मस्तक पर धारण करने पर अत्युत्तम लोगों को वश्य किया करता है ।५४। अब अन्य मन्त्र के विषय में बतलाते हैं— कर्णिका के मध्य में लकारन्त यकार के सहित साध्य और साधक का नाम लिखना चाहिए। आठों दलों में हंसार्ण से सवेष्टित सब ओर हंस मन्त्र लिखे। इस मन्त्र को भूमिगृह से वेष्टित कर सदा मस्तक पर धारण करना चाहिये। इसका फल यह होता है कि क्षुद्र-महा ज्वर की पीड़ा का तथा शत्रुओं का हनन कर देता है और यश तथा सम्पत्ति प्रदायक होता है। अब वश्य करने वाला बताया जाता है–ईकार के मध्य में साध्य को लिखकर उसको फिर अष्ट दलों में लिखना चाहिये। उससे धरा पुरस्थ को संवेष्ठित करेतो यह मन्त्र मनुष्यों को वश्य करने वाला होताहै। ताम्र पात्र में इस मन्त्र को लिखकर फिर इसकी अर्चना करनी चाहिए तो यह सभी मनुष्यों को वशीभूत कर लिया करता है– इसमें तनिक भी सन्देह नहीं करना चाहिये ।५७। अब अन्य के भय को

दूर करने वाला बताते हैं—आठ दलों वाली कर्णिका में साध्य और साधक के नामों के वर्णों से वेष्टित लकार स्थमकार लिखे । टकार लान्तान्वित लिखें और आठ दलोंमें पुन: लिखना चाहिए। इसको भूमि के अन्दर विवर में गाड़ देवे तो बहुत उत्तम सज्जीवन नाम वाला मन्त्र होता है। यह शस्त्रों से होने वाले भय को भजा में धारण करने पर दूर भगा दिया करता है ।५८। अब ज्वर का हनन करने वाला मन्त्र बताया जाता है—टान्त में वकार से आवृत और बाह्य में लान्तावृत को तथा आठों दलों में हंस को लिखे । बाह्य में अम्बु गृह से आवेष्टित करे तो लान्तावृत यह मन्त्र ज्वर को नाश करने वाला होता है ।५९।

टान्ते नाम लिखेत्क्षकारविवरे मृत्युञ्जयत्र्यक्षरी
रुद्धं तद्वहि ष्टपत्रविवरे साध्याह्वयं पूर्ववत् ।
अचूकिञ्जल्कयुते वसुद्वयदले पद्मे तथैवाह्वयम् ।
द्वात्रिंशद्दलपङ्कजेऽपि च तथा काद्दणयुक्केसरे ।६०
ईकारेण समावीत यन्त्रं मृत्युञ्जयाह्वयम् ।
सर्वरोगाभिचारघ्नं सर्वसौभाग्यसिद्धिदम् ।६१
ग्लौं रुद्धं प्रणवद्वयं परिलिखेत्साध्यस्य नामान्वितम् ।
बाह्ये भूपुरमष्टवज्रविलसत्तार लिखित्वापुनः ।
क्षं कोणेषु दिशासु लंप्रविलिखेत् पाशांकुशन्यपरी
वीतं स्तम्भनयन्त्रमावृतिलसज्जृ भादिविद्याष्टकम् ।६२
जम्भे वह्निवधूः पूर्व पश्चाज्जृम्भिनि ठद्वयम् ।
मोहे पावकजायां स्यात्ततो मोहिनि ठद्वयम् ।६३
अन्धे हुतभुजी जाया ततोऽन्धिनि ठयुग्मकम् ।
रुन्धे कृशानुपत्नी स्यात् रुन्धिनि द्विठसयुतम् ।६४

अब रोगों के अभिचार के हनन करने वाला मन्त्र लिखा जाता है--टान्त में अर्थात् क्षकार विवर में मृत्युञ्जय तीन अक्षरों वाले मन्त्र से रुद्ध नाम लिखना चाहिये । पूर्व की ही भाँति मृत्युञ्जय मन्त्र से सम्पुटित नाम का लेखन करे । षोड़श दलों में पूर्व की भांति नाम

लिखो। कादि वर्णों से युक्त केसर में अर्थात् वत्तीस दलों वाले पंकज में पहिले की तरह नाम लिखना चाहिये। इसका मृत्युञ्जय देवता है। ।६०।६१। अब स्तम्भन करने वाला मन्त्र बताते हैं--दो प्रणवों (ओंकारों) से साध्य के नाम से युक्त 'ग्लौं--यह लिखो। फिर वाहर में अष्ट वज्र से युक्त तार लिखना चाहिये।--क्षं इसको कोणों में और दिशाओं में ल--लिखकर तीन अक्षरों वाले पाशांकुश लिखो। यह जृम्भादि विद्या अष्टक स्यम्भन मन्त्र हैं।६२। पूर्व में भुक्क् में वह्नि वध् और पीछे जृम्भी में दो ठकार लिखो। अन्ध मे हुत भक की जाया और इसके पश्चात् अन्धी मे दो ठकार लिखो। रुन्ध में अग्नि की पत्नी और रुन्धा में दो ठकार से संयुत लिखना चाहिये।६३।६४।

लान्ते नाम विलिख्य दिक्षु विलखेद्भूयस्तमेवाष्टसु।
क्षोणीबिम्बमथोरगेन्द्रभुजगावन्योन्यबद्धौ लिखेत्।
आख्यां तन्मुखयोर्विभीतफलके यन्त्रं समापादितम्।
निर्माल्ये निहितं सदा वितनुते वाचां द्विषां स्तम्भन्।६५
साध्याख्यां कवचं लाखेत् बहिरथोदिक्पत्रमध्येषु नन्।
ग्लौमन्यषु महीपुरस्य विलखेत्कोणेषु गं लान्वितम्।
वज्रैष्वष्टसु वर्म तोयपुरगं भूबिम्बमध्ये स्थितं।
यन्त्रं रात्रिविनायकान्तमगतं न्यस्येच्छरावद्वये।६६
रहस्यस्थाननिःक्षिप्तं पूजित प्रतिवासरम्।
स्तम्भनं कुरुते वाचां सेनादीनां च वैरिणाम्। ६७
कृत्वा रखाष्टकमृजुपुनस्तिर्यगालिख्य षट्कं
ब्राह्मावृत्यालिखतु विधिवद् बिन्दुयुक्तं लाकारम्।
अन्तः पङ्क्तौ लिखतु धरणीं शिष्टकोष्टत्रयाणाम्
कृत्वा नामप्रथितमुदितं यन्त्रमेतज् ज्वरघ्नम्।६८
यन्त्रमेतत्समभ्यर्च्य दत्वा भूतबलिं ततः।
साध्यस्य मूर्द्धनि बध्नीयात्सर्वज्वरविमुक्तये।६९

तारं लिखेद्वह्निपुरस्य युग्मे तत्पार्श्वयोर्लार्णमथाग्निबीजम्।
कोणेषु पूर्वापरयोश्च मन्त्रं पाशांकुशावीतमिद ज्वरघ्नम् ।७०
यन्त्रमभ्यर्च्य मन्त्रेण तारपाशाङ्कुशात्मना ।
निबध्नीयाज्ज्वरार्तस्य हस्तादौ ज्वरशान्तये ।७१

अब वाणी के स्तम्भन करने वाला यन्त्र लिखा जाता है—ान्त में अर्थात् क्षकारमें नाम लिखकर पुनः नाम लिखे । कर्णिकामें ह्रीं लाष्टक लिखना चाहिए । फिर उसी को आठों दिशाओं में लिखना चाहिये । यह शत्रुओ की वाणी का स्तम्भन किया करता है ।६५। दूसरा भी वाणी का स्तम्भन करने वाला है—साध्य का नाम आठ दलों वाली किणका में लिखे । विदिक् पत्रों में भूपुर के कोणों में 'हुम्' लिखना चाहिये । हरिद्रा की गणपति की मूर्त्ति बनाकर उन के उद्धर में मन्त्र की स्थापना करे । कतिपय विद्वानों का मत है कि हरिद्रा गणपति यन्त्र से सवेष्टित करे ।६६। एकान्त स्थान में इसको निक्षिप्त करके प्रतिदिन पूजन करे तो सेनादि शत्रुओं की वाणी का स्तम्भन किया करता है ।६६।६७। अब ज्वर का हनन करने वाला यन्त्र बतलाया जाता है । ऋजु रेखा लिखकर ऋजु और तिर्यक षटक लिखना चाहिये । विंशति कोष्ठों में बाहिर सनिवधि बिन्दु से युक्त लकार लिखे । द्वादश कोणोंमें काष्ठत्रय को एकत्रित करके वहाँ पर नाम लिखना चाहिए । इस प्रकार से नाम से ग्रथित यह मन्त्र ज्वर का हनन किया करता है । ।६८। इस मन्त्र को पूजित करके फिर भूत बलि देवे और साध्य के मस्तक में बाँध देवे तो समस्त ज्वर का नाशक होता है ।६९। अब एक अन्य ज्वर नाशक मन्त्र बताया जाता है—बह्निपुर के मध्य में तार अर्थात् प्रणव लिखे । उनके दोनों और लवर्ण से युक्त अग्नि बीज को लिखना चाहिए । दिशाओं के वह्नियुगों में प्रत्येक में अंकुशत्र को लिखे तो यह मन्त्र ज्वरघ्न होता है ।७०। इस मन्त्र को तार पाशाकुंश स्वरूप मन्त्र के द्वारा अभ्यर्चित करके ज्वर से आर्त व्यक्ति के हाथ आदि में बाँध देवे तो ज्वर की शान्ति हो जाया करती है ।७१।

पिन्डे लिखेद् नाम ससर्गटान्तविदर्भितं सस्वरकेसराढ्यम् ।
टान्ताष्टपत्रं वसुधापुरस्थं कान्तिप्रदं यन्त्रमिदं ज्वरघ्नम् ।७२
तारादि लद्वयजलद्विठवर्ण वीता टान्तान्तरे
विलिखिता विधिनैव माया ।
साध्याऽऽवृता बाहिरथोवदनार्द्धचन्द्रैर्यन्त्रं
शिशोरुरुदियां निनिहन्ति सद्यः ।७३
व्योमार्णमालिख्य सविन्दुमाख्याविदर्भितं लत्रययुक्तकोणे ।
वसुन्धरागेहयुगे निवद्धं यन्त्रं समस्तज्वरनाशन स्यात् ।७४

और दूसरा ज्वर नाशक मन्त्र यह होता है कि पूर्व में कथित पिण्ड में विसर्ग सहित ठकार से युक्त नाम लिखे जो सस्वर केसर से आढ्य हो । भूपुर में स्थित आठ पत्रों में टान्त लिखे तो कान्ति प्रदाता यह मन्त्र ज्वर नाशक होता है ।७२। अव शिशुओं के रुदन का हरण करने वाला मन्त्र वताते हैं–'जल' वं हि ठः स्वाहा'—इस मात्रावृा माया को लिखकर वाहर व्रत द्वय करके वहाँ अधोमुख अर्धचन्द्रों से संवेष्टित करके बाँधने से शिशु के रोदनेच्छा का विनाशक होता है और तुरन्त ही रुदन रोक दिया करता है । व्योमार्ण हकार जो बिन्दु और भकार से युक्त हों तथा मध्य में साध्य–साधक के नामों को लिखे और एक कोण में तीन लकार लिखे । ऐसा वसुन्धरा गेह युग में निवद्ध मन्त्र सब प्रकार के ज्वरों का विनाश करता है ।७२-७४।

सार्ण नाम विदर्भितं परिलिखेद् वाह्येऽष्टपत्रे भृगुं ।
पद्मं स्यादथ कादिशान्तलिविमत् त्रिशद्दलम्बाह्यतः ।
वीतं तोयपुरेण यन्त्रमुदितं भूर्ज्जोदरे कल्पितम् ।
भूतव्याधिमपाज्वरप्रशमनं कृत्यापह श्रीपदम् ।७५
चक्र चतुःषष्ठिपदे सबिन्दूनन्तस्थवर्णान् क्रमशो विलिख्य ।
रेखाशिरः कल्पितशूलयुक्तं यन्त्रेऽथशातज्वरशान्तिहेतोः।७६
पुटितभूमिपुरद्वयमध्यतः प्रविलिखेद्वनितां गिरिजापतेः ।
प्रणवमस्य लिखद्वसुकोणगं ज्वरहर परमेतदुदीरितम् ।७७

अब अन्य यन्त्र बताया जाता है—आठ दलों वाली कर्णिका में अष्ट पत्रों से बहिर्भाग में सकार लिखना चाहिए। पत्रों के मूल में अर्थात् केसरों के स्थान में हो दो क्रम से स्वर लिखे। तोयतुर से बीत यह मन्त्र भोज पत्र पर लिखे तो भूतादि का प्रकोप-व्याधि और महान ज्वर का शान्त करने वाला तथा कृत्या आहरण कारक श्रीपद् मन्त्र होता है।७५। चौंसठ पद वाले चक्र में बिन्दु से युक्त अन्तस्थ वर्णों को क्रमशः लिखना चाहिये। अर्थात् प्रथम आवृत्ति में अट्ठाईस कोष्ठों में बिन्दु युक्त प्रकार लिखें दूसरी आवृत्ति में बीस कोष्ठोंमें बिन्दु से युक्त लकार लिखे—तीसरी आवृत्ति में बारह कोष्ठों में बिन्दु युक्त लकार लिखे। अन्तःकोष्ठ चतुष्ट्य में सबिन्दु वकार लिखे। फिर चक्र की पूजा करे तो यह शीत ज्वर को शान्त किया करता है।७७। पुटित दोनों भूपुर के मध्य में गिरिजापति अर्थात् शिव को वनिता गौरी को लिखे। आठों कोणों में इसके प्रणव लिखना चाहिये। यह मन्त्र सर्वोत्तम है और ज्वर में हरण करने वाला है।७७।

वाणे लिखेन् नाम शशाङ्कमध्ये टान्तं वहिर्भुमिपुरं पुरस्तात्।
वृत्तावृतं यन्त्रमिदं समुक्तं वश्याय नृणां सकलार्तिशान्ते।७८

सस्वस्तिके दहनगेहयुगेससाध्यां
मायां लिखेन्नागलतादलान्तः।
पाशाङ्कुशावृतमिदं निशि तापयेद्योमन्त्रं
जपन् व्रजति तं स्वयमेव साध्यः।७९

षट्कोणेषु विजसाध्यनामसहितां मायां लिखेन्मध्यत-
स्तत्कोणेषु विदभितामभिलिखच्छक्ति ससाध्याख्यया।
बाह्ये भूमिपुरं सकोणमदनं ताम्बूलपत्रे कृतम्।
जप्तं खादयितुः प्रिया निशि भवेत् सा तस्य वश्या चिरम्।८०

शक्तौ नाम लिखेन्चतुर्भिरभितोबीजैः समावेष्टयेत्।
वीतं शक्तिमनोभवांकुशमनुं प्रो बीजकैः पिष्टजे।

रूपे साध्यनरस्य जप्तपवनं त्रिस्वादुना भर्ज्यं त-
त्खादेत् तस्य वेश पयाति नियति साध्य: सदा दासवत् ।८१
कामं लिखेत्साध्ययुतं सरोजे स्वरोल्लसत् केसरवर्गपत्रे ।
उदीरित मन्मथयन्त्रमेतत्सौभाग्यलक्ष्मीविजयप्रदायि ।८२
काश्मीररोचना लाक्षा मृगेममदचन्दनैः ।
विलिखेत् हेमलेखन्या यन्त्राण्येतानि देशिक: ।८३

शशांक के मध्य में गण में बाण में नाम लिखे जो टान्त हो और बाहिर भूपुर के आगे हों। वृत्त से अवृन्त यह मन्त्र कहा गया है। यह सकल प्रकार की आर्त्तिकी शान्तिके लिये और मनुष्यों के वश्य के लिये होता है ।७८। नागलता दल के अन्दर स्वास्तिक से युक्त दहनदेह युगमें साध्य से युक्त माया को लिखना चाहिये। पाश अंकुश से आवृत इस यन्त्र को रात्रि के समय में तपावे। जो मन्त्र का जाप करता हुआ गमन करता हुआ होता है वह स्वयं ही साध्य होता है ।७९। षट्कोण में अपने साध्य के नाम के सहित मध्य में माया को लिखे। साध्य के नाम से युक्त उसके कोणों में विदर्भित शक्ति को लिखना चाहिये। बाहर भूमिपुर कोण मदन सहित ताम्बूल पत्र में करे। इस यन्त्र को खाने वाले की प्रिया रात्रि में चिरकाल तक वश्य हो जाती है ।८०। जो मनुष्य साध्य हो उसकी आकृति पिष्ट बनावे और उसके हृदय में शक्ति को लिखकर वहाँ पर कम के सहित साध्य का नाम लिखना चाहिये। उसको शक्ति के चार बीजों से समवेष्टित करे। पुन: श्लोकोक्त चार बीजो से बीत करे। उसको खा लेवे तो साध्य नियत रूपसे उसका दास की भाँति सदा वश्य होता है ।८१। अब दूसरा यन्त्र बतलाया जाता है। सरोज में केसर वर्ग पत्र में स्वरों में उल्लासित साध्यसे युक्त काम को लिखे। यह मन्मथ यन्त्र कहा गया है जो सौभाग्य और लक्ष्मी का प्रदान करने वाला तथा विजय प्रदान करने वाला यन्त्र है ।८२। आचार्य को चाहिये इन यन्त्रों को सुवर्ण की लेखनी से काश्मीर रोचना, लाख, मृग के मद तथा चन्दन से लिखना चाहिये ।८३।

भूमिस्पृष्ट शवस्पृष्ट दग्ध निर्माल्यसंगतम् ।
विशीर्णलङ्घितं मन्त्री यन्त्रं आतु न धारयेत् ।८४
अथानन्दमयी देवां शब्दब्रह्मस्वरूपाणीम् ।
ईडे सकलसंपत्यै नगत्कारणमम्बिकाम् ।८५
आद्याममेषजननीमरविन्दयोनेर्विष्णोः
शिवन्य च वपुः प्रतिपादयन्तीम् ।
सृष्टिस्थितिक्षयकरी जगतां त्रयाणां
स्तुत्वागिरं विमलयाम्यहमम्बिके त्वाम् ।८६
पृथ्व्या जलेन शिखना मरुताम्बरेण
होत्रेन्दुना विनकरेण च मूर्तिभाजः ।
देवस्य मन्मथरिपोरपि शक्तिमत्ताहेतु
स्त्वमेव खलु पर्वतराजपुत्रि ! ।८७
त्रिः स्रोतसः सकललोकसमर्च्चिताया
वशिष्टकारणमवैभि तदेव मात ! ।
त्वत्पादपङ्कजपरागपवित्रितासु शम्भोर्ज-
टासु सततं परिवर्तन यत् ।८८

मन्त्री को भूमि से स्पर्श किया हुआ शव मुर्दा से स्पर्श किया, दधि, निर्माल्य से संगत, विशीर्ण और लाँघा हुआ यन्त्र कर्म भी धारण नहीं करना चाहिये ।८४। इसके अनन्तर आनन्द से परिपूर्ण तथा शब्द ब्रह्म स्वरूपिणी जगत्कारण अम्बिकाका सकल सम्पत्तिकी प्राप्तिके लिये स्तवन करता हूँ ।८५। हे अम्बिके ! मैं अपनी स्तुति करके वाणी को विमल करता हूँ । आप सबकी जननी है, देव समूह की योनि भगवान् विष्णु और शिव के वपु का प्रतिपादन करने वाली हैं । तीनों लोकों के सृजन, स्थिति और विनाशके करने वाली है । ऐसी आपका स्तवनकरके मैं अपनी वाणी को विमल करता हूं ।८३। हे पर्वत राजपुत्रि ! पृथ्वी, जल—अग्नि—वायु—आकाश —होता —इन्दु—दिनकर की मूर्ति

धारण करने वाले काम देव के शत्रु देव की शक्तिमता की हेतु निश्चय ही आप हैं ।८७। हे माता ! समस्त लोकों के द्वारा पूजित गङ्गा के वैशिष्ट्य का कारण मैं उसी को जानता हूँ । आपके चरण कमल के पराग से पवित्र भगवान् शम्भु की जटाओं में जो निरन्तर परिवर्तन होता है ।८८।

आनन्दयेत् कुमुदिनीमधिपः कलानां
नान्यामिनः कमलिनीमथनेतरां या ।
एकस्य मोदनविधौ परमर्क इष्टे
त्वतुप्रपञ्चमभिनन्दयसि स्वदृष्टया ।८९

आद्याप्यशेषजगतां नवयौविनासि ।
शैलादिराजतनयाण्याति कोमलासि ।
त्र्य्या प्रसूरपि तया न समीक्षितासि ।
ध्येयासि गौरि ! मनसो न पथि स्थितासि ।९०

त्तासाद्य जन्म मनुजेषु चिराद् दुरापं
तत्रापिं पाटवमवाप्य मिजेन्द्रियाणाम् ।
नाभ्यर्चयन्ति जगतां जनयित्र ! ये त्वां
निःश्रेणिकाग्रमविरुह्य पुनः पतन्ति ।९१

कर्पूरचूर्णहिमबारिविलोलितेन
ये चन्दनेन कुसुमैश्च सुजातगन्धः ।
आराधयन्ति हि भवानि ! समुत्सुकात्वाँ
ते खल्वशेषभुवनाधिभुवः प्रथन्ते ।९२

आविश्य मध्यपदवीं प्रथमे सराजे
सुप्तहिराजसद्वशी विरचय्य विश्वम् ।
विद्युल्लतावलयविभ्रममुद्वहन्ती पद्मानि
पञ्च विदलय्य समश्नुवाना ।९३

तन्निर्गतामृतरसैरभिषिक्तगात्री
मार्गेण तेन निलय पुनरप्यवाप्त ।

येषां हृदि स्फुरसि जातु न ते
भवेयुर्मातर्महेश्वरकुटुम्बिनि ! गर्भभाजः ।८४
आलम्बिकुन्तलभरामभिरामवक्त्रा-
मापीवरस्तनतटीं तनुवृत्तमध्याम् ।
चिन्नाक्षसूत्रकलशालिखिताढ्य-
हस्तामावतयामि मनसा तव गौरि ! मूर्तिम् ।८५
आस्थाय योगमविजित्य च वैरिषट्-
कमावध्य चेन्द्रियगण मनसि प्रसन्ने ।
पाशांकुशाभयवराढयकरां सुरक्तामा-
लोकयन्ति भुवनेश्वरियोगिनस्त्वाम् ।८६

कलाओं का अधिप चन्द्रमा कुमुदिनीको आनन्दित करता है। कम-लिनी मथने तर को नहीं करता है। एक के मोदन विधि में उसका स्तवन किया जाता है फिर आप तो समस्त प्रपंच को अपने दृष्टिपात के द्वारा आनन्दित किया करती है।७९। समस्त जगतों की आप आद्या हैं अर्थात सब जगतोंसे प्रथम हुई हैं तो भी आप नवयौवन धारण करने वाली हैं। आप पर्वतराज हिमालय की पुत्री हैं तो भी अत्यधिक कोमल है, त्रयी को उत्पन्न करने वाली हैं तो भी उस त्रयी के द्वारा समीक्षिता नहीं है। हे गौरि ! आप ध्यान करने के योग्य हैं तो भी मन के मार्ग में स्थित नहीं होती है अर्थात मनके द्वारा अचिन्तनीय हैं।८०। अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यों में चिरकाल में दुर्लभ जन्म पाकर भी इन्द्रियों को पटुता प्राप्त किया करता है। हे जगतों के जनन करने वाली ! जो मनुष्य आपका अर्चन नहीं किया करते हैं वे मनुष्य निःश्रेणिका पर अधिरोहण करके भी पुनः अधः पतित हो जाया करते हैं।८१। हे भवानी ! जो मनुष्य कपूर के चूर्णसे शीतल जल से लोलित चन्दन से और सुन्दर गंध वाले पुष्पों से समुत्सुक होते हुए अशेषभुवनों के अधिभू के प्राप्त करने का प्रयत्न किया करते हैं।८१। प्रथम सरोज में मध्य पदवी में आविष्ट होकर ! सुप्ताहि राज सदृश विश्व को विरचित करके विद्युल्लता के

वलय के विभ्रम का उद्वहन करती हुई पाँच पद्मों का विदलन कर समुश्वत है ।९३। हे माता ! महेश्वर देव की कुटुम्बिनी । उससे निर्गत अमृत रस से अभिषिक्त गात्रीं वाली उस मार्ग से पुनः निलय को प्राप्त हुई आप जिनके हृदय में स्फुरण किया करती है वे मनुष्य मुक्त होकर पुनः गर्भ में नहीं आया करते हैं ।९४। लम्बमान कुन्तलों के भार से अभिराम मुख वाली तथा पीवर स्तनों वाली और शरीर के कृश मध्य भाग वाली, चिन्ताक्ष सूत्र से कलश से लिखित हस्तों वाली हे गौरी ! मैं मन से बारम्बार आपकी मूर्त्ति का आवर्त्तन किया करता हूँ ।९५। योग में समाधिस्थ होकर छैं शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके प्रसन्न मन से इन्द्रियों के गण को आवृद्ध करके पाश—अंकुश—अभय और वरदान से सुशोभित दोनों करों वाली हे भुवनेश्वरि! सुरक्त वर्ण वाली आपको योगीगण देखा करते हैं ।९६

बत्तप्तहाटकनिभैः करिभिश्चतुर्भिरा-
वर्जितऽमृतघटेरभिषिच्यमाना ।
हस्तद्वयेन रुचिरे नलिने वहन्ती-
पद्मापि साभयवरा भवति त्वमेव ।९७
अष्टाभिरुग्रविविधायुधवाहिनीभि-
र्दुर्दोर्वल्लरीभिरधिरुह्य मृगाधिराजम् ।
दूर्वादलद्युतिरमर्त्यविपक्षपक्षान्
न्यक्कर्वतो त्वमसि देवि ! भवानि ! दुर्गा ।९८
आविर्न्निदाघजयशीकरशोभिवक्त्रां
गुञ्जागुणेन परिकल्पितहारयष्टिम् ।
पत्रांशुकामसितकान्तिमनङ्गतन्त्रमाद्यां
पुलिन्दतरुणामसकृत्स्मरामि ।९९
हंसैर्गतिक्वणितनूपुरदूरकृष्टै-
र्मूर्तैरिवाथंवचनैरनुगम्यमानौ !

पद्माविवोदूर्ध्वमुखरूढसुजातनालौ
श्रीकण्ठपत्नि ! शिरसैव दधे तवाङ्घ्री ।१००
द्वाभ्यां समीक्षितुमतृप्तिमतेव|
दृग्भ्यामुत्पाद्य भालनयनं वृषकेतनेन ।
सान्द्रानुरागतरलेन निरीक्षमाणे जङ्घे
उभे अपि भवानि ! तवानतोऽस्मि ।१०१
ऊरू स्मरामि जितहस्तिकरावलेपौ
स्थौल्येन पाण्डुरतया परिभूतरम्भौ ।
श्रीणोभरस्य सहनौ परिकल्प्य दत्तौ
स्तम्भाविवाम्ब ! वयसातव मध्यमेन ।१०२
श्रोण्यौ स्तनौ च युगपत्प्रथयिष्यतो-
च्चैर्बाल्यात्परेंण वयसा परिकृष्णसारः ।
रोमावलीविलिसितेन विभाव्यमूर्ति-
र्मध्यस्तव स्फुरतु मे हृदयस्य मध्ये ।१०३

तपे हुए सुवर्ण के सदृश चार हाथियोंके द्वारा आवर्जित अमृतके कलशों से अभिषिक्त होते हुए दोनों हाथों से सुन्दर कमलों को वहन करती हुई पद्मा ! अभयदान और वरदान वाली होती है ।९७। आठों भुजाओं से अत्यन्त उग्र और अनेक आयुधों को वहन करती हुई वल्लरियों के द्वारा मृगाधिराज पर अधिरोहण करके दूर्वादल की द्युति के समान द्युति वाली देवों के विपक्ष में रहने वाले असुरों को करती हुई हे भवानी ! आप ही दुर्गा देवी है ।९८। आवी निदाघ जल के कणों से शोभायुक्त मुख वाली, गुञ्जा गुण से परिकल्पित हार यष्ठि वाली, पत्रांशु काम से-सित कान्ति युक्त, अनङ्ग तन्त्रा पुलिन्द तरुओंकी आद्या आपका मैं वारम्बार स्मरण करता हूँ ।९९। गति अर्थात् गमन से क्वणित नूपुरों द्वारा दूर समाकृष्ट मूर्तों की भाँति हंसों से अर्थ बचनों के द्वारा अनुगम्यमान, ऊर्ध्वमुख सुजात नाल वाले पद्मों के समान हे श्री कण्ठ पत्नि ! मैं शिर से आपके चरणों को धारण करता हूँ ।१००।

दो नेत्रों से देखते हुए भी अतृप्ति वाले की भाँति वृषकेतन शिव ने भाल में तीसरा नेत्र उत्पन्न करके हे भवानी ! मान्द्र अनुराग से तरल भाव द्वारा निरीक्षमाण दोनों जंघाओं को देखने वाले हैं ऐसी आपको मैं प्रणाम करता हूँ ।१०१। स्थूलता से हस्ती के कर (सूँड) के गर्व को जीत लेने वाले तथा पाण्डुरता से रम्भा (कदली) को तिरस्कृत कर देने वाले ऊरुओं का मै स्मरण करता हूँ । हे अम्ब ! अपकी अवस्था ने मध्वम भाग श्रोणियों के भार को सहन करने वाले परिकल्पित करके स्तम्भों की भाँति दिये हैं ।१०२। हे माता ! बाल्य काल से आगे श्रोणी और स्तनों को एक साथ प्रथित करता हुआ आपका मध्य भाग रोमावली से विलसित विशाव्य मूर्त्ति वाला मेरे हृदय के मध्य में स्फुरण करे ।१०३।

सख्युः स्मरस्य हरनेत्रहुताशमी-
रोलाविण्यवारिभरितं मवयौवनेन ।
आपाद्य दत्तमिव पल्वलमप्रधृष्यं
नाभिं कदापि तव देवि ! न विस्मरेयम् ।१०४
ईशोपगृहग्मिुनं भसित दधाने
काश्मीरकर्द्दममनुस्तनपङ्कजेते ।
स्नानोत्थितस्य करिणः क्षणलब्धफेनौ
सिन्दूरितौ स्मरयतःसमदस्य कुम्भौ ।१०५
कण्ठातिरिक्तगलदुज्ज्वलकान्ति-
धाराशोभौ भुजौ निजरिपोर्मकरध्वजे न ।
कण्ठग्रहाय रचितौ किल दीर्घपाशौ
मातर्मम स्मृतिपथं नविलंघयेताम् ।१०६
नात्यायतं रुचिरकम्दुविलासचौर्यं
भूषाभरेण विविधेन विराजमानम् ।
कण्ठं मनोहरगुणं गिरिराजकन्ये! संचिन्त्य
तृप्तिमुपयामि कदापि नाहम् ।१०७

अत्यायताक्षमभिजातललाटपट्टं
मन्दस्मितेन दरफुल्लकपोलरेखम् ।
बिम्बाधरं वदनमुन्नतदीर्घनास यस्ते
स्मरत्यसकृदेव स एव जातः ।१०८

आबिस्तुषारकरलेखमनल्पगन्ध
पुष्पोपरिभ्रमदलिव्रजनिविशेषम् ।
यश्चेतसा कलयते तव केशपाशं
तस्य स्वयं पलति देवि ! पुराणपाशः ।१०९

श्रुतिसुचरितपाकं धोमतां स्तोत्रमेतत्
पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा ।
स भवति पदमुच्चः संपदां पादनम्रक्षिति-
पमुकुटलक्ष्मीलक्षणनां चिराय ।११०

हे देवि ! हरके नेत्रकी अग्नि से डरे हुए स्मर के सखा नूतन यौवन ावण्य भरित अप्रधृष्य पल्लवल को दत्त की भाँति अर्पदित करके आपकी नाभि कभी भी विस्मृत नहीं होती है ।१०४। भसित ईशोप गृह का पिशुन (सूचक) काश्मीर के कर्दम मनुस्तव आपके पकज स्नान करके उत्थित करोंके क्षण भर लब्ध फेनों वाले मदयुक्त हस्तीके सिन्दूरित कुम्भोंका स्मरण कराते हैं ।१०५। मकरध्वजके शत्रु भगवान शिव की दोनों भुजायें कण्ठ से अतिरिक्त बहते हुए उज्ज्वल कान्ति की धारा से शोभित है । हे माता ! कण्ठ ग्रह के लिये रचित दीर्घ पाश मेरी स्मृति के मार्ग का विलंघन न करे ।१०५। हे गिरिराज कन्ये ! न अत्या यत और रुचिर कम्बु के विलास चुराने वाला तथा अनेक प्रकार के भूषणों के भारसे विराज मान एवं मनोहर गुणसे युक्त कण्ठ का संचिन्तन करके मैं कभी भी तृप्ति को प्राप्त नहीं हूँ ।१०७। विशाल नेत्रों से युक्त ऐसे अभिजात ललाट यह जो मन्द स्मित से फुल्ल कपोल रेखाओं वाला है । बिम्ब फलके समान अधरोंसे युक्त-उन्नत और दीर्घ नासिका वाला मुख है । ऐसे मुख का जो स्मरण करता है वही वास्तव में संसार

में समुत्पन्न हुआ है अर्थात् उसी का जन्म धारण करना सफल होता है।१०७। हे देवि ! आविस्तुषार कर लेखा वाले—अत्याधिक गन्ध से युक्त पुष्पोंके ऊपर भ्रमण करते हुए भौरों के समूहसे संयुक्त ऐसे आपके केशपाश का जो दर्शन किया करता है उसका पुराण पाश स्वंय विन ष्ट हो जाया करताहै।१०६। श्रु ति सुचरित पाक युक्त मर्त्यानित्य धीमानों के इस स्तोत्र को जो आर्द्रान्तरात्मा इस संसार में पाठ किया करता है वह पाठ् नम्र क्षितियों के मुकुट लक्ष्मी के लक्षण वाले सम्पदाओं के उच्च पद को चिरकाल तक प्राप्त किया करता है।११०।

— —

विंश पटल

॥ योग प्रकरण ॥

अथ योगं प्रवक्ष्यामि साङ्गं संवित्प्रदायकम् ।
ऐक्यं जीवात्मनोराहुर्योगं योगविशारदाः ।१
जीवत्मनोरभेदेन प्रतिपत्ति परे विदुः ।
शिवशक्त्यात्मकं ज्ञानं जगुरागमवेदिनः ।२
पुराणपुरुषस्यान्ये ज्ञानमाहुर्विशारदाः ।
जित्वाऽऽदावात्मनः शत्रून्कामीन्योगमभ्यसेत् ।३
कामक्रोधौ लोभमोहौ तत्परं मदमत्सरौ ।
आहुर्वंदुःखदानेतानरिषड्वर्गमात्मनः ॥४
योगाष्टाङ्गैरिमञ्जित्वा योगिनोयामाप्नुयुः ।
यमनियमावासनप्राणायामौ ततः परम् ।५
प्रत्याहारं धारणाख्यं ध्यानं सार्द्धं समाधिना ।
अष्टाङ्गायाहुरेतानि योगिनो योगसाधने ।६

इसके अनन्तर संवित् के प्रदान करने वाले योग का साङ्ग वर्णन करता हूँ। योग के विशारद गण जीवात्मा के ऐक्य वाले योग को कहते हैं।१। दूसरे विद्वान् जीवात्मा के अभेद द्वारा प्रतिपत्ति को जानते हैं। आगमके ज्ञाता गण शिवभक्ति स्वरूप ज्ञानको योग कहते।२। अन्यविशारद पुराण पुरुषके ज्ञान को बतलाते हैं। आदिमें आत्माके शत्रु कामादि को जीतकर फिर योग का अभ्यास करना चाहिए।३। काम—क्रोध-लोभ-मोह और इनके पश्चात् मद तथा मात्सर्य ये षट् वर्ग आत्मा को दुःख देने वाले होते हैं।४। योगी गण योग के यम नियमादि आठ अङ्गों के द्वारा इन विजय प्राप्त करके योग को प्राप्त किया करते हैं। यम-नियम-आसन-प्राणायाम इसके अनन्तर हैं। प्रत्याहार-धारणा-ध्यान और समाधि के अङ्ग होते हैं। योगीगण योग के साधन में इन्हीं आठ अङ्गों को बतलाते हैं।५-६।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं कृपाऽऽर्जवम्।
क्षमाधृतिर्मिताहारः शौचं चेति यमा दश।७
तपः सन्तोष आस्तिक्यं दान देवस्य पूजनम्।
सिद्धान्तश्रवणं चैव ह्रीर्मतिश्च जपो हनम्।८
दशैते नियमाः प्रोक्ताः योगशास्त्र विशारदैः।
पद्मासन स्वस्यिकाख्यं वज्रं भद्रासनं तथा।९
वीरासनमिति प्रोक्तं क्र दासनपञ्चकम्।
ऊर्वोरुपरि विन्यस्त सम्यक्पादतले उभे।१०
अगुष्ठा च निबध्नीयाद्धस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः।
पद्मासनमिति प्रोक्तं योगिनां हृदयङ्गमम्।११
जानुर्वोरन्तरे सम्यक्कृत्वा पादतले उभे।
ऋजुकायो विशेद्योगी स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते।१२
सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्येद्गुल्फयुग्मं सुनिश्चलम्।
वृषणाद्यः पादपार्ष्णी पाणिभ्यां परिबन्धयेत्।१३

यह सब दश हुआ करते हैं । उनके नाम ये हैं–अहिंसा अर्थात् किसी भी प्राणी के मन तथा शरीर को चोट न पहुँचाना जो मन वाणी और कर्म के द्वारा होता है । सत्य, अस्तेय (चोरी न करना) ब्रह्मचर्य, कृपा अर्थात् दया आर्जव (सरलता) क्षमा अर्थात् शक्ति होते हुए भी अपराध के लिये किसी भी प्रकार का दन्ड न देना, धृति अर्थात् धैर्य करना, मिताहार अर्थात् शरीर की रक्षा के लिये अल्प भोजन करना, शौच अर्थात् शुद्धि रखना, ये दश यम हुआ करते हैं ।७। सन्तोष, तप, आस्तिक्य अर्थात् ईश्वर की सत्ता में सत्य विश्वास रखना, दान—देव का पूजन–सिन्द्धान्तों का श्रवण करना—ह्रीं अर्थात् लज्जा—मत्ति अर्थात् सद्बुद्धि–जप अर्थात् मन्त्रों का जप करना—हुत अर्थात् होम–ये दश नियम होते हैं जो कि योग शास्त्र के विद्वानों द्वारा कहे गये हैं । पद्मासन–स्वास्तिक–वज्र—भद्रासन—वीरासन ये क्रम से पाँच आसन कहे गये हैं । ऊरुओं के ऊपर दोनों पाद तल क्रम से विन्यस्त किये जाते हैं और व्युत्क्रम से दोनों अनुष्ठों को हाथों से निबद्ध करे यही पद्मासन कहा गया है जो कि योगियों के लिये परम हृदयङ्गम होता है ।११। जानु और ऊरुओं के अन्तर में दोनों पाद तलों को भली भाँति करे । योगी ऋजु शरीर वाला होते हुये प्रविष्ट होवे–यह स्वास्तिक आसन कहा जाता है ।१२। सीवनी के पार्श्वों में दोनों गुल्फों को विन्यस्त करे । वृषणों के नीचे पाद पार्ष्णियों को हाथों के द्वारा परिबद्ध करे ।१३।

भद्रासनं समुद्दिष्टं योगिभिः पूजितं परम् ।
ऊर्वोः पादौ क्रमान्न्यस्येज्जान्त्रोः प्रत्यङ्गमुखागुलीं ।१४
करौ निदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमम् ।
एकपादमधः कृत्वा विन्यस्योरौ तथेतरम् ।१५
ऋजुकायो विशेद्योगी वीरासनमितीरितम् ।
इडयाऽऽकर्षयेद्वायुं बाह्यं षोड़शमात्रया ।१६

धारयेत्पूरितं योगी चतुः षष्ठया तु मात्रया ।
सुषुम्णा मध्यगं सम्यक् द्वात्रिंशन्मात्रया शनैः ।१७
नाड्या पिङ्गलया चैनं रेचयेद्योगवित्तमः ।
प्राणायाममिमं प्राहुर्योगशास्त्रविशारदाः ।१८
भूयो भूयः क्रमात्तस्य व्यत्यासेन समाचरेत् ।
मात्रावृद्धिक्रमेणैव सम्यग्द्वादश षोडश ।१९

इसको योगियों के द्वारा परम पूजित भद्रासन कहा गया है । ऊरू और पादों को क्रम से न्यस्त करे तथा प्रत्यंग मुखागुलि वाले जानुओं को करे । करों को निर्धारित करे—यह परमोत्तम वज्रासन कहा गया है । एक पैर को नीचे करके तथा ऊरुओं को विन्यस्त करे । योगी को सीधे शरीर वाला होना चाहिये—इसको वीरासन बताया गया है ।१६। योगी चौसठ मात्रा से पूणरक धारण करे और सुषुम्ना से मध्य में रहने वाले को भली भाँति बत्तीस मात्रा से शनैः शनैः पिंगला नाड़ी के योग के ज्ञाता को इसका रेचन करना चाहिए । योगशास्त्र के विद्वान् इस प्रकार से करने को प्राणायाम कहा करते हैं ।१७-१८। पुनः व्यत्यास से इस प्रकार समाचरण करे । मात्राओं की वृद्धि के क्रम से भली भाँति षोड़श और द्वादश करे ।१९।

प्राणो ामो हि द्विविधः सगर्भोऽगर्भएव च ।
जपध्यानादिभियुक्तं सगर्भं त विदुर्बुधाः ।२०
तदपेतं विगर्भं च प्राणायामं परे विदुः ।
क्रमादभ्यस्यतः पुंसो देहे स्वेदोद्गमोऽधमः ।२१
मध्यमः कम्पसंयुक्तोभूमित्यागः परोमतः ।
उत्तमस्य गुणावाप्तिर्यावच्चीलनमिष्यते ।२२
इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु निरर्गलम् ।
बलादाहरणं तेभ्यः प्रत्याहारोऽभिधीयेते ।२३
अंगुष्ठगुल्फजानूरुसीवनीलिङ्गनाभिषु ।
हृद्ग्रीवाकन्ठदेशेषु लम्बिकायां तोनसि ।२४

भ्रूमध्ये मस्तके मूर्दिघ्न द्वादशान्ते यथाविधि ।
धारणं प्राणमरुतो धारणेति निगद्यते ।२५
समाहितेव मनसा चैतन्यान्तरवर्तिना ।
आत्मन्यभीष्टदेवानां ध्यान ध्यानमिहोच्यते ।२६

प्राणायाम सगर्भ और अगर्भ दो प्रकार का होता है । जप और ध्यान आदि से युक्त जो होता है उसको बुधगण सगर्भ प्राणायाम कहा करते हैं । इससे विमुक्त जो होता है उसको अगर्भ प्राणायाम कहा जाता है । क्रम से अभ्यास करने वाले पुरुष की देह स्वेद का उद्‌गम होता है जो अधम है ।२०-२१। मध्यम जो होता है वह कम्प से युक्त होता है । जो भूमि के त्याग करने वाला होता है वह उत्तम कहा गयाहै । उत्तमसे गुणों की अबाप्ति होतीहै जब तक इसका शीलन अभीष्ट होता है ।२२। विषयों में विना अर्मला के जो इन्द्रियों का विचरण होता है । उनका विषयों से बल पूर्वकजो आहरण किया जाता है उसे ही प्रत्याहार कहा जाता है ।२३। अंगुष्ठ – गुल्फ—जानु—ऊरु—सीवनी—लिङ्ग—नाभि—हृदय—ग्रीवा और कण्ठ देशों में—तालुमूल—मस्तक भ्रूमध्य—मूर्धा द्वादशान्त में विधि पूर्वक प्राण वायु को धारण करना ही धारणा कही गई है ।२५। चैतन्यान्तरवर्ती समाहित मन से आत्मा में अभीष्ट देवों का जो ध्यान किया जाता है उसी का नाम ध्यान है ।२६।

समस्तभावना नित्यं जीवात्मगरमात्मनोः ।
समाधिमाहुर्मुनयः प्रोक्तमष्टाङ्गलक्षणम् ।२७
षण्णवत्यगलायाम शरीरमुभयात्मकम् ।
गुदध्वजान्तरे कन्दमुत्सेधाद्द्वयगुलं विदुः ।२८
तत्माद् द्विगुणविस्तारं वृत्तरूपेण शोभितम् ।
नाडयस्तत्र समुद्भूता मुख्यास्तिस्रः प्रकीर्तिताः ।२९
इडा वामें स्थिता नाडी पिङ्गला दक्षिणे मता ।
तयोर्मध्यगता नाडी सुम्षुणा वंशमाश्रिता ।३०

पादांगुष्ठद्वये ाता शिफाभ्यां शिरसा पुनः ।
ब्रह्मस्थानं समापन्ना सोमसूर्याग्निरूपिणी ।३१
तस्या मध्यगता नाडी चित्राख्या योगिवल्लभा ।
ब्रह्मरन्ध्रं विदुस्तस्यां पद्मसूत्रनिभि परम् ।३२

जीवात्मा और परमात्मा की नित्य समस्त भावना को ही मुनिगण अष्टांग लक्षण से युक्त समाधि कहा करते हैं।२८। छियानवे अंगुलि के आयाम वाला उभयात्मक शरीर है । गुदा और ध्वज के अन्तर में कन्द है जो दो अंगुल होता है । उससे दुगुने विस्तार वाला वृत्त रूप से शोभित है । वहाँ पर उत्पन्न हुई नाड़ियाँ मुख्य तीन कही गई हैं ।२८। वाम भाग में स्थित नाड़ी इड़ा होती है और दक्षिण भाग में स्थित पिंगला गाड़ी है । उन दोनों के मध्य में रहने वाली नाड़ी वश के आक्षित सुषुम्ना होती है ।३०। दोनों ादों के अंगुष्ठों के साथ गई हुई पुनः शिर के साथ शिफाओं से ब्रह्म स्थान को समापन्न हुई है। यह सोम—सूर्य और अग्नि का रूप वाली है ।३१। उसके मध्य में गई हुई नाड़ी का नाम चित्रा है जो योगियों की परम प्रिया होती है । उसमें कमल के सूत्र के सदृश ब्रह्म रन्ध्र कहा जाता है ।३२।

आधारांश्चविदुस्तत्र मतभेदादनेकधा ।
दिव्यमार्गमिमं प्राहुरमृतानन्दकारणम् ।३३
इडायां सञ्चरेच्चन्द्रः पिङ्गलायां दिवाकरः ।
ज्ञातौ योगनिदानज्ञैः सुषुम्णायां तु तावुभौ ।३४
आधारकन्दमध्यस्थ त्रिकोणमतिसुन्दरम् ।
ज्योतिषां निलयं दिव्यं प्राहुरागमवेदिनः ।३५
तत्र विद्युल्लताकारा कुण्डली परदेवता ।
परिस्फुरति सर्वात्मा सुप्ताहिसदृशाकृतिः ।३६
बभर्ति कुण्डलीशक्तिरात्मानं हंहमाश्रिता ।
हंस प्राणाश्रयोनित्य प्राणो नाडीसमाश्रयः ।३७

आधारादुद्‌गनो वायूर्यथावत्सर्वदेहिनाम् ।
देहं व्याप्य स्वनाडोभिः प्रयाणं कुरुते बहिः ।३८

वहाँ पर मतों के भेद से अनेक प्रकार के आधार कहे जाते हैं। अमृतानन्द के कारण इसको दिव्य माना जाता है।३३। इडा में चन्द्र संचरण किया करता है और पिङ्गला में दिवाकर का संचरण होता है। जो योग के निदान के ज्ञाता हैं वे सुषुम्ना में इन दोनों का संचरण जानते हैं।३४। आधार कन्द के मध्य में स्थित अत्यन्त सुन्दर त्रिकोंण है। आगमवेत्ता इसकी ज्योतियों का दिव्य निलय कहते हैं।३५। वहाँ पर विद्युल्लता के आकार वाली परम देवता कुन्डली है। सबकी आत्मा यह सोते हुये सर्प की-सी आकृति वाली परिस्फुरण किया करती है।२६। आत्मा हस के आश्रय में रहने वाली यह कुन्डली शक्ति का विभरण करता है। प्राणों के आश्रम वाला हंस नित्य ही नाड़ियों के समन्वय से युक्त प्राण है।३७। समस्त देहधाहियों के आधार से उद्‌भुत वायु यथावत् अपनी नाड़ियों के द्वारा देह में व्याप्त होकर बाहर प्रयाण करता है।३८।

द्वादशांगुलमानेन तस्मात्प्राण इतीरितः ।
रम्ये मृद्वासने शुद्धे पटाजिनकुशोत्तरे ।३९

बध्वैकमासनं योगी योगमार्गपरो भवेत् ।
ज्ञात्या भूतोदयं देहे विधिवत्प्राणवायुना ।४०

तत्तद्भूतं जपेद्देहं दृढत्वावाप्तये सुधीः ।
दण्डाकारा गतिर्भूमेः पुठयोरुभयोरधः ।४१

तोयस्य पावकस्योदूर्ध्वगतिस्तिर्यङ्गनभस्वतः ।
गतिर्व्योम्नो भवेन्मध्ये भूतानामुदयः स्मृतः ।४२

धरणेरुदये कुर्यात्स्तम्भनं वश्यमात्मवित् ।
शान्तिकं पौष्टिकं कर्म तोयस्य समये वसोः ।४३
मारणादीनि मरुतो विपक्षोच्चाटनादिकम् ।
क्ष्वेडादिनाशतं शान्तमुदये च विहायसः ।४४

अंगुलीदृढं बध्वा करणानि समाहितः ।
अंगुष्ठाभ्यामुभे श्रोत्रे तर्जनीभ्यां विलोचने ।४५
नासारन्ध्रे मध्यमाभ्यामन्याभिर्वदनं दृढम् ।
वध्वात्मग्रणामनसामेकत्व ममनुस्मरन् ।४६
धारयेन्मारुतं सम्यग्योगोऽयं योगिबल्लभः ।
नादः सन्जायते तस्य क्रमादभ्यसतः शनैः ।४७

द्वादश अङ्गुलों के मान से यह स्थित है, । इसी से प्राण यह नाम से पुकारा जाता है । रम्भ और शुद्ध मृदु आसन पर जो पट्— अजित् और कुशा का होता है । उस पर योगी आसन बाँधकर योग मार्ग में परायण हुआ करता है । देह में भूतोदय का ज्ञान प्राप्त होता है जोकि विधि पूर्वक कठोर वायु द्वाराकिया जाता है ।३९-४०। विद्वान् पुरुष को तद्भूत देह की दृढ़ता की प्राप्ति के लिये जाप करना चाहिये । दोनों पुटों के नीचे दन्ड के आकार वाली भूमि की गति है ।४१। जल और पावक के ऊपर नभस्वान की तिर्यक् गति है । मध्य में व्योम की गति है—इस रीति से भूतों का उदय बताया गया है ।४२। आत्मवेत्ता की धरणी के उदय में स्तम्भन और वैश्य करना चाहिये । वसु के समय तोव (जल) का शान्तिक और पौष्टिक कर्म करने चाहिये ।४३। आकाश के उदय में धरणादिक शरे और मरुत से विमक्ष का उच्चाटन आदि करे, क्षोडा का विनाशन शान्त करे ।४४। परम सावधान होकर शङ्गलियों से श्रवणेन्द्रिय को दृढ़ता से बद्ध करके दोनों अंगूठों से दोनों कानों को तर्जनी

अ गुलियां से, दोनों नेत्रों को माध्यमाओं से, नासिका के दोनों छिद्रों को तथा अन्य अङ्गुलियों से मुख को दृढ़ता से वद्ध करके आत्मा-प्राण औ मन के एकत्व का स्मरण करते हुये वायु को भली-भाँति धारण करे—यह योग योगियों का परम प्रिय होता है। क्रम से शनैः अभ्यास करने वाले के नाद समुत्पन्न हुआ करता है।४५-४७।

मत्तभृङ्गाङ्गनागीतसदृशः प्रथमोध्वनिः।
वशिकास्याविलापूर्णवशध्वनिनिभाऽपरः।४८
घण्टारवसमः पश्चाद् घनमेघस्वनोऽपरः।
एवमभ्यसतः पुंसः संसारध्वान्तनाशनम्।४९

ज्ञानमुत्पद्यते पूर्वं हंसलक्षणमव्ययम्।
पुम्प्रकृत्यात्मकौ प्र.क्तौ बिन्दुसर्गौ मनीषिभः।५०
ताभ्यां क्रमात्ससुद्भूतौ विन्दुसर्गोवसानकौ।
हंसौ तौ पुम्प्रकृत्याख्यौ ह पुमान्प्रकृतिस्तु सः।५१

अजपा कथिता ताभ्यां जीवोयमुपतिष्ठति।
पुरुष स्वाश्रय मत्वा प्रकृतिर्नित्यमोत्मना।५२
यदा तद्भावप्राप्नोति तदा सोऽहमिमं भवेत्।
सकारार्णं तवारिर्णं लोपयित्वा तत परम्।५३

सन्धि कृपात्पूर्वरूपन्तदासौ प्रणवो भवेत्।
परानन्दमयं नित्यंचैतवेक गुणात्मकम्।
आत्माभेदस्थितं योगी प्रणव भावयेत्सदा।५४

आम्नायवाचामतिदूरमाद्यं वेद्यं स्वसंवेद्यगुणेन सन्तः।
आत्मानमानन्दरसैकसिन्धुं पश्यन्ति तारात्मकमात्मनिष्ठाः।५५

सत्यं हेतुगिवर्जितं श्रुतिगिरामाद्यं जगत्कारणम् ।
व्याप्तस्थावरजङ्गमं निरुपमं चैतन्यमन्तर्गतम् ।
आत्मानं रविवह्निचन्द्रवपुषं तारात्मकं सन्ततम् ।
नित्यानन्दगुणालयं सुकृतिनः पश्यन्ति रुद्धेन्द्रिया ।५६

मदमस्त भ्रमर की अङ्गना के समान प्रथम ध्वनि होती है । बाँस के छिद्र के पूर्ण होने पर जैसी ध्वनि हुआ करती है उसीके सदृश दूसरी ध्वनि होती है ।४८। फिर घण्टा की ध्वनि के तुल्य ध्वनि होती है, पीछे मेघ के गर्जन के सदृश ध्वनि होती है । इसी प्रकार ने अभ्यास करने वाले पुरुष को संसार के ध्वान्त (अन्धकार) का विनाश हो जाया करता है ।४६। हस के लक्षण वाला अव्यय पहिले ज्ञान उत्पन्न होता है । मनीषियों ने विन्दु और सर्ग को पुम्प्रकृति के स्वरूप वाला बताया है । उन द्वीपों से क्रम से अवसानक विन्दु और सर्ग समुत्पन्न होते हैं । वे दोनों पुम्प्रकृति नाम वाले हंस है । हे पुमान् है सौ प्रकृति है ।५०-५१। ये दोनों अजपा कहो गयी है । फिर यह वीज उपस्थित हुआ करता है । पुरुष को स्वाश्रय मानकर प्रकृति नित्य ही उसी के समाश्रित है यही इन दोनों का सम्बन्ध है ।५२। जिस समय में उस भाव को प्राप्त करता है तब मैं वहीं हूँ ऐसा भास हुआ करता है । प्रकृति और पुरुष के अभेद होने से मैं परमात्मा ही हूँ—इस रीति से यह जीव और ब्रह्म का ऐक्य होता है । अजपा के अभ्यास से इस प्रकार का ऐक्य उद्भूत हुआ करता है । सकारार्ण और प्रशारार्ण को योजित करके इसके पश्चात् सन्धि तथा पूर्वरूप करे तो यह प्रणव हो जाया करता है, यह परानन्दमय और एक जप के गुण से युक्त होता है आत्मा के अभेद में स्थित रहने वाला योगी सदा इस प्रणव की भावना किया करता है ।५४।जो आत्मनिष्ठ पुरुष होते हैं वे सदा प्रणव की भावना किया करते हैं । उस तारात्मक को देखते हैं जो आम्नाय के वचनों से अत्यन्त दूर है, आद्य, वेद्य तथा स्वसंवेद्य गुण से युक्त है और आनन्द रस के सागर आत्मा का दर्शन करते हैं ।५५। अपनी

इन्द्रियों को वश में रखने वाले मुकृती पुरुष रवि-चन्द्र और वह्नि के शरीर वाले-निरन्तर तार स्वरूप-नित्यानन्द गुण के निलय आत्मा को देखा करते हैं ।५६।

तारस्य सप्तविभवैः परिचीयमानं
मानैरगम्यमनिशं श्रुतिमौलिमृग्यम् ।
सच्चित्समस्तगमनश्वरमच्युतं तत्तेजः
परं भजत सान्द्रसुधाम्बुराशिम् ।५७

हिरण्मयं दीप्तमनेकवर्णं त्रिमूर्तिमूलं अनगमादिबीजम् ।
अंगुष्ठमात्रं पुरुषं भजन्ती चैतन्यमात्रं रविमन्डलस्थलम् ।५८
सुखदा दातृसुभगा शंकरार्द्धशरीरिणी ।
ग्रन्थपुष्पोपहारेण प्रीता नः पार्वती सदा ।५६

ध्यायन्ति दुग्धाब्धिभुजङ्गभोगे शयानमाद्यं क लासहायम् ।
प्रफुल्लनेत्राम्बुजनाभं चतुर्मुखेनाश्रितनाभिपद्मम् ।६०

ध्याम्नाय्यग्रन्थिवचनं घननीलनुद्यच्छ्री-
वत्सकौस्तुभगदाम्बुशङ्खचक्रम् ।
हृत्पुण्डकरीकनिलयं जगदेकमूलमाल लोकयन्ति
कृतिनः पुरुषं पुराणम् ।६१

बिन्दोर्नादससमुद्भवः समुदिते नादे जगत्कारणम् ।
तां तत्वमुखाम्बुजं पुरवितं वर्णात्मकैर्भूर्जजैः ।
आम्नायङिघ्रचतुष्ट्यं पुरिरिपोरानन्दमूलं वपुः
पायाद्व्योमुकुटेन्दुखण्डविगलद्दिव्यामृतौघ..म् ।६२

तार के सप्त विभवों के द्वारा परिचीय मान-प्रमाणों के द्वारा अगम्य-निरन्तर श्रुति शिरोमणि के द्वारा खोजने के योग्य-सत्, चित्

समस्त के द्वारा ज्ञान, नश्वर, सान्द्र सुधाम्बु का समूह, अच्युत उस परम तेज का भजन अर्थात् सेवन करो ।५७। हिरण्यमय, दैदीप्यमान, अनेक वर्णो वाला, त्रिमूर्ति का मूल, निगम का आदि बीज, चैतन्यमात्र, रविमन्डल में स्थित और अङ्गुष्ठमात्र पुरुष का सेवन किया करते हैं । ।५८। पार्वती देवी जो सुख प्रदान करने वाली है, दाताओं के लिये सुभगा है, भगवान शङ्कर की अर्धाङ्गिनी है अन्य रूपी पुष्पों के उपहार से प्रसन्न होने वाली हैं, वह सर्वदा हम पर कृपा करे ।५९। क्षीरसागर में शेष की शय्या पर शयन करने वाले, सबके आदि रूप, लक्ष्मी के साथ विराजमान, विकसित नेत्र रूपी कमलों वाले, कमल की नाभि में धारण करने वाले तथा ब्रह्मा के द्वारा समाश्रय किया हुआ है नाभि में कमल जिनके ऐसे भगवान् लक्ष्मी नारायण प्रभुका ध्यान करते हैं ।६०। कृती लोग आम्नाय ग्रन्थि के वचन, धन के समान नील वर्ण वाले, श्रीवत्स के चिह्न से संयुत गदा शंख, कमल और चक्र आयुधों के शोभित, हृदय रूपी पुन्डरीक में निलय वाले, इस जगत्के एकमात्र मूल पुराण पुरुष का कृतीजन ही अवलोकन किया करते हैं ।६१। बिन्दु से नाद की उत्पत्ति होती है, नाद में ही जगत् का कारण है, वर्णात्मक भूर्जजों से तत्व मुखाम्बुज पुरिवत है, आम्नाय चतुष्टय अङ्घ्रि है । पुर-रिपु भगवान् का आनन्द मूल वपु है । वह वपु जिसके मस्तक में इन्द्र-खन्ड है जिससे विगलित होते हुये दिव्यामृत का समूह है, उससे वह वपु परिप्लुत हो रहा है । ऐसा भगवान् भव का वपु आपकी रक्षा करे ।६२।

पिण्ड भवेत्कुन्डलिनी शिवात्मा पद तु हंसःसकलान्तरात्मा ।
रूपं भवेद्बिन्दुरनन्तकान्तिरतीनरूपं शिवसामरस्यम् ।६३

पिण्डादियोग शिवसामरस्यात्सबीजयोग प्रवदन्ति सन्तः ।
शिवेलय नित्यगुणाभियुक्तं निर्बीजयोगं फलनिर्व्यपेक्षम् ।६४

मूलोन्निद्रभुजङ्गराज महिषी यान्तीं सुषुम्नान्तरम्
भित्वाधारस मूहमाशु विलसत्सौदामिनी सन्निभाम्।

व्योमाम्भोजगतेन्दुमण्डलगलद्दिव्यामृतौघप्लुताम् ।
सम्भाव्य स्वगृहं गतां पुनरिमां सञ्चिंतयेत्कुण्डलीम्॥६५

हंसं नित्यमनन्तमव्ययगुणं स्वाधारतोनिर्गता ।
शाक्तः कुण्डलिनी समस्तजननी हस्ते गृहीत्वा च तम्।

याता शम्भुनिकेतनं परसुख तेनानुभूय स्वयम् ।
यान्ती स्वाश्रयमर्ककोटिरुचिरा ध्येया जगन्मोहिनी ॥६६

अव्यक्तं परबिन्दुम ञ्चतरुचि नीत्वा शिवस्यालयम् ।
शक्तिः कुण्डलिनी गुणत्रयवर्विद्युल्लतासन्निभा ।

द्वानन्दामृतमध्यग पुरभिदं चन्द्रार्ककोटिप्रभम् ।
सवीक्ष्य स्वपुरं गता भगवती ध्येयाऽनवद्या गुणैः ॥६७

मध्येवर्त्म समीरणद्वयमिथः सघट्टसंक्षोभजम् ।
शब्दस्नोममतीत्य तेजसि तडित्कोटिप्रभाभासुरे ।

उद्यन्तीं समुपास्महे नवजपासिन्दूरसन्क्ष्यारुणाम्
सान्द्रानन्दसुधामयीं परशिवं प्राप्तांपरां देवताम् ॥६८

गमना गमनेषु जांघिकी सा तनुयाद्योगफलानि कुडली ।
मुदिताकुल का मसेनुरेषा भजतां काक्षितकल्पवल्लरी ॥६९

कुण्डलिनी पिन्ड होती है, सकल का अन्तरात्मा हंस शिवात्मा है। अनन्तकान्ति अतीतरूप शिव सामरस्य होता है । ६३ । सन्तगण शिवसामरस्य से पिण्डादि योग को सबीज योग कहा करते हैं । नित्या-गुणाभियुक्त शिव में फल निर्व्युपेक्ष निर्बीज योग होता है ।६४। इसके अनन्तर फिर कुन्डलिनी को चिन्तन करना चाहिये जो मूलोन्निद भुजङ्ग को राजमहिषी है और सुषुम्ना के अन्दर वमन करती हुई है । शीघ्र ही आधार समूह का भेदन करके विलसत्सौदामिनी सदृश होती है। व्योम कमल में स्थित चन्द्रमा के मन्डल से गलित हुये दिव्य अमृत के समूह से परिप्लुत है। ऐसी इसको स्वगृह में गयी हुई सम्भावित करके पुन: इस कुन्डलिनी का सचिन्तन करना चाहिये।३५। नित्य-अनन्त अव्यय गुण वाले हम स्वाधार से निकली हुई शक्ति समस्तों की जननी को हाथ में ग्रहण करके उसको प्राप्त हुई परममुख से पूर्ण शम्भु के निकेतन पहुँची है । उसके द्वारा अनुभव करके करोड़ों सूर्यो के समान रुचिर अपने आश्रय को गमन करती है ऐसी उसका जो जगत् का मोहन करने वाली है ध्यान करना चाहिये ।६६। अव्यक्त अजित रुचि युक्त पर विन्दु शिव के आलय को लेकर वह रूपा कुन्डलिनी तीनों गुणों के वसुधारिणी विद्युल्लता के समान है। आनन्द रूपी अमृत के मध्य में स्थित—पुर का भेदन करने वाले—करोड़ों चन्द्र और सूर्य की प्रभा से संयुत सबीक्षण करके अपने पुर में गयी है, गणों के द्वारा अनवद्या भगवती का ध्यान करना चाहिये ।६७। मध्य में जो वर्त्म है वह दो वायुओं के परस्पर संग्रह से होने वाले क्षोभ से समुत्पन्न हैं, ऐसे शब्द स्तोम को अतीत करके करोड़ों तड़ित् के समान भासुर तेज में उदित होती हुई नूतन जया-सिन्दूर और सन्ध्या के समाम अरुण सान्द्र आनन्द रूपी अमृत से परिपूर्ण प्राप्त परशिव परा देवता की समुपासना करते हैं ।३८। गमन और आगमन में जड़ि्घकी वह कुन्डली योग के फलों का विस्तार किया करती है । यह आकुलोंके लिये मुदित कामधेनु है और इच्छित संकल्पों के लिये लता है, इसका सेवन करो ।६९।

आधारस्थितशक्तिबिन्दुनिलयां नीवारशूकोपमाम्।
नित्यानन्दमयीं गलत्परसुधावर्षैः प्रबोधप्रदैः।
सिक्तषट्सरसीरुहाणि विधिवत्कोदण्डमध्योदिताम्
ध्याये द्भास्वरबन्धजीवरुचिरां सांब्बन्मयीं देवताम्।७०

हृत्पङ्केरुहभानुबिम्बनिलयां विदुयल्लतामत्सराम्।
बालार्कारुणतेजसा भगवता निर्भर्त्सयन्तीं तमः।
नादाख्यं पदमर्द्धचन्द्रकुटिलं संविन्मय शाश्वतम्।
यान्तीमक्षररूपिणीं विमलधोय्यत्येद्विभुं तेजसाम्।७१

भाले पूर्ण निशापतिप्रतिभटान्नीहारहारत्विषा।
सिञ्चन्तीममृतेन देवममितनानन्दयनी तनुम्।
वर्णानां जननीं तदीयवपुषा संप्राप्य विश्वं स्थिताम्।
ध्यायेत्सम्यगनाकुलेन मनमा सत्विन्मयीममम्बिकाम्।७२

भूले भाले हृदि च विलसद्वर्णरूपा सावित्री।
पोनोत्तुङ्गस्तनभरनमन्मध्यदेशा महेशी।
चक्रे चक्रे गलितसुधया सिक्तगात्रा प्रकामं
दद्यादाद्याश्रियमविकलां वाङ्मयी देवता नः।७३

निजभवननिवासादुच्चरन्ती विलासैः।
पथि पथि कमलानां चारुहासं विधाय।
तरुणतरणि कान्दिः कुण्डली देवता सा।
शिवसदनसुधाभिदांपयेदामातेजः।७४

आधारवन्धप्रमुख क्रियाभिः समुत्थिता कुण्डलिनी सुधाभिः
त्रिधामबीजं शिवमर्चयन्ती शिवाङ्गना वा शिवमातनोतु ।।७५

आधार में स्थित शक्ति बिन्दु के निलय वाली नीवार शुक के समान, नित्य आनन्द से पूर्ण, प्रबोधकी प्रदायक, गलित परम सुधा की वर्षाओं से षट् सरसों रुहों कं विधिपूर्वक करने वाली को दन्ड के मध्य में उदित-भास्वर बन्धु जीव के समात रुचिर सत और चित् से परिपूर्ण देवता का ध्यान करना चाहिये ।७०। हृदय रूपी कमल को भ नुबिम्ब के समान ही निलय जिसका तथा विद्यु ल्लता के सदृण-बाल सूर्य के समान अरुण तेज वाले भगवान् के द्वारा अन्धकार का निर्भत्सन करती हुई, नाद नामक परम अर्ध चन्द्र के समान कुटिल तथा निरन्तर सम्बित् से पूर्ण, अक्षर रूप वाली, तेजों की विभु कों विमल बुद्धि वाला ध्यान करें ।७१। भाल में पूर्ण चन्द्र वाली, प्रतिभटों को नीहार की कान्ति से अमृत द्वारा देव का जिचन करती हुई जो कि अपरिमित है, वपु की आनन्दित करने वाली, वर्णों के जनन करने वाली, उसके वपु से विश्व को प्राप्त करके स्थित ऐसी सम्वित् से परिपूर्ण अम्बिकादेवी का भलीभाँति अनाकुल मन से ध्यान करना चाहिये । ।७२। मूल में भाल में और हृदय में विराजमान वर्ण रूप सवित्री-पीन (स्थूल) और उत्तुङ्ग (ऊँचे) स्तनों के भार से नमित शरीर के मध्य देश वाली महेशी देवी मक्रचक्र में घलित हुये अमृत से गात्र को प्रकाम रूप से सिक्त करने वाली देवी अविकल आद्य वाङ्मयी श्री को हमको प्रदान करे ।७३। अपने भवन में निवास से विलसों के द्वारा उच्चारण करती हुई, मार्ग में कमलों के सुन्दर विकास करके, तरुण सूर्य्य की कान्ति वह कुण्डली देवता शिव के सदन की सुधा से आत्म तेज को प्रदत्त करा देवे ।७४। आधार वन्ध की प्रदान क्रियाओं के द्वारा अमृत से समुत्थित कुन्डलिनी त्रिधाम के बीजस्वरूप भगवान्

शिव का अर्चन करती हुई शिव की अर्धाङ्गिनी आपकी कल्याण का विस्तार करें ।७५।

सिन्दूरपुंजनिभमिन्दुकलावतंसमानन्दपूर्णनयनत्रयशोभिवक्त्रम्
आपीनतुङ्गकुचनम्रमनङ्गतन्त्रं शम्भोः
कलत्रममितां त्रियमातनोतु ।।७६

नयनकमलैर्दीर्घादीर्घैरलङ्कृतदिङ्मुखम् ।
विनतमरुतां कोटीपाग्रैर्निघृष्टपदाम्बुजम् ।।
तरुणशकलं चान्द्रं बिभ्रद्घटस्तनमण्डलम् ।
स्फुरतु हृदये वन्धूकाभं कलत्रमुमापतेः ।।७७

वर्णैरर्णवषड्दिशारविकलाचक्षुर्विभक्तैः क्रमा-
दाद्यै-सादिभिरावृताक्षहयुतैः षट्चक्रमध्यानिमान्
डाकिन्यादिभिराक्षितान्परिचितान् ब्रह्मादिभिर्दैवतै
भिन्दाना परदेता त्रिजगतां चित्ते विधत्तां मुदः ।।७८

सिन्दूर के समूह के समान चन्द्र की कला के आभूषण वाली, आनन्द से परिपूर्ण तीन नेत्रों के ज्ञाता सुशोभित मुख से संयुक्त, स्थूल और ऊँचे स्तनों के द्वारा नम्र ऐसी कामदेव की तन्त्र स्वरूप भगवान् शम्भु की भामिनी अपरिमित श्री का विस्तार करे ।७६। बड़े-बड़े नेत्ररूपी कमलों के द्वारा दिशाओं के मुख की अलंकृत करने वाली, विनम्र मरुतों के कोटीराग्रों द्वारा पदाम्वुजों को निघृष्ट तरने वाली, तरुण खन्ड वाले चन्द्रमा से घटस्तन मन्डल को धारण किये हुये बन्धूक के सदृश उमापति की भामिनी हृदय में स्फुरण करे ।७७। अर्णवषट् दिशाओं से रविकला रूपी चक्षु से विभक्त वर्णों से क्रमशः आद्यसादि

से आवृताक्षह से संयुत इन षट्चक्रों के मध्यों को डाकिनी प्रभृति से आश्रित और ब्रह्मा आदि देवों से परिचित तीनों जगतों के परदेवों का भेदन करती हुई, चित्त में आनन्द में करे ।७८। आधार से गुण वृत्त द्वारा शोभा युक्त वपु, सत्वर निर्गत्वरा, कमलों का भेदन करने वाली आनन्द प्रबोध के उत्तर चिन्मयघना, संक्षुब्ध ध्रुवमन्डल से अमृत करों द्वारा प्रस्पन्दमान अमृत का स्रोत, कन्दलिता अमन्द विद्युत् के समान आकार वाली भगवती भवानी की भावना करनी चाहिये ।७९।

एकविंश पलट

।। गायत्री महिमा ।।

प्रणवाद्या व्याहृतयः सप्त स्युस्तत्पदादिकाः ।१
चतुर्विशत्यक्षरात्या गायत्री शिरसान्विता ।२
सर्ववेदोद्धृतः सारो मन्त्रोऽयं समुदाहृतः ।
ब्रह्मा देव्यादिगायत्री परमात्मा समीरिताः ।३
ऋष्याद्याः प्रणवस्यैते मुनिभिः परिकीर्तिताः ।४
जमदग्निभरद्वाजभृगुगोतमकश्यपान् ।
विश्वामित्रवसिष्ठाख्योर्ह व्या तीनामृषीन्विदुः ।

गायत्र्युष्णिगथानुष्टुब्बृहतीपक्तयः पुनः ।
त्रिष्टुब् जगत्यश्छन्दांसि कथितानि मनीषिभिः ।६
सप्तार्चिरनिलः सूर्यो वात्रयतिर्वरुणोवृषः ।
विश्वेदेवाः क्रमादासां देवताः परिकीर्तिताः ।७

इसमें सब आहुतियों का और गायत्री का अर्थ बताया गया है। प्रणव जिनके आदि में होता है ऐसी उस गायत्री मन्त्र के आदि में रहने वाली सात व्याहृतियाँ होती है। वे भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम् ये सात व्याहृतियां हैं। इनके पूर्व में प्रणव होता है। शिर से समन्वित गायत्री चौबीस अक्षरों वाली होती है। यह गायत्री मन्त्र समस्त वेदों का उद्धृत किया हुआ सार है—ऐसा ही उदाहृत किया गया है। ब्रह्मा देवी आदि गायत्री और परमात्मा कहे गये हैं। प्रणव के ऋषि आदि मुनियों के द्वारा कीर्त्तित किये गये हैं।३-४। व्याहृतियोंके ऋषि जमदग्नि, भरद्वाज, भृगु, गौतम, कश्यप, विश्वामित्र और वसिष्ठ होते हैं। ऐसा ही जान लेना चाहिये।५। गायत्री, उष्णिक् अनुष्टुप्, वृहती, पङ्क्त, त्रिष्टुप् और जगती ये छन्द हैं जो मनीषियों के द्वारा बनाये गये हैं।६। सप्तार्चि, अनिल, सूर्य्य, वाक्यापति, वरुण, वृष और विश्वादेवा ये क्रम से इनके देवता कहे गये हैं।७।

गायत्र्या मुनिराख्यातो विश्वामित्रो महाद्युतिः ।
गायत्रीच्छन्द इत्युक्तं देवता सविता स्मृता ।८
शिरसोऽस्य मुनिर्ब्रह्मा छन्दो देव्यादिका स्मृता ।
गायत्री परमात्मास्य देवता कथिता बुधैः ।९
व्याहृतीः सप्तभूराद्या हृन्मुखासोरुयुग्मके ।
जठरे न्यस्य मन्त्रज्ञो गायत्र्यर्णांस्तनौ न्यसेत् ।१०
पत्ससन्धिषु ध्वजे नाभौ हृत्कण्ठभुजसन्धिषु ।
आस्यनासाकपोलाक्षिकर्णभ्रूमस्तकं पुनः ।११

पाश्चात्योत्तरयाम्यप्रागूर्ध्ववक्त्रेषु साधकः ।
पदानि दश विन्स्येदेषु स्थानेषु मन्त्रवित् ॥१२
शिरोभ्रू मध्यदृग्वक्त्रे कण्ठहृन्नाभि गुह्यके ।
जान्नोः पादयोर्युग्मे तच्छिरः शिरसि न्यसेत् ॥१३
हृदयं ब्रह्मणे प्रोक्तं विष्णवे शिर ईरितम् ।
शिखा रुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम् ॥१४

गायत्री के मुनि विश्वामित्र, जो महतीद्युति वाले थे, बताये गये हैं। इसका गायत्री छन्द है और इसका देवता सविता कहा गया है ।८। इसके शिर का मुनि ब्रह्मा है–देव्यादिका छन्द कहा गया है। बुधों के द्वारा इसका परमात्मा गायत्री देवता कहा गया है ।९। भू. आद्य सात व्याहृतियों का हृदय, मुख, अंस और अरु दोनों जठर में न्यास करके मन्त्र ज्ञाता को गायत्री के वर्णों का स्तनों में न्यास करना चाहिए ।१०। पदों की सन्धियों से, ध्वज में नाभी में, हृदय में, कण्ठ में और भुजाओं की सन्धियो में–मुख, नासिका, कपोल, नेत्र, भ्रू, मस्तक में में साधक पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, पूर्व और ऊर्ध्व वस्त्र में दश पदों का विन्यास करके मन्त्र के वेत्ताओं को इन स्थानों में न्यास करना चाहिये ।११।१२। शिर, भ्रूओं कामध्य भाग, लोचन, मुखमें तथा कण्ठ हृदय, नाभि और गुह्य भाग में, जानुओंमें, एवं दोनोंमें पादों में उसके शिर का न्यास करना चाहिए ।१३। हृदय ब्रह्माजी के लिए कहा गया है और भगवान् विष्णु के लिए शिर बताया गया है। शिखा रुद्रदेव के लिए और कवच ईश्वर के लिए समुदीरित किया गया है ।१४।

नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम् ।
षडङ्गान्तेवमुक्तानि यथा स्थानं प्रविन्यसेत् ॥१५

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दुनिबद्धरत्नमुकुट तत्त्वात्मवर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदाभयाङ्कुशकशाः शूलं कपाल गुणं
शंखचक्रमथारविन्दगलं हस्तेवहन्ती भजे ॥१६

प्राणायामान्पुरा कृत्वा गायत्री सन्ध्योर्जपेत् ।
सप्तव्याहृतिसंयुक्ताँ गायत्री शिरसान्विताम् ॥१७

तिरुच्चरन्धिया प्राणान्धारयेद्यतमानसः ।
प्राणायामोऽयमाख्यतः समस्तदुरितापहः ॥१८

व्याहृतित्रयसंयुक्ता गायत्री दीक्षितो जपेत् ।
तत्त्वलक्षं विधानेन भिक्षाशी विजितेन्द्रियः ।१९

क्षीरौदनंतिलान्दूर्वाक्षोरद्रुमसभिद्वरान् ।
पृथक् सहस्त्रत्रितयं जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ।२०

त्रिधाय मण्डलं विद्वान् त्रिकोणोज्ज्वलकर्णिकाम् ।
सौरं पीठं यजेत्तत्र दीप्तादिनवशक्तिभिः ।२१

नेत्र सदाशिव भगवान् के लिए बताया गया है तथा अस्त्र सर्वात्मा के लिए कहा है । इसी प्रकार से छं अङ्गों को कहा गया है, अतएव छै अङ्गों को ठीक स्थान पर ही विन्यस्त करना चाहिए ।१५। अब ध्यान बताया जाता है—मुक्ता (मोती), विद्रुम हेम, नील और धवल छाया वाले मुखों और तीन नेत्रों से समवित्त, चन्द्र जिसमें निवद्ध है ऐसे रत्नों के निर्मित मुकुट (शिरोभूषण) से युक्त, तत्व स्वरूप वर्णों के आत्मा वाली करों में वरदान, अभयदान, अंकुश, कशा, शूल, कपाल गुण, शंख चक्र और छै अरविन्दो को धारण करने वाली गायत्री देवी का मैं भजन करता हूं ।१६। सबसे पूर्व प्राणायामों को

करके (यहाँ पर जो प्राणायाम में बहुवचन दिया गया है इससे तीन बार ही प्राणायाम करनेका तात्पर्य है) फिर दोनों सन्ध्याओं में गायत्री का जप करना चाहिये। गायत्री सातों व्याहृतियों से युक्त और शिर समन्वित होनी चाहिये। ऐसी ही गायत्री का जप करें। उसका स्वरूप यह है–'ओ३म् भूः, ओ३म् भुवः, ओ३म् स्वः, ओ३म् महः, ॐ जनः, ॐ तपः, ॐ सत्य, ओ३म् तत्सुवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्, ओ३म् आपोज्योतीरसोऽमृत भूर्भुवः स्वरोऽम्।" प्राणों को तीन बार उच्चारण करते हुये धी से यतमानस होकर ही धारण करना चाहिये। यही प्राणायाम कहा है जो समस्त दुरितों (पापों) का अपहरण करने वाला है।१७-१८। जोदीक्षित है उसको(भूःभुवःस्वः) इन तीनों व्याहृतियाँ से युक्त हो गायत्री मन्त्र का जप करना चाहिये। चोबीस लाख जप के विधान से ही जप करे और भिक्षा के द्वारा अपनी अशन क्रिया का सम्पादन करे एवं इन्द्रियों का जीत लेने वाला ही रहे। १९। गायत्री मन्त्र की सिद्धि के लिये साधक की क्षीर, ओदन, तिल, दूर्वा, क्षीर द्रुमों की समिधाओं का पृथक् तीन सहस्र हवन करना चाहिये।१९-२०। विद्वान् पुरुष मण्डल अर्थात् सर्वतोभद्र की रचना करे। उसकी कर्णिका में त्रिगुणित मन्त्र का लेखन करना चाहिये। उसमें सौर पीठ का अभ्यर्चन करे जो कि दोप्ताआदि नौ शक्तियों के सहित होवे।२१।

मूलमन्त्रेण क्लृप्तायां मूर्तौ देवी प्रपूजयेत्।
कोणेषु त्रिषु सम्पूज्या ब्रह्माद्याः शक्तयोबहिः।२२
आदित्याद्यास्ततः पूज्या उषादिसहिताः क्रमात्।
ततः षडङ्गान्यभ्यर्चेत्केसरेषु यथाविधि।२३
प्रह्लादिनीं प्रभां पश्चान्नित्यां विश्वम्भरां पुनः।
विलासिनीप्रभावत्यौ जयां शान्तिं यजेत्पुनः।२४

कान्ति दुर्गा सरस्वत्यौ विश्वरूपां ततःपरम् ।
विशालासंज्ञितामीशां व्यापिनीं विमलां यजेत् ॥२५

ततोऽपहारिणी सूक्ष्मां विश्वयोनि जयावहाम् ।
पद्मालयां परां शोभां पद्म रूपां ततोऽर्चयेत् ॥२६

ब्रह्मयाद्याः सारुणा वाह्ये पूजयेत्प्रोक्तलक्षणाः ।
ततोऽर्चयेद्ग्रहान्वाह्ये शक्रादीनायुधैः सह ।२७

इत्थमावरणैदेवीं दशभिः परिपूजयेत् ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां भोक्ता स्याद्द्विजसत्तमः ।२८

मूल मन्त्र के द्वारा क्लृप्त अर्थात् कल्पना की हुई मूर्त्ति में देवी का प्रकृष्ट पूजन करना चाहिये । तीनों कोणों में ब्रह्मा आदि शक्तियों का अभ्यर्चन करे ।२२। उसके बाहर फिर आदित्य आदि का जो उषा आदि के सहित ही होवें क्रम से पूजन करे । इसके उपरान्त केसरों में षट् अङ्गों का विधि के अनुसार ही अभ्यर्चन करना चाहिये ।२३। इसके पश्चात् प्रह्लादिनी, प्रभा का तथा नित्या और फिर विश्वम्भरा का यजन करे । फिर विलासिनी, प्रभावती जया और शान्ति का अर्चन करना चाहिये ।२४। फिर कान्ति, दुर्गा, सरस्वती और इनके पीछे विश्वरूपा का अर्चन करे । फिर विशाल संज्ञा वाली, ईशा, व्यापिनी और विमला का यजन करना चाहिये ।२५। इसके अनन्तर अपहारिणी, सूक्ष्मा, विश्वयोनि, जयावहा, पद्मालया, परा, शोभा का और फिर पद्म रूपा का यजन करे ।२६। ब्राह्मी आदि सारुणा का जिनके लक्षण वता दिये गये हैं बाहर में पूजन करना चाहिये । इसके अनन्तर बाहर में शक्र आदि ग्रहों का आयुधों के साथ अभ्यर्चन करे ।२७। इस रीति से दश आवरणों के सहित ही देवी का यजन करना चाहिये । ऐसे पूजन करने वाला श्रेष्ठ द्विज चारों पदार्थों का अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का भोग करने वाला हुआ करता है ।२८।

तत्वसंख्यासहस्राणि मन्त्रविज्जुहुयात्तिलैः ।
सर्वपापविनुर्मुक्तो दीर्घमायुः स विन्दति ।२६
आयुषे साज्यहविषा केवलेनाथसर्पिषा ।
दूर्वात्रिकैस्तिलैर्मन्त्री जुहुयात्रिसहस्रकम् ।।३०
अरणाब्जैस्त्रिमध्वक्तैर्जुहुयादयुत ततः ।
महालक्ष्मीर्भवेत्तस्य षण्मासान्नात्र संशयः ।।३१
ब्रह्मश्रिये प्रजुहुयात्प्रसूनैर्ब्रह्मवृक्षजैः ।
वहुना किमिहोक्तेन यथावत्साधु साधिता ।।३२
द्विजन्मनामिय विद्या सिद्धा कामदुधा मता ।।३३
ओं जातवेदसे सुनवास सोममरातीयतोनिदहाति वेदः ।
सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नात्रेव सिन्धुन्दुरितात्यग्निः ।।३४
आग्नेयमभिधास्यामि मन्म सवार्थसाधकम् ।
मारीचः काश्यपः प्रोक्तो मुनिरस्य महामनोः ।।३५
त्रिष्टुप् छन्दो देवताऽप जातवेदोऽग्निरीरितः ।
नवभिः सप्तभिः षडभिः सप्तभि पुनरष्टभिः ।।६५

मन्त्र के ज्ञान रखने वाले पुरुष को चाहिये कि चौबीस सहस्र तिलों के द्वारा आहुतियाँ देवे । वह फिर सभी पापों से निर्मुक्त (छूटा हुआ) होकर दीर्घ आयु की प्राप्ति किया करता है ।२६। आयु के लिये घृत के सहित हवि से होम करे अथवा केवल घृत से ही हवन करना चाहिये । दूर्वात्रिको से, तिलों के द्वारा मन्त्रधारी को तीन सहस्र आहुतियाँ देनी चाहिये ।३०। इसके उपरान्त अरण वर्ण के कमलों से जो मधु से अक्त होवे दश सहस्र आहुतियाँ देवें । इस प्रकार से होम करने वाले पुरुष के गृह में महालक्ष्मी हो जाया करती हैं—इसमें तनिक भी

संशय का अवसर नहीं है। और यह महालक्ष्मी की कृपा छै मासों के ही अन्दर हो जाती है।३१। ब्रह्मत्व की श्री की प्राप्ति के लिये तो ब्रह्म वृक्ष अर्थात् पलाश के पुष्पों से हवन करना चाहिये। इस विषय में बहुत अधिक कथन करने से क्या लाभ है। केवल यही कहना पर्याप्त है कि ठीक रीति के अनुसार भलीभाँति साधित की हुई द्विजों के लिये यह विद्या सिद्ध होती है और सभी कामनाओं के दोहन करने वाली मानी गयी है।३२-३३। अब त्रिष्टुप् मन्त्र को बताया जाता है। यह आग्नेय मन्त्र है। जैसा मैं कहता हूँ यह सभी अर्थों का साधक मन्त्र है। यह ऋग्वेद का मन्त्र है। मन्त्र–"ओ३म् जातवेद से सुनवाम सोम मरातीयतोनिकहाति वेदः। मनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धु न्दुरितात्यग्निः।" इस महामन्त्र का मारीच कश्यप ऋषि कहा गया है। इसका त्रिष्टुप् छन्द है और इसका देवता जातवेद अग्नि कहा गया है।३४। नौ, सात, छै, सात और आठ तथा सप्त मूलमन्त्र के वर्णों के द्वारा इसकी षडङ्ग विधि अर्थात् छै अङ्ग न्यासों की विधि कही गयी है।३५।

सप्तभिर्मूलमन्त्रार्णैः षडङ्गविधिरीरितः।
अगुष्ठगुल्फजंघासु जानुनोरुरुयुग्मके ॥३६

कटयन्धुनाभिषु हृदि स्मनयोः पार्श्वयोर्द्वयोः।
पृष्ठतः स्कन्धयोर्मध्ये बाहुमूलोपबाहुषु ॥३७

प्रकूर्परप्रकोष्ठेषु मणिबन्धतलेषु च।
मुखनासाक्षिकर्णेषु मस्तमस्तिष्कमूर्द्धसु ॥३८

क्रमेणविन्यसेद्वर्णान्मन्त्री मन्त्रसमुद्भवान्।
शिखाललाटनयनकर्णोष्ठरसनास्वथ ॥३९

सकण्ठबाहुहृत्कुक्षिकटिगुह्योरुजानुषु।
जंघयोः पदयोर्न्यस्येत्पदान्यस्त मनोः सुधीः ॥४०

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां ।
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।

हस्तैश्चक्रगदासिखेट विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं ।
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां स्मरेत् ॥४१

मन्त्रवर्णसहस्राणि जपेन्मन्त्रं विशालधीः ।
तदन्ते तिलसिद्धार्थचित्रमूलैः समिद्वरैः ।४२

अङ्गुष्ठ; गुल्फ, जङ्घा में तथा दोनों जानु और उरुओंमें, कटि, अन्धु, नाभि, हृदय, दोनों, स्तन और दोनों पार्श्वों में, पृष्ठभाग में तथा स्कन्धों के मध्य में, बाहुओं के मूल में और उपबाहुओं में, प्रकूर्पर, प्रकोष्ठ और मणिबन्धों के तलों में, मुख, नासिका, नेत्र और कानों में, मस्तक, मस्तिष्क और मूर्धा में मन्त्रधारी को मन्त्र में होने वाले वर्णों का क्रम से विन्यास करना चाहिये । शिखा, ललाट, नयन, कर्ण, ओष्ठ और रसना में, कण्ठ, बाहु,हृदय, कुक्षि, कटि गुह्य, अरु, जानु, में, दोनों जङ्घाओं में और दोनों पादों मे सुधी पुरुष को चाहिये कि मन्त्र के पदों का न्यास करे ।३६-४०। अब ध्यान बताया जाता है—विद्यु-ल्लता के समान प्रभा वाली, मृगपति (सिंह) स्कन्ध पर विराजमान, परमभीषण, कन्याओं के द्वारा सेवित जिनके करों में करवाल और खेट शोभित हैं, जो अपने करों में चक्र गदा, असि (तलवार), खेट, विशिख, चाप, गुण और तर्जनी को धारण करने वाली है, जिनका अनल के समान स्वरूप है और चन्द्रमाके धारण करने वाली है, जिनका नेत्रों से समन्वित हैं, ऐसी दुर्गादेवी का स्मरण करता हूँ ।४१। मन्त्र में जितने वर्ण है उतने ही सहस्र मन्त्र का जप विशाल बुद्धि वाले को करना चाहिये । इस जपके समाप्त हो जानेपर तिल, सिद्धार्थ, चित्रमुल एवं श्रेष्ठ समिधाओं से हवन करना चाहिये ।४२।

क्षीरद्रुमाणामाज्येन विषान्नैर्घृतान्वितैः।
चतुश्चत्वारिंशदाढ्य चतुःशतसन्वितम् ॥४३
चतुःसहस्रं जुहुयादर्चिते हव्यवाहने।
मण्डले सर्वतोभद्रें षट्कोणाढ्यकर्णिके ॥४४
विधिना वक्ष्यमाणेन पीठं देव्याः प्रपूजयेत्।
जयाख्य विजयां भद्रां भद्रकालीमनन्तरम् ॥४५
सुमुखीं दुर्मुखीं सज्ञां पश्वद्व्याघ्रमुखी पुनः।
अथ सिंहमुखीं दुर्गा, नव शक्ताः प्रपूजयेत् ॥४६
आसन सिंहमन्त्रेण दद्यादुक्तेन देशिकः।
मूर्ति सङ्कल्प्य मूलेन तस्यामावाह्य पूजयेत् ॥४७
षडङ्गानि यथापूर्वं केसरेष्वर्चयेत्सुधीः।
अग्न्यादिगादाष्ट्रकोत्पन्ना मर्तयोऽर्च्या वहिः पनः ॥४८
जातवेदाः सप्त जिह्वो हव्यवाहनसंज्ञकः।
अश्वोदरजसंज्ञोन्यः पुनर्वैश्वानराह्वयः ।४९
कौमारतेजाः स्याद्विश्वमुखो देवमुख स्मृतः।
ततो भसलिलाग्नीरानात्मनेऽन्तान्नमोन्वितान् ।५०

जिन वृक्षों में टहनी तोड़नेसे दूध निकला करता है वे क्षीर-द्रुम कहे जाते हैं। इनकी ही समिधाओं से, घृत से, हवि से, और घृत से अन्वित अन्नों से चार हजार चार सौ चौआलीस आहुतियाँ समर्चित अग्नि में देनी चाहिये। सर्वतोभद्र मन्डल में छँ कोणों से समन्वित कर्णिका के मध्य में आगे कही जाने वाली विधि से देवी के पीठ की पूजा करनी चाहिये। फिर नौ शक्तियों का अर्चन करे। उन शक्तियों के ये नाम हैं—जया, विजया, भद्रा, भद्रकाली, सुमुखी, दुर्मुखी, व्याघ्र-मुखी, सिंहमुखी और दुर्गा ये नौ हैं।४३-४६। फिर आचार्य सिंह मन्त्र के द्वारा जो कहा जा चुका है आसन देवे। फिर मूल मन्त्र के द्वारा भली भाँति कल्पना करके उसी मूर्तिमें देवी का आह्वान करके उसका

अर्चन करे ।४७। सुधी पुरुष छै अङ्गों का केसरों में जैसा कि पूर्व में वताया जा चुका है अर्चन करे। अग्नि आदि पादाष्टक से समुत्पन्न मूर्त्तियाँ फिर बारह पूजनी चाहिये ।४८। अब उन मूर्त्तियों को बताया जाता है–जातवेदा, सप्तजिह्वा हव्यवाहन, अश्वोदरज, वैश्वानर, कौमार तेजा, विश्वमुख, देवमुख ये उनके नाम कहे गये हैं। फिर भू सलिल अग्नि रानात्मा के लिये जो अन्त में नमः—इस पद से समन्वित होवें ।४९-५०।

चतुर्दिक्षु समभ्यर्चेत्कोणेषु तत्कलाः पुनः ।
पर्वादिदिक्षु सम्पूज्या जार्णाद्या वर्णशक्तयः ।५१
जाग्रता तपनी वेदगर्भा दहनरूपिणी ।
सेन्दुखन्डा शुम्भहन्त्री नभश्चारिण्यनन्तरम् ।५२
वागीश्वरी मदवहा सोमरूपा मनोजवा ।
मरुद्वेगा रात्रिसंख्या तीव्रकोपा यशोवती ५३
तोयात्मिका पुनर्गिनत्या दयावत्यपि हारिणी ।
तिरस्क्रिया वेदमाता तत्परा मदनप्रिया ।५४
समाराध्या नन्दिनी च परा रिपुविमर्दिनी ।
षष्ठी च दण्डिनी निग्मा दुर्गा गायत्र्यनन्तरम् ।५५
निरवद्या विशालाक्षी श्वामोद्वाहा वनादिनी ।
वेंदना वह्निगर्भाख्या सिंहवाहाह्वया तथा ।५६
धुर्या दुर्विषहा पश्चाद्गिरसा तापहारिणी ।
त्यक्तदोषा निस्सपत्ना चत्वारिंशच्चतुर्युता ।५७

फिर चारों दिशाओंमें समभ्यर्चन करे और फिर उनके कोणोंमें उनकी कलाओं का यजन करना चाहिये । पूर्व आदि दिशाओंमें जार्णाद्य वर्ण शक्तियों का पूजन करे ।५१। ये संख्या में चौवालीस हैं–उनके नामों को अब बताया जाता है—जाग्रता, तपिनी, वेदगर्भा, दहन रूपिणी, सेन्दुखन्डा, शुम्भहन्त्री, नभच्चारिणी, वागीश्वरी, मद्वहा,सोम

रूपा, मनोजवा, मरुद्वेगा, रात्रिसंख्या, तीव्रकोपा, यशोवती ।५२-५३। तोयात्मिका, नित्या, दयावती, हारिणी, तिरस्क्रिता, वेदमाता, तत्परा, मदनप्रिया, समाराध्या, नन्दिनी, परा, रिपुविमर्दिनी, षष्ठी, दन्डिनी, तिग्मा, दुर्गा, गायत्री ।५४-५५। निरवद्या, विशालाक्षी, श्वासोद्वाहा, वनादिनी, वेदना, वह्निगर्भा, सिंहवाहा, धुर्या, दुर्विपहा, अङ्गिरसा, तापहारिणी, त्यक्तदोषा, निस्सपत्ना ये चौआलीस नाम वाली हैं ।५६-५७।

लोकपालांस्ततोऽभ्यर्चेद्वज्राद्यायुधसंयुतान् ।
इत्थं जपादिभिः सिद्धे मन्त्रेऽस्मिन्साधकोत्तमः ।५८
आग्नेयास्त्राधिकारी स्यात्तद्विधानमुदीर्यंते ।
आग्नेयास्त्रमिति प्रोक्त विलोमपठितो मनुः ।५९
पूर्वोक्ता एवमुत्पाद्या मन्त्रस्यास्य प्रकीर्तिताः ।
प्रतिलोमक्रमादस्य षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ।६०
वर्णन्यासपदन्यासौ विदध्यात्प्रतिलोमतः ।
ध्यानभेदान्विजानीयाद् गूर्वादेशान्नचान्यथा ।६१
पूर्ववज्जपक्लृप्तिः स्याज्जहुयात्पूसंख्यया ।
पञ्चगव्यसुपक्वेन चरुणा तस्य सिद्धये ।६२

इसके अनन्तर वज्रादि आयुधों के सहित लोक पालों का अर्चन करना चाहिये । इस प्रकार से जप-अर्चन-हवन और न्यास आदि के द्वारा इस मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधना करने वालों में परम श्रेष्ठ पुरुष आग्नेय अस्त्र का अधिकारी हो जाया करता है । अब उसका विधान भी कहा जाता है । विलोम से पढ़ा हुआ मन्त्र ही आग्नेयास्त्र है—यह कहा गया है ।५८-५९। पूर्वमें कहे हुये ही इस प्रकारसे उत्पादन करने के योग्य हैं जो इस मन्त्र के विषयमें कहे गये हैं । इसके प्रतिलोम के क्रम से ही अङ्गों को कल्पना कर लेनी चाहिये ।३०। प्रतिलोम से ही वर्णों का न्यास और पदोंका न्यास करे । ध्यानके भेदों को गुरुदेव आदि

के आदेश से ही जानना चाहिये अन्य किसी भी प्रकार से न करे ।६१। पूर्व की ही भाँति जप की कल्पना करे और पूर्व की ही भाँति होम की भी संख्या की कल्पना कर लेवे । पञ्चगव्य से सुन्दर रीति से पकाये हुये चरु से ही उसकी सिद्धि के लिये होम करें ।६२।

ओदाय सारमखिलं निखिलागमेभ्यः ।
श्रीशारदातिलकनाम चकार तन्त्रम् ।
प्राज्ञः स एव पटलैरिहतावसंख्यैः
प्रीतिप्रदानविधये विदुषां चिराय ।६३
अनाद्यन्ता सम्भोर्वपुषि कलितार्द्धेन वपुषा ।
जगद्रूपं शश्यत्सृजति महनीयामपि गिरम् ।६४
सदर्था शब्दार्थस्तमटनता शङ्करवधू-
भवदूभूयाद्भवजनिन्दुःखौघशमनी ।६५

समस्त आगमों से सार वस्तु का ग्रहण करके ही इस शारदा तिलक नामक तन्त्र ग्रन्थ की रचना की गई है । यह तत्व संख्यक पटलों से युक्त विद्वान् पुरुष ने समस्त विद्वानों की प्रीति के विधान के लिये ही चिर काल तक जो रहेगी, इसकी रचना की है ।६ । भगवान् शम्भु के शरीर में अपने अर्ध वपु से कलित और आदि तथा अन्त से रहित निरन्तर इस जगत् के रूप का तथा महा महनीय वाणी का सृजन किया करती है, वही शंकर-प्रिया भगवती सबका कल्याण और दुःखों का शमन करें ।६४।

— —

अ. भा. ओंकार परिवार की स्थापना

✦✦★✦✦

ॐ परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ व स्वाभाविक नाम है। इसे मन्त्र शिरोमणि, मन्त्र सम्राट, मन्त्र राज, बीजमन्त्र और मन्त्रों का सेतु आदि उपाधियों से विभूषित किया जाता है। इसे श्रेष्ठतम् महानतम् और पवित्रतम् मन्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। सारे विश्व में इसकी तुलना का कोई मन्त्र नहीं है। ॐ सभी मन्त्रों को अपनी शक्ति से भावित करता हैं। सभी मन्त्रों की शक्ति ओंकार की ही शक्ति है। यह शक्ति और सिद्धिदाता है। भौतिक व आत्मिक उत्थान के लिये कोई भी दूसरी श्रेष्ठ व सरल साधना नहीं है।

सभी ऋषिमुनि ॐ की शक्ति और साधना से ही अपना आत्मिक उत्थान करते रहे हैं। परन्तु आज आश्चर्य है कि ॐ का अन्य मन्त्रों की तरह व्यापक प्रचार नहीं है। इस कमी का अनुभव करते हुए अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना की गई है। आप भी अपने यहाँ इसका एक प्रचार केन्द्र स्थापित करें। शाखा स्थापना का सारा साहित्य निःशुल्क रूप से प्रधान कार्यालय, बरेली से मँगवा लें, आपको केवल इतना करना है कि स्वयं ओंकारोपासना आरम्भ करके ४ अन्य मित्रों व सम्बन्धियों को प्रेरित करें और सभी सङ्कल्प पत्र व शाखा स्थापना का प्रार्थना पत्र प्रधान कार्यालय को भिजवा दें। इस वर्ष २७००० साधकों द्वारा ९०० करोड़ मन्त्रों के जप का महापुरश्चरण पूर्ण किया जाना है। आशा है ओंकार को जन-जन का मन्त्र बनाने के इस श्रेष्ठतम् आध्यात्मिक महायज्ञ में सम्मिलित होकर महान् पुण्य के भागी बनेंगे।

विनीत :—

संस्कृति संस्थान **चमनलाल गौतम**

ख्वाजाकुतुब्र, वेदनगर, बरेली-२४३००३ (.उ प्र.)

एक मौन व्यक्तित्व का मौन समर्पण

डा० चमनलाल गौतम-एक व्यक्ति का नहीं वरन् ऐसे विशाल धार्मिक सस्थान का नाम है जो सतत् २४ वर्षों से ऋषि प्रणीत आर्ष साहित्य के शोध, प्रकाशन और व्यापक साहित्य प्रचार का कार्य देश विदेश में करता रहा है। यह उनकी तप साधना का ही परिणाम है कि किसी भी आर्थिक सहयोग के बिना वेद, उपनिषद्. दर्शन, स्मृतियां, पुराण व मन्त्र-तन्त्र आदि साधनात्मक साहित्य की ३०० से अधिक पुस्तकों को प्रकाशित करके घर-घर में पहुँचाने की पवित्रतम साधना कर रहे हैं। मन्त्र-तन्त्र, योग, वेदान्त व अन्य धार्मिक विषयों पर १५० खोज पूर्ण ग्रन्थों का लेखन, सम्पादन एक ऐसा अविस्मरणीय व आसाधारण कार्य है जिस पर उनके अथक श्रम, गम्भीर अध्ययन, तप, प्रतिभा और मौलिक सूझ-बूझ की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। स्वस्थ साहित्य की रचना और प्रचार का उनकी जीवन योजना का यह पहला चरण पूरा हुआ।

पिछले २४ वर्षों से लगातार चल रही अध्यात्मिक साधना के महापुरश्चरण का दूसरा चरण भी समाप्त हो रहा है। तीसरे चरण-आध्यात्मिक साधनाओं और अनुभूतियों के विश्वव्यापी विस्तार का शुभारम्भ अ० भा० ओंकार परिवार की स्थापना के साथ बसन्तपञ्चमी की परम पवित्र वेला के साथ हो गया है। अतः उनका शेष जीवन तीसरे चरण की सफलता, ओंकार परिवार की शाखाओं के व्यापक विस्तार के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों को ओंकार साधना में प्रविष्ट करके उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रशस्त करना, ओंकार अथवा उच्च आध्यात्मिक साहित्य की रचना व प्रचार-प्रसार को समर्पित है।

पुस्तकालय
1315

स्वामी सत्य भक्त

भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठतम धर्म-ग्रन्थ

१—ऋग्वेद ४ खण्ड	...	२८)
२—अथर्व वेद २ खण्ड	...	१६)
३—यजुर्वेद	...	६)५०
४—सामवेद	...	८)५०
५—वेद महाविज्ञान	...	१२)
६—शतपथ ब्राह्मण	...	१२)
७—१०८ उपनिषद् ३ खण्ड	...	३३)
८—उपनिषद् रहस्य	...	६)५०
९—बृहदारण्यकोपनिषद्	...	४)५०
१०—छान्दोग्योपनिषद्	...	४)५०
११—वैशेषिक दर्शन	...	६)२५
१२—न्याय दर्शन	...	६)७५
१३—सांख्य दर्शन	...	६)२५
१४—योग दर्शन	...	६)७५
१५—वेदान्त दर्शन	...	७)५०
१६—मीमांसा दर्शन	...	९)
१७—२० स्मृतियां २ खण्ड	...	२२)
१८—मनुस्मृति	...	११)
१९—योग वासिष्ठ २ खण्ड	...	२७)
२०—ब्रह्म सूत्र	...	१२)५०
२२—पञ्चदशी	...	१४)
२२—विचार सागर	...	१४)
२३—विचार चंद्रोदय	...	३)
२४—पञ्चीकरण	...	४)
२५—उपदेश साहस्री	...	८)२५
२६—वृत्ति प्रभाकर	...	१०)
२७—सौन्दर्य लहरी	...	७)

प्रकाशक :-संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब वेदनगर,

बरेली-२४३००३ (उ०प्र०)